# व्यंग्य यात्रा

## सार्थक व्यंग्य की रचनात्मक त्रैमासिकी

वर्ष : 5 अंक : 18-19

जनवरी-जून 2009

ज्ञान चतुर्वेदी के
अप्रकाशित व्यंग्य उपन्यास
का अंश 'मर गए बब्बा'
प्रेम जनमेजय का व्यंग्य नाटक
'सोते रहो'

शरद जोशी, रवींद्रनाथ त्यागी, रामदरश मिश्र, नरेंद्र मोहन, राजकुमार सैनी
अनामिका, दिविक रमेश, हरीश नवल, शशि सहगल, सी. भास्कर राव
प्रमोद ताम्बट, श्रीकांत चौधरी, राधेश्याम तिवारी, रामकुमार कृषक
अरुणा सीतेश, सुरेंद्र सुकुमार, शरद उपाध्याय, राजेंद्र त्यागी
रमेश सैनी, अनुराग वाजपेयी, अतुल चतुर्वेदी
अशोक आनंद आदि की व्यंग्य रचनाएं

मूल्य २० रुपए

# व्यंग्यश्री सम्मान समारोह-2009

हिन्दी भवन के मंत्री गोविन्द व्यास

संचालन करते ज्ञान चतुर्वेदी

अध्यक्ष प्रो. निर्मला जैन

दीप प्रज्वलन

प्रेम जनमेजय का तिलक

वाग्देवी की प्रतिमा प्रदान करते श्री लखोटिया एवं त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी

शॉल ओढ़ाकर सम्मानित करतीं प्रो. निर्मला जैन

श्रीलाल शुक्ल पर केंद्रित 'व्यंग्य यात्रा' के अंक का लोकार्पण

सम्मान के पश्चात एक साथ- निर्मला जैन, त्रिलोकीनाथ, लखोटिया, ज्ञान चतुर्वेदी, प्रेम जनमेजय एवं गोविन्द व्यास

इस अवसर पर डॉ. रत्नावली कौशिक द्वारा निर्मित पं. गोपाल प्रसाद व्यास की वेबसाईट का लोकार्पण भी हुआ

व्यंग्य विनोद दिवस पर व्यंग्यश्री सम्मान समारोह का आनंद उठाते श्रोता

हिन्दी अकादमी की पत्रिका 'इंद्रप्रस्थ भारती' का लोकार्पण करते अशोक वाजपेयी, नामवर सिंह, राजेंद्र यादव एवं अर्चना वर्मा

मधुबन व्यंग्यश्री सम्मान से ज्ञान चतुर्वेदी को सम्मानित करते प्रेम जनमेजय, देवेंद्र इंद्रेश एवं अजय अनुरागी

नरेन्द्र मोहन का सर्वश्रेष्ठ नाटककार सम्मान

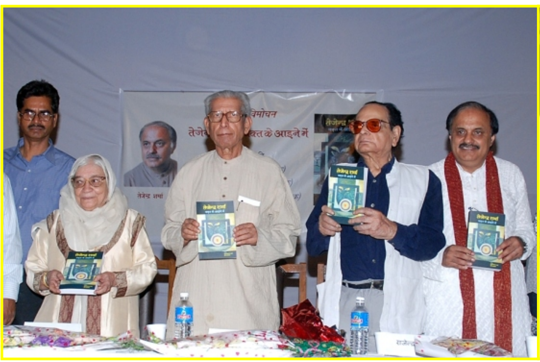

तेजेन्द्र शर्मा की पुस्तक 'वक्त के आईने में' के लोकार्पण अवसर पर हरि भट्नागर, कृष्णा सोबती, नामवर सिंह, राजेन्द्र यादव

अरविंद विद्रोही को सम्मानित करते प्रेम जनमेजय

मंजरी दुबे को शीला सिद्धांतकर पुरस्कार देते अनामिका, मृदुला गर्ग एवं शिमंगल सिद्धांतकर

**सार्थक व्यंग्य की रचनात्मक त्रैमासिकी**

जनवरी-जून 2009

वर्ष-5 अंक-18-19

**संयुक्तांक**

**एक अंक** : 20 रुपए
**पांच अंक** : सौ रुपए
(डाक व्यय 5 रुपए प्रति अंक अतिरिक्त)
**विदेशों में** : दो डॉलर प्रति अंक

**सहयोग राशि 'व्यंग्य यात्रा' के नाम से ही भेजने का कष्ट करें। दिल्ली से बाहर के चेक पर बीस रुपए अतिरिक्त जोडें।**

**'केन्द्रीय हिंदी संस्थान', आगरा से आर्थिक सहयोग प्राप्त।**

संपादक
**प्रेम जनमेजय**

**संपर्क**
73, साक्षर अपार्टमेंट्स, ए-3 पश्चिम विहार
नई दिल्ली-110063
फोन : 011-25264227, 09811154440
फैक्स : 011-25264227
ई-मेल : vyangya@yahoo.com

**मुख्यपृष्ठ एवं रेखांकन**
रमेश मेहता

**सहयोगी संपादक**
रमेश तिवारी

**प्रबंध सहयोग/लेजर टाइपसैटिंग**

**रामविलास शास्त्री**
4, शॉपिंग कॉम्प्लैक्स दयाल बाग
सूरजकुंड, फरीदाबाद (हरियाणा)
09911077754, 0129-4092514

'व्यंग्य यात्रा' में प्रकाशित लेखकों के विचार उनके अपने हैं। विवादास्पद मामले दिल्ली न्यायालय के अधीन होंगे। संपादन एवं संचालन पूर्णत: अवैतनिक और अव्यावसायिक।

# अनुक्रम

| | | |
|---|---|---|
| **आरंभ** | | **2-3** |
| **चंदन घिसें** | | **4-11** |
| **पाथेय** | | **12-18** |
| शरद जोशी | सरकार का जादू | 12 |
| रवीन्द्रनाथ त्यागी | तीन मिनी कथाएं | 15 |
| अशोक आनंद | मेघदूत: ज़िन्दगी के साथ भी, ज़िन्दगी के बाद भी | 16 |
| **व्यंग्य रचनाएं** | | **19-94** |
| ज्ञान चतुर्वेदी | मर गए बब्बा | 19 |
| प्रेम जनमेजय | सोते रहो | 25 |
| सी. भास्कर राव | मंदिर के अंदर | 45 |
| प्रमोद ताम्बट | स्वयंभू डॉक्टर | 51 |
| श्रीकांत चौधरी | कीमत 499 याकि 9999 का इलाज | 54 |
| के.पी. सक्सेना 'दूसरे' | चावल में कनकी | 55 |
| राधेश्याम तिवारी | बॉस का दौरा | 57 |
| रामकुमार कृषक | जात का सवाल | 58 |
| राजेन्द्र त्यागी | पालतू राजनीति में | 60 |
| मनजीत शर्मा 'मीरा' | महंगाई मार गई | 62 |
| डॉ. अरुणा सीतेश | 'वह'– विरोधी बिल | 66 |
| शम्भूनाथ सिंह | बाजार में निकला हूं | 68 |
| सुरेन्द्र सुकुमार | जूतों का महत्व | 70 |
| रमेश सैनी | भगवान के दरबार में जूता | 71 |
| डॉ. यश गोयल | कानून व्यवस्था पर निबंध | 73 |
| राजेन्द्र उपाध्याय | मधुमेही रोगी की व्यथाकथा | 74 |
| पूरन सरमा | मोबाइल एनसाइक्लोपीडिया | 75 |
| हरीश कुमार अमित | कुत्ते क्यों न हुए | 76 |
| शरद उपाध्याय | साहब का जाना | 77 |
| प्रेमचंद्र स्वर्णकार | व्हेन आई वाज मिनिस्टर | 78 |
| तारिक असलम 'तस्नीम' | मत पूछिये मॉल का हाल. . . | 79 |
| कुलदीप तलवार | कवि नहीं फवि | 80 |
| अशोक गौतम | इस दर्द की दवा क्या है | 81 |
| देवेन्द्र इन्द्रेश | वी.आई.पी. कबूतर | 82 |
| राकेश चक्र | वर्दीधारी | 83 |
| अतुल चतुर्वेदी | चांद कवि और विज्ञान | 84 |
| अशोक भाटिया | विलास राम 'शामिल' के कारनामे | 85 |
| अनुराग वाजपेयी | यहां है सरकार | 86 |
| बच्चन पाठक सलिल | रोग और देवता | 87 |
| काशीपुरी कुन्दन | हे दयालु दया का दरवाजा खुलवाइए | 88 |
| राज चड्ढा | प्यार, बिना अड़बंगे के | 90 |
| योगेन्द्र दबे | सर जी आप. . . | 91 |
| पंकज भार्गव | न रहेगा बांस | 91 |
| प्रदीप नील | लक्ष्मी सरस्वती दोउ खड़े | 92 |
| प्रतिमा आर्य | नन्हीं नन्हीं बुदियां रे सावन का मेरा झूलना | 93 |
| **कविताएं** | | **95-112** |

रामदरश मिश्र (95) शशि सहगल (95) नरेंद्र मोहन (96) अनामिका (97) पुष्पा राही (97) शिवनारायण (98) दिविक रमेश (99) सुदर्शन वसिष्ठ (100) अविनाश वाचस्पति (101) सुधा ओम ढींगरा (101) राजकुमार सैनी (102) अनुज प्रभात (102) यज्ञ शर्मा (103) अरविंद विद्रोही (104) चांद शेरी (104) रवींद्र राजहंस (105) राम मेश्राम (107) राम बहादुर चंदन (108) श्यामनंदन किशोर (108) अशोक अंजुम (109) ओम नागर अश्क (110) देवेंद्र कुमार मिश्र (111) शंभु बादल (111) निर्मिश ठाकुर (112) अक्षय जैन (112)

| | | |
|---|---|---|
| **चिंतन** | | **113-122** |
| हरीश नवल | एक और रंगनाथ की राग दरबारी यात्रा | 113 |
| डॉ. रमेशचंद्र खरे | दमोह के दिनकर | 115 |
| डॉ. अजय अनुरागी | राजस्थान का व्यंग्य लेखन | 119 |
| कैलाश मंडलेकर | जवाहर चौधरी का व्यंग्य बोध | 121 |
| **पुस्तक परिचय** | | **123-126** |
| **समाचार** | | **127-135** |

# आरंभ

सबसे तो पहले मैं आभार व्यक्त करना चाहूंगा उन सभी साहित्यकारों का जिनके गुणवत्तापूर्ण रचनात्मक सहयोग के कारण हमारे समय के श्रेष्ठ साहित्यकार श्रीलाल शुक्ल पर केंद्रित 'व्यंग्य यात्रा' का विशेषांक मीडिया के सभी माध्यमों में प्रशंसा का पात्र बना। अनेक लिखित एवं मौखिक प्रशंसाओं से हमें बल मिला है। हमारे कुछ शुभचिंतकों ने रचनात्मक आलोचना के द्वारा अपनी कुछ और अपेक्षाओं की चर्चा की है और इन सबसे हमें पत्रिका को और बेहतर करने की प्रेरणा मिली है। इस सबके बीच आदरणीय श्रीलाल जी ने न केवल अंक की मुक्त कंठ से प्रशंसा की अपितु अपने साहित्य पर शोध करने वाले अनेक शोधार्थियों को व्यंग्य यात्रा का पता भी बताया। उनका 21-04-09 का एक रोचक पत्र भी मुझे मिला जिसमें उन्होंने लिखा- 'व्यंग्य यात्रा की 2 प्रतियां मिल गयी थीं पर पुस्तक-चोरों के साथ/हाथ चली गयीं। कृपया 3 प्रतियां पुनः कूरियर के द्वारा भेज दें। कृपा होगी।' और जब फोन पर बात हुई तो बोले कि आप कूरियर से ही भेजिएगा, मैं शुल्क भेज दूंगा। इस सादगी पर कौन न मर जाए खुदा। इस सबका नतीजा ये है कि अंक को अपेक्षा से अधिक प्रकाशित करने के बाद भी अंक की प्रतियां लगभग समाप्त हो गई हैं। हर बंद गली आखिरी मकान होता है जिसके दरवाजे और खिड़कियां बंद गली को खोल देते हैं। इस बीच नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर ने प्रस्ताव भेजा है कि वे इस अंक को पुस्तकाकार प्रकाशित करना चाहते हैं।

प्रमोद ताम्बट ने अपने पत्र में लिखा- बड़े लेखकों की व्यक्तिगत जीवनशैली, जीवन संघर्ष, रचना प्रक्रिया के बारे में सभी के मन में एक स्वाभाविक कौतूहल रहता है। इस विशेषांक में ऐसे लेखों, संस्मरणों की कमी महसूस होती है। कुछ रचनाएं है परन्तु उससे आत्मा तृप्त नहीं होती। लेखक के व्यक्तिगत, साहित्यिक पत्राचार भी नई पीढ़ी के रचनाकारों के लिए काफी कुछ सिखाने वाले होते हैं, ऐसे पत्र भी विशेषांक में शामिल नहीं हैं। कुल मिलाकर एक जबरदस्त, मोटे-ताजे और सफल विशेषांक के बावजूद मुझे लगता है कि अभी काफी कुछ श्रीलाल जी पर लिखा जाना बचा हुआ है जो एक और ऐसे ही आयोजन के लिए पर्याप्त कारण उपलब्ध कराता है।' प्रिय भाई को ध्यान दिलाना चाहूंगा कि वे एक लघु पत्रिका से ये अपेक्षाएं कर रहे हैं जिसके सीमित साधनों से वे परिचित ही हैं। और फिर मैंने अपने संपादकीय में लिख ही दिया था- 'ये मुगालता तो कभी पाला नहीं है कि जो हमने किया उसके बाद पूर्णविराम लग गया है। 'पूर्ण' के बारे में लगातार अपूर्ण चर्चाएं चलती ही रहती हैं। श्रीलाल जी के बारे कहने को बहुत कुछ था और जो अब तक कहा गया उसमें कुछ छूट गया था, उसी छूट का तो परिणाम है ये अंक। अब जो इसमें से छूटेगा, उसका परिणाम होगा ओर कोई अंक।' प्रयत्न होगा कि पुस्तकाकार रूप में कुछ और जोड़ा जा सके। व्यंग्य यात्रा के शुभचिंतक हरीश नवल का श्रीलाल जी पर आलेख हमें कुछ विलम्ब से मिला, उसे इस अंक में दे रहे हैं।

इस अंक में, अपेक्षा अनुरूप सामग्री एकत्र न कर पाने के कारण त्रिकोणीय एवं चिंता स्तम्भ नहीं जा पा रहे हैं। अगले अंक में त्रिकोणीय के अंतर्गत सूर्यबाला एवं अलका पाठक पर सामग्री देने की योजना है। इस प्रक्रिया में 'व्यंग्य यात्रा' भी नारी विमर्श जैसे गंगाजल में हाथ धो लेगी। इस अंक की प्रूफ रीडिंग के लिए पत्रिका व्यंग्यकार राजेंद्र सहगल की हृदय से आभारी है।

### क्षतिग्रस्त हिंदी साहित्य

पिछले कुछ समय में साहित्य और कला के क्षेत्र में इतनी अधिक क्षति हुई है कि मन अवसाद से भर जाता है। श्रद्धेय विष्णु प्रभाकर का 'व्यंग्य यात्रा' को आरंभ से ही आशीर्वाद मिला। उनकी आत्मीयता सभी को उनसे बंध जाने को विवश करती थी। पत्राचार में उनका विश्वास नए लेखकों को बहुत प्रभावित करता था। उन्होंने अपने जीवन मूल्यों के लिए कभी समझौता नहीं किया। किसी गढ़ या मठ का ना तो निर्माण किया और न ही उसमें स्वयं को सीमित किया। विश्वनाथ त्रिपाठी ने 'इंडिया टुडे' में उचित ही लिखा है- प्रभाकर उन दुर्लभ साहित्यकारों में से थे जो नहीं बदले। वे बढ़ोतरी, धन-दौलत, सम्मान-पुरस्कार की दौड़ में शामिल नहीं हुए। जो कुछ मिला, सहज भाव से, अपनी गाढ़ी कमाई और कलम चलाने से मिला। प्रभाकर किसी विचारधारा से प्रतिबद्ध नहीं थे, यद्यपि वे दिल्ली राज्य प्रगतिशील लेखक संघ के प्रथम अध्यक्ष थे।' 'साहित्य अमृत' ने उन पर एक अच्छा विशेषांक प्रकाशित किया है।

विष्णु प्रभाकर जैसे ही, संतई स्वभाव के गीतकार नईम थे। 'व्यंग्य यात्रा' को निरंतर उनका रचनात्मक सहयोग मिलता रहा। अंक मिलने पर वे अक्सर अपनी प्रतिक्रिया देते थे। अपने पत्रों के माध्यम से वे एक रिश्ता बना लेते थे। ज्ञान चतुर्वेदी ने बताया कि उनके पास नईम जी के (ज्ञान द्वारा अनुत्तरित) इतने पत्र पढ़े हैं कि एक पूरी पुस्तक निकाली जा सकती है। ज्ञान भाई तो उनसे फोन पर बात करके संतुष्ट हो जाते थे पर नईम जी को, ये जानते हुए भी कि पत्र का उत्तर फोन से आएगा, बिना पत्र लिखे चैन नहीं मिलता था। नईम जी का 'व्यंग्य यात्रा' के नाम एक पत्र चंदन घिसे स्तंभ में दे रहे हैं। मानवीय संवेदनाओं से भरे हुए नईम कबीर की तरह बेखौफ अपनी बात कहने में विश्वास करते थे। शायद इसीलिए उन्होंने कहा- 'चलो चलें उस पार कबीरा/लेकर अपना झांझ मजीरा।'

सम्माननीय चंद्रकिरण सौनरेक्सा के कथा साहित्य से मेरा परिचय पुराना था। उनसे एक दो बार भाई हरीश नवल के साथ मिला परंतु उनके पति, कांतिचंद्र सौनरेक्सा से हरीश नवल के साथ अनेक मुलाकातें हुईं। चंद्रकिरण सौनरेक्सा भी उन लेखकों में से थीं जो अपने मूल्यों पर दृढ़, बिना किसी लेखकीय छल छंद के रचनात्मक लेखन में विश्वास करते हैं। भारत भारद्वाज ने 'नया ज्ञानोदय' में उनके संबंध में सटीक लिखा है- वे अशक्त नहीं, हंसमुख थीं। बातचीत में बेहद शालीन। स्वाधीनता आंदोलन की वे सजग प्रहरी थीं। जड़ सामाजिक कुरीतियां, विडम्बनाओं और अंतर्विरोधों से आजन्म लड़ती हुईं।'

इन सबके बीच, हास्य-व्यंग्य कविता मंच के तीन महत्वपूर्ण हस्ताक्षरों- ओम प्रकाश आदित्य, लाड़सिंह गुर्जर एवं नीरज पुरी की एक सड़क दुर्घटना में मृत्यु के समाचार ने अनेक संवेदनशील

साहित्यकारों को सकते में ला दिया। प्रतिवर्ष लखनऊ में, अनूप श्रीवास्तव द्वारा आयोजित 'अटट्हास समारोह' के दो लाभ होते हैं- एक तो श्रीलाल जी से मिलना और दूसरे वाचिक परंपरा के कवियों से संवाद। ठाकुर प्रसाद सिंह ने 'माध्यम' से इस अयोजन की भूमिका बनाई थी। उनकी सोच थी कि पुस्तक और मंचीय लेखकों के बीच एक खाई बनती जा रही है जो हिंदी हास्य व्यंग्य साहित्य के लिए उचित नहीं हैं। बहुत आवश्यक है कि एक संवाद निरंतर रहे। यही कारण है कि सम्मान समारोह के साथ एक संगोष्ठी का आयोजन किया जाता है जिसमें वाचिक परंपरा के कवियों से संवाद हो जाता है। इस बहस में अनेक महत्वपूर्ण मुद्दे उठते हैं। ऐसे ही अवसरों पर इन सबसे मुलाकात हो जाती थी। मंचित कवियों के बीच चाहे कितनी गुटबाजी हो पर उनसे मिलना सदा ही सुखकर रहा है। उनके व्यवहार में आत्मीयता और सम्मान होता है। दुर्घटना का जब समाचार मिला तो उन सबके चेहरे आंखें के सामने जैसे सजीव हो गए। अगले दिन नई दुनिया में अशोक चक्रधर की यह टिप्पणी पढ़ने को मिली- अपने तीन साथियों को सड़क दुर्घटना में खोकर अस्पताल से अभी-अभी होटल के अपने कमरे में लौटा हूं। यहां आदित्यजी का सामान रखा है। हिंदी कवि सम्मेलनों के अग्रज कवि आदित्य जी की देह विमान से दिल्ली रवाना हो गई है। मुझे अब उनके सामान को लेकर दिल्ली जाना है। मैं इस सामान को कैसे ले जाऊंगा? हम साथ-साथ आए थे। जब मैं यह सामान लेकर दिल्ली पहुंचूंगा, आदित्य की देह पंचतत्व में विलीन हो चुकी होगी। कई बार आदित्य जी का सामान ढोया है, इस बार उनका सामान ढोना भारी लग रहा है।' भाई अशोक चक्रधर ने कभी इस पल की कल्पना की होगी? अशोक भाई आगे कहते हैं- 'कवि सम्मेलन खत्म होने के बाद हम साथ में खाना खाने बैठे तो आदित्य जी ने सतर्क किया था- दाल मत खाना, बिगड़ गई है। इसके बदले पनीर खा लो।' मैंने कहा था, 'पनीर भी खराब हो गया है, दही से काम चलाना पड़ेगा।' लेकिन दही भी खट्टा निकला तो आदित्य जी ने कहा– 'चलो होटल में जाकर खा लेंगे।' उनकी गाड़ी हमारी गाड़ी से पहले निकली और जब तक हम उनके करीब पहुंचते वे दुनिया से जा चुके थे।'

कहा गया है कि सामान सौ बरस का है, पल की खबर नहीं। ये अनजान पल कब आपकी जिंदगी में आ जाता है और सब अव्यवस्थित कर जाता है, पता ही नहीं चलता। यह पल काफी कुछ उथल-पुथल के द्वारा अपनी खबर देता है।

मैं लगभग हर सुबह सैर के लिए निकलता हूं। बढ़ती उम्र स्वास्थ्य के प्रति चिंता बढ़ाती है, बढ़ती चिंता व्यायाम के लिए उकसाती है तथा ऐसे उकसे सज्जनों के बारे में स्वास्थ्य के परामर्शदाताओं कहना है कि सुबह-सुबह से घूमने से बढ़िया कोई व्यायाम नहीं है। इसलिए मैं भी ये व्यायाम करता हूं। रोज सुबह सैर के बहाने से तीन-चार किलोमीटर का चक्कर काट आता हूं। सैर के दौरान कभी कोई रचना सूझ जाती है और कभी 'व्यंग्य यात्रा' के काम अपना सिलसिला बैठा लेते हैं। वापसी पर मैं शुभ निकेतन के बाहर बैठने वाले सब्जी वाले से घर के लिए ताजा सब्जी भी ले लेता हूं। शायद इसे ही संतों ने एक-पंथ दो-काज कहा है। 24 जून की सुबह भी मैं एक-पंथ दो-काज करने के इरादे से सुबह छह बजे अपने अपार्टमेंट से निकल गया। अपनी सैर के अंतिम पड़ाव पर मैं शुभ निकेतन के पास पहुंचा। इस सड़क के दोनों ओर रिहायशी मकान हैं। सड़क की चौड़ाई अपने वाहन को अतितीव्र गति से चलाने वाले साहसियों को उकसाती है और अक्सर इसके उकसावे में धड़ल्ले से चलने वाले वाहन, पैदल चलने वालों को प्रभु का स्मरण कराते हुए निकल जाते हैं। आज सुबह मैं इस सड़क पर मुड़ा। इस सड़क से मुड़ने पर, दूसरी ओर, कुछ कदम पर पप्पू सब्जी वाला बैठता है। उसकी ओर जाने के लिए मैंने यातायात नियम के पालक बुजुर्ग की भूमिका निभाते हुए देखा कि पीछे कोई आ तो नहीं रहा। सुबह के समय सड़क खाली होती है। निश्चिंत होकर मैं सड़क पार करने लगा। अभी चार कदम ही चला था कि मेहरून रंग की क्वालिस मुझे स्पर्श करने की इच्छा से तीव्रता से गुजरी और उसमें बैठे तीन-चार महापुरुषों ने मुझे लपेटे में आता देख ओए की आवाज़ की। इससे पहले मैं कुछ समझ पाता सफेद रंग की एक और क्वालिस उसी तेजी से निकल गई। एक अजीब-से शून्य से मैं भर गया।

तभी मेरे सामने एक अधेड़ उम्र के दुबले-पतले सज्जन आए, उन्होंने अपनी हथेलियों से मेरे हाथ को पकड़ा और बोले- ऊपर वाले की मेहरबानी है कि आप बच गए। मैंने तो घबराकर अपनी आंखें बंद कर लीं थीं।' मैंने महसूस किया कि उनकी हथेलियों का स्पर्श मुझे अद्भुत संबल दे रहा है। वे मेरे कोई नहीं थे, और पश्चिम विहार में पिछले पच्चीस बरस से रहने के बावजूद मैं उनसे कभी मिला नहीं पर मुझे उनसे आत्मीय सुख मिल रहा था। मैंने कहा- मैंने पीछे देखा था कि कोई वाहन तो नहीं आ रहा पर. . .ये. . .अचानक. . .।' उन्होंने मेरे कंधे को एक आत्मीयता के साथ दबाया और बोले, 'आजकल तो आप खुद बच सकते हैं तो बच लें. . .ये कॉल सेंटर वाले रात के जगे होते हैं और आप जानते ही हैं कि. . .'

मैंने उनका आभार प्रकट किया और सामान्य होने का प्रयत्न करने लगा। पप्पू सब्जी वाले से सब्जी तुलवाने लगा। पर साथ ही सोचने लगा कि आज दुर्घटना हो जाती तो सैर के दौरान मैं जो योजनाएं बना रहा था वो एक पल में छिटक कर कहां जाती? सब्जी के स्थान पर घर में क्या जाता? पूरे परिवार, मित्रों और परिचितों की चाहते, ना चाहते हुए, दिनचर्या में कैसा परिवर्तन आता? सोचता हूं तो गहराई से समझ पाता हूं कि दुर्घटना से पूर्व मेरे दिवंगत मित्रों- ओम प्रकाश आदित्य, लाड़सिंह गुर्जर और नीरज पुरी नें क्या-क्या नहीं सोचा होगा। उनके पीछे आ रहे और अपने सामने पड़ी तीन लाशों को देखकर अशोक चक्रधर किस मन:स्थिति में होंगे। सिहर जाता हूं। कैसा होता है ये बेखबर पल!

## भिक्षाम् देहि. . .आभार

**'व्यंग्य यात्रा' आपके आर्थिक सहयोग के लिए आप सब का हृदय से आभार प्रकट करती है।**
**अरविंद तिवारी, अरविंद विद्रोही, अखिलेश श्रीवास्तव, श्रीकांत चौधरी, कुलदीप अहूजा, प्रमोद ताम्बट, देवेंद्र इंद्रेश, नेहा, रमेशचंद्र खरे, रोमिला चावला, विश्वनाथ शर्मा, शारदा त्यागी, अक्षय जैन।**

# आप चंदन घिसें

**सूर्यकांत नागर, इंदौर**

'व्यंग्य यात्रा' का श्रीलाल शुक्ल केन्द्रित अंक मिला। यह किसी पत्रिका का एक अंक भर नहीं है, सहेजकर रखने योग्य अमूल्य निधि हैं। यूं तो समय-समय पर शुक्लजी पर काफी कुछ लिखा जाता रहा है, लेकिन उनका साहित्य इतना विविध, बहुआयामी और गहन है कि उसमें से जितना उलीचो, कम है। निश्चित ही 'व्यंग्य यात्रा' ने उनके कृतित्व और व्यक्तित्व के विविध पक्षों को प्रस्तुत करने की गंभीर कोशिश की है।

पांच वर्षों के अपने सफर में 'व्यंग्य-यात्रा' ने कई मुकाम हासिल किए हैं, अपनी एक अलग पहचान बनाई है। इधर कुछ 'व्यंग्य पत्रिकाएं' निकल अवश्य रही हैं, किंतु वे वांछित ऊंचाई नहीं छू पा रही हैं। 'व्यंग्य यात्रा' की खूबी है कि स्तरीय रचनाओं के अतिरिक्त उसमें साहित्यिक-सांस्कृतिक समाचारों और पुस्तक समीक्षाओं को भी पर्याप्त स्थान दिया जाता है। अनेक महत्वपूर्ण साहित्यकारों का लेखकीय सहयोग इसे मिलता रहा है। इसका श्रेय पत्रिका के स्तर पर संपादकीय दृष्टि को है।

प्रस्तुत अंक में यद्यपि श्रीलाल शुक्ल की कई कृतियों पर आलेख हैं, पर सर्वाधिक टिप्पणियां 'राग दरबारी' को लेकर ही हैं। भले ही शुक्लजी न मानें और राग दरबारी को व्यंग्य उपन्यास तक सीमित कर दिए जाने पर उन्हें आपत्ति हो, सच यही है कि शुक्लजी की रचनाओं में राग दरबारी मील का पत्थर साबित हुआ है और एक तरह से श्रीलाल शुक्ल का पर्यायवाची बन चुका है। राग दरबारी के बिना श्रीलाल शुक्ल की चर्चा अधूरी है।

नित्यानंद तिवारी और निर्मला जैन के लेख लीक से हटकर हैं और सोचने के लिए नई जमीन तैयार करते हैं। तिवारीजी का आंकलन महत्वपूर्ण है कि राग दरबारी वास्तविकता और प्रतिभासित वास्तविकता के अंतर को हमारे सामने लाता है। राग दरबारी की जो अतिरंजनाएं पहले व्यंग्य लगती थीं, आज व्यंग्य से अधिक वास्तविकता लगती हैं। 'सूनी घाटी का सूरज' के संबंध में जवाहर चौधरी का कथन ठीक है कि राग दरबारी में ग्रामीण जनजीवन की विसंगतियों का जो चित्रण है, उसके बीज 'सूनी घाटी का सूरज में' देखे जा सकते हैं। 'आरंभ' में और अन्यत्र शुक्लजी के संदर्भ में 'हम्बग' से उनकी नफरत का उल्लेख उनके लेखकीय और सामाजिक जीवन की अविछिन्नता का प्रमाण है। छल-कपट से दूर उनका भरोसा आचरण की शुचिता में है। 'पहल' के संबंध में आपका कथन सही है कि पहल को बंद करते हुए न तो ज्ञानरंजन ने कोई शहीदी प्रदर्शन किया, न ऐसा निर्णय लेने का मजबूरी का ठीकरा दूसरे के सिर पर फोड़ा। शुक्लजी अज्ञेय के लेखन पर केन्द्रित पुस्तक 'अज्ञेय : कुछ रंग, कुछ राग' पर पत्रिका लगभग मौन है, जबकि आलोचना के क्षेत्र में यह एक महत्वपूर्ण कृति है। यहां यह उल्लेख अप्रासंगिक न होगा कि 5 मई, 2000 के अपने पत्र में मैंने इस पुस्तक में प्रकट विचार के संबंध में एक विस्तृत समीक्षात्मक टिप्पणी शुक्लजी के पास भेजी थी, जिसमें उनकी कुछ स्थापनाओं के साथ-साथ परसाईजी के लेखन पर उनके दृष्टिकोण को मैंने विशेष चर्चा की थी। 28 मई, 2000 के अपने प्रत्युत्तर में उन्होंने अपने पूर्व मत का समर्थन करते हुए सलाह दी थी कि मैं कमलाप्रसाद द्वारा संपादित पुस्तक 'आंखिन देखी' और प्रेम जनमेजय के साथ उनके द्वारा सम्पादित पुस्तक 'हिन्दी हास्य व्यंग्य संकलन' की भूमिका में परसाई के विषय में व्यक्त उनके विचारों का पढ़ूं। यहां यह सर्फेबयां गैरमौजूं न होगा कि भोपाल में पावस व्याख्यान माला के अवसर पर मैं शुक्लजी से दो-तीन बार मिल चुका था। अत: अप्रैल, 2000 में जब मैं डॉ. शरद नागर (सुपुत्र अमृतलालजी नागर) की छोटी बेटी दीक्षा (बबली) के विवाह में सम्मिलित होने लखनऊ गया था, तब स्वागत समारोह में शुक्लजी भी आये थे। समय लेकर अगले दिन मैं उनके निवास पर पहुंचा था। काफी बातें हुई थीं। मैं संकोचवश जल्दी रुखसत होना चाहता था, पर वे इतनी आत्मीयता से बातें हुई थीं। मैं संकोचवश जल्दी रुखसत होना चाहता था, पर वे इतनी आत्मीयता से बातें करते रहे कि घंटाभर कब बीत गया, पता ही न चला। उनकी सादगी और सहजता ने बहुत प्रभावित किया था। तभी उन्होंने अपनी पुस्तक 'अज्ञेय : कुछ रंग, कुछ राग' दी थी और लौटकर मैंने अपनी प्रतिक्रिया।

## श्रीलाल जी का पत्र सूर्यकांत नागर के नाम

आपका पत्र मेरे लिए उत्साहवर्धक है, जिस तन्मयता से आपने 'अज्ञेय: कुछ रंग. . .' को पढ़ा है, निश्चय ही यह पुस्तक उस कोटि के 'अवधान-दान' के योग्य नहीं थी। वस्तुत: कुछ नोट्स के आधार पर मौखिक रूप से दिए गए ये व्याख्यान थे जिन्हें संशोधित संपादित करके पुस्तक का रूप दिया गया। फलत: कुछ स्थापनाओं में जल्दबाजी भी है पर यदि आपको उसमें कुछ ऐसे मुद्दे भी दिखे हैं जो मौलिक चिंतन की अपेक्षा करते हों तो उसी में मेरे प्रयास की सार्थकता है। परसाई के विषय में वार्ताप्रवाह के अंतर्गत मैंने जो भी कहा हो, मेरा सुविचारित मत वही है जो इस पुस्तक में दिया है। डॉ. कमलाप्रसाद द्वारा सम्पादित पुस्तक 'आंखिन देखी' में मेरा परसाई विषयक निबंध भी काफी पुराना होते हुए भी प्रासंगिक है और आपको मिल सके तो अवश्य देख लें। नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित और मेरे (तथा प्रेम जनमेजय) द्वारा संपादित पुस्तक 'हिंदी हास्य व्यंग्य संकलन' में मेरी

भूमिका भी आधुनिक परिदृश्य में परसाई पर कुछ विस्तार से बात करती है।
बहरहाल, मैं कृतज्ञ हूं कि इन्हीं बहाने से आपका यह अत्यंत रुचिकर और सुरक्षणीय पत्र मिला।

**प्रतिभा आर्य, रुड़की**

'श्रीलाल शुक्ल' के विशेषांक से बहुत-सी पुरानी यादें ताज़ा हो आई। हमारे एक उपन्यासकार मित्र जिनका असमय अल्पायु में स्वर्गवास हो गया, इलाहाबाद के रहने वाले थे और दिल्ली के शिवाजी कॉलेज में प्राध्यापक थे। वे ही 'राग दरबारी' हमारे लिए इलाहाबाद से लाए। नई-नई छपी पुस्तक, बहुत चर्चित थी। मैंने तक पढ़ी, सबके बीच में इस पर खूब चर्चा भी हुई और इस पुस्तक के अच्छी सशक्त कृति की श्रेणी में रखा गया। बात यही पर समाप्त हो गई। 1970 से लेकर 1980 बीत गया व 1989 में वेदज्ञ जी के छात्र श्री सतीश बेकब जोकि बी.बी.सी. में वरिष्ठ पत्रकार थे ने बताया कि उनकी एक परिचित 'राग दरबारी' का अनुवाद कर रही है और उसमें सहायता चाहती है, फिर मेरा 'गिलियन राईट' से परिचय हुआ। गिलियन ने इंग्लैण्ड में संभवत: कैंब्रिज से हिंदी में स्नातकोत्तर परीक्षा पास की थी और हिंदी की अच्छी ज्ञाता थी। 'राग दरबारी' से वह बहुत प्रभावित थी अत: अंग्रेजी में इसका अनुवाद कर रही थी परंतु बीच में शब्दों के चयन में कठिनाई आ रही थी।
अनुवाद पर विचार चाय की तर्ज पर, चाय के प्याले के साथ होने लगा। गिलियन कुछ पृष्ठ अनुवाद करके लाई, तब मूल पुस्तक व अनुवाद दोनों को फैलाकर एक-एक शब्द पर विचार होता। विचार विमर्श के साथ विवाद भी होता। जितनी सरलता पूर्वक शुक्ल जी ने नए शब्दों का निर्माण व चयन किया, उनका अनुवाद उतना ही कठिन। उपन्यास के पहले की वाक्य ने हम दोनों के खूब उलझाया। फिर धीरे-धीरे अनुवाद रफ्तार पकड़ने लगा. . .परंतु जब 'ऐ मास्टर साहब, तुम क्यों टिलटिल कर रहे हो' जैसे वाक्य आ जाते तो गिलियन व मुझमें बहस का मुद्दा यही होता कि अनुवाद ठीक है परंतु भाषा में तीखापन नहीं आ रहा। शुक्ल जी के उपन्यास 'राग दरबारी' के पाठकों ने अनुभव किया होगा कि उनकी भाषा इतनी चुटीली व सजीव है कि उसका अनुवाद एक परीक्षा से कम नहीं। खैर उपन्यास पूरा हुआ और छपा। मुझे विश्वास है कि गिलियन ने इसकी एक प्रति शुक्ल जी को अवश्य भेंट की होगी। एक विदेशी पाठिका के द्वारा हिंदी के उपन्यासों में 'राग दरबारी' को चुनना व अनुवाद करना, इस उपन्यास की महत्ता को ही बताता है। बाद में गिलियन ने राही मासूम रजा के 'आधा गांव' का भी अनुवाद किया। मैंने जब उससे इन उपन्यासों के चुनने का कारण पूछा. . .क्योंकि 'आधा गांव' में भी भेदस भाषा का शब्दावली की भरमार थी जिनका अनुवाद थोड़ा समस्याप्रद था. . .जब उसका कहना था कि उपन्यास कम चित्र अधिक है। मुझे इसमें जीवंत स्थानीय रंग दिखाई दिया।

**नईम, देवास**

व्यंग्य यात्रा का अप्रैल-सितम्बर अंक दो दिन पहले ही मिला। दसियों परिचित और पठनीय लाभ भरा पते के हाथ लगे। अब आदतन पढ़कर उन्हें अवगत कराना है। इतनी सुंदर ओर सुरुचिपूर्ण पत्रिका के लिये मेरी बधाई स्वीकारो। पता नहीं इस मंहगे मौसम में इसे कैसे रूपाकार दे देते हो। चंदा भेजना मेरे बूते से बाहर, सो क्षमा चाहता हूं।
कन्हैयालाल नंदन के महोत्सव के रंगीन फोटो दिये। रिपोर्टर स कहीं बेहतर उत्सवी सुलूक व्यंग्य यात्रा न किया। जिन मित्रों का वर्षों से दरस परस नहीं हुआ था वो भी रचना और पते के हाथ नमूदार हो गये। उन सबसे दुआ सलाम तो करनी पड़ेगी। बड़ों का आदाब, छोटों का दुआयें प्यार। सहयोगियों को यथायोग, इतना ही।
**नईम जी का यह पत्र 'व्यंग्य यात्रा' की फाइलों में लापता हो गया था। बहुत ढूंढा पर पत्र ने जैसे न मिलने का तय कर लिया था। जिस दिन नईम जी के स्वर्गवास का समाचार मिला, उस दिन जैसे ही फाइल में ढूंढा, यह तत्काल मिल गया। नईम जी का 'व्यंग्य यात्रा' को निरंतर स्नेह मिला है। उनकी याद दिलाता पत्र प्रस्तुत है- संपादक**

**मनमोहन सरल, मुंबई**

सच में आपने बहुत परिश्रमपूर्वक श्रद्धेय श्रीलाल जी पर यह अंक निकाला है। बहुत सी नई सूचनाएं उन पर छपे लेख देते हैं।

## 'व्यंग्य यात्रा' दूरदर्शन पर

**दूरदर्शन द्वारा प्रसारित, हिंदी - साहित्यिक संसार की एकमात्र नियमित दृश्य-पत्रिका 'पत्रिका' का बुधवार 25 मार्च, 2009 का अंक 'व्यंग्य यात्रा' पर केंद्रित था। 'पत्रिका' के इस अंक के आरंभ में, हिंदी व्यंग्य के समकालीन परिदृश्य में 'व्यंग्य यात्रा' की भूमिका की चर्चा थी। इस चर्चा में भाग लेने वाले थे- कन्हैयालाल नंदन, प्रदीप पंत और हरदयाल'। इसके पश्चात 'व्यंग्य यात्रा' के संपादक, प्रेम जनमेजय से चर्चित व्यंग्यकार हरीश नवल ने बातचीत की। इस सामग्री को 'व्यंग्य यात्रा' के आगामी अंक में प्रकाशित किया जाएगा। अंत में 'व्यंग्य श्री-2009' सम्मान की विस्तृत रिपोर्ट प्रसारित की गई।**

## 'राग दरबारी का देस राग'

**'पत्रिका' का बुधवार 25 जून, 2009 अंक हिंदी साहित्य की कालजयी कृति 'राग दरबारी' पर केंद्रित था। 'पत्रिका' के इस अंक में प्रख्यात आलोचक प्रो. निर्मला जैन से प्रेम जनमेजय ने बातचीत की, गंगाप्रसाद विमल, प्रदीप पंत एवं हरीश नवल ने चर्चा की तथा सत्यकाम ने 'राग दरबारी' की समीक्षा प्रस्तुत की। इस सामग्री को भी 'व्यंग्य यात्रा' के आगामी अंक में प्रकाशित किया जाएगा।**
**'लोक सभा' के चैनल में प्रसारित ज्ञानेंद्र पांडेय द्वारा लिए गए साक्षात्कार में चर्चित रचनाकार अशोक चक्रधर ने व्यंग्य-साहित्य में 'व्यंग्य यात्रा' की गंभीर भूमिका की विस्तुत चर्चा की। व्यंग्य साहित्य के प्रशंसकों को इस बात का संतोष तो होगा ही कि दूरदर्शन की साहित्यिक दुनिया में व्यंग्य को शूद्र मानकर उसकी उपेक्षा नहीं होती है।**

# विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में 'व्यंग्य यात्रा' चर्चा

## पत्रिकाएँ

### व्यंग्य यात्रा

सम्पादक प्रेम जनमेजय 'व्यंग्य यात्रा' त्रैमासिकी को पूरी गम्भीरता के साथ निकाल रहे हैं। इसका नया अंक श्रीलाल शुक्ल पर केन्द्रित है। हिन्दी गद्य में श्रीलालजी का क्या महत्त्व है, यह बताने की जरूरत नहीं। उनका उपन्यास 'राग दरबारी' हिन्दी की सबसे अधिक पढ़ी जाने वाली कृति है। 'व्यंग्य यात्रा' का अधिकांश 'राग दरबारी' को ही समर्पित है। उन्नीस के आसपास, नए-पुराने आलेख इस उपन्यास पर केन्द्रित हैं। निर्मला जैन का लेख 'इक्कीसवीं सदी में रागदरबारी' इस महान कथाकृति को फिर से पढ़ने के लिए कुछ महत्त्वपूर्ण सूत्र/सुझाव देता है। खगेन्द्र ठाकुर, राजेश जोशी, नित्यानन्द तिवारी और ज्ञान चतुर्वेदी आदि के लेख पठनीय हैं। श्रीलाल जी की कुछ दूसरी पुस्तकों पर कृष्णदत्त पालीवाल, मुरलीमनोहर प्रसाद सिंह, भारत भारद्वाज, हरजेन्द्र चौधरी, जवाहर चौधरी, निर्मला एस. मौर्य, बलराज पांडेय, वीरेन्द्र मोहन, राधा दीक्षित आदि ने अपने विचार व्यक्त किए हैं। मित्रों प्रशंसकों और परिवारजनों के संस्मरण पत्रिका को महत्त्वपूर्ण बनाते हैं। कन्हैयालाल नन्दन, रामशरण जोशी, गंगाप्रसाद विमल, गोपाल चतुर्वेदी, कमलेश अवस्थी, शेरजंग गर्ग, अशोक चक्रधर, अलका पाठक, साधना शुक्ल और अनूप श्रीवास्तव आदि ने अपने अनुभवों से अवगत कराया है। अंक की विशेष सामग्री साक्षात्कार के रूप में है जो प्रेम जनमेजय, गोपाल चतुर्वेदी, शेरजंग गर्ग ने प्राप्त की है। साक्षात्कार के बाद 'आओ बैठ लें कुछ क्षण' भी इसी प्रकृति की प्रस्तुति है। यह बात और है कि श्रीलाल जी की अस्वस्थता के कारण कुछ सवाल शायद प्रश्नकर्ताओं के भीतर ही घुमड़ते रह गए। यह भी कि व्यंग्य, परसाई आदि पर संवाद करते समय प्रश्नकर्ता कुछ पुरानी बातों में उलझकर रह गए। यह बात भी मनोरंजक लगती है कि श्रीलाल जी की पुस्तकों पर लिखते हुए या उनके व्यक्तित्व पर टिप्पणी करते हुए ज्यादातर लोग 'रसरंजन' को 'अनिवार्य कथा रूढ़ि' की तरह अपनाते हैं। मेरे विनम्र मत से इससे सिवाय यह सिद्ध करने के कि आप कभी या किसी मौके पर श्रीलाल शुक्ल के पास बैठ सके और कुछ भी साबित नहीं कर सकते। ऐसी 'कथा रूढ़ियों' से बचना चाहिए। इनसे हटकर अशोक चक्रधर का लेख एक उदाहरण है कि श्रीलाल शुक्ल जैसे रचनाकार पर किस तरह लिखना चाहिए। बहरहाल, 'व्यंग्य यात्रा' का यह विशेषांक संग्रहणीय है। प्रेम जनमेजय ने व्यंग्य के वटवृक्ष के नीचे बैठने का अवसर पाठकों को प्रदान किया है। (व्यंग्य यात्रा: सं. प्रेम जनमेजय; 73 साक्षर अपार्टमेंट्स, ए-3 पश्चिम विहार, नयी दिल्ली; एक प्रति 20 रु.)।

—सुशील सिद्धार्थ

## इंडिया टुडे

### दरबारी के शुक्ल

**व्यंग्य यात्रा: त्रैमासिकी श्रीलाल शुक्ल पर केंद्रित**

(संपादक: प्रेम जनमेजय; संपर्क: 73, साक्षर अपार्टमेंट्स, ए-3, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-63 कीमत: 20 रु.)

किसी व्यंग्य पत्रिका का अंक अगर श्रीलाल शुक्ल पर केंद्रित हो तो लाजिमी है कि विमर्श कमोबेश *राग दरबारी* के इर्द-गिर्द घूमेगा. *व्यंग्य यात्रा* में चली बहस में नित्यानंद तिवारी, निर्मला जैन और ज्ञान चतुर्वेदी वगैरह ने इस क्लासिक कृति

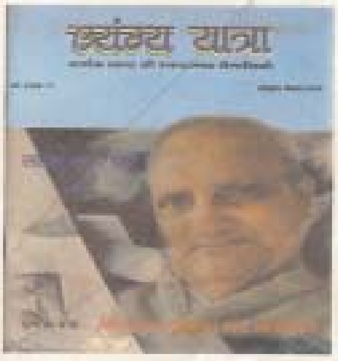


को नए नजरिए से देखने की दिलचस्प कोशिश की है. इस अंक को देखने-पढ़ने के बाद ऐसा लगता है कि इसकी तैयारी के लिए छोटा-मोटा आंदोलन टाइप चला है. शुक्ल से साक्षात्कार लेने के लिए तीन-तीन लेखक लगे. कुछ ने तो पुर्जे पर सवाल लिख भेजे. शुक्ल के व्यक्तित्व और रचनाकर्म पर बीसियों समकालीनों की टिप्पणियां हैं. खुद शुक्ल के भी कई लेख हैं. पर बेहतर सामग्री होने के बावजूद दोस्तों, मुखपृष्ठ से लेकर आखिर तक इसका कलेवर बेहद फीका है. इससे अत्यंत पठनीय और मूल्यवान सामग्री का मजा किरकिरा हो जाता है. कलेवर पर अगर थोड़ी मेहनत की जाती तो सोने पे सुहागा होता. बहरहाल अंक के लिए सामग्री जुटाने पर हुई मेहनत की दाद देनी होगी. सुघड़ता बढ़ती तो सामग्री और पठनीय ही बनती. —ओम नारायण

25 मार्च 2009 • इंडिया टुडे 63

## हिन्दी प्रचारक पत्रिका

### साहित्यकार श्रीलाल शुक्ल पर केन्द्रित व्यंग्य यात्रा प्रकाशित

नई दिल्ली से प्रकाशित सार्थक व्यंग्य की रचनात्मक त्रैमासिकी 'व्यंग्य यात्रा' का वरेण्य साहित्यकार श्रीलाल शुक्ल पर केंद्रित विशेषांक (अक्टूबर-दिसंबर 2008) प्रकाशित हुआ है। इसमें देश के विख्यात साहित्यविदों, आलोचकों एवं लेखकों के अनेकानेक लेख शुक्लजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का काफी कुछ लेखा-जोखा प्रस्तुत करते हैं जो पठनीय है। उपन्यास, कहानी, व्यंग्य, निबंध, आलोचना आदि के परिदृश्य में शुक्लजी के योगदान से हिन्दी साहित्य जगत परिचित है, पर एक साथ सब कुछ पढ़ने और समझने के लिए 'व्यंग्य यात्रा' का यह अंक अनिवार्य है। इस परिप्रेक्ष्य में अंक संग्रहणीय भी है।

इस पत्रिका के यशस्वी संपादक श्री प्रेम जनमेजय हैं जिनके अथक प्रयास से 'व्यंग्य यात्रा' गत पांच वर्षों से निकल रही है जिसका राष्ट्रीय स्तर पर प्रबुद्ध पाठकों ने स्वागत भी किया है। इसके लिए प्रकाशन के सहयोगी बधाई के पात्र हैं। संपर्क– संपादक, 73, साक्षर अपार्टमेंट्स, ए-3, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110063

## दैनिक जागरण

'दैनिक जागरण' के कानपुर संस्करण में तीन अच्छी पत्रिकाओं के अंतर्गत 'पूर्वग्रह', 'अप्रतिम' एवं 'व्यंग्य यात्रा' की चर्चा की गई है। 'व्यंग्य यात्रा' के श्रीलाल शुक्ल पर केंद्रित अंक के बारे में समाचार पत्र का कहना है- हिंदी व्यंग्य की त्रैमासिक पत्रिका 'व्यंग्य यात्रा' ने शीर्षस्थ व्यंग्य लेखक श्रीलाल शुक्ल पर केंद्रित अपने नये अंक में उनके व्यक्तित्व और कृतित्व, परिश्रमपूर्वक जुटाकर, महत्वपूर्ण सामग्री दी है। सर्वाधिक चर्चित उपन्यास 'राग दरबारी' पर 14 मूल्यांकन परक लेख हैं। उनकी अन्य कृतियों, रचना- प्रक्रिया और जीवन संघर्ष आदि पर भी कई जाने माने साहित्यकारों ने कलम चलाई है। श्रीलाल शुक्ल से प्रेम जनमेजय, शेरजंग गर्ग और गोपाल चतुर्वेदी की बातचीत इस अंक की उपलब्धि है।

कई लोगों के संस्मरण अच्छे हैं। सिवाय उनके जो श्रीलालजी के बहाने से अपने को महान दिखाने की कोशिश कर रहे हैं, जोकि वे हैं नहीं, ऐसे कुछ को मैं भी निकट से जानता हूं। वे अनुपस्थित रेखा से अपनी बड़ी रेखा जबरन खींचकर उनसे बड़ा साबित करना चाहते हैं। खैर, यह तो हिन्दी और हिन्दी के साहित्यकारों का दुर्भाग्य है कि वे आत्मप्रशंसा का कोई अवसर नहीं छोड़ते।

श्रीलाल जी से मेरी संक्षिप्त मुलाकात उनके इंदिरा नगर वाले घर में हुई थी। वह शाम का समय था और वे नियमत: संध्या वंदन (सेवन) कर रहे थे। मुझे मेरे अग्रज पं. रुद्रनारायण शुक्ल अपने साथ ले गए थे, रुद्र जी टाइम्स ऑफ इंडिया से रिटायर होने के बाद लखनऊ में ही बस गए थे। धर्मयुग के समय उनसे मुझे भाई जैसा स्नेह प्राप्त था। उस शाम न तो साहित्य पर बात करने का मौका था और न उसका कोई औचित्य था। बस, इस तरह एक महान साहित्यकार के दर्शन मात्र हो सके थे।

अब उस शाम को नमक-मिर्च लगाकर, बढ़-चढ़कर संस्मरण जैसा लिखा जा सकता था; झूठा-सच्चा कुछ जोड़कर किंतु ऐसा लेखन मेरे स्वभाव में नहीं है। 'धर्मयुग' के दिनों की यही नहीं, अनेक ऐसी स्मृतियां हैं जिनको 'कैश' किया जा सकता है पर...'

### हरमन चौहान, उदयपुर

'व्यंग्य यात्रा' का यह अंक आदरजोग श्रीलाल शुक्ल जी पर निकाला, हिन्दी साहित्य में हजारों पाठकों की ओर से आपको बधाइयां। इस अंक को देखकर मैं अचंभित हो गया कि इस अंक के लिए मेरे प्रेमजी कितनी कठिनाइयां, मुसीबतें और संघर्ष झेलकर इस अंक को सार्थकता प्रदान की। आपने इस अंक के लिए पता नहीं क्या-क्या खोजबीन की होगी और किन-किन लोगों को इस बारे में लिखने के लिए दायित्व सौंपा होगा? आपने पता नहीं कितने लोगों से संपर्क साधा होगा और पता नहीं इसमें कितने महीने लगे होंगे? मैं धर्मयुग के संपादक डॉ. धर्मवीर भारती जी के गाहे-बगाहे विशेषांक निकालने के बारे में पूछता था तो वह यही उत्तर देते थे कि पत्रिका का विशेषांक निकालना अपनी कल्पना के साथ साकार करने के लिए बहुत लोगों का सहयोग जरूरी है। सहयोग मित्रगण ही देते हैं। श्रीलाल शुक्ल जी के इस विशेषांक को निकालने में आपका परिश्रम, आपकी मेहनत, आपकी लगन और मित्रों से सतत संवाद रखना ही होता है। इस अंक को देखकर मुझे तो हिन्दी साहित्य में व्यंग्य विधा के बारे में संपूर्ण जानकारी आपके 'व्यंग्य यात्रा' अंकों में मिली है।

मुझे ताज्जुब हो रहा है कि आप ऐसे सक्षम अंक 'टू दी पोइन्ट' निकालते रहे हैं, उसके लिए आपको साधुवाद। अंक भले ही विलंब से निकले, लेकिन आपके इस अथक प्रयास को कोई नहीं भुला पाएगा। आपका हिंदी साहित्य में यह योगदान किसी भी व्यंग्य पत्रिका के मुकाबले में सर्वश्रेष्ठ ही नहीं अद्वितीय है।

आपकी व्यंग्य यात्रा के सारे अंक 'धर्मयुग' की तरह संग्रहणीय है। खैर, वो पत्रिका तो पारिवारिक थी, पर आपकी पत्रिका केवल विशिष्ट रूचि रखने वालों के लिए ही है और रहेगी, इसका महत्व अन्य पत्रिकाओं से अधिक बन पड़ता है।

### रामदरश मिश्र, नई दिल्ली

श्रीलाल शुक्ल अंक के लिए बधाई हो। बहुत अच्छा अंक निकाला है। श्रीलाल जी अपनी पूरी अस्मिता से इसमें विराजमान हैं।

### प्रमोद ताम्बट, भोपाल

व्यंग्य यात्रा का श्रीलाल जी पर केन्द्रित अंक मिला। क्या कहूं, आपके पसीने के बूंदों से मेरा पूरा घर भींग गया। वाकई आपने और आपकी सहयोगी टीम ने जो श्रम साध्य कार्य किया है वह काबिले तारीफ है। इस वृहत आयोजन का पूरा-पूरा श्रेय निसंदेह आपको जाता है। आपका यह आयोजन मील का पत्थर साबित होगा इसमें कोई संदेह नहीं।

लेकिन. . .फिर भी. . .किन्तु. . .परन्तु. . ., कुछ बातें हैं जिनका जिक्र करना जरूरी समझता हूं। सबसे पहली बात, राग दरबारी की चर्चा इतनी ज़्यादा हो गई है कि श्रीलाल जी का बाकी साहित्य उपेक्षित-सा होता लगता है। वैसे भी इसे श्रीलाल जी का दुर्भाग्य ही कहा जा सकता है कि 'राग दरबारी' के चौंधियाते आभा मण्डल के सामने उनका शेष साहित्य हमेशा निस्तेज-सा रहा है। फिर राग दरबारी पर उसके प्रकाशन के बाद से ही प्रचूर लिखा गया है, पुन: वही राग-विराग, वह भी इतने सारे लेखकों द्वारा, खामोखां का दोहराव-सा प्रतीत होता है। इसके बाद भी यदि यह आवश्यक ही था तो हर लेखक को इस महान कृति पर अलग-अलग दृष्टिकोण से लिखने के लिए कहा जाता तो अच्छा होता, प्रकाशित लेखों में दोहराव-तिहराव की स्थिति से भी बचा जा सकता था।

आपने 'आरंभ' में उद्गार प्रकट किया है कि लगता है व्यंग्य यात्रा इस योग्य नहीं हुई है कि कुछ विशिष्ट रचनाकारों का सहयोग पा सके। अपेक्षाकृत सहयोग ना मिल पाने की आपकी पीड़ा आसानी से समझी जा सकती है। वास्तव में, श्रीलाल जी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर जिस विहंगम दृष्टिपात की आवश्यकता थी उसके लिए समकालीन आलोचकों, समालोचकों एवं लेखकों के जमावड़े की कमी काफी खलती

माननीय कृष्णदत्त पालीवाल जी बाल की खाल उतारने के विशेषज्ञ हैं। श्रीलाल जी की अज्ञेय जी पर केन्द्रित आलोचना/समीक्षा पुस्तक 'कुछ राग कुछ रंग' पर उनके प्रस्तुत आलेख की अपेक्षा यदि श्रीलाल जी के सम्पूर्ण रचनाकर्म पर उनका आलेख प्राप्त किया जाता तो मैं समझता हूं व्यंग्य यात्रा को बहुत ही उपयोगी दस्तावेज मिल जाता।

फिर, बड़े लेखकों की व्यक्तिगत जीवनशैली, जीवन संघर्ष, रचना-प्रक्रिया के बारे में सभी के मन में एक स्वाभाविक कौतूहल रहता है। इस विशेषांक में ऐसे लेखों, संस्मरणों की कमी महसूस होती है। कुछ रचनाएं है परन्तु उससे आत्मा तृप्त नहीं होती। लेखक के व्यक्तिगत, साहित्यिक पत्रचार भी नई पीढ़ी के रचनाकारों के लिए काफी कुछ सिखाने वाले होते हैं, ऐसे पत्र भी विशेषांक में शामिल नहीं हैं। कुल मिलाकर एक जबरदस्त, मोटे-ताजे और सफल विशेषांक के बावजूद मुझे लगता है कि अभी काफी कुछ श्रीलाल जी पर लिखा जाना बचा हुआ है जो एक और ऐसे ही आयोजन के लिए पर्याप्त कारण उपलब्ध कराता है।

बहरहाल, जिन-जिन महानुभावों ने आपको अपेक्षित सहयोग देने में आनाकानी की है वे

सब इस महत्वपूर्ण विशेषांक के माध्यम से एक ऐतिहासिक दस्तावेज का हिस्सा बनने से रह गए हैं। उन्हें इस बात का कोई अफसोस हो या ना हो मुझ जैसे छोटे-छोटे सैंकड़ों व्यंग्यकारों को इस बात का हमेशा मलाल रहेगा।

### डॉ. विवेकी राय, गाजीपुर

ऐसी सुंदर पत्रिका को पाकर मन ही मन प्रफुल्लित होता रहा हूं। यह अलग बात है कि अपनी भावनाओं को अब तक कागज पर नहीं उतार सका था। उम्र का वार्धक्य, नाना प्रकार की आधि-व्याधियां और घरेलू प्रपंच इस कार्य में आड़े आते रहे। अपने समय के स्थापित व्यंग्यकारों के साथ ही नवोदित व्यंग्यकारों को एक मंच पर लाकर आपने सराहनीय कार्य किया है।
सार्थक व्यंग्य की इस त्रैमासिकी से हिंदी व्यंग्य का जो समकालीन परिदृश्य उभरता है, वह आलोचकों को नए सिरे से अपनी ओर आकृष्ट करता है। 'अंक' में सम्मिलित कुछ रचनाकारों को अगर छोड़ दिया जाए तो अधिकांश ने इस क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया है। मुझे खुशी है कि ऐसे स्वनामधन्य रचनाकारों की प्रतिनिधि रचनाओं से आप व्यंग्य के पाठकों को भरपूर सामग्री दे रहे हैं। पत्रिका के सभी कॉलम बढ़िया लगे। रचनाओं के चयन को देखकर आपकी चयन क्षमता को दाद देनी पड़ती है। 'आरंभ', 'पाथेय', 'चिंतन', 'चिंता', 'आप चंदन घिसें' जैसे शीर्षक भला किसका मन नहीं मोह लेते?

### श्रीकांत चौधरी, दमोह

इस अंक में जो तथ्य सामने उभरकर सामने आता है और जो ऐसे किसी अंक के संपादन कौशल की विशिष्ट उपलब्धि और सार्थक प्रयास कहा जा सकता है वो यह कि किसी मूर्धन्य लेखक या महापुरुष के सानिध्य में न होने के बावजूद एक साधारण पाठक भी ऐसे रचनाकार के जाने अनजाने व्यक्तित्व और कृतित्व से बहुत परिचित, आत्मीय अनुभूति से साक्षात्कार करता है किसी प्रसिद्ध स्थापित नाम और रचनाओं को जान लेना, पढ़ लेना एक किताबी अध्ययन जैसा है परंतु श्रीलाल शुक्ल जी या उन जैसे अन्य मूर्धन्य लेखकों के संबंध में 'व्यंग्य यात्रा' यात्रा जैसा कोई विशेषांक निकाले और उसमें सब कुछ सच-सच न लिखें।
बहुत कम लोगों को मालूम है कि प्रसिद्ध गीतकार 'नईम' जो इन दिनों गंभीर रूप से बीमार इंदौर के एक अस्पताल में आई.सी.यू. में भर्ती हैं। शरद जोशी के साढ़ूभाई हैं। श्रीमती नईम व इरफाना शरद सगी बहिनें हैं। आज से पच्चीस-तीस वर्ष पूर्व जब देवास में मैंने नईम भाई साहब से पूछा था- नेहा और रिचा वहां आई हुईं थी- कि क्या शरद भाई, हरिशंकर परसाई से कुछ पूर्वाग्रह रखते हैं, नाराज हैं? तो नईम भाई ने कहा, 'दोनों दिग्गज लेखक हैं, उनके वैचारिक मतभेद तो होते ही हैं परंतु शरद जी के मन में उनसे परसाई जी से बिछड़ जाने का एक दुखद अहसास बना रहता है। वस्तुत: दोनों में एक-दूसरे के प्रति अपार स्नेह है, आदरभाव है' और मैं समझता हूं कि निष्पक्ष समीक्षा से इन लेखकों के बीच आपसी दुराग्रह, द्वेषभाव एक अप्रिय अनपेक्षित-अवांछित कृत्य है अगर इसकी अभिव्यक्ति लेखक सार्वजनिक तौर पर करता है। परसाई जी या शरद जी के मध्य कोई अप्रिय प्रसंग या हल्कापन कभी देखने सुनने में नहीं आया।
टीवी सीरियल में शरद जोशी लिखित 'ये जो है जिंदगी' बेहद लोकप्रिय सीरियल था जिसने शरद जोशी को सीधे आम दर्शकों से जोड़ दिया, हालांकि आम दर्शक फल खाने से मतलब रखता है, फल देने वाले पेड़ से उसे क्या मतलब। इस सीरियल की नकल करके शरद जोशी का नाम गायब करके फिल्मस्टार शाहरुख खान ने कोई नया सीरियल टी.वी. पर दिया है और इससे क्षुब्ध होकर नेहा शरद ने (शरद जी की पुत्री) कापी राईट एक्ट के अंतर्गत सीरियल के प्रोड्यूसर डायरेक्टर पर मुकदमा भी दायर कर दिया, जिसकी सुनवाई बहुत अर्सा बाद अब शुरू हुई।
एक अंक सामान्य भी निकालना ताकि वर्षों से प्रतीक्षारत व्यंग्य सामने आ जाए। द्वैमासिक होने से यह विकट समस्या हल हो सकती है 'सामान्य अंक' भी विशिष्ट अंक ही हो जाएगा।

### डॉ. भगवानदास एन. कहार, दिल्ली

आप द्वारा प्रेषित 'व्यंग्य यात्रा' का

### र० शौरिराजन, चेन्नई

बहुत पहले से रचनाओं की मार्फत आपकी रचनाओं से पठनबंधन होता आ रहा है। विशिष्ट काम, नाम-बधाई। 'व्यंग्यश्री सम्मान-09' के निमित्त भी साधुवाद, जो पात्रता की हकदार प्राप्ति है।
मेरे प्रियवर साहित्य शिल्पी श्रीलाल शुक्ल पर केन्द्रित अंक भेजकर मुझे और गौरवान्वित किया है, लीलाधर जंगूडी आदि ने भी बहुत पहले श्रीलाल जी पर विशेषांक निकाले हैं, फिर भी आपका व्यंग्य यात्रा अंक अद्भुत, अति उत्तम! एकाग्र साधना अनूठी है।

जैसी पत्रिका में संग्रहीत सामग्री के माध्यम से जानना समझना अपने आप में एक विकट अनुभव है, विरल अनुभव है हालांकि सभी संपादक यथासंभव महान व्यक्तित्व के छोटे या कटु प्रसंगों से कन्नी काट जाने में ही अपनी व चर्चित व्यक्तित्व की भलाई समझते हैं पर यह काबिले तारीफ है, स्तुत्य है कि श्रीलाल जी ने बहुत बेबाकी से बिना संकोच, सहज भाव से स्वयं अपनी खामियों को उजागर किया है। शायद हर बड़े व्यक्तित्व की यही खूबी है कि वह अपने को कभी बड़ा मानकर नहीं चलता।
स्वाभिमानी होना सहज अपेक्षित है एक लेखक के लिए, परंतु अहंकारी होना एक दुर्गुण ही है।
इसी तारतम्य में पता चला कि 'व्यंग्य यात्रा' का शरद जोशी पर भी विशेषांक निकालने जा रहे हो। अपनी जमा (व्यंग्यकारों की जमात) के अग्रजों, प्रेरणापुरुषों, मार्गदर्शकों का कर्ज चुकाने, उनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने का इससे बेहतर कोई तरीका नहीं- अब तुम तो समकालीन हो और मैं परसाई-जोशी बनते-बनते रह गया- मन में अवश्य यही समझता रहा कि मैं उनसे बेहतर हो सकता हूं पर जैसा कि मैंने कहा कि बड़े लोग अहंकारी नहीं होते, मैंने भी विनम्रतावश किसी से कहा नहीं परंतु आगामी पीढ़ियों से हमें अपेक्षा करनी चाहिए कि वे हमारे ऊपर हमारे जीवनकाल में ही व्यंग्य

अक्टूबर-दिसंबर 2008 (श्रीलाल शुक्ल पर केन्द्रित) अंक मिला। व्यंग्य साहित्य के नए-नए मोड़ों को उद्‌घाटित करता रहेगा। इस दिशा में अपने व्यंग्यालोचकों को भी सहभागी बनाया है। एतद् विषयक शोधार्थियों के लिए आपकी यात्रा-पथ का पगचिन्ह पग-पग पर दिशा-निर्देशन करता रहेगा। मैंने व्यंग्य समीक्षा पर केन्द्रित एक पुस्तक आपको प्रेषित की है जिसमें व्यंग्यकारों पर मेरी अलग-अलग से की गई समीक्षाएं हैं। मिली होगी। बस चंदन घिस रहा हूं। कभी तो 'राम' मिलेंगे और तब 'भाल तिलकित चंदन कितना सार्थक हो सकेगा, यह तो राम ही जाने।

**दामोदर दत्त दीक्षित, मेरठ**

मानना पड़ेगा, बहुत ही मनोयोग, जतन और परिश्रम से विशेषांक निकाला है आपने। बहुकोणीय मूल्यांकन महत्वपूर्ण हैं। अनौपचारिक साक्षात्कार श्रीलाल शुक्ल के व्यक्तित्व को परत-दर-परत उजागर करते हैं। उन पर पहले भी विशेषांक निकल चुके हैं। ऐसे में सुखद है कि आपने पिष्टपेषण के बजाय लगभग सारी सामग्री नयी जुटायी है। बहुत से प्रतिष्ठित लेखकों से रचनात्मक सहयोग लेने में समर्थ हुए हैं। खण्डों को श्रीलाल शुक्ल की पुस्तकों के नामों में थोड़ा हेर-फेरकर रोचक बनाया गया है। उत्तम, ज्ञानवर्धक और संग्रहणीय विशेषांक के लिए बहुत-बहुत बधाई।
शुभास्ते पंथान:।

**छगनलाल सोनी, दुर्ग**

व्यंग्य यात्रा के अंक 15-16 (अप्रैल-सितंबर 2008) में माँ के निधन का समाचार मिला अपनी बात में संपादकीय पढ़कर आपकी संवेदना एवं माँ की जिजिविसा पढ़कर कुछ बल मिला। माँ माँ होती है, किसी एक की नहीं बल्कि सबको माँ होती है। वह इसलिए कि माँ न जाने कितने बार जाने अनजाने एवं बेगाने लोगों को बेटे का संबोधन एवं आशीर्वाद देती है अत: व्यंग्य यात्रा के अंक में माँ का जिक्र करके आपने एक वसुंधरा को आमजन एवं पाठकगण की श्रद्धांजलि दी है।
दो माह से यह लिफाफा पता लिखा तैयार था किंतु पढ़ने-लिखने तथा कुछ दूसरी व्यस्तताओं के चलते लिख नहीं सका. . . हमारे मुहल्ले में कैंसर की दो घटनाएं घटी पहली मरीज महिला थी जो साल भर जीवित रही जबकि दूसरी पेशेंट उसे मरता देखने के बाद अपनी बीमारी जानकर कमजोर इच्छा शक्ति के चलते चल बसी। इसी दौरान मुझे आपके लेख का ध्यान आया कि अपकी अम्मा अपनी इच्छा शक्ति के चलते तेरह माह तक जीवित रही। जिसमें आपके सेवाभाव का भी बराबर योगदान रहा। जन्मदायिनी माँ के सेवा के दो लाभ हुए पहला यह कि आप बतौर फर्ज से। कर्ज से मुक्त हुए। दूसरा लाभ इस स्वार्थी दुनिया में जहां लोग अपने में ही सिमटे जा रहे है। आपने माँ की सेवा का बीड़ा उठाया इसका भी फल भविष्य में मिलेगा जरूर मिलेगा। व्यंग्य यात्रा को भी मां का आशीर्वाद मिलेगा। यह मेरी शुभकामनाएं हैं।

## 'संचेतना' उवाच

. . . यह पत्रिका अपने हर अंक के साथ कुछ ऐसी विशिष्ट सामग्री ला रही है, जिस पर चर्चा करना अनवार्य-सा लगता है। इसका नया अंक श्रीलाल शुक्ल पर केंद्रित है। कुछ रचनाएं नहीं बल्कि पूरा अंक ही। इस अंक में श्रीलाल शुक्ल पर इतनी सामग्री है कि उस सब का उल्लेख कर पाना भी यहां संभव नहीं है। व्यक्तित्व के इलावा कृतित्व की पूर्ण चर्चा। उनके व्यक्तित्व को तो साक्षात्कारों ने ही उभार दिया है, और 'राग दरबारी' को पंद्रह आलेखों में पुन: जांचा-परखा गया है। किंतु जो आत्मीय संस्मरण हैं, उनका एक अलग ही रूप है ओर शायद इसलिए उन्हें 'कुछ रंग कुछ राग' के अंतर्गत छापा गया है। कन्हैयालाल नंदन, रामशरण जोशी, गोपाल चतुर्वेदी, शेरजंग गर्ग, अशोक चक्रधर, अलका पाठक, तेजेंद्र शर्मा आदि के संस्मरण श्रीलाल शुक्ल के व्यक्तित्व की अनेक पर्तों को खोलते हैं। निश्चित रूप से यह 'भरती का अंक' न होकर एक सार्थक और संग्रहणीय अंक है। **– सुरेंद्र तिवारी**

**डॉ. जयन्ती लाल नौटियाल, मंगलूर**

मैं व्यंग्य यात्रा का आरंभ से ही पाठक रहा हूं। पत्रिका में उत्तरोत्तर निखार एवं गुणवत्ता से समझौता किए बिना इसकी निरंतर बढ़ती मोटाई अर्थात पृष्ठ संख्या निश्चित ही इनकी लोकप्रियता का प्रमाण है।
पत्रिका में सामग्री चयन, प्रस्तुतिकरण एवं अभिन्यास काबिले तारीफ है। व्यंग्य-विधा में ऐसी उत्कृष्ट पत्रिका की कमी काफी समय से महसूस की जा रही थी, यह कमी आपने इस पत्रिका के माध्यम से पूरी कर दी है।

**विजय प्रकाश बेरी, वाराणसी**

आपने साहित्य में व्यंग्य विधा की सूक्ष्मता और क्षमता से आधुनिक लेखकों और पाठकों को सुपरिचित कराने का स्तुत्य कार्य किया है। व्यंग्य की धार पर चलना एक साहसिक कार्य है, जो गिने-चुने लेखकों में ही देखने को मिलता है। लेकिन आपने अपने श्रमनिष्ठ सम्पादन कौशल से अनेक नए व्यंग्यकारों से भी परिचित कराया है। 'व्यंग्य यात्रा' से होकर पाठकीय मन का गुजरना सुखद एवं संतोषप्रद लगता है।

**डॉ० हरिसिंह पाल, नई दिल्ली**

हिन्दी व्यंग्य के पर्याय श्रीलाल शुक्ल जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर केन्द्रित 'व्यंग्य यात्रा' का यह विशेषांक प्राप्त हुआ, हार्दिक आभार। वैसे तो यह व्यंग्य यात्रा का प्रत्येक अंक ही अपने आप में विशेषांक ही होता है फिर भी यह अंक तो विशेष रूप से उल्लेखनीय है। हिंदी व्यंग्य के शोधार्थियों के लिए तो यह विशेषांक संदर्भ ग्रंथ की भांति उपादेय है। इस अंक के सभी रचनाकारों ने जमकर लिखा है और आदरणीय शुक्ल जी के जीवन के कई अनछुए पहलू भी उजागर हुए हैं। फिर भी डॉ. गंगाप्रसाद विमल का संस्मरण अपने आप में उत्कृष्ट व्यंग्य का नमूना है। साधुवाद। इस अंक की सामग्री का वर्गीकरण (खण्ड-उपखण्ड) लाजवाब है। आपका कुशल संपादन और सामग्री संकलन का आकलन सराहनीय है।

### डॉ॰ रामबहादुर चौधरी, चंदन

श्रीलाल शुक्ल जैसे विराट व्यक्तित्व के अनुरूप ऊपर केंद्रित व्यंग्य यात्रा का भीमकाय अंक पाकर गदगद हुआ। आरंभ से लेकर अंत तक की यात्रा में जितने पड़ाव मिले, सब में नई ऊर्जा में स्रोत मिले। राग दरबारी के लेखक को सम्पूर्णता में सामने रखकर आपने एक शाश्वत कार्य किया है। यह दस्तावेजी अंक संभालकर रखने वाले को केवल शुक्ल जी के बारे में नहीं अपितु व्यंग्यविधा के बारे में भी विस्तृत ज्ञान की प्राप्ति होगी। वैसे इस श्रम साध्य अंक का प्रत्येक पृष्ठ आपके पसीने से भीगा प्रतीत होता है। आपकी लगन, प्रेम, जीवट को सराहा। आपने भिक्षाम् देहि. . . में मेरे नाम का भी उल्लेख कर अपनी महानता का परिचय दिया है क्योंकि इस यात्रा के इस महती यज्ञ में मैं तो कुछ तन्दुल ही दे पाता हूं। बहरहाल 'व्यंग्यश्री' के लिए बधाई स्वीकारें।

'व्यंग्य यात्रा' एक गंभीर और गरिमापूर्ण अनुष्ठान है। इसके तल्ख तेवर और निडर सोच को जन-जन तक जाने दें, जिससे सभी विधाओं का यह प्रभावित कर सके। कृपया इसे गद्य तक ही सीमित न रहने दें। इससे अंक में एकरसता आ जाती है। जैसा कि प्रस्तुत अंक में हो गया है। कविता पक्ष की अनुपस्थिति सरसता को सोखती है फिर व्यंग्य तो कविता, कहानी, या स्वतंत्र रचनाओं में भी साधा जा सकता है। इससे इन विधाओं के रचनाकार का जुड़ाव इसे बना रहेगा।

### ब्रजेंद्र कुमार सिद्धांत, बैंगलोर

श्रीलाल जी के नाम, काम शोहरत आदि के अनुसार अंक का कलेवर भी इस बार बढ़ गया है। बढ़ना स्वाभाविक ही था। आपने अंक में सामग्री का संचयन अनेक प्रतिष्ठित व चर्चित लेखकों से लिखवाकर किया, उनका कुशल सम्पादन किया और मनमोहक प्रस्तुतिकरण करके संपूर्ण सामग्री में चार चांद लगा दिए। वैसे आपका सम्पादनबोध अच्छा गुणवत्तायुक्त है, इस कारण व्यंग्य यात्रा थोड़े ही समय में अपना अच्छा स्थान बना सकी है। मेरी ओर से अनेकश: बधाई।

### सुधा ओम ढींगरा

श्रीलाल शुक्ल पर केन्द्रित व्यंग्य यात्रा का अंक पढ़ा। अद्‌भुत, शब्दों की सीमाओं से परे। हिन्दी साहित्य के ख़ज़ाने में आपने कोहेनूर रख दिया। एक-एक लेख हीरा, पुखराज और पूरी पत्रिका में सलीके से जड़े हुए। सहेज कर रखने वाला अंक। उत्तम सामग्री के ज्ञान भंडार से मैं स्वयं भी धनी हो गई हूं। पत्रिका पढ़ने के उपरांत लगा कि श्रीलाल जी को मैंने सिर्फ पढ़ा था, जाना और पहचाना अब है। अमेरिका में रहते हुए शायद कभी न समझ पाती अगर यह पत्रिका न मिलती।
ऐसे अंक निकालते रहें और हमें समृद्ध करते रहें।

### शिवानंद कामड़े, छत्तीसगढ़

आदरणीय जनमेजय जी! सादर नमस्कार! आपने कृपापूर्वक व्यंग्य यात्रा भेजी आभारी हूं। श्रीलाल शुक्ल पर केन्द्रित यह अंक व्यंग्य साहित्य के लिए धरोहर बनेगा।

### नवल जायसवाल, भोपाल

प्रेम जनमेजय ऐसी घानी है जो रेत में से भी तेल निकाल ले जैसा कि मैं साहित्य में मैं लंबे समय से हूं किंतु अपने आप को कविता और कहानी तक सीमित कर रखा था। भोपाल आने से पहले शरद जोशी, परसाई, प्रेम जनमेजय आदि के नाम जानता था। भोपाल में यदि कहा जाए तो शरद जोशी पहले व्यंग्यकार रहे हैं। सूचना विभाग में आने पर मैंने पाया कि जोशी जी पहले से हैं। निकटता बढ़ी, एक दूसरे को जाना और कई परियोजना पर काम किया। मैं यह भी जानता हूं उन्हें शासकीय सेवा से किस प्रकार हटाया गया। उनके सम्पर्क में आने के बाद मन में कई बार विचार उठा कि व्यंग्य पर कुछ लिखा जाय। प्रेम जनमेजय मेरे लिए ठीक रहे, उन्हें भी पढ़ा करता था। यह तो हमारे बीच ही घटा था। प्रेम जनमेजय में विवाद वाली बात नहीं थी, ऐसे और भी व्यंग्यकार थे।

वर्ष-5, अंक-17 मेरे प्रिय लेखक श्रीलाल जी पर केन्द्रित हैं अत: और भी प्रिय हैं। व्यंग्य पर कितने लोग रच रहे हैं और कैसा यह व्यंग्य यात्रा से सरलतापूर्वक जाना जा सकता है। श्रीलाल शुक्ल को विश्लेणात्मक रूप से जानने का एक सुअवसर पास में है। श्रीलाल शुक्ल के पतले-पतले ओंठ अपने आप में बड़ी चुटकीली बातें कह जाते हैं। कई लेखकों ने भी अपने विचारों से उन्हें प्रवेश दिया है। सब लोग राग दरबारी पर ही क्यों झुक जाते हैं। यदि लेखक के पास भण्डार है तो अन्य रचना का भी चुनाव करें, सार्थक होगा। मुझे विशेषकर पृष्ठ-64 पर दूसरे पद में श्रीलाल शुक्ल ने अपनी रचनाधर्मिता को आकाश देने के लिए जिन शब्दों का उपयोग किया, प्रशंसा के योग्य है- शोधकर्ता को बधाई। मैं इस समय आलोचना पर काम कर रहा हूं और मेरा आगामी लेखक होगा- श्रीलाल शुक्ल। श्रीलाल शुक्ल की रचना शक्ति को जानने के पश्चात मैं कह सकता हूं कि शुक्ल के पास कथ्य और शब्द के साथ ही साथ सिलेबल बनाने को अपूर्व क्षमता है।

श्रीलाल शुक्ल पर अंक केंद्रित करने के लिए बधाई।

### भगवानदास जोवट, सिकंदराबाद

आगामी अंक शरद जोशी पर केन्द्रित होगा यह जानकर प्रसन्नता हुई। 'विश्रामपुर के संत' को 'साहित्यपुर का संत' बनाने में आपका श्रम सहज द्रष्टव्य है। इस अंक में जुटाई गई सामग्री इसका प्रमाण है। किसी व्यंग्यकार के जीवनकाल में ही ऐसा अनूठा अंक निकालना एक उपलब्धि से कम नहीं। पहल के 'वाइण्डअप' की खबर भी मन को संताप देने वाली रही। ज्ञानरंजन का यह हठात् निर्णय कितनों को शोक मग्न करेगा, यह कहने की आवश्यकता नहीं।

### रामेश्वर वैष्णव, रायपुर

'व्यंग्य यात्रा' का श्रीलाल शुक्ल विशेषांक व्यक्तित्व विशेषांकों का 'राग दरबारी' सिद्ध हुआ। व्यक्ति विशेष पर इसमें बढ़िया विशेषांक मेरी नज़रों से आज तक नहीं गुजरा और कोई गुजरा भी होगा तो इस कदर अविस्मरणीय नहीं बन पाया होगा। बधाईयां! व्यंग्य के दो महत्वपूर्ण 'ओपनिंग बैट्समैन' श्रीलाल शुक्ल एवं हरिशंकर परसाई ने व्यंग्य को विधा नहीं माना इसका कारण शायद यह रहा हो कि

उस जमाने में शासन में सेवारत बड़े अधिकारी और साहित्य के भाग्यविधाता व्यंग्य को पसंद नहीं करते थे या उसे शरीफों का काम नहीं मानते थे। अपनी शराफत स्थापित करने के चक्कर में शायद इन महाशयों ने व्यंग्य को स्थापित करने में कोई योगदान नहीं दिया। दरअसल उन दिनों तक व्यंग्य की दिशा तय नहीं हुई थी। कुटिल कथ्य, क्रूर कटाक्ष या हास्यास्पद टिप्पणी का पर्याय ही व्यंग्य को माना जाता रहा होगा। अभिजात्य वर्ग वैसे भी रोचक रचनाओं को साहित्य के निरस्त करने की मानसिकता से आज भी मुक्त नहीं हो पाया है। हास्य को दोयम दर्जे का लेखन समझना और उसे व्यंग्य से अलग करने की कोशिश आज भी जारी है। बिना हास्य वृत्ति के व्यंग्य महज गाली-गलौच है। 'व्यंग्य यात्रा' की सामग्री इतनी विपुल और महत्वपूर्ण होती है कि न तो उसे छोड़ते बनता है और न पूरी पुस्तक के लिए समय निकालते बनता है। आज तक व्यंग्य गद्य का मूल्यांकन हुआ है व्यंग्य पद्य के मूल्यांकन की कोशिश हो तो पत्रिका की सार्थकता सम्पूर्णता को छुएगी।

**पं. पी.एन. त्रिपाठी शास्त्री, देहरादून**

व्यंग्य-यात्रा का प्रत्येक अंक अद्वितीय है। किंतु इस बार का ये अंक श्रीलाल शुक्ल पर केन्द्रित होने के कारण अत्यंत सराहनीय है। शुक्ल जी पर केन्द्रित प्रत्येक व्यंग्यकार की अपनी अनूठी दृष्टि दृष्टिगोचर होती है। विशेष रूप से श्री शुक्ल जी के राग दरबारी के प्रभाव से कोई भी व्यंग्यकार, साहित्यकार प्रभावित हुए बिना न रहा।
मुझे श्री अशोक आनंद जी की लेखनी ने अत्यंत प्रभावित किया तथा मेरी दृष्टि में व्यंग्य यात्रा के पथ पर चलने वाले ये अडिग पथिक के रूप में व्यंग्य यात्रा के सहभागी हैं।

**आनंद सरन, देहरादून**

श्रीलाल शुक्ल पर केन्द्रित 'व्यंग्य यात्रा' अक्टूबर-दिसंबर 2008 अंक जब से मिला है अब मेज पर रख पाया हूं। यह पत्र एक विशेष आग्रह के साथ आपको प्रेषित कर रहा हूं कि कृपया मुझे इस विशेषांक के छपे एक पाठक का प्रशंसा पत्र के लेखक अशोक आनंद के उस व्यक्तित्व वाले रचनाकार से मिलवाने की कृपा करे जिसने यह पत्ररूपी लेख लिखा है। मैं जिस अशोक आनंद को बरसों से देहरादून में जानता हूं और जिसकी रचनाओं से भली भांति परिचित हूं वह तो बहुत संकोची अंर्तमुखी और अमुखर स्वभाव का व्यक्ति है। इस लेख में इतना मुखरित इतने स्पष्ट विचारों वाला अशोक आनंद आपने कहां से ढूंढ निकाला?

**तारिक असलम 'तस्लीम', पटना**

'व्यंग्य यात्रा' का श्रीलाल शुक्ल पर केन्द्रित अंक मिला। इसे अद्योपांत पढ़ चुका हूं। इसके पूर्व इनके 'राग दरबारी' और 'पहला पड़ाव' उपन्यास 'कुछ जमीन कुछ हवा में' पढ़ चुका हूं। लेकिन इस अंक ने अनेकानेक दृष्टिकोण से जो उच्चस्तरीय एवं पठनीय सामग्री उपलब्ध करायी है। ये सब एक पुस्तकाकार रूप में संग्रहित किया जाए तो ऐतिहासिक धरोहर से कम महत्वपूर्ण सिद्ध नहीं होगी। बहरहाल, मैंने इस अंक को बाइंडिंग के लिए जिल्दसाज को सौंप दिया है ताकि इसे सुरक्षित रखा जा सके। इस वृहत्त एवं अद्वितीय अंक के लिए आपकी लगन, मेहनत और दायित्व की जितनी प्रशंसा की जाए, कम है।

**संजीव निगम, मुंबई**

आपकी मुंबई यात्रा में जब आपसे मुलाकात हुई तो समय जैसे पच्चीस साल पीछे लौट गया था। मैंने कुछ समय पहले कथाबिम्ब में आज से लगभग चार साल पूर्व लिखे गए अपने संस्मरण को देखा तो पाया कि मैंने उसमे भी हिन्दू कॉलेज में पढने के दरम्यान जिन साहित्यकारों से मुलाकात हुई थी उनमे आपका भी उल्लेख किया था। आपकी पत्रिका व्यंग्य यात्रा का श्रीलाल शुक्ल पर केन्द्रित अंक अपने आप में इस बड़े व्यंग्यकार पर एक शोध ग्रन्थ है। उनके व्यक्तिव एवं कृतित्व के सभी पहलूओं पर इस अंक में सामग्री है। संपादक मंडल को बधाई। इतनी सशक्त पत्रिका निकालना वह भी साहित्यिक, हिम्मत का काम है बिलकुल जिगर से बीड़ी जलाने के समान लगता है आपके भी जिगर मा बड़ी आग है।

# प्रणाम

पिछले दिनों हमने हिंदी साहित्य के अनेक महत्वपूर्ण रचनाकारों को खो दिया 'व्यंग्य यात्रा' परिवार श्रद्धांवत हैं।

**विष्णु प्रभाकर**
**हबीब तनवीर**
**नईम**
**चंद्रकिरण सौनरेक्सा**
**यादवेंद्र शर्मा चंद्र**
**दामोदर अग्रवाल**
**आचार्य रामनाथ 'सुमन'**
**अभय सेठ**
**अल्हड़ बीकानेरी**
**ओमप्रकाश आदित्य**
**योगराज थानी**
**लाड़सिंह गुर्जर**
**नीरज पुरी**
**मोती बी.ए.**
**रंजना कक्कड़**

**दिवंगत आत्माओं को भावभीनी श्रद्धांजलि**

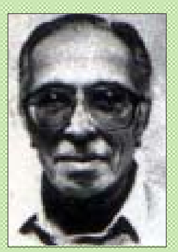

शरद जोशी

# सरकार का जादू

**मई महीने में हिंदी-व्यंग्य-साहित्य के दो सशक्त हस्ताक्षरों– शरद जोशी एवं रवीन्द्रनाथ त्यागी का जन्मदिन होता है। शरद जोशी की जन्म तिथि 12 मई 1931 है तथा रवीन्द्रनाथ त्यागी की 9 मई 1930 है। इस बार 'पाथेय' में हम इन दोनों रचनाकारों की एक-एक व्यंग्य रचना प्रकाशित कर रहे हैं। पिछले दिनों शारदा त्यागी द्वारा रवीन्द्रनाथ त्यागी के चुने हुए पत्रों का संकलन 'मेघदूत उवाच' के नाम से गीतांजली प्रकाशन, देहरादून ने प्रकाशित किया है। किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व को एक साथ देखना हो तो विभिन्न अवसरों पर लिखे उसके पत्रों को एक साथ पढ़ना चाहिए। इन पत्रों में रवीन्द्रनाथ त्यागी का जो चेहरा झांक रहा है, उसे आप, इस किताब पर, अशोक आनंद के लिखे गए लेख के माध्यम से भी पढ़ सकते हैं। हां, प्रूफ के प्रति अधिक सजग रवीन्द्रनाथ त्यागी की इस पुस्तक में प्रूफ की त्रुटियों के कारण आपको अर्थ का अनर्थ लगे तो. . .**

**– संपादक**

जादूगर मंच पर आकर खड़ा हो गया। उसने नमस्कार, सलाम और गुड इवनिंग कहा, फिर एयर इंडिया के राजा की नम्र मुद्रा में झुका, उठा और अपनी दर्शन मोहिनी मुस्कान का प्रदर्शन करने के बाद कहने लगा, 'देवियो और सज्जनो, हम जो प्रोग्राम आपके सामने पेश करने जा रहे हैं, वह हमारे मुलुक का, हमारे देश का प्रोग्राम है जो बरसों से चल रहा है और मशहूर हुआ है। अभी तक लाखों लोगों ने इसे देखा है और इसकी तारीफ की है। देवियो और सज्जनो, यह हमारे मुलुक का प्रोग्राम है, आप देखिए और हमें अपना आशीर्वाद दीजिए।' इतना कहकर जादूगर फिर उसी नम्र मुद्रा में झुका और जब उसने झटके से सिर उठाया, जोरदार पार्श्वसंगीत बजने लगा और खेल चालू हो गया।

'फर्स्ट आइटम ऑफ दि प्रोग्राम : 'अप्लीकेशन टू द गवर्नमेंट, सरकार कू दरखास्त!' जादूगर ने कहा और बायां हाथ विंग्स की तरफ उठाया कि दो लड़कियां वहां से निकलीं। उनके हाथों में स्टूल और बंद डिब्बे थे। एक डिब्बे पर लिखा था आवाक और दूसरे पर जावक। लड़कियों ने जादूगर के दोनों ओर स्टूल रख दिए, उन पर डिब्बे जमा दिए और पीछे खड़ी होकर उस आश्चर्य मिश्रित मुस्कराहट से देखने लगीं जैसे जादूगर की सहायिकाएं देखती हैं। जादूगर ने सबको दिखाया कि डिब्बे खाली हैं।

'सरकार कू दरखास्त! आवक का डिब्बा में दरखास डालेंगा तो जावक का डिब्बा का जवाब मिलेंगा। मिलेंगा तो मिलेंगा आदरवाइज नईं भी मिलेंगा। अप्लाय अप्लाय नो रिप्लाय।' जादूगर ने कहा कि तभी विंग्स से एक व्यक्ति अनेक आवेदन-पत्र लेकर आया और उसने जादूगर के हाथों में थमा दिए। जादूगर ने दर्शकों की ओर देखा और कहा, 'आरे आज बहुत सारा दरखाश है। हाम इसकू गोबरमण्ट को भेजता है', इतना कहकर उसने आवक के डिब्बे में एक-एक कर आवेदन-पत्र डालने शुरू कर दिए। फिर डिब्बे को बंद कर दिया। यह सारा काम उसने पार्श्वसंगीत की एक लहर के साथ किया। उसने डिब्बे को बंद किया और जादू की छड़ी घुमायी। फिर आवेदन-पत्र, लाने वाले से बोला, 'तुम इदर काय कू खड़ा है?'

'अप्लीकेशन का जवाब मांगता है' सर!'

'ओ, आवक में दरखास डालेंगा तो आवक में जवाब आएंगा। इधर देखो।' वह व्यक्ति जावक का डिब्बा देखता है। वह भी खाली है।

'ओय, गोबरमेण्ट ने जुवाब नईं दिया। इदर आवक में देखो फारवर्ड हुआ कि नईं? आवक के डिब्बे से भी सारे आवेदन-पत्र गायब हो चुके हैं।

'सारा आप्लीकेशन किदर गिया?'

'किदर गिया?'

'किदर गिया?'

'किदर गिया?'

जादूगर और आवेदन करनेवाले के चेहरे पर हैरानी-परेशानी के नकली के नकली भाव हैं।

'कोई बात नईं, फिर से अप्लाय करो। नया दरखास लगाओ।' जादूगर बोला।

वह व्यक्ति अंदर जाकर फिर कुछ आवेदन-पत्र लाया। जादूगर ने उसे सबको दिखाकर आवक के डिब्बे में बंद किया, छड़ी घुमायी। फिर डिब्बा खोला तो सारे आवेदन-पत्र गायब थे। फिर उसने जावक के दाहिने हाथ की ओर रखा डिब्बा खोला और देखा कि सारे आवेदन-पत्र आवक के गायब होकर जावक में आ गए थे मगर इन सब पर अब 'रिजेक्ट' लिखा हुआ था। जादूगर ने सारे आवेदन-पत्र उस व्यक्ति को लौटा दिए।

'ये साब आप्लीकेशन तो रिजेक्ट हो गया।' व्यक्ति के करुण स्वर में कहा।

'क्या बताएंगा, इण्डिया गवरमेण्ट, गरीब का आप्लीकेशन रिजैक्ट नईं होयंगा तो क्या होयंगा।' जादूगर हंसकर बोला।

दूसरा व्यक्ति सिर लटकाकर जाने लगा। जादूगर ने उसे बुलाया और कान में एक बात कही। वह व्यक्ति तेजी से अंदर गया, कुछ आवेदन-पत्र, पिन की डिबिया और नोट की गड्डी लेकर आ गया। उसने हर आवेदन-पत्र से पिन लगाकर कुछ नोट नत्थी किए और जादूगर को दिए। जादूगर ने उन्हें आवक के डिब्बे में रखा और छड़ी घुमायी। डिब्बे को खोला, आवेदन-पत्र गायब थे। दूसरा जावक का डिब्बा खोला, आवेदन

सारे वहां आ गए थे। मगर उनसे रुपयों के सारे नोट निकल चुके थे। लेकिन इस बार सारे आवेदनो पर लिखा था 'सैंक्शन'।

'कांग्रेचुलेशंस, तोमारा सारा आप्लीकेशन सैंक्शन हो गिया।' जादूगर ने कहा और दर्शकों की ओर नम्र मुद्रा में झुका। दर्शकों ने तालियां बजायीं। जादूगर बोला, 'आप्लीकेशन टू द गबरमेण्ट, सरकार कू दरखास्त!' और संगीत जोर से बजने लगा। लड़कियों ने स्टूल और डिब्बे उठाए और अंदर चली गयीं। वह व्यक्ति भी चला गया।

'नेक्स्ट आयटम ऑफ द प्रोग्राम : 'करप्शन ऑफ इण्डिया-भारत में भ्रष्टाचार।' जादूगर ने घोषणा की और वह मंच के दाहिने कोने पर आया जहां एक छोटी टेबल पर रुपयों से भरी एक थैली रखी थी। जादूगर ने थैली उलटायी और रुपये नीचे रखे डिब्बे में गिरने लगे।

'ये करप्शन की, भ्रष्टाचार की थैली है भाई साहब, इसका रुपया कभी खतम नहीं होगा। थैली पर नजर रखिए साहबान, इसका रुपया कभी खतम नहीं होगा।' इतना कहने के बाद जादूगर ने उस थैली से, जिसमें से सारे रुपये निकल चुके थे, नए सिरे से उतने ही और रुपये निकालकर दिखा दिए और थैली वहीं रख दी।

'करप्शन कभी खत्म नहीं होंगा, थैली कभी खाली नहीं होंगी। थैली पर नजर रखिए साहबान!' जादूगर बोला, झुका और उसने घोषणा की- 'नेक्स्ट आयटम ऑफ दि प्रोग्राम 'टूरिज्म इन इण्डिया- भारत की सैर!'

संगीत जोर से बजने लगा। लड़कियां इस बार मंदिर के आकार का हल्की लकड़ी का ढांचा उठाकर लायीं जिसके चारों दरवाजों पर रंगीन परदे लगे हुए थे और एक व्यक्ति उसमें सीधा खड़ा हो सकता था। जादूगर ने परदे हटाकर दर्शकों को बताया कि मंदिर खाली है। तभी गोरी चमड़ी का एक सूट-बूटधारी शख्स सूटकेस ले विंग्स से आया।

'गुड इवनिंग सर, क्या मांगता है?' जादूगर ने उससे पूछा।

'इण्डिया विजिट करना मांगता!'

'वेलकम, वेलकम, सुवागत है आपका।' जादूगर ने झुककर कहा और मंदिर का एक परदा हटा दिया। विदेशी व्यक्ति उसमें प्रवेश कर गया। जादूगर ने परदा गिरा जादू की लकड़ी घुमायी। विदेशी बाहर आया। उसके हाथ में सूटकेस नहीं था।

'सर आपका सूटकेस किदर गया?' जादूगर ने पूछा।

'बनारस में चोरी चला गया।'

'वेरी सॉरी सर!' कहकर जादूगर ने मंदिर का दूसरा परदा उठा दिया।

विदेशी अंदर घुसा। जादूगर ने परदा डाल जादू की लकड़ी घुमाई, विदेशी फिर बाहर निकला। इस बार उसके बदन पर कोट नहीं था।

'सर आपका कोट किदर गिया?' जादूगर ने पूछा।

'आगरा में बेचकर होटल का बिल पेमेंट किया।'

'वेरी गुड सर!' जादूगर ने मंदिर का तीसरा परदा उठाया और विदेशी फिर अंदर घुस गया। जादूगर ने छड़ी घुमायी और इस बार जब विदेशी बाहर आया तो वह सिर्फ एक पतलून पहने था।

'आपका कोमीज किदर गिया सर?'

'तुमारा इण्डिया का एक होली मैन साधू ने हमसे ले लिया।'

'वेरी फाइन सर!' जादूगर ने कहा और मंदिर का चौथा परदा उठाया। इस बार जब विदेशी मंदिर से बाहर निकला, उसके शरीर का पतलून भी नहीं थी और वह 'विजिट इण्डिया' का पोस्टर लपेटे हुए था।

'वेरी सॉरी सर, आपका पतलून किदर गिया?'

'उसकू बेचकर हमने अपना कंट्री रिटर्न होने का टिकट खरीद लिया।'

'गुड बाइ सर, विजिट इण्डिया अगेन, फेर को तो शरीफ लाइए।'

विदेशी व्यक्ति पोस्टर से बदन लपेटे विंग्स में चला जाता है। लड़कियां मंदिर के सारे पर्दे उठाकर बताती हैं कि सूटकेस या उसके कपड़े आदि वहां नहीं हैं। जादूगर नम्र मुद्रा में झुकता है। दर्शक तालियां बजाते हैं।

'नैक्स्ट आयटम : करप्शन ऑफ इण्डिया- भारत में भ्रष्टाचार' की घोषणा करता हुआ जादूगर फिर उसी थैली के पास पहुंचता है जिसे वह खाली कर आया था। भ्रष्टाचार की खाली थैली भर गयी है अब तक। जादूगर उसे उलटता है, रुपया निकलकर नीचे डिब्बे में गिरता है।

'भ्रष्टाचार कभी खतम नहीं होयेंगा साहेब, थैली कभी खाली नई होयेंगा। थैली पर नजर रखिए साहवान।' जादूगर कहता है और अपनी जगह लौटकर नए कार्यक्रम की घोषणा करता है- 'फॉरेन पॉलिसी : अमारा विदेश-नीति।'

लड़कियां स्टूल पर एक लकड़ी का बड़ा-सा डिब्बा रख देती है। जादूगर दर्शकों को बताता है कि डिब्बा सब तरफ से खुलता है।

'ये फॉरेन पालिसी-विदेश-नीति है साहवान, डिब्बा सब बाजू से खुलता है। इस बाजू से अमेरिका से बात करेंगा। इस बाजू से रूस से बात करेंगा। इदर से इंग्लैण्ड से बात करेंगा। इदर से फ्रांस से बात करेंगा। डिब्बा सब बाजू से खुलता है।' जादूगर डिब्बा बंद कर देता है। फिर कहता है, 'साहवान, ये हमारा फारिन पॉलिसी है। अब हम देखेंगा कि उसमें क्या-क्या है?' वह जादू की लकड़ी घुमाता है, डिब्बे को खोलता है और उसमें से कबूतर निकलता है।

'कबूतर, पीस डोव, शांति का पाखी। हमारा कंट्री सबसे पीस चाहता है।' जादूगर फिर डिब्बे में हाथ डालता है और एक कटोरा निकालता है। दर्शकों को बताकर कहता है, 'ये फॉरेन एड-विदेश की मदद का कटोरा है साहबान!' वह कटोरा लड़की को देता है और बोलता है, 'अमेरिका का वास्ते', फिर डिब्बे में हाथ डाल एक और कटोरा निकालता है, 'रूस के वास्ते!' फिर एक और कटोरा- 'कनाडा का वास्ते' फिर एक और- 'फ्रांस का वास्ते।' और इसी तरह वह देशों का नाम लेता जाता है और विदेश-नीति के उस छोटे-से खाली डिब्बे से सहायता के लिए कटोरे निकालते जाते हैं।

दर्शक तालियां बजा रहे हैं। कटोरे निकलते जा रहे हैं।

'नेक्स्ट आयटम ऑफ दि प्रोग्राम : इकॉनामिक्स ऑफ इण्डिया- भारत का अर्थशास्त्र।' जादूगर ने कहा और लड़कियों ने उसकी दोनों ओर दो बड़े टेबल रखे जिन पर दो बड़े डिब्बे रखे गए। एक पर लिखा था : सार्वजनिक क्षेत्र और दूसरे पर निजी क्षेत्र। दोनों डिब्बे खोलकर दिखाए गए। वे खाली थी। लड़कियां दो मुर्गियां लेकर

आयीं। जादूगर ने एक मुर्गी सार्वजनिक क्षेत्र के डिब्बे में रखी और दूसरी निजी क्षेत्र के। जादू की लकड़ी घुमायी और सबसे पहले निजी क्षेत्र का डिब्बा खोला। मुर्गी बाहर आयी और उसके बाद जादूगर ने दस ताजे अंडे निकालकर दिखाए। दर्शकों ने तालियां बजायीं। उसके बाद जादूगर ने सार्वजनिक क्षेत्र का डिब्बा खोला। वहां से मुर्गी भी गायब थी। कुछ नुचे हुए पंख मिले।

'आय, अंडा मिलना तो दूर इदर पब्लिक सेक्टर का मुर्गी भी साफ हो गिया।'

जादूगर ने इस बार पांच अंडे सार्वजनिक क्षेत्र के डिब्बे में और पांच अंडे निजी क्षेत्र के डिब्बे में रखे। डिब्बों को बंद किया और जाूद की लकड़ी घुमाई। डिब्बों को खोला तो निजी क्षेत्र के पांच अंडे गायब थे। मगर उनकी जगह पांच चूजे बाहर आये। सार्वजनिक क्षेत्र के डिब्बे से पांच अंडे गायब थे, मगर चूजा नहीं निकला।

'कैसा है पब्लिक सेक्टर साहबान, मुर्गी भी गायब हो गया, अंडा रखा तो अंडा भी गायब हो गया। थोड़ा जांच इन्क्वारी करना होगा।' जादूगर मंच से उतरा। सामने की पंक्ति में बैठे एक मिनिस्टर साहब की जेब से एक अंडा निकालकर दिखाया। कुछ दूर तक आई.ए.एस. अधिकारी बैठे थे, उनकी नाक से अंडा टपकाकर निकाला। थोड़ी दूर पर एक ट्रेड यूनियन नेता बैठे थे उनकी टोपी उठाकर अंडा उसमें से निकाला। एक इंजीनियर की बगल से निकाला। एक बाबू की जेब से निकाला।

'ये वो पांच अंडा है साहबान जो पब्लिक सेक्टर से गायब हो गिया था हाम नहीं पकड़ता तो साब उसका आमलेट बनाकर खा जाता।' जादूगर ने कहा और दर्शकों ने तालियां बजायीं।

'नेक्स्ट आयटम ऑफ दि प्रोग्राम : करप्शन ऑफ इण्डिया- भारत में भ्रष्टाचार।' थैली पर नजर रखिए साहबान। यह करप्शन का थैली है। इसका रुपया कभी कम नहीं होता। जादूगर ने मंच के कोने पर रखी थैली को फिर उलटा और उससे रुपया निकलने लगा।

'करप्शन कभी खतम नहीं होयेंगा साहबान।' जादूगर ने कहा और नयी घोषणा की 'स्मगलर्स पैरेडाइज- तस्करबाजों का स्वर्ग।'

लड़की ने जादूगर के हाथ में एक थैला दिया। जादूगर ने दर्शकों को बताया कि वह खाली है। तभी विंग्स से पुलिस की पोशाक में एक व्यक्ति दाखिल हुआ।

'ऐ, थैले में क्या है? स्लगल का समान?' पुलिसवाले ने पूछा।

'कुछ नहीं है। हवलदार साब!' जादूगर ने खाली थैला दिखा दिया।

पुलिसवाला चला गया। दूसरी ओर से एक व्यक्ति ने प्रवेश किया। जादूगर ने पूछा, 'स्मगल का माल खरीदेंगा साब, वाच घोड़ी, सेंवंटीन ज्वेल, नायलान, सूटपीस, ब्लेड, जो मांगेंगा हम देंगा।' और जादूगर ने उसी खाली थैले से घड़ियां निकाल कर देना शुरु किया। हर बार वह हाथ डालता, घड़ियां निकालता। खरीदनेवाला उन्हें लेता जाता। पुलिसवाला फिर आया। जादूगर ने दिखा दिया कि थैला खाली है। वह चला गया। अब जादूगर तस्करी का और सामान थैले से निकालकर देने लगा। नायलान का थान, टेपरिकॉर्डर, कैमरे, रेजर आदि। पुलिसवाला फिर आता है। जादूगर उसे आवाज देकर बुलाता है और उसी झोले से एक घड़ी निकालकर पुलिसवाले को भी दे देता है। वह पहनता हुआ खुश-खुश चला जाता है।

जनता तालियां बजा रही है। जादूगर 'करप्शन ऑफ इण्डिया- भारत में भ्रष्टाचार' को फिर दोहराता है।

'करप्शन कभी खत्म नईं होंगा साहबान, थैली पर नजर रखिए।' नया कार्यक्रम था- 'निपोटिज्म- भतीजावाद'!

मंच पर एक जवान लड़का आता है। जादूगर पूछता है, तुम कौन हो। लड़का बताता है कि वह मंत्री महोदय का भतीजा है। जादूगर उसे एक टेबल पर लिटा देता है।

'देखिए साहबान, हमारे मुल्क में भतीजावाद कैसे ऊपर उठता है। वह बिना कुछ किए ऊपर उठता है। कोई साधारण आदमी उतना ऊपर नहीं सकता जितना भतीजा उठता है। जादूगर छड़ी घुमाता है। और टेबल पर सीधे लेटा हुआ भतीजा धीरे-धीरे ऊपर उठने लगता है। वह अधर में स्थापित हो जाता है।

जनता तालियां बजाती है। जादूगर नम्रता से झुकता है।

'नेक्स्ट आयटम ऑफ दि प्रोग्राम 'डेमोक्रेसी इन इण्डिया- भारत में प्रजातंत्र।' तेल के ड्रम या शराब के पीपे के आकार की बड़ी कोठियां मंच पर रख दी जाती हैं, जिनमें एक व्यक्ति चाहे तो पूरा छुप सके। हर ड्रम पर एक राजनीतिक दल का नाम लिखा हुआ है। एक नेता मंच पर आता है।

'आपका तारीफ?' जादूगर पूछता है।

'हम लीडर है, नेता!'

'कौन-से दल का नेता?'

'जिसका मेजारिटी हो उसका नेता?'

जादूगर नेता को एक ड्रम में उतार देता है, ढक्कन रख देता है और जादू की लकड़ी घुमाता है। नेता एक दूसरे ड्रम से बाहर निकलता है।

'आय! यह तुम क्या किया?'

'हम दलबदल किया।'

नेता फिर उस ड्रम में छुप जाता है। जादूगर लकड़ी घुमाता है। नेता इस बार फिर नए ड्रम से प्रकट होता है।

दर्शक तालियां बजाते हैं। आश्चर्य में हैं कि एक जगह घुसा नेता दूसरी जगह फिर कैसे निकल आता है। जादूगर झुककर बोलता है, 'डैमोक्रेसी इन इण्डिया- भारत में प्रजातंत्र!'

जादूगर आखिरी जादू दिखाता है- 'गरीबी का पेट।'

मंच पर एक यंत्र लगाया जाता है। बिजली से चलने वाला आरा, जो हर चीज काट देता है। मंच पर मैले कपड़े पहने गरीब-सा दुबला-पतला व्यक्ति आया है। जादूगर उसे टेबल पर लिटा देता है और आदर्शवादी भाषणों से हिप्नोटाइज कर देता है। यंत्र चालू होता है, आरा पेट पर है, पेट कटने लगता है, कट जाता है।

'यह यंत्र हमारे देश का बना यंत्र है साहबान और यह गरीब का पेट है, जिसे यह यंत्र काट रहा है।'

लोग स्तब्ध हैं, फिर तालियां बजाने लगते हैं।

'पिछले तेईस साल से हम यह जादू इस देश में हर जगह दिखा रहे हैं। हमें आशीर्वाद दीजिए, देवियो और सज्जनो कि हम आपकी खिदमत में पेश होते रहें और ऐसे ही जादू दिखाकर मुल्क का नाम ऊंचा करें। जयहिन्द!'

जादूगर नम्र अदा से झुकता है। तालियां बजती रहती हैं।

**नेहा शरद के सौ**
**1, अमित अपार्टमेंट्स, एवरशाईन नगर**
**मलाड (पश्चिम), मुंबई-400064**

## रवीन्द्रनाथ त्यागी

# तीन मिनी कथाएं

**( एक )**

एक राजा था। उसके एक सुंदर कन्या थी। वह परियों जैसी सुंदर थी। उसके सुंदर मुखड़े की एक झलक पाने के लिए नौजवान लोग दूर-दूर से आया करते थे। महल की खिड़की के नीचे कई मील लंबी कतार लगी रहती थी। राजकुमारी जो थी वह झरोखे में बैठी रहती थी और अपने रूप के प्रशंसकों की देख-देख मन-ही-मन फूली नहीं समाती थी।

एक दिन अचानक बड़ी विचित्र घटना हुई। राजकुमारी फूलों-जैसी नयी पोशाक पहनकर खिड़की में बैठी रही पर उस दिन उसे देखने कोई भी तो नहीं आया। वह पहले निराश हुई और फिर उदास। इसके बाद वह रोने ली। उसकी यह स्थिति देखकर रानी घबराई और उसने चारों दिशाओं में दूत भेज ताकि पता लग सके कि इलाके के सुंदर नवयुवक राजकुमारी को देखने आज क्यों नहीं आए।

हरकारों ने आकर अर्ज किया कि मिट्टी में तेल पर कंट्रोल लग गया है। जनपद के सारे नवयुवक एक हाथ में राशन कार्ड संभाले और दूसरे हाथ में कांच की बोतल या टीन का कनस्तर लिए कैरोसीन की दुकान पर क्यू लगाए खड़े हैं। जब तेल मिल जाएगा तो शायद इधर आएं। रानी और राजकुमारी ने बात सुनी और चुप हो गई।

**निष्कर्ष :** मिट्टी का तेल एक खूबसूरत लड़की से ज्यादा काम की चीज़ है। रात में यदि डिबरी नहीं जलेगी तो लड़की की सुंदरता दीखेगी कैसे?

**( दो )**

शुक सारिका संवाद (उर्फ किस्सा तोता-मैना) का जो पाठ आजकल उपलब्ध है, वह सही नहीं है। काफी जांच-पड़ताल के बाद पता लगा है कि सारी कथा एक और ही ढंग से समाप्त हुई थी। वास्तविकता यह है कि काफी किस्से सुनने सुनाने के बाद मैना जो थी वह सहसा मर्दों की प्रशंसा करने लगी और स्त्रियों की निंदा। उसके इस विचित्र रुख को देख तोता जो था वह पहले तो घबराया पर बाद में उसने हिम्मत बटोर पूछ ही लिया कि मैना के दृष्टिकोण में अचानक यह परिवर्तन आया तो क्यों आया?

**( तीन )**

एक राजा था। वह वाकई बड़ा नेक और ईमानदार इंसान था। वह हर समय प्रजा की भलाई के बारे में सोचा करता था। उसने प्रजा के हित को ध्यान में रखते हुए सिंचाई की योजनाएं प्रारंभ कीं, सड़कें बनवाईं, इस्पात के कारखाने खुलवाए और युद्ध जीते। मगर उस देश की प्रजा बड़ी विचित्र थी; वह हमेशा कुछ गड़बड़ करती रहती थी। वह कभी बस जलाती थी तो कभी रेल। कभी डाकखाने लूटती थी तो कभी बैंक। राजा भी जो था वह इन बातो को लेकर काफी चिंचित रहता था।

एक दिन राजधानी में इस बात को लेकर एक विशाल जुलूस निकाला गया कि काफी दिनों से सरकार कोई गलत काम क्यों नहीं कर रही थी- जिसको लेकर विरोधी दल कोई आंदोलन शुरू कर सकता। यह स्थिति देखकर राजा का धीरज टूट गया। उसके सयाने वजीरों ने सलाह दी की देश में यदि समाजवाद आ जाए तो सारे झगड़े-फिसाद खत्म हो जाएं। राजा बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने अपने एक विश्वस्त सीनियर अधिकारी को बुलवया और कहा कि जाओ और जहां से भी मिले वहां से समाजवाद लेकर लाओ। जितनी ज्यादा मात्रा में प्राप्त हो, उतना ले आओ। और हां, यदि पांच वर्षों के भीतर तुम समाजवाद नहीं ला पाए तो तुम्हारी गर्दन उतरवा ली जाएगी।

अधिकारी बेचारा चक्कर में पड़ गया। वह यह तो जानता था कि छायावाद जो है वह प्रयाग और वाराणसी में पाया जाता है और इलाहाबाद जो है वह अभी-अभी दिल्ली से बंबई और बंबई से दिल्ली आया है, मगर समाजवाद कहां मिलेगा, यह वह कतई नहीं जानता था। खैर, उसने शाही खजाने से काफी बड़ी रकम ली और सफर पर निकल पड़ा। रास्ते में जो कोई भी मिलता, वह उसी से समाजवाद के बारे में बात करता। वह यह भी बताता कि समाजवाद एक ऐसी चीज है जिसके प्राप्त हो जाने पर सब एक समान हो जाएंगे। न किसी की पत्नी बदसूरत रहेगी और न किसी का पति रोगी या गरीब। सब लोग सौ वर्ष तक जिएंगे और सबके पुत्र प्रथम श्रेणी के अधिकारी होंगे। प्रजा बड़ी खुश हुई और उसने भी अधिकारी को खुले हाथों दान दिया। चलते-चलते वह अधिकारी सात समुन्दर पार गया और वहां एक हसीन लड़की के इश्क में गिरफ्तार हो गया। वह फिर कभी वापस नहीं आया। गाहे-बगाहे वह अपने राजा का लिखता रहता था कि समाजवाद काफी वजनी चीज है और उसके ले जाने के लिए एक बहुत बड़े जहाज की जरूरत है जो कि बनवाया जा रहा है। राजा उसे लगातार विदेशी मुद्रा भेजता रहा।

जब वह आला अमीर लौटकर नहीं आया तो बादशाह ने एक-एक करके बाकी अफसर भेजे। मगर उनका भी वही हाल हुआ जो पहले अफसर का हुआ था। देश गरीब हो गया। राजा रोते-रोते अंधा हो गया पर समाजवाद था कि नहीं आया।

**निष्कर्ष :** इस कथा से कई प्रकार के निष्कर्ष निकलते हैं। पहली बात तो यह कि यदि प्रजा सीधी और अधिकारी भ्रष्ट होते हैं, तो राजा चाहे कितना भी ईमानदार क्यों न हो, देश में सुख और शांति कभी स्थापित नहीं हो सकती। दूसरा निष्कर्ष यह है कि समाजवाद यदि लाना हो तो विदेश से कभी न आयात किया जाए। उसे अपने ही देश में बनाना चाहिए। आखिरी निष्कर्ष यह निकलता है कि यदि कोई राजा अपने अफसरों को बहुत कठिन काम देता है तो उन बेचारों के लिए किसी हसीन लड़की के इश्क में फंस जाने के अलावा और कोई रास्ता नहीं बचता।

अशोक आनंद

# मेघदूत : ज़िंदगी के साथ भी, ज़िंदगी के बाद भी

यूं तो आम आदमी के जीवन में भी पत्रों का काफी महत्व होता है, किन्तु किसी नामी-गिरामी साहित्यिक हस्ती द्वारा लिखे गये अथवा प्राप्त किये गये पत्रों का तो रुतबा ही कुछ और होता है। उनमें 'रचना' का सा स्वाद और आनंद होने के साथ-साथ ढर्रेपन का नितांत अभाव होता है।

चचा गालिब पत्र को आधा मिलन ठीक ही तो मानते थे, क्योंकि आज के उन्नत संचार-युग में भी चिट्ठी भी महत्ता में कोई कमी नहीं आई है। यथा-

कोई फोन पर कितना ही बतियाता रहे, इंटरनेट पर घंटों 'चैट' करता रहे, 'एस. एम. एस.'- मैदान पर शतक ठोंकता रहे, किन्तु हस्तलिखित, पूर्णतया 'पर्सनल' चिट्ठी की बात ही कुछ और होती है। व्यक्तिगत-पत्र की एक निराली अदा और अनूठी छटा होती है। 'मेरी अपनी' यह चिट्ठी, इश्क की तरह सदा जवां रहती है, पुराने चावलों की सी महकती रहती है और नानी के अचार की तरह, एक सुगंध-स्वाद से सराबोर रहती है- जिसे आप ता-ज़िंदगी, कितनी ही बार, उसी पुराने 'टेस्ट' के साथ बांच सकते हैं, उसके नशे में झूम सकते हैं, उसे बरबस चूम सकते हैं और उसी शिद्दत के साथ, पुरानी यादों से जुड़कर, वर्तमान को विस्तृत कर सकते हैं।

श्री रवीन्द्रनाथ त्यागी जी का पार्थिव शरीर भले ही 3 सितम्बर 2004 की रात को हम सबसे जुदा हो गया हो, किन्तु उनके द्वारा रचा गया साहित्य आज भी जीवित है और आने वाली पीढ़ियों के बीच भी सदा अमर रहेगा।

श्रीमन् त्यागी जी अपने पत्रों के 'मूल्य' को भली-भांति जानते थे, तभी उन्होंने अपनी अर्धांगिनी, शारदा त्यागी से उन पत्रों को प्रकाशित करवाने का आग्रह किया होगा और यह हिन्दी साहित्य का सौभाग्य है, कि श्रीमती शारदा त्यागी जी ने उनकी अन्तिम इच्छा का सम्मान करते हुए, पत्र-संग्रह रूपी इस अमूल्य थाती को पेश करने का पुनीत कार्य किया है।

इस संग्रह रूपी 'डिश' में हमें अनेकों लेखकों की लेखनी द्वारा परोसे गये शब्दों का स्वाद पाने का सुअवसर मिला है, जो अपने आप में एक विलक्षण अनुभव है। इस पर भी, मैं इस पुस्तक के खंड दो में त्यागी जी द्वारा लिखे गये पत्रें का ज़िक्र पहले करने जा रहा हूं-

त्यागी जी अपनी बेबाकी के लिए प्रसिद्ध भी थे और बदनाम भी। अपने मन की बात कहने में वे कभी चूकते नहीं थे, (चाहे गलत ही क्यों न हो। बात को सही मानने के उनके अपने मापदण्ड थे- सं.) बिना किसी लाग-चपेट या लल्लो-चप्पो के, वे सामने वाले के कद, रूतबे और 'तथाकथित' लोकप्रियता की परवाह किये बिना, अपनी राय का बेझिझक और बेहिचक इज़हार कर बैठते थे। उन जैसे सत्यवादी और स्पष्टवादी अब विरले ही देखने को मिलते हैं। उनका यह जल्वा उनके पत्रों में भी बरक़रार रहा। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं-

1. हिन्दी भी क्या भाषा है, जहां ठाकुर प्रसाद सिंह, देवेन्द्र कुमार, बख्शी जी, निराला, रांगेय राघव व अन्नपूर्णानन्द उपेक्षित रहते हैं और जहां डॉ. नगेन्द्र, नरेन्द्र कोहली और अशोक वाजपेयी को लाखों की रायल्टी या पुरस्कार मिलते हैं। प्रथम ज्ञानपीठ पुरस्कार दिनकर को मिला था, जबकि पंत और निराला जिंदा थे।
2. मैं कमलेश्वर से साफ कहता रहता हूं, कि 'तुम एक उत्कृष्ट संपादक हो, पर कथाकार के नाते कुछ भी नहीं'।
3. गोविन्द मिश्र द्वारा रचित 'पांच आंगनों वाला घर' पर कम से कम साहित्य अकादमी एवार्ड तो मिलना ही चाहिए था, मगर यह हिन्दी है। एवार्ड उसे मिलेंगे, जिसे डॉ. नामवर सिंह चाहेंगे।
4. नामवर सिंह एक प्रतिभाशाली लेखक हैं। दु:ख यही है, कि वे पथभ्रष्ट हो गए।
5. श्रीलाल भाई का 'अंगद का पांव' ही टिकेगा, बाकी नहीं। बाकी सब निगेटिव, अश्लील, पर उच्च कोटि का गद्य है।
6. प्रकाशक प्राय: बेईमान हैं। प्रूफ की गलतियां एक सामान्य बात हो गई है। पुरस्कार है, तो वे कुछ विशिष्ट लोगों के लिए ही बने हैं।
7. मैंने पिछले चालीस वर्षों में हिंदी को उत्कृष्ट काव्य व व्यंग्य दिया है, मगर बदले में तथाकथित यश के अतिरिक्त कुछ भी तो नहीं मिला। सारे सम्मान एवं एवार्ड अशोक वाजपेयी, नामवर सिंह के समधी केदारनाथ सिंह व श्रीलाल शुक्ल को ही मिले। उन्हें ही मिलेंगे। हिंदी का साहित्यकार होना एक बहुत बड़ा दुर्भाग्य है और कुछ नहीं। हिंदी में तो निराला तक को उनका हक़ नहीं मिला।
8. लेखक का सच्चा सम्मान उसके कृत्तित्व से होता है, पुरस्कार वगैरा से नहीं। रूडयार्ड किपलिंग को नोबेल पुरस्कार दिया गया, मगर लोग उसका नाम तक नहीं जानते। उसके खिलाफ ओ. हेनरी को कभी कोई पुरस्कार नहीं मिला, मगर उसे लाखों लोग अभी भी पढ़ते हैं।

ज्ञान चर्तुवेदी जी को लिखे गये एक पत्र में त्यागी जी ने लिखा था- लेखन नियमित होना चाहिए। जार्न बर्नाड शॉ प्रतिदिन 5 पृष्ठ तो जरूर ही लिखता था। इस 'नित्यकर्म' से निबट कर ही वह और कुछ करता था।

त्यागी जी ने स्वयं भी नियमित लेखन को अपनी आदत बना लिया था, तभी तो लेखन-समुद्र में त्यागी जी का प्रकाश स्तम्भ सदा जगमगाता रहेगा।

श्री ज्ञान चर्तुवेदी जी ने अपनी 'इश्टाईल' में उनकी इस विशेषता का बखान किया है-

आप जैसा नियमित लिख पाने की ताकत वाला शिलाजीत इधर पहाड़ी इलाके में ही मिलता है। हम मैदानी लोग तो इस मामले में प्राय: कमजोरी की शिकायत करते ही पाये गये हैं।

त्यागी जी ने एक पत्र में लिखा है-

'मानसिक अवसाद' ब्रेन-सेल्स की बीमारी है, जो मुझे विरासत में मिली। मैं तो यह बोझ पिछले तीस सालों से ढो रहा हूं। सर विस्टन चर्चिल, अब्राहन लिंकन व डॉ. सैमुएल जानसन से लेकर मिथुन चक्रवर्ती व श्रीमती खुशवंत सिंह तक इस रोग से बुरी तरह पीड़ित हैं।

त्यागी जी का व्यंग्य-कर्म गरल पीकर अमृत बांटने के समतुल्य था। वे अपनी बीमारी पर भी व्यंग्य के तीर छोड़ने में चूके नहीं। कुछ उदाहरण निम्न हैं-

लेटेस्ट मैडिकल बुलेटिन के अनुसार मैं अभी जिन्दा हूं।

मेरे ख़त संभाल कर रखना। पता नहीं, कौन-सा अन्तिम पत्र हो।

आत्महत्या में कभी-कभी मरने का डर रहता है।

त्यागी जी की अध्ययनशीलता का तो जैसे कोई ओर-छोर ही नहीं था। उनके द्वारा रचित इन 19 पत्रों को पढ़कर इस तथ्य की पुष्टि हो जाती है, जिनमें उन्होंने निम्न पुस्तकों और रचनाकारों को पढ़ने की सिफारिश की है-

प्रेतकथा, नरक यात्रा- ज्ञान चर्तुवेदी; मेरी इक्यावन रचनाएं- प्रेम जनमेजय; सर्किट हाऊस पर लटका चांद- कैलाश मण्डेलकर; अन्तोन चेखव, जार्ज बर्नाड शॉ, विनोद भट्ट, मैथ्यू आर्नोल्ड एवं एमर्सन, रविन्द्र नाथ ठाकुर, विंस्टन चर्चिल, कुत्ते- पतरस बुखारी, चुनाव- विनोद साव, रात, चोर और चांद- बलवंत सिंह, मार्क थ्री की गरीबी- महावीर चाचान, बाबू भोलानाथ- गिरिजाशरण अग्रवाल, पांच आंगनों वाला घर- गोविन्द मिश्र, गुरुदक्षिणा- आशा रावत,

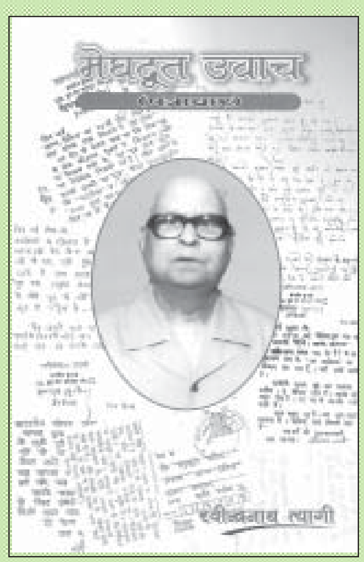


आधुनिक हिन्दी निबंधावली- विद्यानिवास मिश्र। ll Prime Minister's Men, How green my valley was, The days were too short, Yes Boss, अन्नपूर्णानन्द रचनावली, तीन पीढ़ियां- मैक्सिम गोर्की।

इसके अतिरिक्त उन्होंने विनम्र रचनाकारों की भी भूरि-भूरि प्रशंसा की है- ए.जी. गार्डनर, जेम्स थर्बर, फेजरिक हैरिसन, चार्ल्स लैंब, गोविन्द मिश्र, डॉ. शुकदेव सिंह, केदारनाथ अग्रवाल, बक्शी, शिवप्रसाद सिंह, विशंम्भरनाथ कौशिक, देवेन्द्र कुमार, धूमिल, विनोद चन्द्र पाण्डेय, ठाकुर प्रसाद सिंह, निराला, रामविलास शर्मा, नागार्जुन, विष्णु प्रभाकर, त्रिलोचन, सुरेन्द्रपाल।

पत्र लेखक के व्यक्तित्व का आईना होते हैं। त्यागी जी ने अपने पत्रों में अपने दर्द को कुछ यूं उकेरा है-

सरकारी नौकरी मैं विवशता में कर रहा हूं, वर्ना मैं इस पेशे के लिए बना नहीं था।

व्यंग्य-लेखन के ग्रहण ने त्यागी जी के कवि रूपी चन्द्रमा की आभा को अंधेरों में धकेल दिया। अपनी इस पीड़ा को उन्होंने यूं व्यक्त किया है-

'इस 'व्यंग्य' लेखन ने मेरे कवि को बहुत क्षति पहुंचाई है।'

त्यागी जी ने अपने पत्रों में लेखकों और व्यंग्य लेखकों को निम्न संदेश दिए हैं-

कथ्य का स्थान शिल्प से ऊंचा है। व्यंग्य सोद्देश्यपूर्ण और स्वाभाविक विनोदवृत्ति लिए हुए हो। भाषा लचीली और सरल होनी चाहिए। पत्रकारिता की भाषा आपको जनप्रिय बनाकर भी साहित्यिक स्तर तक नहीं ले जा सकती। सूरदास कला की दृष्टि से तुलसीदास के सदा ऊपर रहे और रहेंगे।'

और अब मैं उन तीन विशिष्ट लेखकों के वास्तविक साहित्यिक पत्रों का ज़िक्र करना चाहूंगा, जिनके ख़त एक विशिष्ट रचना का सा आनंद प्रदान करते हैं।

ज्ञान चतुर्वेदी ने अपने पत्रों में त्यागी जी की शान में कुछ इस प्रकार से अपने उद्‌गार उडेले हैं-

आपका मैं सदियों से अनन्य प्रशंसक रहा हूं और एक-एक रचना पचासों दफे पढ़ चुका हूं।

मैं तो खैर कभी क्या बनूंगा, पर कभी बादशाह बन पाता, तो आपके हर लेख के हर शब्द पर सोने की अशर्फियां बांटता और आपको दरबार से घर भी जाने देता।

डगलस एडमन्स ने पी.जी. गुडहाऊस के विषय में लिखा है कि वे 'अंग्रेजी भाषा के महानतम संगीतकार' हैं। भाषा की एक लय, ताल और संगीत होता है, जो बिरले ही पैदा कर पाते हैं। यदि 'हिन्दी भाषा के महानतम संगीत' का अनुभव करना हो, तो रवीन्द्रनाथ त्यागी की हास्य-व्यंग्य रचनाओं से गुजर जाइये। विट, निर्मल हास्य, शिष्टतापूर्ण अशिष्टता, अद्‌भुत व्यंजनाएं, बेजोड़ फंटेसी, सत्य कहने का अदम्य साहस, भाषा का अद्‌भुत खेल, ना कुछ से न जाने क्या-क्या कुछ पैदा कर देने की मायावी बाजीगरी, विषय वैविध्य का अटूट सिलसिला, हास्य-व्यंग्य में काव्य का अलौकिक सौन्दर्य और इन सबसे ऊपर एक निष्पक्ष, निर्मम विश्लेषण की क्षमता रखने वाली खाटी, ईमानदार मानवीय जीवन-दृष्टि शायद यह सब तथा और भी अनेक अबूझ शास्त्रीय किस्म की लेखन बारीकियां रवीन्द्रनाथ त्यागी को हिन्दी भाषा का ही नहीं, समस्त भारतीय भाषाओं का इस सदी का सर्वाधिक समर्थ हास्य-व्यंग्य लेखक बनाती हैं। हिन्दी व्यंग्य लेखन की भविष्य की पीढ़ियां शायद विश्वास ही न कर पायें, कि हिन्दी के ऐसे सर्वकालिक महान व्यंग्यकार को, उसके अपने जीवनकाल में मात्र एक 'नफीस हास्यकार' कहकर उपेक्षित किया जाता रहा।

उनके कवि होने के कारण और उनके विस्तृत अध्ययन के फलस्वरूप उनकी

रचनाओं में जो 'बांकपन' आता है, वह उनका विशिष्ट आकर्षण है।

श्री नईम जी द्वारा लिखे गये पत्रों में उनकी अनूठी भाषा-शैली और बेलौसपन के चमत्कार देख-देख मन गदगद हो उठता है। वे लिखते हैं-

उम्मीद करता हूं, कि आप दोनों सकुशल घर पहुंच गए होंगे। यहां दोनों ही ठीक-ठाक खुरपी के टेढ़े बेंट की तरह निबाहते हुए सकुशल हैं। वैसे इस आयु वर्ग और इस बेभाव बढ़ती महगाई के दौर में कुशल है ही कहां? कविताओं के भाव मार्केट में गिरे हुए हैं। सुरेन्द्रीय और चक्रधरीय खोटे सिक्कों का ही चलन चल गया है। ज्ञानपीठों और अकादमियों वाले कवियों को आम भण्डार ग्रहों में दीमक चाट रही है। हां, विश्वविद्यालयों में हिन्दी के महन्त सन्त दादू रैदास कविता की काक्ष्यासेत करके पहेलियां गांठ कर अपनी आजीविका ठाठ से चला रहे हैं और हमारे जैसा फटेहाल कवि, कविता के मोल एक जोड़ा जूतियां भी नहीं खरीद पा रहा है। कविता के पारिश्रमिक से मात्र चप्पल के तल्ले लगवाये जा सकते हैं।

अज्ञात शत्रु एक पत्र में वे लिखते हैं-

मैं आपके बारे में लिखना चाहता था, कि कुंठा और टूटन के इस युग में भी रवीन्द्रनाथ का अभ्यंतर इतना आशावादी और जॉली रहा है, कि उनके लेखन में कहीं खीझ एवं आक्रोश नहीं है, बल्कि इसके विपरीत, जीवन की चुभन को सह जाने और पुचकारने की मनोवृत्ति विद्यमान है। इसे पलायन नहीं कहा जा सकता, क्योंकि पलायन में लेखक का व्यंग्य-लेखन अति भावुक हो जाता है, जैसे पांडेय बेचन शर्मा उग्र का था- जबकि त्यागी जी के लेखन में एक शालीन व्यक्ति का Sophisicated treatment है, जो एक stoic सहनशीलता की उपज है। त्यागी को हिन्दी व्यंग्य का गालिब कहा जा सकता है।

श्री प्रेम जनमेजय द्वारा लिखे गये पत्रों में भी अंतरंगता, आदर तथा आत्मीयता की कोई कमी नहीं है। यथा-

मेरे जन्मदिन पर (18 मार्च) को आपका रचनात्मक आलोचना-युक्त पत्र मिला, बहुत अच्छा लगा। आपने ऐसा कैसे सोच लिया, कि आपकी आलोचना मुझे कटु लगेगी? सच मानिए, आपकी प्रशंसा कटु लग सकती है, क्योंकि वह आगे बढ़ने का कोई रास्ता नहीं दिखाती, परन्तु आलोचना- वह भी सही आलोचना- के कटु होने का मतलब ही नहीं है। मैं आपका इसलिए भी प्रशंसक हूं, कि आप अपनी बात सीधी, बेलगाम कहते हैं, कहीं कोई कुछ छुपाव नहीं रखते।

एक अन्य पत्र में वे लिखते हैं- आपने लिखा है- 'सेहत साथ नहीं दे रही है- वैसे इधर कुछ अच्छी रचनाएं लिख पाया हूं।'

उक्त वाक्य पढ़कर मैं अजीब से विरोधाभास में फंस गया हूं- आपके स्वास्थ्य के लिए कामना करूं अथवा अच्छी रचनाओं के लिए बधाई दूं। परन्तु मेरे विचार से आपका स्वस्थ रहना अनिवार्य है, क्योंकि आपने अच्छी सेहत में भी अच्छी रचनाएं लिखी ही हैं। अत: स्वास्थ्य के लिए शुभकामनाएं एवं अच्छी रचनाएं पढ़ने और सुनने की प्रतीक्षा रहेगी।'

अनेक नामीगिरामी रचनाकारों ने त्यागी जी और उनके लेखन पर अपने पत्रों में रचनात्मक टिप्पणियां की हैं। इनमें से कुछ रचनाकार हैं- हरिवंश राय बच्चन, नागार्जुन, विष्णु प्रभाकर, कुबेरनाथ राय, विनोद भट्ट, राधाकृष्ण, हरिशंकर परसाई, श्रीलाल शुक्ल, शरद जोशी, रामावतार चेतन, शिव वर्मा, के. पी. सक्सेना, लतीफ घोंघी, विनोद शंकर शुक्ल, मणि मधुकर, गंगाप्रसाद विमल, हरिपाल त्यागी, धनंजय वर्मा, कन्हैयालाल नंदन, कमल किशोर गोयनका आदि।

एक और अनेक की यह पत्र-श्रृंखला हमें कितना कुछ दे रही है, जिससे हम अपने लेखन को निखार सकते हैं। यह हमारे ज्ञान में वृद्धि कर रही है और हमें समझा रही है, कि हृदय-सम्राट रचनाकार उस हस्ती को कहते हैं, जो हर श्रेणी के पाठकों और लेखकों के दिलो-दिमाग पर राज करती है और जिसकी तारीफ़ में उसके चाहने वाले अपना सम्पूर्ण शब्दकोष उड़ेल देते हैं, अपनी सारी श्रृद्धा अर्पित कर देते हैं।

लगे हाथों यह भी जोड़ूं कि हमारे शहर देहरादून में व्यंग्य लिखने वालों का तो टोटा है ही, व्यंग्य को समझने और सराहने वालों का तो, नितान्त अकाल है। ऐसे में, मुझे अब समझ में आ रहा है, कि स्वर्गीय त्यागी जी देहरादून में 'तथाकथित' साहित्यकारों और गोष्ठियों से अपने को आखिर क्योंकर अलग-थलग रखते थे? अरे भई, जो कलम का धनी और शब्दों का जादूगर, घर बैठे-बैठे ही, दुनियां-जहां के लेखकों को पढ़ रहा होता था, अन्यानेक विद्वानों से सतत पत्र-व्यवहार में लीन रहता था, औरों के लेखन पर तारीफ के पुल बांधता रहता था और अपने प्रशंसकों की हृदयस्पर्शी, प्रेरणादायक और उत्साहवर्द्धक टिप्पणियों की बोछारों से सराबोर रहता था, उसे अपने अप्रतिम पुस्तकालय और शान्ति-निकेतन रूपी दौलतखाने से बाहर के रेगिस्तान और झुठिस्थान की ओर झांकने की भला क्या जरूरत पड़ती?

अंत में, श्रीमती शारदा त्यागी जी की हार्दिकता, प्रतिबद्धता और मानसिकता दृढ़ता को सलाम। उन्होंने 'ज़िंदगी के साथ भी, ज़िंदगी के बाद भी' के मोटो का चरितार्थ करते हुए, एक ऐसी सौगात पेश की है, जो बेमिसाल है और उत्कृष्टता की कुतुबमीनार है।

130/2-1, गुरूरोड, देहरादून

पुस्तक - मेघदूत उवाच
संकलित - श्रीमती शारदा त्यागी
प्रकाशन - गीतांजली प्रकाशन, देहरादून-248001
पृष्ठ - 358
मूल्य - 300/- रूपए

विशेष: उदय प्रकाश, निर्मल कुमार, ज्योति भट्ट, अरविंद कुमार, देवेंद्रराज अंकुर, वागीश शुक्ल, रामदरश मिश्र, यशवंत व्यास आदि की रचनाएं

प्रधान संपादक
प्रभाकर श्रोत्रिय

संपर्क
भारत भवन न्यास
ज.स्वामीनाथन मार्ग
शामला हिल्स, भोपाल-2

ज्ञान चतुर्वेदी

# मर गए बब्बा

**प्रिय प्रेम! व्यंग्य उपन्यास लिखने के अपने मजे, चुनौतियां तथा खतरे हैं जिनका विवेचन करने का यह अवसर नहीं है। बस, इतना बताना था कि मेरे चौथे व्यंग्य-उपन्यास के दूसरे ड्राफ्ट के शुरुआती सात पेज तुमको भेज रहा हूं। यह अभी रफ सा काम ही समझो। पहले ड्राफ्ट के करीब चार सौ पेजों को अब दोबारा नए ड्राफ्ट में लिखना, बीच में हर माह सात व्यंग्य रचनाएं अपने विभिन्न कॉलमों के लिए लिखकर देना, मुझे लगने लगा है कि कहीं मैं मोमबत्ती को दोनों सीरों से तो नहीं जला रहा? बहरहाल! दूसरे ड्राफ्ट के सौ पेज लिख चुका हूं। काम रुक-रुककर चल रहा है, पर चल रहा है। मन किया कि तुम देखो, सो भेज रहा हूं। यह उपन्यास मैं मृत्यु को लेकर लिख रहा हूं। एक बूढ़े की मृत्यु और मृत्यु उपरांत होने वाले धार्मिक संस्कारों की पृष्ठभूमि में उसकी छोड़ी गई सम्पत्ति के लिए उसकी संतानों के बीच चल रही खींचतान, मृत्यु को लेकर धार्मिक, फिलासफिकल बातें, संसार की नश्वरता के चर्चे और घनघोर इच्छाएं और इनके बीच गांव के बहुत से बहुरंगी चरित्र। ऐसा कुछ आना है उपन्यास में। मृत्यु और बुढ़ापे के बारे में खिलंदड़े अंदाज में व्यंग्य कथा लिखने के अपने खतरे हैं। चुनौती बड़ी है। पर चुनौती बड़ी न हो तो फिर मजा ही क्या है? बहरहाल, जैसी कि तुमसे चर्चा हुई थी, उपन्यास के शुरुआती पन्ने भेज रहा हूं। ये भी अभी फाइनल ड्राफ्ट नहीं है। कुछ बदल सकता हूं परंतु पढ़कर मेरे नये व्यंग्य उपन्यास का मिजाज तो पता चलेगा ही।**

**उपन्यास का नाम अभी नहीं सोच पाया हूं कदाचित पूरा करने के बाद, बल्कि प्रकाशक को पांडुलिपि भेजने के बाद एक दिन अचानक सूझेगा और तब प्रकाशक को फोन पर लिखवाया जाएगा।**

किस्सा कुछ यूं शुरू होता है कि बब्बा मर गए।

वैसे किस्सा तो उनके मरने से बहुत पहले से शुरू हो चुका था। मरने के बाद भी चल रहा है पर बात कहीं से शुरू करनी होगी।

सो बात यहां से शुरू करते हैं कि बब्बा मर गये। ठीक?

तो. . .

बब्बा मर गये।

'तुम भोत दुखी न हुआ करो डॉक्टर साब।

अब अगर डॉक्टर .. . .ही दुखी होने लग जायेगा तो मान लो कि फिर तो वह जिंदगीभर ही अपना मूंह लटका के बैठा रहेगा क्योंकि डॉक्टरन के चौतरफा तो दुखी लोगन का रेला लगा है। देख देख के तुम भी दुखी होने लगे, तो तुम जेई करते रह जाओगे- न मूं धोबे की फुर्सत पाओगे, न कुछ और चीज धोबे की. . .। हिंदुस्तान का आदमी इतना हरामी है कि एक बार दुखी आदमी को यह पता भर चल जाये कि उसके लाने कोई दुखी होबे को बैठा है, दुखी आदमी खुशी-खुशी भागा आता है और आपको घेर लेता है। दुखी आदमी को देख के दुखी होना छोड़ दो डॉक्टर साब। तुमाओ धंधा ऐसा है कि दूसरो के दुख पे रोने बैठ गये तो. . .'

बब्बा नौजवान डॉक्टर साहब को पुचकारते हुये समझा रहे थे। डॉक्टर ने अपने धंधे की मार्केटिंग में जो सीखा था, उसी के अनुसार उसने अभी बब्बा को यह बताने की कोशिश की थी कि उसे संदेह है कि आपकी वह बीमारी कैंसर भी हो सकती है। डॉक्टर ने संजीदा होकर, ऐसा मुंह लटका कर कि मानों खुद के बाप को कैंसर हो गया हो और आवाज को सायास गंभीर तथा भरी-भरी-सी बनाकर बब्बा से कहा था कि बड़े दुख की बात है कि आपको. . .

'तुम कह रहे हो कि बड़े दुख की बात है कि आपको ऐसी बीमारी होने का शक लग रहा है हमें। भैय्या बीमारी सुसरी हमें हुई है और दुखी तुम हो रहे हो? तुम काहे अपना खून छनका रहे हो?. . .कैंसर हो, चाहे टी.बी. . . हमसें तुमारे दुखी होबे की बात कितें से आ गई?. . .नहीं डॉक्टर साहब, तुम हमें सांत्वना तो देबे की कोशिश करो मती। और खुद भी दुखी मत हो क्योंकि सुख-दुख जैसी कोई बात नहीं इस दुनिया में। हम हो चुके चौरसी साल के। हमसे अच्छा तुम्हें कौन बता सकता है कि क्या तो दुख और क्या सुख सब भेनचो आखिर में जाके एक ही चीज निकलते हैं तुम अभी नौजवान हो न, तभी ये दुख-सुख की भाषा बोल रहे हो, नहीं तो दुनिया में काहे का तो दुख और कौन-सा सुख। सब चीजें घूम फिर के वही हैं। एक है सब। दुख-सुख सब एक है, बस आपका मन आपको चूतिया बनयो जाता है और आप बनते चल जाते हैं. . .'

बब्बा सुख दुख के अपने एकालाप में यथार्थ, फिलासफी, वेदपुराण और गाली गलौच के बीच आवाजाही कर रहे हैं और डॉक्टर बैग में जांच का सामान वापस धरता हुआ हा हूं किये जा रहा है।

यहां सजग परंतु पारंपरिक पाठक पूछ

सकता है कि बब्बा तो शुरुआत में ही मर चुके, फिर वे यहां वापस कैसे आ गये? क्या कहानी में कोई पेंच है? डबलरोल टाइप की बात या फिर जासूसी या भूतप्रेतन की कहानी तो नहीं हो रही? होय तो बता दीजियो क्योंकि वैसी कहानियां हम नहीं पढ़ा करते।

इसके उत्तर में हम यहां बता दें कि हिंदी कहानी आजकल बदल गई है और सीधे-सीधे ही कहानी कहने वाले को (जैसी कि हम खुद पहले कहा ही करते थे), आजकल चूतिया कहा जाता है। सो कहानी को हम घुमा फिराकर कह रहे हैं और आगे भी आप पायेंगे कि कई बार हम कहानी के उसी प्रकार या तो घुमाकर पकड़ेंगे या टांगों में से हाथ निकालते हुए फिर उसका कान पकड़ेंगे या कहीं-कहीं तो ऐसा पकड़ेंगे कि खुद न बता पायें कि कान तक पहुंचे कैसे? क्या करें साहब। कहानी के धंधे में टिकना है तो ये ठनगन भी करने ही पड़ेंगे।

दरअसल हमने कहानी तो शुरू की थी, 'बब्बा मर गये' इस वाक्य से और इसके बाद रोना धोना मचता और अंतिम संस्कार की तैयारी होती बताई जाती। परंतु हम कहानी को वहां उठाकर बब्बा की मृत्यु से एक वर्ष पूर्व के इस दिन पर ले आये हैं जाहिर है कि तब बब्बा जिंदा थे। बल्कि इसे यों कह लें कि अच्छे खासे जिंदा थे। अच्छे खासे जिंदा का मतलब? मतलब यह कि कुछ ऐसे जिंदा थे कि गांव के सभी जिंदा लोगों को लगातार खबर देते रहते थे कि बेटा, अभी हम जिंदा हैं। वे लुगासी में और उसके आसपास के बड़े इलाके में एक साथ ही विख्यात और कुख्यात थे। उन्हीं में से कोई दिन था यह कि उस दिन उन्हें हुक्का पीते हुये, या शायद किसी को जोर-जोर से गरियाते हुए या कदाचित किसी को दूर से ही जूता फेंककर मारते हुए अचानक जोर से खांसी का दौरा-सा आया और बहुत सारा खून थूक और बलगम के साथ निकल आया। आसपास वाले घबरा गये, परंतु बब्बा सभी को सांत्वना सी देने लग गये कि चिंता की कोई बात नहीं है क्योंकि ऐसा थोड़ा बहुत खून तो हमें छः महीने से कभी-कभी आता ही रहता है और जे साला कुछ खास नहीं है, बस कुछ पुराना-धुराना खून जमा है छाती में, जो भेनचो बैठे बिठाये कभी-कभी बाहर निकल आता है। वे बताने लगे कि सन छत्तीस में जब गांव में लाठी चली थी, तब एकाध लाठी उनकी छाती में भी लग गई थी, ये तभी का खून है स्साला। और कुछ खास नहीं। और पुराना खून तो जितना निकल जाये, उतना बढ़िया वरना छाती में पड़े-पड़े पानी में बदल जायेगा तो मुसीबत। बब्बा ने खून गिरने को आम घटना मानने का आग्रह किया परंतु बब्बा के बड़े नाती रज्जन ने उनकी एक न मानी और अपनी मोटर साइकिल दबा के डॉक्टर साहब को बिठा के घर ले आये।

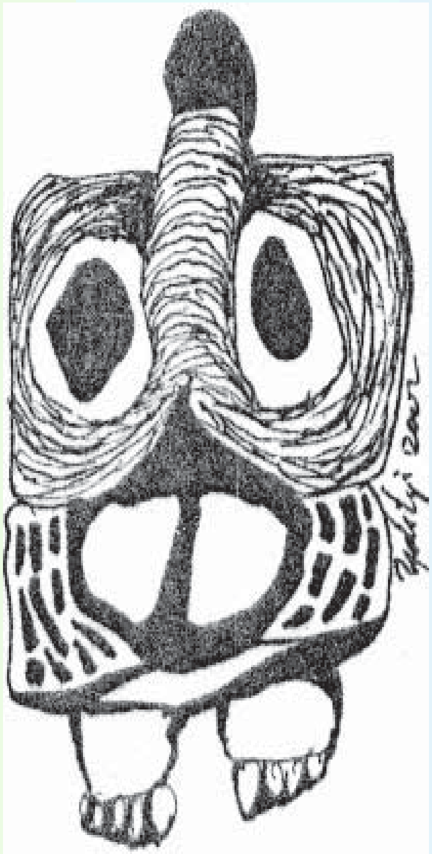

लुगासी में तो वैसे भी डॉक्टर होते नहीं हैं। एक वैदजी हैं जो खुद ही मरबे वारे हैं, एक होमियोपैथी की पेटी धरे रिटायर्ड मास्साब हैं और दो-तीन ऐसे डॉक्टर हैं जिनकी डिग्री की ठीक से पुंगी भी नहीं बनाई जा सकती। सरकारी अस्पताल है मोंठ में जो लुगासी से बाहर किलोमीटर पर है। वहीं से आये हैं डॉक्टर साहब।

डॉक्टर साहब एकदम ताजा-ताजा बने डॉक्टर थे जिसे मेडिकल कॉलेज की कढ़ाई से उतारकर सीधे मोंठ में परोस दिया गया था। वे ताजा डॉक्टर तो थे ही, साथ ही लगभग ताजा-ताजा नौजवान से भी थे, जिन्होंने बाल धूप में न सफेद करके डॉक्टरी हॉस्टल की मटरगस्तियों और दीगर अन्य ऐसी गतिविधियों में सफेद किये थे जिनका डॉक्टरी से ज्यादा उठाईगिरी से ताल्लुक हुआ करता था। दरअसल वे जवानी और डॉक्टरी की एक साथ चपेट में आने के बाद आज तक तय नहीं कर सके थे कि किसे प्राथमिकता दें। भ्रम, अंध-विश्वास और प्रयोगात्मकता का अजीब-सा घालमेल जो नये-नये डॉक्टर में कहीं भी देखा जा सकता है।

तो इस डॉक्टर ने पहले तो खूब उल्टी सीधी बातें पूछीं, फिर वो आले को यहां-वहां धरकर जांचता रहा और अंत में आला लपेटकर बैग में धरते हुये उसने गंभीरतापूर्वक सभी आसपास वालों को नाटकीय ढंग से सुनाते हुये रज्जन से कहा कि इनको जो खांसी में खून आ रहा है, वह अच्छी बात नहीं है।'

बब्बा अभी तक रुचिपूर्वक डॉक्टर की समस्त हरकतों पर तिरछी नजर रखे हुये थे और उसको मनमर्जी से अपनी तरह से यूं जांच करने दे रहे थे मानों कोई बूढ़ा अपने छोटे से नाती को पेट पर खेलने-कूदने दे। बालक है जाने दो वाली उदार भावना। पर अब, जब उसने यह कहा कि खांसी में खून आना अच्छी बात नहीं है, तो बब्बा ने स्पष्टीकरण देना और लेना ही उचित समझा। बब्बा ने डॉक्टर को स्पष्ट किया कि खांसी में खून आने को हम भी कोई बहुत बढ़िया या दिलकश चीज मानते हों तो ऐसा नहीं है। जिसने भी यह बताया है कि हम इसे अच्छी चीज मानते हैं, वो हरामी है और तुम्हें चूतिया बनाने की कोशिश कर रहा है। हम भी इसे खराब चीज ही मानते हैं। उन्होंने यह चुनौती तक दे डाली कि पूरी लुगासी में तुम हमें एक आदमी ऐसा बता दो कि जो यह मानता हो कि खांसी में खून आना जोरदार चीज है, तो उसे बुलाकर हम अभी तुमारे सामने चार जूते मारते हैं। बब्बा ने डॉक्टर को बताया कि माना कि यह गांव है और हम गांव वाले शहराती लोगों के लिए उज्जड़

तथा चूतिया कहाते हैं परंतु हम कितने भी हो, इतने नहीं है कि खासी में खून आने को अच्छी बात मानें।

हम भी मानते हैं कि खासी क्या, कहीं से भी खून आना अच्छी बात नहीं है। पर क्या किया जा सकता है? जिंदगी में कित्ती बार ऐसी चीजें हो जाती हैं कि जो कोई जान-बूझकर नहीं की जातीं। जे तो बस्स हो जाती है डॉक्टर साब। अब हमने कोई जानबूझके थोड़ेई खून थूका। न तो मूं में चक्कू धुसेड़ा, न ही कांच चबाया। जे तो बस निकल आया। ऐसेई।. . . हमें तो येई शक है भैय्या कि पड़ा रहा होगा पुराना खून छाती में। निकल-निकल गया तो हमारे हिसाब से तो एक लिहाज से यह बढ़िया ही कहाया। निकलने के बाद अब हमें वैसे भी भोत बढ़िया लग रहा है। सो हम तो जे ही कहेंगे कि तुम नाहक परेशान न हो। खून का गिरना अच्छी बात तो खैर है ही नहीं, पर ऐस खराब बात भी नहीं है।

डॉक्टरी के पोथों में इस तरह के तर्कों कोई सटीक उत्तर उसने कहीं पढ़ा नहीं था सो डॉक्टर चुपचाप रहा पर वह चिढ़ सा गया। डॉक्टर ने भिनभिनाकर कुछ कहा कि हमें शक है कि फेफड़े में आले से कुछ आवाजें सुनाई दे रही हैं, आपका लीवर भी बढ़ा है और आपका छः महीने में छः किलो वजन भी कम हो चुका है- इन सब बातों में हमें लग रहा है कि कहीं यह कैंसर न हो जो लीवर तक फैल चुका हो, सो आगे जांच की आवश्यकता पड़ेगी। डॉक्टर की इन बातों को 'मुझे शक है', 'मुझे दुख है', 'मुझे डर है', 'मुझे लगता है', 'हो सकता है' यदि वाक्यों के साथ मिलाकर अपने लिहाज से बेहद सलीके और समझदारी से संभालते हुए कैंसर का नाम दिया।

बब्बा हंसने लगे।

'एक दम्म से कैंसर पे न कूद पड़ो डॉक्टर साब।. . .तनिक धीमे-धीमे चलो।' बब्बा ने पुचकार कर कहा। उन्होंने नौजवान डॉक्टर को डॉक्टरी के प्रेक्टिकल गुर सिखाते हुए कहा कि मरीज को एकदम से कैंसर कह देना ठीक बात नहीं क्योंकि न तो हर मरीज को हमारी तरह से यह पता होता है कि डॉक्टरी में कई बार चुतियापे की बातें भी की जाती हैं, और न ही मरीज हम जैसा हिम्मतवाला ही होता है कि जो कैंसर-फेंसर के नाम से घंट न घबराये।

डॉक्टर और चिढ़ सकता था, पर चिढ़ा नहीं। रास्तें में आते समय उसे बब्बा की हैसियत और लुगासी के नागरिक शास्त्र में उनके स्थान की खबर हो चुकी थी। प्राइवेट प्रेक्टिस में लुगासी से भविष्य में केस उसके पास आते रहेंगे- इस सुखद आशा में वह लुगासी के इस महत्वपूर्ण नागरिक की अललटप्पू बातों को नजरअंदाज करके अब तो मुस्कुराने तक लग गया था। वह उनकी बातों का मजा भी ले रहा था। पर साथ ही बीमारी की गंभीरता की तरफ इशारा भी करता जा रहा था। उसने फिर कहा कि मुझे दुख है, पर आपको मोंठ चलना पड़ेगा ताकि वहां आपकी छाती का फोटू करा लिया जाये। तभी बीमारी साफ हो सकेगी और डॉक्टरी अदालत में दूध का दूध, पानी का पानी हो सकेगा।

रज्जन ने भी डॉक्टर की हां में हां मिलाते हुये कहा कि डॉक्टर साब, आप बता दो कि कब लाना होगा, तो हम उसी दिन हो के. . .।

बब्बा भड़क गये। बब्बा ने कहा कि फोटू-सोटू तो खिंचायेगा हमारा घंटा। बब्बा ने रज्जन की तरफ से डॉक्टर से क्षमा मांगते हुये कहा कि डॉक्टर साब, तुम इन्हें माफ कर देना कि इनने तुमे उते मोंठ से इते ला के इत्ता परेशान किया। हुआ जे कि हम तो इधर खून थूकने में लगे थे कि उधर जू चूतिया चंदन आपको उठा लाये। फाल्तू आपका टेम खराब किया।. . .मोटर साइकिल के पहिया अलग घिसे। और नतीजा? . . . नतीजा से कि भैय्या कैंसर है तुमें। चलो शहर। खिंचाओ एक्सरा, कराओ खून की जांच, डलवाओ नीचे उंगली, ऊपर नली। पचास तरह के डॉक्टरी नेंग।. . .इनें पता है कि बब्बा जे सब कभी नहीं कराबे वाले। पर ले आये तुमें, पिछाड़ी लाद के।. . .हम कहीं भी नई जाबे वारे। कैंसर से मरेंगे तो लुगासी में और कोई हमारा मर्डर करबे की इच्छा भी करता हो तो उसे भी लुगासी ही आके हमें चक्कू मारना पड़ेगा।. . .अस्सी साल हो गये लुगासी में रहते। अब कैंसर के लाने हम क्या लुगासी से बाहर जायेंगे. . . माफ करो डॉक्टर साब।. . .ये रज्जन हमारे नाती हैं जरूर पर कि हैं बड़े चूतिया। पर क्या करें? पैदा हो गये हैं खानदान में तो रिश्ता तो तोड़ नहीं सकते न? है कि नहीं? . . .बस, तुम इन्हें माफ कर दो और हमें भी।

बब्बा इतना लंबा बोलकर थोड़ी देर को सांस लेने के लिये चुप हुये तो डॉक्टर ने उन्हें समझाइश देने के अंदाज में पुचकारते हुए बताने की कोशिश की कि आपको अपनी बीमारी को सीरियसली लेना चाहिये और इतनी गंभीर बात को आप ऐसे मजाक में न उड़ायें।

बब्बा ने हंसकर कहा कि हम मजाक नहीं कर रहे भैय्या क्योंकि वैसे भी हमारा तुमारा कोई जीजा-साला का रिश्ता तो है नहीं कि मजाक चले। बल्कि हम तो जीजा-साले के बीच भी मजाक के सख्त विरुद्ध हैं और इस चक्कर में अपने साले की बहुत पहले ठुकाई भी कर चुके हैं। पर जहां तक सीरियस होवे की बात तुमने कही डॉक्टर साब, तो तुम क्या चाहते हो कि हम अब अपनी बीमारी के नाम पे दिन भर छाती कूटा करें?. . .और कहीं जोर से कूटकाट दी तो साला और खून निकल आयेगा।. . .

डॉक्टर अब खुलकर हंसने लगा। वो जान गया कि कैंसर की तरह ही इस आदमी का भी कोई तोड़ नहीं हो सकता।

बब्बा बोलते रहे।

'और जो तुम बार-बार हमें दुख है, हमें दुख है कह रहे हो न डॉक्टर सा'ब, तो दुख-सुख का तुमें पता भी है? नहीं पता तुमें नहीं पता वह हम बताते हैं. . .'

और यहीं से बब्बा ने सुख-दुख का वह लंबा विवेचन शुरू किया। सुख-दुख संबंधी शुरूआती जो अंश पाठकों ने अभी पढ़ा था, वह इसी विवेचन का हिस्सा था।

बब्बा सुख और दुख की फिलॉसफी को अपनी तरह से नौजवान डॉक्टर को समझा रहे थे, जो अब मजे से उनकी बातों में रस लेने लगा था:

'अच्छा डॉक्टर साब, तुम तो हमें जे बताओ कि जे साली जिंदगी होती क्या? बताओ, बताओ। तुमने तो इत्ती बड़ी पढ़ाई करी है। डॉक्टरी के मोटे-मोटे पोथे पढ़े हैं। पर हम जैसा कोई चूतिया कभी तुम बैठे के जे बताओ कि जिंदगी क्या होती है, तो बता पाओगे? जिंदगी को बिताबे के लिए किताब

नहीं पढ़नी पड़ती भैय्या, जिंदगी जीना पड़ती है। बैठे-बैठे लाख पोथियों पढ़ डालो चूतड़ में भट्टे पड़ जायेंगे बैठे-बैठे पर जिंदगी न समझ पाओगे। हम जैसो से पूछो, तो जिंदगी समझ पाओगे। और जिंदगी समझ गये तो फिर सुख-दुख की बातें भूल जाओगे।

तो जिंदगी क्या है? हम बतायें?

जिंदगी साली निरंतर सुख की तलाश है, जो कहीं होता ही नहीं 'जिंदगी सुख के पीछे एक चूतिया चंदन वाली दौड़ है जो कभी खत्म नहीं होती क्योंकि वह मिलता ही नहीं। कहीं होये तब तो मिले ना। सुख कहीं नहीं होता डॉक्टर साब। सब दुखी हैं। सब दुखी रहबे बारे भी हैं। सब तरफ बस दुख ही दुख है। सब दुखी हैं। कोई कम, तो कोई ज्यादा। और जो दुखी नहीं है, वह वास्तव में चूतिया है। चूतिया होने के कारण उसे पता ही नहीं चल पाता कि वो वास्तव में दुखी है। वह मूर्खता के कारण दुख को ही सुख समझे रहता है।. . .सो दुख तो हर तरफ है। और सुख की बस अफवाह है। झूठी खबर। जिंदगी भर आदमी इस झूठी खबर के पीछे भागा फिरता है कि क्या पता कि खबर सच्ची ही निकल आये। निकलती वह घंट कभी नहीं।. . .तुम हंस रहे हो डॉक्टर साब? पर बात हम सच्ची कह रहे हैं। तुम समझ नहीं पा रहे क्योंकि तुम अभी जवान हो। जवानी की ताकत को कहां खर्च करोगे? पूरी ताकत से सुख लिये भागोगे ही। हम भी कभी भागे ही थे। खूब दौड़े। दौड़ते-दौड़ते पांव पिरा गये। सांस उखड़ गई। घुटना खट-खट करने लगे। पर सुख न मिला।. ..तुम भी जब हमारी उमर में पहुंचोगे न, तब खुद से ही सवाल पूछना कि बता बे, अब तो बता कि क्या होता है दुख और क्या होता भेनचो सुख. . .?

अब जैसे तुम हमें के रहे हो कि दुख की बात है कि आपको शायद कैंसर है, जो सब तरफ फैल भी गया हे। लीवर में चला गया है। फेफड़े में तो है ही। और का पता कि स्साला दिल पर भी जोर डाल रहे हो क्योंकि तुमारी डॉक्टरी में आदमी आखिरी में हार्टफेल से ही तो मरता है न? है कि नहीं? . . .सो इत्ता कैंसर हो गया है. . .दुख की बात है। पर क्या यह सुख की बात नहीं है कि इत्ता फैल जाने पर भी हम तुमारे सामने बढ़िया जिंदा बैठे तुमसे ऐसी बढ़िया बातें कर रहे हैं जो कोई बिना कैंसर वाला भी करके बता दे तो हम गुलामी करें उसकी? अरे इत्ती बड़ी बीमारी के बाद भी आदमी जिंदा है- और क्या चाहिये। काहे का दुख? घंटा।

डॉक्टर बब्बा के ऊलजुलूल परंतु

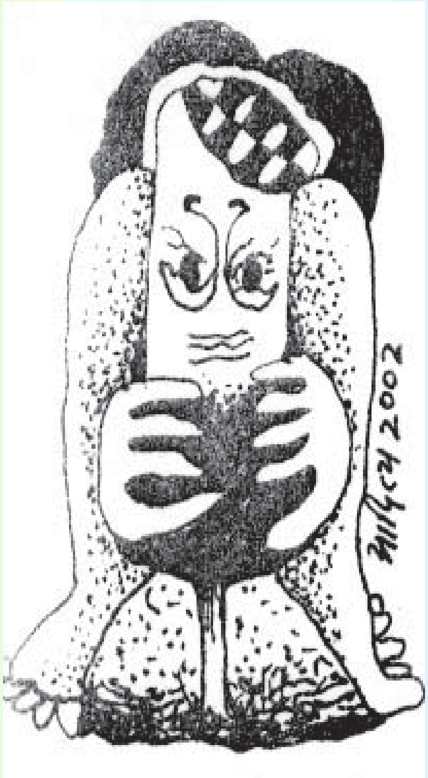

अद्भुत विवेचन में खो सा गया था। वह मजे लेकर सुन रहा था।

बब्बा ने आगे कहना जारी रखा।

'वैसे डॉक्टर साब, तुम सोच रहे होगे कि जे बूढ़ा हमारा टाइम खराब कर रहा है। तुम ठहरे व्यस्त आदमी। बिजी बोलते हो न? बिजी डॉक्टर। पर जान लो कि हम तुमारा टाइम खराब नई कर रहे। हमारी जेई बातें तुमें आगे याद आएंगी कभी तो तुम भी याद करके कहोगे कि यार कैसा तो आदमी था। और बाद में कोई ऐसेई याद करे तब तो भैया जी ने का मजा है और मरने का भी। जे क्या भेनचो कि. . .समझे कि नहीं? तो तुम हमसे आज सुख-दुख की बात समझ ही लो भैय्या।'

बब्बा को महफिल सजाने की आदत तो वर्षों से थी। आज एकदम नया श्रोता पाकर वह उफनकर सामने आ रही है।

'अच्छा डॉक्टर साब, तुम तो जे बताओ कि तुमारी शादी ब्याओ हो गओ कि नई? . . . चलो, नहीं हुआ हो, पर कभी स्त्री-संसर्ग किये हो कि नहीं? शरमाओं भी मत- अरे आदमी भेनचो पैदाइश के बाद से ही स्त्री के पीछे ही तो भगा फिरता है। यही फितरत है आदमी की। जवान होते-होते वह स्त्री संसर्ग के लिए कैसा मरा जाता है? लार बहाता खड़ा रहता है। हर स्त्री की राह में। बस यही सोचता रहता है कि मिल गई तो मजा आ जायेगा। ऐसा सुख मिलेगा कि स्वर्ग का आनंद आ जायेगा। है कि नहीं? पर इस एक सुख के भरम में स्साला ऐसा चूल्हा-चक्की, मोंड़ा-मोंड़ी के झंझट में फंसता है कि तब जा के पता चलता है सरऊ को कि सुख तो बस एक छलावा था। कभी मछरिया पकड़े हो तालाब पे? न पकड़े होगे। पर पता तो होगा। वैसा ही है यह सुख इसे दुख के कांटे में लगा चारा समझ लो डॉक्टर साब। सुख के लिये लपकते हो, पर दुख के कांटे में बिंधे रह जाते हो। बस, जेई है सुख और दुख की कहानी।'

बब्बा जब बोलते हैं तो सुनने वालों की भीड़ आसपास जमा हो जाती है। फिर अभी तो वे एक शहराती डॉक्टर को पछाड़ लगा रहे थे, जिसमें लुगासी वालों को आत्मीय गर्व होना ही था। सो ज्यादा ही भीड़ थी। इस भीड़ में घर के लोग थे, घर के नौकर थे, चरवाहे थे, पड़ौसी थे और नाती-पोते भी थे। भरापूरा घर है बब्बा का, मात्र यह कहकर उनके बड़े खानदान का जिक्र नहीं किया जा सकता। खासा भरापूरा मानिये। इसी भीड़ में उनके दो सुपुत्र भी खड़े हैं कि कहीं बाप कुछ मांग बैठे या आज्ञा दें तो तुरंत पूरी की जा सके। सुपुत्र स्वयं साठ साल के ऊपर के हो चुके, परंतु बब्बा के सामने वे अभी भी वही गप्पू हैं जिन्हें वे बचपन से लतियाते रहे हैं।

सुख और दुख का उदाहरण देने के फेरे में बब्बा ने सीधे अपने ही खानदान को पकड़ा। गप्पू से बेहतर और कौन होता?

बब्बा ने अचानक ही अपने बड़े गप्पू की ओर इशारा करके डॉक्टर को उनका परिचय कराया और इस परिचय को सुख-दुख की फिलॉसफी से जोड़कर बताने लगे। बब्बा ने बताया कि ये हैं हमारे सबसे बड़े सपूत। अब हम इनके पैदा होवे को सुख

मानें कि दुख। साठ साल से ऊपर के होकर मास्टरी से रिटायर हुये हैं, पचासन, बल्कि हजारन लौंडे इनसे पढ़-पढ़ा के दुनिया में यहां-वहां अपनी मैया करा रहे हैं, पर इन ने स्साली कभी एक चीज भी ढंग की जीवन में करी हो तो बताओ। जब जे पैदा भये थे तो सब कह रहे थे कि ल्यो भैय्या, पहली संतान ही लड़का भई है, सो तुमसे बड़ा सुखी आदमी मान लो कि दुनिया में नहीं। पर आज बेही गप्पू और बेही हम और वही दुनिया। काहे का सुख? जिंदगीभर इनने हमारी चूतड़ के नीचे कांटे बिछाये हैं। अब नीचे कांटे बिछे पड़े हों तो सुख से बैठ सकते हो क्या? और खड़े कब तक रहोगे? सो बैठना भी पड़ेगा ही और कांटन पे ही बैठना पड़ेगा। संतान पैदा भी तो आपने ही करी, तो कोई दूसरा थोड़ई बैठता फिरेगा। सो जिंदगीभर जे हमें परेशान करबे की ठाने रहे। इनने एक चीज ढंग की करी हो तो बतायें। आप नये आदमी हो और इनकी गऊ टाइप भगल पे जा के चूतिया भी बन सकते हो पर बिकट जिद्दी आदमी है जे। और हमेशा ही हमारे खिलाफ। ईमानदार हैं और दुनिया की तीन तेरह में भी नहीं पड़ते पर ऐसी ईमानदारी का हम का करें? चाटें शहद। हमने जो कहा, इनने हमारे उसका उल्टा किया। हमेशा। हम आर्यसमाजी बने तो जे तुरत घोर सनातनी बन गये। इनका जेई रहा कि बाप भेनचो कैसे तो भी चैन से न बैठ पाये। अंग्रेजन का जमाना था और ये गांधीजी के चेला बन बैठे। अभी भी गांधी टोपी लगाये कैसे मुस्काते खड़े हैं। अरे, अब तो सारे देस के कांगेसियन तक ने गांधी टोपी निकार के फेंक दई है भैय्या, अब तो उतार दो। आजकल कौन पहनता है? पर जे चूतिया टाइप अभी भी पहनके घूमते हैं कि गांधी बब्बा की आत्मा को शांति मिलेगी। भैय्या, गांधी बब्बा की आत्मा कबकी परमात्मा में मिल चुकी। पर इनने तो गांधीजी के चरनन में लोट-लोट के अपनी भगल की ऐन धूलमट्टी कर डाली। तब अंग्रेजन के जमाने में थानेदार हमें धमकाते रहे कि बब्बा, वो तो आपकी संतान हैं, सो हम लिहाज कर जाते वरना दो डंडा में रघुपति राघव राजा राम कर दें इनका।. . .अच्छा, देश आजाद हुआ तो हम यों सुखी भये कि चलो इनने अंग्रेजन के जमाने में खानदान की जो भी मिट्टी पलीद कराई हो पर अब जैसे सभी पुराने कांग्रेसी मंतरी-संतरी बन रहे हैं तो जे भी बनवे ही करेंगे तो घर में नोट पानी आयेगा, हैसियत बनेगी। पर दुनिया स्साली आगे बढ़ गई और जे इतें लुगासी में गांधी टोपी लगाये खड़े रह गये। कभी कहो तो बताते हैं कि हम सिद्धांतवादी हैं, हम गांधीवादी हैं, हम घंट हैं, हम जे हैं, हम बे हैं- अरे तुम तो बस जे, बिल्ली के, लीपने के, न पोतबे के। कुछ नहीं किया जीवनभर और इन्हीं चूतियापों में सुख खोजते रहे और हमसे भी कहते रहे कि इसी में हम भी सुख खोज लें। सुख बताते रहे जबकि खुद भी दुखी रहे और हमें भी दुखी करते रहे जिंदगीभर।. . . सो सुख का ठिकाना नहीं। बेटा पैदा हो, तो थाली बजाने में मत लग जाना डॉक्टर साब। इन जैसा निकल आया तो तुम कभी समझ न पाओगे कि सुख कहां खत्म होता है और दुख कहां से शुरू होता है।

गप्पू चुपचाप सुनते रहे। रोज का किस्सा। सुनते-सुनते साठ साल से ऊपर हो गये। सुनते रहो या फिर चुपचाप वहां से निकल जाओ। वे चुपचाप उठे और चबूतरे से उतरते हुये अंदर की तरफ बिना कुछ कहे चले गये।

'देखा?. . .बब्बा न कहा।

'कोई साला सच्ची बात सुनबे को तैयार नहीं है,' बब्बा ने आगे कहा।

'हम तो इसीलिये आजकल बोलते ही नहीं हैं। अस्सी साल हो गये बोलते-बोलते। . . .पर जब भी सच्ची बात की कि आदमी की कल्लाई। तो हम तो आजकल एक ही सच्ची बात बताते हैं डॉक्टर साब कि सच्ची बात जैसी चीज कहीं कुछ है नहीं और न तो कहीं दुख है न सुख। इस दुनिया में तो नहीं है। यहां न सुख है, न दुख। संसार में कुछ नहीं धरा डॉक्टर साब! सब माया है। चूतिया बनाने की तरकीबें हैं। इसे दुख नाम दे दो, चाहे सुख।'

लग रहा होगा कि हम ठीक नहीं कह रहे? क्यों डॉक्टर साब?

'अच्छा अब हम तुम्हें ऐसी बात बताते हैं कि तुम सुख-दुख की बातें ही करना भूल जाओगे।' बब्बा ने पौंरे की तरफ इशारा करते हुये कहा।. . .' 'उधर की तरफ देख रहे हो डॉक्टर साब?. . .वो उधर बरामदे के बाद पौंरे है घर की। वहां एक मरीज पड़ा है कि जिसको डॉक्टर को दिखाबे की जरूरत अब किसी को नहीं लगती। उतें हमाई लुगाई पड़ी है। इनकी अम्मा कभी लकवा लगा था उसे। अठारह साल पहले। तब से बिस्तर पे परी है। शुरू में खूब डॉक्टर आये। झांसी और कानपुर तक के आके देख गये। मार आलाफाला लटकाये। लाइन लगी रही भेनचो। वैद। होमियोपैथी के। झाड़फूंक वारे। मालिस करबे वारे। मंत्र-तंत्र के ज्ञाता।. . .सब हार गये। सब थक गये। अब कोई उस मरीज को नहीं देखता है। तो यही जिंदगी है डॉक्टर साब जिसकी बात हम कह रहे थे। अभी तुम आपे यहां और इत्ती देर से बैठे हो पर क्या किसी ने भी कहा कि डॉक्टर तनिक एक बार अम्मा को भी देखते जाओ? अरे, न होगी ठीक। पर उसे लगेगा तो कि उसकी चिंता की जा रही है। पर न कोई सपूत बोला, न हम ही ने कहा। तो जिंदगी तो ऐसी ही डॉक्टर साब। पता नहीं कि कौन कित्ती देर और किस हद तक तुमारे साथ चलता है। अरे चलते टाइम भी वो तुमारे साथ चल रहा है। कि कहीं और? क्या पता?. . . सो अठारह साल से पड़ी है हमारी बुढ़िया। शांत। न चलबे की, न फिरबे की। अब तो न दुख रहा, न सुख। और शांति भी काहे की डॉक्टर साब। अब उसे देख के तनिक बता पाओ तो बताओ कि उसके लिये किसको दुख और किसको सुख? लगातार दुख ही दुख बना रहे तो हम उसका रंगरूप ही भूल जाते हैं। खासकर के दूसरे के दुख का। आदमी इत्ता तो दुख देखे और किस-किस दुखी पुचपुच से करे। अब अम्मा का दुख मनाना चाहो तो दुखी हो लो कि लकवा पड़ गया पर सुखी ये सोच के हो लेते हैं सब कि चलो, लकवा पड़ गया पर जिंदा तो हैं। वैसे सच्ची बात यही है डॉक्टर साब कि अब तो अम्मा को देख के भी लोग दुखी होना भी बंद कर दिये हैं। कब तक हों? और दुखी होबे के लाने भी पहले आपको दुखी आदमी को देखना पड़ता है। पर जब आदमी पड़ा हो और किसी को दिखे ही नहीं, तो काहे का तो दुख। उस तरह से अम्मा को देखता ही नहीं पड़ी रहती हैं पौंरे में जैसे वहां और सामान पड़ा रहता है, वैसे। मानो खटिया पड़ी हो, या रजाई गद्दा। या बर्तन भांडा। बहुत दिनों से ऐसा अंगड़-खंगड़ घर में पड़ा हो तो कौन ध्यान देता है– सब निकल जाते

हैं बगल से। है कि नहीं. . .तो ऐसी अम्मा अभी मर मरा जायें तो बताओ कि इसमें दुख कहायेगा कि सुख? या कि कुछ भी नहीं क्योंकि सबके लाने तो पहले से ही मर सी चुकी हैं।

सो बहुत दुखी न हुआ करो डॉक्टर साब। तुम तो चाय पियो और जे मठरियां खाओ, ठाठ से।

एक अधेड़-सी महिला। घूंघट काढ़े। आकर चाय मठरियां रख गई थी। जाती हुई महिला को ताकते रहे बब्बा। बड़े लाड़ से। फिर आगे बोले।

'अब जे हैं सावित्री। बड़ी गुनी औरत है। हमारी बड़ी बहू। जे ही सारे दिन सेवा सुश्रुषा करती फिरती है अम्मा की।. . .पर देखा किस्मत का खेल कि पड़ गई किनके पल्ले पड़ीं उन चूतियाचंदन के पल्ले जो अभी मों लटका के इतें खड़े थे और हमने कछू सच्ची बातें कह दीं, तो लटको मों लेके ही अंदर चले गये। अब बताओ क इन दोनों में से कौन तो सुखी कहाया और कौन दुखी? जो बहू को दुख है, वो गप्पू को सुख। अब क्या कहो? तो दुख-सुख तो भैय्या साब साथ चल हरे हैं और वही उल्टी-पल्टी मार के कोई चीज सुख हो जाती है और कोई चीज दुख।'

अब हमारे खानदान की ही ले लो।. . सब कहते फिरते हैं कि बब्बा कित्ते सुखी हैं। इत्ता बड़ा खानदान। तीन-तीन बेटा, बहुयें, नाती, पोता। इत्ते लोग। रौनक ही रौनक। सब बब्बा की सेवा में। अभी मों से खून गिरा तो कैसे झट्टी से रज्जन मोटरसाइकिल दबाके तुमें उठा लाये। है के नई? सो कहने को कह लो कि बब्बा कितने सुखी। पर इस बड़े खानदान की रौनक भेनचो हमसे पूछो। दिनरात साली किलकिल मची पड़ी है। एक हटता नहीं कि दूसरा चक्कर तैयार। इनने इनको मार दिया, तो वे रिसाये पड़े हैं। और उनने उनको गरियाय दिया तो वे रो रहे हैं बब्बा के पास। आज इनकी बहू ब्याहें रई, तो कल उनकी। आज उनका मोंड़ा उल्टी कर रओ, कल उनका मोंड़ा सीढ़ियन से रपट गओ और परसों उनकी मोंड़ी को पतरी टट्टी लग गई।. . . दिनरात की चिकचिक। आदमी शांति से दो मिनट आंखें मूंद के नई बैठ सकता है। तो बताओ कि साला कि ये सब दुख है कि सुखी . . . तो बाबू, सब चश्मे का खेल है। डॉक्टर साब जैसा देख समझ लो, दुनिया वैसी है। वही दुख है, वही सुख है कि नहीं।

बब्बा अभी और बताना चाहे रहे थे। वे परम फालतू व्यक्ति थें बुढ़ापा आ चुका था। अस्सी पार कर जाओ तो साथ के ज्यादातर दोस्त या तो खटिया पकड़ चुके होते हैं या मर चुके होते हैं। रातों में नींद नहीं आती उनको। बुढ़ापे में इतनी सारी बातें इकट्ठी हो चुकी होती है मन में। इतने अनुभव। इतने साल का जीवन और बतियाने को कोई मिलता नहीं। अपने आप कोई पास आता नहीं। पकड़ना पड़ता है। आवाजें देकर बुलाना पड़ता है। हाथ पकड़कर बिठाना पड़ता है। गरियाना होता है। तब जाकर आप कुछ कह-सुन पाते हैं। बब्बा से सभी बचते हैं। अभी इत्ते बड़े खानदान के लाख दुख बब्बा गिना दें परंतु एक बड़ा सुख तो यही है कि कोई न कोई तो पकड़ में आ ही जाता है। आज डॉक्टर फंस गया। बिठा लिया। चाय आने में टाइम लगा। जानता नहीं था, सो थोड़ा संकोच में भी रहा। उसी का फायदा उठाकर बब्बा ने सुख-दुख पर इतनी बातें सुना दीं। वैसे बात सुख-दुख की निकली तो उस पर सुना दी वरना जो भी निकल आती, बब्बा इतना ही बोलते- यह सब मानते हैं।

बब्बा आगे भी बोलते पर डॉक्टर फटाफट चाय गुटककर उठ खड़ा हुआ और क्षमा-सी मांगते हुये जाने की बात करने लगा। बब्बा ने कहा कि बिल्कुल जाओ भैय्या। जाओगे क्यों नहीं। आये हो तो जाओगे ही। आया है सो जायेगा, राजा रंक फकीर। खूब जाओ। जाबे पे कौन-सी रोक। आये हो, तो अब आगे भी आते रहा करो। हमें तो तुम कैंसर बता के जा रहे हो। सो हम तो तुमें शायद न मिलें। मर-मरा जायें। पर आते रहोगे तो इतें बीसों मरीज मिल जायेंगे। गांव का दलिद्दर है। ज्यादा पैसे तो न खेंच पाओगे। पर पुण्य खूब कमाओंगे। इत्ता जरूर बताये देते हैं कि आओ तो इते के आदमी के लिए इंजेक्शन जरूर लेते आइयो। सुई जरूर ठोकियो, चाहे पानी की भले ही टोंच दो, पर सुई जरूर लगइओ। बिना सुई लगाये की कोशिश करी तो यहां का आदमी चुंगी नाके पे रोक के खड़ा हो जायेगा कि डॉक्टर नकली है।

डॉक्टर ने उन्हें आश्वस्त किया कि वह अवश्य आयेगा और इंजेक्शन भी जरूर लायेगा क्योंकि वह पहले ही बिना इंजेक्शन उठाये घर से कभी बाहर नहीं निकला करता। उसे इलाके का ट्रेण्ड पता है। बब्बा ने बीच में टोकते हुये कहा कि बड़ा वाला इंजेक्शन लाओगे तो ज्यादा पैसा मिलेगा डॉक्टर साब क्योंकि गांव के मरीज नपतीकरण के बाद ही सुई लगवाते हैं। तब डॉक्टर ने आश्वस्त किया कि वह इत्ता बड़ा वाला लाया करेगा कि जिसे अलग से पेटी में धरना पड़े।

अब तक डॉक्टर रज्जन के पीछे मोटरसाइकिल पर बैठ चुका था। रज्जन मोटरसाइकिल पर किक मारने का उपक्रम कर रहे थे।

बब्बा ने जोर से कहा कि डॉक्टर साब, आप हमारी बिल्कुल चिंता न करियो। हम नहीं मरबे बारे। ऐसी कम तैसी हम न मरब, मरहि संसारा।. . .और मरे भी तो मरता तो शरीर है डाक्टर साब। हम तो आत्मा हैं भैय्या। कैंसर-फैंसर से आत्मा का बाल भी टेड़ा नहीं होता। सो हम तो रहेंगे ही। जब भी आओगे, मिल जायेंगे। यहीं तखत पे मिलेंगे। शरीर न दिखे तो जान लेना कि इसी चबूतरे पे भूत बनके कहीं बैठे हैं. . .सो आते जरूर रहना। हमें तुम अच्छे आदमी लगे। अच्छा लगेगा फिर से मिलके। है कि नहीं? रज्जन ने किक मारकर मोटरसाइकिल शुरू की।

बब्बा ने रज्जन को चेताया कि तुम ऐन धीमे-धीमे चलाके ले जाना डाक्टर साब को। पीछे से टपका न देइयो। रास्ता मेनचो इत्ता खराब है कि टपक गये तो तीन चार कोस तक तुमें पता भी न चल पायेगा।. . .और तुम डाक्टर साब, जोर से पकड़ के बैठियो। जे रज्जन हैं ऐबी। जे हमें भी एक बार गिरा चुके।. . .समझे?

मोटरसाइकिल धूल उड़ाती निकल गई।

बब्बा थोड़ी देर चुपचाप उस दिशा में देखते हुये कुछ सोचते रहे, फिर न मालूम कैंसर को, धूल को, मौसम को या शायद जमाने को ही या फिर यों ही अभ्यासवश बोले. . .भेनचो. . . और आंखें मूंदकर तख्त पर बैठ रह गये।

**ए-40, अलकापुरी**
**भोपाल-462024**

'व्यंग्य नाटक'

प्रेम जनमेजय

# सोते रहो

## दृश्य-1

उद्‌घोषक : मंच के पृष्ठ भाग को तीन हिस्सों में बांटा गया है और हर हिस्सा एक घर का रूप देता है। पहले हिस्से में बैनर्जी परिवार का घर है, बीच में सरदार मनजीत सिंह का घर है तथा उसके बाद महादेवन का है। जैसे हमारा महान भारत अनेक हिस्सों से मिलकर एक बना है, वैसे ही इन तीन हिस्सों से मोहल्ला बना है, अनेकता में एकता जैसा। हमारे ये तीनों मुख्य पात्र बापू के बंदरों की याद दिलाते हैं। सरदार मनजीत सिंह के मुंह पर उनकी पत्नी लाख हाथ रखे दो अपनी धाराप्रवाह मक्खनी भाषा उचारते ही रहते हैं। बैनर्जी आंख के बंद होने का भ्रम देते हैं पर आंख अर्जुन-सी लक्ष्यभेदी रखते हैं। महादेवन के कान चाहें बंद लगते हो पर उनमें लक्ष्मी की रुन-झुन झनझनाती रहती है। बापू तो चले गए पर आप जानते ही हैं कि इस देश में उनके बंदर अनेक स्थलों पर सुशोभित है। यदि देश चल रहा है तो इन्हीं के कारण। इनकी स्देच्छा रहती है कि देश 'सुख-चैन' की नींद सोता रहे और ये अपना 'सोना' बटोरते रहें। आइए इनकी शान में मंगलाचरण की गुस्ताखी हो जाए।

सोते रहो, सोते रहो, सोते रहो
जागो मत, मत जागो, सोते रहो।

जगने पे तो उजाला दिखेगा
उजाले में सब साफ दिखेगा।
साफ दिखेगा तो दिल दुखेगा ।
दिल दुखेगा तो. . .तो. . .तो तोतो
तो साथी सोते रहो. . .

मुंदी आंख से अंधेरा दिखेगा
अंधेरे में न कुछ साफ दिखेगा।
न साफ दिखेगा तो माल बनेगा।
माल बनाना है तो. . .तो. . .तो तोतो
तो साथी सोते रहो. . .सोते रहो सोते रहो

हे साधो! कबीरदास हैज़ ऑलसो सेड
दुखिया दास कबीर है, जागे अरु रोवे
सुखिया सब संसार है, खावे अरु सोवे
तो हे डियर साधो, फॉर यूअर हैप्पीनेस
सोते रहो, सोते रहो, सोते रहो
जागो मत, मत जागो, सोते रहो।

फाईल पर बाबू सोया है
(समूह स्वर) सोया है सोया है

कचहरी में न्याय सोया है
(समूह स्वर) सोया है सोया है

थाने में सिपाही सोया है
(समूह स्वर) सोया है सोया है

संसद में नेता सोया है
(समूह स्वर) सोया है सोया है

तो प्यारे तूं क्यों जगा है ?
तूं भी उठ और अपनी सीट पर
सो जा, सो जा राजकुमारी, सो जा

सोते रहो, सोते रहो, सोते रहो
जागो मत, मत जागो, सोते रहो।

## दृश्य-2

**(प्रकाश मध्य में स्थित सरदार मनजीत सिंह के घर पर पड़ता है। प्रकाश पड़ते ही मनजीत सिंह की पत्नी सतवंत कौर झाड़-पोंछ करती एवं गुनगुनाती दिखती है। इसे ही कहते हैं एक पंथ दो काज- झाड़-पोंछ और गुनगुना। ये वैसे ही है जैसे देश सेवा करते हुए अपनी सेवा करना। सतवंत जैसे काम करते थक चुकी है। पानी पीने के लिए अलमारी से गिलास निकालती है। फ्रिज से गिलास भरती है। पानी पीती है। पानी जैसे ही खत्म करती है सरदार मनजीत सिंह की कर्कश आवाज आती है।)**

मनजीत सिंह : ओए डार्लिंग. . . डार्लिंग ओए. . .

**(सतवंत अचानक हुए इस वाणी- प्रहार से धक्क- सी रह जाती है। हाथ में गिलास गिरकर टूट जाता है। डार्लिंग शब्द है ही खतरनाक, जवानी में दिल तोड़ता है और प्रौढ़ होने पर गिलास। मनजीत सिंह का प्रवेश।)**

मनजीत सिंह : (टूटे हुए गिलास के टुकड़ों की ओर इशारा करके)ओए ये क्या. . .

सतवंत : आपने तो मुझे डरा ही दिया।

मनजीत सिंह : हमने तुझे डरा दिया. . .ओए हमने तो तुझे प्यार से डार्लिंग कहा. . .तू डार्लिंग कहने से डर गई?

सतवंत : खाक डार्लिंग कहा. . .ऐसे लगा जैसे तोप चलाई हो. . .मेरा तो कलेजा ही दहल गया . . .आपकी आवाज तो ठेकेदारी करते-करते भैंसे जैसी हो गई है. . .मैं आपकी बीवी हूं कोई मजदूर नहीं. . .प्यार से बुलाने के लिए आवाज में मिठास चाहिए. . .आपने कभी बैनर्जी को सुना है जब वो अपनी बीवी को बुलाता है. . . लगता है जैसे मुंह में बंगाली रसगुल्ला डालकर बुला रहा हो. . .

मनजीत : ओए वो चूहा. . .उसकी आवाज तो बीवी के सामने ऊंची हो ही नहीं सकती. . . उसकी बीवी को देखा है, खा-खाकर हथिनी हो गई है. . .एक बार बंगाली बाबू के ऊपर बैठ गई तो उसकी सांस रुक जाएगी. . .साला बीवी से डरकर घिघियाता है. . .प्यार से बुलाता नहीं है. . .

सतवंत : (टूटे कांच को समेटते हुए)बीवी से डरता ही है न. . .डराता तो नहीं है। आप तो जब दाड़ा खोल लेते हो तो वैसे ही डरावने लगते हो. . .ऊपर से आवाज ऐसी है. . .आगे से ऐसे डार्लिंग मत कहना. . .मेरा गिलास तोड़ दिया. .

मनजीत : सोणयो गिलास टूटा है दिल तो नहीं. . . गिलास और आ जाएगा।

सतवंत : मेरे भाई ने दिया था. . .इम्पोर्टेड है

मनजीत : ओए भाई को कहेंगे फिर दे देगा. . .सोणेयो मक्खन के डेलयों तुम नाराज मत हुआ करो. . .

सतवंत : आप मुझे अब मक्खन के डेलयों भी मत कहा करो।

मनजीत : क्यों भई. . .

सतवंत : ये भई भी मत कहा करो।

मनजीत : (क्यों शब्द को खींचकर)क्यों. . .ओ ओ . . . आज तो तूं ओपोजीशन पार्टी की तरह हो रही हो, मेरी हर बात का विरोध कर रही है। ये न कहो . . .ये न कहो . . .आखिर क्यों ओं ओं

सतवंत : भई कहते-कहते किसी दिन बहन भी कह दोगे।

मनजीत : (ज़ोर से हंसता है) ओए ये तो यूं ही कहता हूं। इसका कोई मतबल थोड़ी होता है। अभी तुझे बहन कहने की हमारी उम्र ही कहा आई है। मैं कोई गांधी बाबा जैसा ग्रेट तो नहीं जो अपनी बीवी को मां कह लेते थे (हंसता है) अच्छा ये कहा कि हम तुझे मक्खन का डेला क्यों न कहा करें?

सतवंत : आज कल बाजार में जैसे पीला मक्खन आता है, उससे लगता है मुझे जैसे पीलिया हो गया है।

मनजीत : ओए हम तुझे बजार वाले मक्खन को डेला थोड़े ही कहते हैं. . .हम तो तुझे गाय-भैस वाले चिट्टे-चिट्टे नरम-नरम मक्खन का डेला कहते हैं. . .समझी. . .

सतवंत : आप तो मुझे बंटी की मम्मी कहा करो . . .जैसा मोहल्ले में सब कहते हैं. . .अब हम बड़े-बड़े बच्चों वाले हो गए हैं. . . इस उम्र में प्यार की ये बातें अच्छी नहीं लगती।

मनजीत : ओए सोणयो प्यार की कोई उम्र नहीं होती है. . .तूं तो आज भी मेरी वही सोनी है जो लाल जोड़े में घर आई थी . . .सोणयो जिंदगी से प्यार कम हो जाए तो जिंदगी का मकसद ही खतम हो जाता है. . .मुझे तुमसे और बच्चों से प्यार है तभी तो अपने आपको इतना खपाता हूं. . .मेरी सोनी ऐसी बातें मत सोचा कर आगे से मत कहना . . .ये तेरा प्यार ही है जो शाम को मुझे घर

ले आता है. . .

सतवंत : (प्यार से) तुसी सच कहते हो दार जी . . .आज मैनू पता लगा कि आज आप कितना प्यार करते हो. . .

मनजीत : सच, पता लग गया न. . .तो हो जाए जफ्फी इसी बात पे

**( सरदार गले लगाने आगे बढ़ता है )**

सतवंत : न मुझे अभी बहुत काम है. . .शाम को पार्टी भी तो है. . .

मनजीत : ओए पार्टी दी ते. . .इक जफ्फी भर ले काम करने का मजा आ जाएगा. . . ये सरदारां दीं जफ्फी है किसी चूहे की नहीं।

**( सतवंत को कसकर जफ्फी भरता है )**

**( इसी बीच मनजीत के बेटे बंटी का प्रवेश। चेहरे से ही महान भारत का आधुनिक नौजवान लगता है। शरीर और दिल माइकल जैक्सन की जूठन जैसा। मां-बाप उसके लिए वस्तु हैं। )**

बंटी : ओए, डैड!

**( दोनों घबराकर अलग होते हैं। सतवंत काम करने का नाटक करने लगती है। )**

सतवंत : आ पुत्तर. . .यार पुत्तर ज़रा अपने डैड को प्यार से भी बुला लिया कर. . . ऐसे बुलाता है जैसे कचहरी के बाहर मुजरिम को आवाज लगा रहा हो।

सतवंत : ना पुत्तर तूं तो अपने बापू को ऐसे ही बुलाया कर. . .लगे तो सही किसी ठेकेदार का बेटा. . . तूं ऐसे ही बोला कर पुत्तर, ऐसे ही

मनजीत : न, ऐसे नईं. . .

सतवंत : नं, ऐसे ही. . .

बंटी : मुझे समझ नहीं आ रहा है कि बोलना मैंने है और झगड़ आप रहे हैं. . .आप लोगों की जेनरेशन में यही गड़बड़ है. . .हमारी बातों में बहुत इंटरफेयर बहुत करते हो. . .टु मच इंटरफयेरेंस. . .हमें भी अपना भला-बुरा समझने दो. . .अब हम बड़े हो गए हैं।

सतवंत : बड़ा जितना हो जा. . . रहेगा हमारा पुत्तर ही।

बंटी : पुटर. . .आई कैन नॉट अंडर स्टैंड यूअर एटिच्यूड. . .पुटर होने का मीनिंग ये तो नहीं कि व्ही ऑर यूअर स्लेवज़

संतवंत : ऐ अंग्रेजी चू तूं की क्या?(मनजीत इस बात पर हल्का -सा व्यंगयात्मक मुस्कराता है)

बंटी : ओह जीसेज़. . .कैसे पैरेंट्स दिए हैं. . .दे डू नॉट अंडरस्टैंड इंग्लिश. . .आई एम अशेम्ड . . .मैंने कहा कि पुटर होने का मतलब नहीं कि हम आपका गुलाम हैं. . .

सतवंत : तो हम तेरे गुलाम हैं. . .

मनजीत : दोनों फिर शुरू हो गए. . .मां-पुत्तर की कभी बनती भी है. . .

बंटी : मॉम यू नो मुझे कभी अंडरस्टैंड नहीं करेगी . . . आई अैल यू. . .

**( सतवंत नाराज होकर दूसरे काम में लग जाती है )**

मनजीत : बोल माई सन यू टेल. . .

बंटी : आज मैं रात को लेट आऊंगा. . .हो सकता है मार्निंग में. . .

मनजीत : क्यों माई सन?

बंटी : निक्की के यहां लेट नाईट पार्टी है. . . उसका बर्थडे है

मनजीत : हैप्पी बर्थडे. . .तेरे तो सब फ्रेंड आ रहे होंगें . . .वो डी आई जी का बेटा गैरी. . .और इंकम टैक्स कमीशनर डाटर निक्की. . . और वो बैंक मैनेजर का बेटा लक्की. . . और वो. . .

बंटी : डैड सब आ रहें. . . बड़ी ग्रैंड पार्टी है डैड . . .यू नो, म्यूजिक, फन, डांस. . .

मनजीत : ओए तूने कुछ गिफ्ट-विफट भी लिया है . . .पैसे हैं तेरे पास।

बंटी : नो. . .आई एम क्रुक

**( जेब से नोटों को निकालता है। नोट बेतरतीब पड़े हैं। )**

मनजीत : बोल कितने दूं. . .

बंटी : दो गांधी तो दे ही दो. . .

मनजीत : दो नई. . .तू. . .पांच ले। (पांच सौ के पांच नोट देता है). . .जा ऐश कर खर्च करने के पीछे नहीं रहा कर ।

बंटी : (बंटी अपनी केप को उल्टा करके स्टाइल से कहता है)थैंक्स डैड. . .यू आर रियली ए वंडरफुल डैड, आई लव यू डैड

**( जाता है। मनजीत के चेहरे पर खुशी है )**

सतवंत : आप लड़के को बिगाड़ रहे हो. . .

मनजीत : ओए तूने देखा हमारा पुत्तर कितनी अच्छी अंग्रेजी बोलता है। कोई ऐसा है जो इतनी बढ़िया अंग्रेजी बोल सकता है. . . .इसने तो मुझे भी अंग्रेजी सिखा दी है. . .मैं भी दो-चार लफ़्ज अंग्रेजी के मार ही देता हूं . . .भागवाने तूं भी दो चार लफ़्ज सीख ले। हमारे पुत्तर की तरह अंग्रेजन हो जा. . .

सतवंत : उसे अपनी पंजाबी का एक लफ़्ज नहीं आता है। अपनी मातर भाषा तो आनी चाहिए।

मनजीत : आजकल मातर भाषा को कोई नहीं पूछता. . .

सतवंत : इसलिए बच्चों ने अपनी मां को पूछना बंद कर दिया है। अपनी मां उन्हें पुरानी लगती है. . .जानते हो अपना बंटी कितना बिगड़ गया है. . .हर समय इधर-उधर ही दीमाग लगाता रहता है . . .मास्टर ट्यूशन पढ़ाने आया तो है कह रहा था ध्यान से पढ़ता नहीं है। पिछली बार बड़ी मुश्किल से पास हुआ था। इस बार तो पास होना ही मुश्किल है। कॉलिज में भी लीडरी करता है।

मनजीत : ये तो बहुत अच्छे लच्छन हैं भागवान. . . हमारा पुतर मार्डन जमाने के हिसाब से चल रहा है। मैंने उसे डालना ही लीडरी में है। लीडरी का सबसे बड़ा गुण यही है कि पढ़ाई-लिखाई में बच्चा अगर कमजोर है, जितना ज्यादा कमजोर होगा, उतना ही लीडरी में चमकेगा. . .

सतवंत : मुझे तो इतना पता है कि बिना पढ़ाई-लिखाई के आजकल आदमी कुछ नहीं बनता. . . जिंदगी में तरक्की नहीं कर सकता। आजकल की लीडरी में भी पढ़े लिखे आ गए हैं।

मनजीत : पढ़ाई-लिखाई में अपना बंटी अच्छा हो तब न. . .बेकार में किताबों से सिर मारने का कोई फायदा नहीं। अब हमारे टैम के ही मेरे दोस्त यार देख. . .जितने पढ़ने लिखने में होशियार थे. . .सब नौकरियां कर रहे हैं। कोई बैंक में है. . .कोई सरकारी दफ्तर में . . .केवल तनख्वाह के भरोसे उनका गुजारा नहीं होता। मुझे देख दसवीं भी पास नहीं हूं . . .पर ठेकेदारी में इतना बना लिया है कि कोई सरकारी अफसर नहीं कहीं बना सकता। हमारे साथ को वो मामू था न जिसके बाप ने उसे न फेल होने पर घर से निकाल दिया . . .आज प्रापर्टी डीलिरी कर रहा है। करोड़ों में खेलता है. . .और वो अपना सरबजीत. . .जो कैनेडा में हैं. . .तू तो जानती है। बचपन में उसका बाप उसे उठा-उठाकर पटकता था। एक-एक क्लास में दो-दो साल लगाता था। और उसका भाई गुरमीत पढ़ने में होशियार था। सरबजीत नालायक था– सो उसके बाप ने उसे कैनेडा अपनी बेटी के पास भेज दिया। उसने वहां प्रापर्टी का धंधा शुरू कर दिया। वो डालरों में खेल रहा है और उसका भाई इंडिया में ड्राफ्टमैन है। मुश्किल से घर का गुजारा चलता है।

सतवंत : इसका मतलब हुआ कि आज के जमानने में जो पढ़ता वो घास खोदता है। इतने स्कूल कॉलेज जो खुले हैं सब पत्थर के अंडे देने के लिए है. . .पढ़ाई लिखाई सब बेकार है।

मनजीत : पढ़ाई बेकार नहीं. . .बेकार में पढ़ाई करना बेकार है. . .पढ़ने में मन न लगता हो तो उसमें बच्चे को ठूंसना बेकार है. . . आजकल और भी कई धंधे हैं- फिल्म है, खेल हैं. . .अब सचिन तेंदुलकर या कपिल देव एम.ए. पास होकर अच्छे खिलाड़ी बने . . .नेतागिरी भी आजकल एक बिजनेस हो

गई है. . .चुनाव में पैसा लगाओ. . .चुन लिए जाओ तो पैसा बनाओ. . .देखना यह है कि बच्चे में क्या करने की काबलियत है. . .

सतवंत : मुझे क्या. . .तुम जानो और तुम्हारा पुत्तर जाने। मुझे तो अपना वो दुश्मन मानता है . . .पर मुझे उसकी रोज-रोज की पार्टी अच्छी नहीं लगती।

मनजीत : भागवान ये पार्टियां तो आजकल बहुत जरूरी हो गई हैं। पार्टी तो तू यह समझ के जैसे एयरपोर्ट पर रनवे. . .अगर अपना हवाई जहाज ऊपर उड़ाना है तो पार्टियां करनी जरूरी हैं. . .पार्टियों में जाना जरूरी है. . . बड़े-बड़े सौदे जाम टकराकर हो जाते हैं . . .तूने देखा ही है क्या रौनक होती है। इन पार्टियों में जिंदगी के सारे ताले खुल जाते है. . मजा आ जाता है।

सतवंत : मजा आता है तुम मरदों को. . .दूसरों की जनानियां घूरने को मिलती हैं। सब इतनी पी लेते हैं कि होश नहीं रहता . . .लुढ़ककर सो जाते हैं. . .

मनजीत : ओए भागवाने. . .दूसरा सोएगा तो अपनी किस्मत जागेगी। जो जागता है उसकी किस्मत सो जाती है। जागने वाला ईमानदारी की बात करता है. . .कायदे-कानून की बात करता है. . .ऐसा आदमी सिर्फ बातें ही करता है

और बातें ही कमाता है। लोग भी उसके बारे में बस अच्छी बातें ही करते हैं। ऐसा आदमी खुद भी गरीब रहता है और दूसरों को भी गरीब रखता है। मैंने नई कार खरीदने की खुशी में शाम को जो पार्टी रखी है, पार्टी तो एक बहाना है। अपना बैनर्जी है न उसे खुश करना है उसके लिए स्कॉच मंगाई है मैंने। साला तीन पैग में ही लुढ़क जाता है। पुल बनाने के ठेके की फाईल उसने क्लीयर करनी है।

सतवंत : आपने महादेवन को भी बुलाया है. . .

मनजीत : हां आस-पड़ोस को तो बुलाना ही पड़ता है। सब काम के आदमी हैं। महादेवन का तबादला हाउसिंग में हो गया है।

सतवंत : पर एक पैग पीने के बाद वो बड़-बड़ बहुत बोलता है। मेरे तो पीछे ही पड़ जाता है और आहूजा उसे तो दूसरों की बीवियों को भाभी जी कैसी हैं कहने से फुरसत नहीं मिलती।

मनजीत : बिना पिए उसकी बीवी उसे जो नहीं बोलने देती। पीकर उनमें हिम्मत आ जाती है। और पीने का एक और फायदा होता है जो जितना ज्यादा पीते हैं उतनी ज्यादा पार्टी अच्छी बताते हैं। चाहे जैसा खाना बना हो सब गुण गाते हैं। दोनों की बीवियों ने उनकी बोलती बंद की है. . .

सतवंत : मैं तो तुम्हें बोलने देती हूं. . .पीकर तुम भी ऐसी फड़ियां मारने लगते हो कि. . .

मनजीत : ओए सोणियों पीकर बहके नहीं तो पीने का मजा क्या हुआ. . .(सरदारनी के गालों पर हाथ फिराते हुए) सोणियो जो मजा बहकने में है वो होश में नहीं. . .

सतवंत : अच्छा जी अभी मत बहको रात को बहकना। मुझे बहुत काम करने हैं। आप भी सोडा-शोडा जो मंगवाना हो मुंगवा लो. . .

**(प्रकाश यहां से फेडआऊट होकर बैनर्जी के घर पर केंद्रित होता है)**

## दृश्य-3

**(बैनर्जी जल्दी-जल्दी पार्टी के लिए तैयार हो रहा है। उसकी पत्नी जयश्री बिस्तर पर तीन-चार साड़ियां फैलाकर, पार्टी के लिए उसमें से एक चुनने की मुद्रा में है**

बैनर्जी : जरा जौल्दी करो नं, सरदार जी के यहां पार्टी को लेट होता।

जयश्री : जिस दिन पार्टी होता तुम बहुत जौल्दी करता. . .जिस दिन हमारी मां के यहां जाने को होता उस दिन तुम को जौल्दी नहीं होता। उस दिन तो कभी अखबार पढ़ने बैठता. . .कभी टेलीविजन पर न्यूज सुनने को बैठता है. . .

बैनर्जी : बहुत इम्पोर्टेंट पार्टी है. . .काफी बड़ा-बड़ा लोग आएंगा. . .

जयश्री : हम सब जानते तुम्हारा इम्पोर्टेंड पार्टी। वहां जाएगा जमकर पिएगा और सो जाएगा. . .

बैनर्जी : डार्लिंग सोना हमारे लिए बहुत इम्पोर्टेंट. . . जितना हम दफ्तर की फाइल पर सोता उतना लोग हमें जगाने का कोशिश करता. . हम सोता तो लोगों का किस्मत सोता. . .हमें जगाने के लिए लोग लक्ष्मी मां कि धुन सुनाता. . .सुंदरी जितना हम सोएगा उतना हम हम कमाएगा. . .जितना हम कमाएगा उतना तुम्हारे लिए सुंदर साड़ी लाएगा। सुंदर-सुंदर गहना बनावाएगा. . .क्यों डार्लिंग. . .

जयश्री : दफ्तर में सोना ठीक पर पार्टी में नई सोना का. . .हमारा मज़ाक बनाता। दो पैग पीते ही तुम सोता।

बैनर्जी : कौसम से हम आज नहीं सोएगा. . .

जयश्री : नहीं सोने का कसम तुम हम बार खाता . . .कभी कम पीने का कसम भी खाया? कम पीएगा तो नहीं सोएगा।

बैनर्जी : हम कहां ज्यादा पीता. . .वो तो दूसरो लोग जबरदस्ती. . .

जयश्री : हां. . .दूसरा लोग जबरदस्ती तुम्हारे मुंह में फीडिंग बाटल बनाकर बच्चे माफिक पिलाता है. . . एक बार पीने के बाद तुम भूल भी जाता कि तुम्हारा वाईफ भी तुम्हारे साथ है . . .आज कल तो तम हमारी तरफ देखता भी नहीं।

बैनर्जी : कैसी बात करता. . .तुम तो हमारा सायरा बानू है।

जयश्री : हां अब हम तुमको आजका सायरा बानू ही लगेगी. . .टुनटुन-जैसा . . .कैटरीना बोलने में क्या गले में दर्द होता है।

बैनर्जी : डार्लिंग उमर-उमर की बात. . .जवानी में दिल में दर्द हो तो इश्क कहलाता और बुढ़ापे में दिल में दर्द हो तो हार्ट अटैक कहलाता। हमारी उम्र में सायरा बानू बहुत सुंदर होता. . .हम आज का हीरोइन नहीं जानता।

जयश्री : भूल गया तुम हमको शर्मिला टैगोर बोलता था। हमारे गले में डिम्पल पड़ता. . .

बैनर्जी : तुम तो आज भी हमारा शर्मिला टैगोर है. . .हमारा बंगाली रौशुगुल्ला. . .

जयश्री : तभी हमको गड़प-गड़प खा लिया. . . नॉटी. . .

बैनर्जी : तुम हमारा सौंदेश

जयश्री : हमारा चटपटा सिंघाड़ा. . .

बैनर्जी : तुम हमारा माछ।

जयश्री : तुम हमारा भात।

बैनर्जी : (घड़ी देखकर) अरी मौरी गेलो आठ बजने को. . .जरा जल्दी करा न।

जयश्री : हम जल्दी तैयार नहीं होगा. . .वहां सब कितना अच्छा से तैयार होकर आता. . .

बैनर्जी : अच्छा से तैयार होओ. . .पर जल्दी. . .देखो हम दस मिनट में तैयार हो गया।

जयश्री : तुम आदमी लोग को तैयार होने के लिए क्या? बस पेंट कमीज पहना और हो गया तैयार। हमको साड़ी निकालना उसके साथ मैचिंग ब्जाऊज पेटीकोट मिलाना. . .साड़ी बांधना. . .बिंदी लिपिस्टिक लगाना. . . गहना पहनना. . .मैचिंग सैंडिल पहनना।

बैनर्जी : हां. . .बाबा बहुत कुछ पहनना. . .बहुत कुछ निकालना। हम तुमको हाथ जोड़ता जरा जल्दी करो. . .हमको लेट पहुंचना अच्छा नहीं लगता।

## दृश्य-4

**(प्रकाश मद्धम होता है और महादेवन के घर में केंद्रित होता है। महादेवन तैयार हो रहा है. . .कल्याणी को आवाज लगाता है।)**

महादेवन : कल्याणी. . .कल्याणी! दोनों बच्चों को खाना खिला दिया?

कल्याणी : (घर के अंदर से) खिलाता. . .अभी दोनों को खिलाता।

महादेवन : जल्दी करो न . . .सरदार जी का पार्टी के लिए लेट होता।

कल्याणी : (अंदर आते हुए) अब बच्चों के मुंह में खाना तो ठूसणा नहीं. . .उनके मुंह में डंडे से खाना डालना क्या? ये सरदार जी का बस हस्बैंड-वाइफ को पार्टी पर बुलाया बच्चा लोगों को क्या मंदिर पर छोड़कर आने का. . .हम आज बोलेगा . . .हम आज बोलेगा।

महादेवन : नहीं. . .ऐसा बात नहीं बोलना। बच्चों को ऐसा पार्टी पर ले जाना अच्छा नहीं। लोग पीकर उल्टा-सीधा बोलता. . .चीप जोक करता. . .बच्चों पर बुरा असर पड़ता।

कल्याणी : इसका मतलब पार्टी बुरी चीज. . .फिर तुम क्यों जाता?

महादेवन : बड़े लोगों के लिए बुरा नहीं. . .इन पार्टियों में बड़ा-बड़ा काम होता। तुम देखा हम जो पार्टी दिया. . .अपने बास को स्कॉच पिलाया . . .तुम अपने हाथों से सर्व किया. . . कितना सुंदर चिकन बनाया. . .बॉस कितना खुश हुआ,जाते हुए तुम्हारा हाथ चूमा. . .

कल्याणी : वो तो हमको भी चूमने का आया. . .

बैनर्जी : वो बॉस फॉरेन में रहा न. . .बताया कि वहां ऐसे ही मिलता. . .तुम देखा नहीं टी.वी. में फॉरेन में ऐसा होता. . .

कल्याणी : पर ये फॉरेन नई, इंडिया होता,हमको ये अच्छा नहीं लगता।

महादेवन : पर हमारा प्रोमोशन अच्छा लगता नं. . .तुम भी बॉस को कैसा हंसकर टाला. . .

कल्याणी : पर हमको तुम्हारा बास अच्छा नहीं लगता . . .वो हर औरत को मिलते ही चूमने को आता. . .

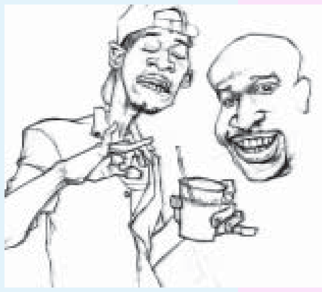

महादेवन : हमारा तो प्रोमोशन किया न. . .बॉस बहुत अच्छा, अगले दिन हमको केबिन में बुलाया। बोला बड़ी अच्छी जगह प्रोमोशन देता. . . बहुत कमाई वाला जगह. . .तुमसे बहुत खुश. . .बोला उस दिन तुम्हारी पत्नी ने क्या चिकन बनाया! तुमने बढ़िया स्कॉच पिलाया . . .हम तो घर आते ही सो गया। बड़ी अच्छा नींद आया। महादेवन, ऐसा नींद तो अपनी पत्नी का खाना खाकर कभी नहीं आया। सुबह उठते ही हम सोचा,तमको प्रोमोशन देगा।

कल्याणी : अब हमको बड़ा वाला मकान भी मिलना क्या?

महादेवन : थ्री बेड रूम वाला. . .

कल्याणी : अइयो भगवान, तेरा करोड़-करोड़ शुकर . . .हम मंदिर में प्रसद चढ़ाएगा

**(इतने में दीवार घड़ी साढ़े आठ का घंटा बजाती है।)**

महादेवन : (चौंककर) आइयो साढ़े आठ बज गया। जल्दी करो कल्याणी जल्दी. . .जल्दी जाएगा तो जल्दी आएगा। औरों का बच्चा बड़ा. . .

हमारे बच्चों को स्कूल जाने का. . .सुबह उठने में लेट जा जाएगा. . .जल्दी करो बाबा।

**( प्रकाश मद्धम होता है। कुछ क्षण अंधेरे के बाद प्रकाश सरदार जी के घर पर केंद्रित हाता। कर्णभेदी संगीत धीरे-धीरे मद्धम होता है। )**

दृश्य-5

**( स्टेज का अगला हिस्सा इस पार्टी के यौवन को प्रकट करने के लिए उपयुक्त हो सकता है। अगले भाग पर, यानी फ्रंट पर पुरुषों का जमावड़ा है और पिछले भाग में महिलाओं का। हाथ में पकड़े गिलास और उनमें पड़ी शराब ऐसे लगता है जैसे थाने में थानेदार के हाथ आया कत्ल का केस। जितना केस बढ़ता है नशा और चढ़ता है। कुछ पतिव्रता महिलाएं, पति साथ निभाने के लिए मदिरा का गिलास थामे, अपने पति की पद-प्रतिष्ठा बढ़ाने में व्यस्त हैं। कुछ पिछड़ी महिलाओं के हाथ में शर्बत के गिलास हैं। इस समय मंच पर उपस्थित हैं– मनजीत सिंह और सतवंत, श्रीमान बैनर्जी और श्रीमती जयश्री, श्री महादेवन एवं श्रीमती महादेवन। सतवंत, बैनर्जी और महादेवन एक ही सोफे पर हैं। )**

उद्घोषक : पार्टी अपने यौवन पर है। यौवन बड़ा आकर्षक होता है। इसमें काफी कुछ अनढका देखने की बलवती इच्छा व्यक्ति से बेगार करवाती है। यौवन के रस में डूबा जीव किसी प्रकार की वर्जनाओं की चिंता नहीं करता है। पार्टी में यौवन के इस रस का आनंद देने के लिए शराब और शबाब का महत्वपूर्ण योगदान है। जवान-पार्टी के रस में डूबा जीव गलत सही के द्वंद्व से मुक्त हो जाता है। उसे नियमों की माया बांध नहीं सकती। ऐसे ही मुक्त जीव सही आनंद उठाते हैं और उठा रहे हैं। आप भी उठाइए इनके साथ।

**( सतवंत, बैनर्जी और महादेवन -तीनों जोर से हंसते हैं. . .महिलाएं चौंक कर इधर देखती हैं। जयश्री वहां से ही आवाज़ लगाकर पूछती है। )**

जयश्री : क्या बात है सरदार जी आप लोग बड़ी जोर से हंसता. . .हम लोगों भी बताना हम भी हसेंगा।

**( यह कहकर तीनों महिलाएं खीं. . .खीं हंसती हैं। )**

मनजीत सिंह : (पेट पकड़ के हंसते हुए) ओए महादेवन . . . कमाल का जोक है. . .

जयश्री : (पास आते हुए) आप लोग अकेले-अकेले हंस रहे हो. . .महादेवन जी हमको भी तो जोक सुनाओ. . .

महादेवन : (हंसते हुए) नो भाभी जी. . .दिस जोक इस नॉट फार यू. . .आपके लिए नहीं है . . .क्यों सरदारजी (तीनों जोर से हंसते हैं)

जयश्री : आप मरदो का यही खराब बात. . .लेडीज के अछूत मानता. . .खुद पार्टी में मौज-मस्ती करता. . .हमें बोलता ये आपके लिए नहीं. . .

बैनर्जी : मौज मस्ती करो न. . .थोड़ा पियो. . .कौन रोकता है. . .

**( फिर तीनों हंसते हैं )**

कल्याणी : इन तीनो को तो चढ़ गई है. . .चलो हम उधर चलते हैं।

महादेवन : हां उधर ही ठीक होगा. . .लेडीज कार्नर

**( तीनों फिर हंसते हैं महिलाएं कोने में जाती हैं )**

मनजीत : ओए अपना डी.जी.एम. नहीं आया

बैनर्जी : कौन डी.जी.एम. . .

मनजीत : वही अहूजा. . .जो हर पार्टी में कहता है कि बस डी जी एम बनने वाला है और डी जी एम बनते ही फाईव स्टार में पार्टी देगा। साला भाभियों के हाल बहुत पूछता है. . . घर में बाद में घुसेगा पहले पूछेगा. . .भाभी जी कैसी हैं।

**( तीनों हंसते हैं )**

महादेवन : सज रहा होगा. . .वो साला भी जब तीन पैग पी लेता है तो . . .हवा में उड़ने लगता है।

बैनर्जी : पीने के बाद पूरे वर्ल्ड का सैर करा देता है।

मनजीत : फड़ियां बहुत मारता है।

बैनर्जी : फड़ियां मौतबल. . .

महादेवन : फड़ियां मौतबल. . .बूस्ट करना . . .हाईप क्रिएट करना सरदार जी हम ठीक बोला न।

मनजीत : ओए ठीक ही बोला होगा तूने. . .हमें अंग्रेजी कहां आती है. . .तू तो हमारी डिक्शनरी है . . .अहूजा की बीवी बहुत डाडी है. . .

बैनर्जी : डाडी मौतबल. . .

मनजीत : ओए महादेवन इसे डाडी का मतलब भी बता दे।

महादेवन : डाडी. . .मौतबल. . .वो तो हमको भी नहीं आता।

मनजीत : डाडी मतबल डाडी. . .तूं पूरी बात सुन . . .समझ आ जाएगी. . .हर समय उस पर नजर रखती है। पर अपना उस्ताद भी बीवी से नंबर बचाकर एकघूंट में पटियाला खत्म कर देता है।

महादेवन : हम देखा. . .उसका मिसेज कैम्पा कोला में बड़ा-बड़ा पैग डालकर पीता. . .हमारा वाईफ तो बस रेड वाईन लाईक करता।

मनजीत : हमारी जनानी तो वाईन में पानी मिलाकर पीती है (सब हंसते हैं)

बैनर्जी : होमारा जोनानी भी पीता

मनजीत : ओए मुबारक हो, कब से मिसेज बैनर्जी हमारी टीम में शामिल हो गईं?

बैनर्जी : वो कोक में कोक का डबल पैग मिलाकर पीता

**( तीनों हंसते हैं )**

महादेवन : बैनर्जी जी तुम्हारा तुम्हारा सेंस ऑफ ह्यूमर वैरी गुड।

मनजीत : अजी जौली गुड, तुसी मां महफिल चू छा जांदे हो भाभे. . .तुसी ग्रेट. . .

बैनर्जी : असी ग्रेट. . .

महादेवन : हां भाभे. . .

**( तीनों हंसते हैं )**

मनजीत : (दोनों की आरे हाथ के इशारे से) ओए, ओए की गल है पंजाबी बोल दे हो. . .ऐसे गल तो हो जाए इक इक पटियाला।

**( सरदार दोनों के गिलास उठाकर पैग बनाने लगा है। दरवाजे की घंटी बजती है )**

मनजीत : लगता है अपना डी.जी.एम. आ गया (गिलास रख दरवाजा खोलता है। दरवाजे पर अहूजा और उसकी वाईफ हैं। जींस पेंट पहने, खिजाब लगाए पैंतालीस वर्ष के अहूजा ने उम्र छुपाने की पूरी कोशिश की है।) आओ अहूजा-साब आओ,

अहूजा : (बनावटी मंद स्वर में) कैसे हो मनजीत सिंह जी और भाभी जी कैसी हैं. . .

मनजीत : ओए ठीक है. . .वो देख तगड़ी बैठी है। आओ भाभी जी. . .सत्श्रीअकाल

रमा अहूजा : नमस्ते. . .(अहूजा औरतों की आरे जाने लगा है)

मनजीत : उधर कहा जा रहे हो बादशाहो. . .महफिल उधर सजी है. . .आपका इंतजार है।. . . आपके बिना महफिल ऐसे ही अधूरी है जैसे बिना दुल्हे के बारात या. . .

बैनर्जी : (नशे में) नहीं. . .जैसे बिना करप्शन के मिनिस्टर।

अहूजा : हलो बैनर्जी, भाभी जी कैसी हैं?

बैनर्जी : भालो. . .बिलकुल रसगुल्ला के माफिक। उधर बैठा मस्ती कर रहा है।

अहूजा : हैलो महादेवन, भाभी जी कैसी हैं?

महादेवन : सांबर की तरह मस्त, उधर वाईन पीता।

**( सरदार जी बड़ा पैग बनाकर लाते हैं। बीच में अहूजा की पत्नी आती है )**

रमा अहूजा : भाई साहब इनको जरा कम देना, रात को उलटियां करते फिरते हैं. . .

मनजीत : आप फिकर नॉट करो जी(रमा के हाथ में कोक का गिलास देखकर) ये क्या आपके हाथ में खाली कोक. . .आज ठंड बहुत है थोड़ी दवाई समझकर भी लो (हाथ से गिलास लेता है। मिसेज अहूजा औपचारिकता में न करती हैं। सरदार जी शराब डालकर पैग हाथ में पकड़ा देते हैं।) आज तो हमारी जनानी भी कोका कोला में ब्रांडी डालकर पी रही है।

**( हंसता है )**

रमा अहूजा : (मेज पर पड़ा गिलास उठाकर कहती है) ये आहूजा के लिए ज्यादा है। (उसमें से आधी अपने गिलास में डालकर) उसे बस इतनी देना।

मनजीत : जैसा हुकुम भाभी जी ! ऐसे ऐसे तीन पैग तो चल जाएंगे?

रमा आहूजा : हां तीन से ज्यादा नहीं ।

मनजीत : ओए तुसी फिकर न करो जी, एनजाय करो तो साडी वोटी नूं भी एनजॉय कराओ।

अहूजा : (सरदार जी को बात करता देख, और पेग ना लाने से परेशान अहूजा महादेवन को कहता है) ये साला सरदार मेरी बीवी से गप्पे लड़ा रहा है। दारू हाथ में पकड़कर खड़ा है। मनजीत जी आते क्यों नहीं ?

मनजीत : आ रहा हूं यार,जरा अपनी भाभी के हालचाल पूछ रहा हूं। (रमा से) अहूजा जल रहा है, सोच रहा है कि मैं आपके साथ. . .(हंसता है। गिलास भर कर अहूजा की ओर जाता हुआ) आ रहा हूं प्यारे, तूं तो सभी भाभियों के हाल पूछता थकता नहीं, एक के हमे भी पूंछने दे

**( कम शराब वाला पेग आहूजा को देता है।)**

अहूजा : ओए भापे ये क्या औरतों वाला गिलास मुझे दे रहा है ?

मनजीत : तेरी औरत ने ही बनाया है। देख तेरी तरफ देख रही है। चिंता मत कर मैं अपना सुपर पटियाला बनाकर लाया हूं, आंख बचाकर लेना बादशाहो।

बैनर्जी : क्या साला जिंदगी है। इतना बड़ा हो गया फिर भी पीने के मामले में बड़ा नहीं हुआ। सबको साला बीवी से डरकर पीना पड़ता है।

महादेवन : बीवी से तो अच्छा-अच्छा डरता है।

अहूजा : (बीवी की नजर बचाकर सरदार का पैग अपने में डालते हुए) सही कह रहे हो महादेवन, हमारी तो हिस्ट्री भरी हुई है बीवियों के डर से। जंगे मैदान में शेर और घर के मैदान में भीगी बिल्ली।

मनजीत : सौ कैसे?

अहूजा : दशरथ ने बीवी के डर से राम को बनवास भेजा कि नहीं?

महादेवन : बिलकुल ठीक।

अहूजा : पांडवों ने द्रोपदी के डर से महाभारत किया कि नहीं ?

बैनर्जी : (झूमते हुए) बिलकुल सच. . .कौरवों ने उसका साड़ी क्यों उतारा ? पर पांडव बहुत देर बाद महाभारत किया,साड़ी खींचने पर तो तभी महाभारत होना चाहिए था (खड़े होकर) हम होता तो तभी कर देता (लुढकता है, सोफे पर बैठ जाता है) समझा महादेवन . . .हम क्या करता?

मनजीत : हम भी,कोई हमारी जनानी को हाथ लगाकर देखे तो सही, उसका मैं मुह तोड़ दूं. . .

महादेवन : सरदारजी हाथ लगाने पर आप मुंह क्यों तोड़ता. . .हाथ क्यों नहीं तोड़ता?

बैनर्जी : (नशे में) सौरदार जी, तुम महादेवन का मुंह क्यों तोड़ता?

मनजीत : ओए भापे. . .महादेवन महाभारत में कहा होता, हम तो कौरवों का मुंह तोड़ने का बात बोला।

अहूजा : (पैग गटककर) अभी तो हम पांडवों का गिलास भरकर लाओ,खुद तो तीन पटियाला चढ़ा चुके और मुझे एक औरतों वाले पैग से टरका रहे हो।

मनजीत : (अपना पैग भी गटक कर) अभी लाया बादशाहो. . .

महादेवन : जल्दी, नहीं तो यहां बिना द्रोपदी के महाभारत होगा। (सब हंसते हैं)

अहूजा : बैनर्जी तुमने बड़ौग देखा है?

बैनर्जी : बड़ौदा, हम कभी नहीं गया।

अहूजा : बड़ौदा नहीं. . .बड़ौग. . .बड़ौग।

महादेवन : ये इंडिया में क्या ? हमने भी नहीं देखा स्वामी।

अहूजा : तुमने साऊथ के इलावा कुछ और देखा भी है।

महादेवन : हां देखा. . .ये दिल्ली देखा।

अहूजा : कभी बड़ौदा देखों, शिमला के रास्ते पर पड़ता है। इस बार अपनी मैरिज एनिवरसरी पर मैं तुम्हें वहां ले जाऊंगा।

**(इस बीच सरदार जी पैग बनाते हैं। मिसेज अहूजा आती हैं। सच्ची पतिव्रता भारतीय नारी की प्रक्रिया दोहराती है। सरदार जी पैग लेकर आते हैं।)**

मनजीत : कहां लेकर जा रहे हो अहूजा साहब?

महादेवन : अहूजा अपनी सिलवर जुबली मैरिज एनवरसरी पर बड़ौग जाने को बोलते।

अहूजा : (गिलास देखकर) ओए फिर वहीं औरतों वाला पैग।

मनजीत : नो साथ में पटियाला भी है, हां तो अहूजा बड़ौग में क्या है?

अहूजा : ओए तुम भी नहीं गए, कभी शिमला गए हो?

मनजीत : ओए कई बार,हमने तो अपना हनीमून भी वहीं मनाया था । शिमला में बड़ौग कहां है ?वहां तो जाखू है, कुफरी है. . .

अहूजा : शिमला के रासते में पड़ता है,वहां एक बढ़िया गैस्ट हाउस है। क्या नेचर है । गेस्ट हाऊस बुक मैं कर दूंगा। कारों में चलेंगे, बड़ी ऐश करेंगे।

**(अपना पैग गटककर। सरदार के गिलास को अपने गिलास में उड़ेलता है)**

अहूजा : अपने लिए और बना ला (सरदार जाता है) पिछले साल जब मैं इंग्लैंड में था, वहां इतनी ठंड, स्काच पीता था. . .तीन-चार पैग फिर नींद आती थी. . .ओए बैनर्जी तू सो रहा है।

बैनर्जी : (उनींदा) नहीं तो हम किधर सोया है. . . कौन बोला हम सोया।

महादेवन : तुम इधर सोया है। आंख बंद कर तुम सोता नहीं तो क्या किसी देवा का ध्यान करता क्या?

अहूजा : (नशे में) देवा का नईं, किसी देवी का . . .श्रीदेवी का . . .

**(तीनों हंसते हैं)**

बैनर्जी : (नशे में) वो तो बहुत ओल्ड हो गया. . .

मनजीत : और तुम तो बहुत यंग है अभी,देखो हमारे देवानंद को. . .

अहूजा : यू नो मनजीत वेस्ट में लोग बड़े जिंदादिल हैं. . .अपने को साठ साल होने पर भी एजेड नहीं समझते।

मनजीत : भापे, पंजाब जैसी जिंदादिली तुझे किसी कंट्री में नहीं मिलेगी। हमारे यहां तो साठे को पाठा कहते हैं. . .

महादेवन : (झूम कर) क्या बोला. . .उल्लू का पट्ठा।

मनजीत : नहीं बीवी का पट्ठा. . .ओए हमारी बीवियां कहां चली गईं?

मनजीत : लगता है सब किचन में गप्पे मारने गई हैं। किचन तो औरतों का पिकनिक स्पॉट होता है। किसी के घर बाद में घुसती हैं। किचन में पहले घुसती हैं । अहूजा भापे मौका है, खेंच दो एक और पटियाला. . .

अहूजा : एत्थे केड़ी न है. . .

**( सरदार पैग बनाने जाते हैं। घंटी बजती है।)**

मनजीत : ऐ बेटैम कौन आ गया. . .(दरवाजा खोलता है) ओए कवि तूं. . .तूं तो दिल्ली से बाहर गया हुआ था. . .

**( कवि कोंचू जी का भौंक जी के साथ प्रवेश करते हैं।)**

कवि कोंचू : हां एक कवि सम्मेलन में गया हुआ था . . .भई इनसे मिलो. . .ये हैं मंचीय कविता समिति के अध्यक्ष भौंक जी हमारे अच्छे दोस्त। (सब नमस्कार करते हैं। भौंक जी को कवि सोफे पर बिठाकर सरदारजी के पास आकर फुसफसा कर कहता है)

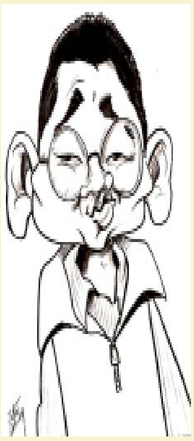

बड़े काम के आदमी हैं. . .कवि सम्मेलनों के अमिताभ बच्चन समझो। इनकी कृपा हो जाए तो एक-एक रात में दो-तीन कवि सम्मेलन हो जाएं। बीस टका कमीशन लेते है। बस। दो तीन पुरस्कार-समिति के अध्यक्ष भी हैं . . .अगला पचास हजार का पुरस्कार देना इनके हाथ में ही है. . .मैंने सोचा, आपके यहां की पार्टी तो अच्छे-अच्छों को मस्त कर लुड़का देती है। ये मस्त हो गए और लुढ़क गए तो हमारी भी बल्ले-बल्ले हो जाएगी।. . .बुरा मत मानना।

मनजीत : इसमें बुरा क्या मानना कवि जी. . .आप फिकर नाट आपका मितर हमारा मितरा. . . आपको हमारे कारण कुछ फायदा हो जाए तो हमारा ही फायदा समझो. . .आप बैठो में अभी पटियाला बनाकर लाता हूं. . .साले को ऐसा लुड़का दूंगा कि आपके गुण गाएगा. . .कहो तो अपनी जनानी के हाथों पैग पिलवा दूं. . .हां-हां. . .

कवि कोंचू : आज तो सरदारों का करिश्मा हो जाए।

मनजीत : सरदारों का करिश्मा तो हो जाएगी,तुझे इनाम भी मिल जाएगा, पर सरदारां नूं की मिलेगा?

कवि कोंचू : सरदारों को कमीशन मिलेगा- जितना चाहो, दस परसेंट.,पच्चीस परसेंट. . .। पचास तो परसेंट तो भौंक जी लेंगे।

मनजीत : कवि कोंचू जी, मनजीत सिंह कमीशन देता है,लेता नहीं। हम तो खाने-पीने में यकीन रखते हैं,पार्टी देते हैं और पार्टी लेते हैं। आजकल पॉलीटिशियन की तरह हमारा कोई एक झंडा नहीं है, बस एक ही फंडा है-पार्टी बढ़िया हो. . .

कवि कोंचू : पार्टी बढ़िया ही होगी,स्कॉच और मुर्गे में सबको नहला दूंगा. . .आपकी दया से महीने में दस-पंद्रह कवि सम्मेलन, और कभी-कभी तो तीस भी हो ही जाते हैं और एक रात का औसतन दस हज़ार मिल ही जाता है

मनजीत : तुम तो साले वेश्याओं से भी अच्छी कमाई कर लेते हो हा..हा..

कवि कोंचू : मनजीत बाबू बिना वेश्यावृत्ति के मोटा पैसा नहीं कमाया जा सकता है। पैसा बनाने के लिए कोई खुलेआम मंच पर वेश्यावृत्ति करता है और कोई खादी के कपड़े पहनकर मंच के पीछे। जिस तरह की वेश्यावृत्ति सरकारी दफतरों, कोर्ट-कचहरियों और धर्म की दुकानों पर होती है उसे देखकर तो अच्छी से अच्छी वेश्या शरमा जाती है... हमारी साहित्य की दुनिया में, पढ़े लिखों की दुनिया में, किताबों की खरीद और पुरस्कारों के नाम पर जिस तरह लोग बिकते है बेकते हैं. . .

बैनर्जी : मनजीत बाबू, ये कोवी है, कवि कोंचू, बच के रहना. . . ज्यादा देर साथ मत रहो, ब्रेन हैमरेज हो जाएगा (सब हंसते हैं)

महादेवन : उधर तुम गप्प मारता जी, यहां अहूजा का गिलास खाली जी।

मनजीत : (आते हुए) सरदारा की पार्टी में गिलास खाली हो जाए लानत है. . .यहां तो धुन्नी तक धुन देते हैं. . .

बैनर्जी : ये धुन्नी क्या होता महादेवन?

महादेवन : धुन्नी! पटियाला से भी बड़ा पैग होता (हाथ से इशारा करके) इतना. . .इतना बड़ा।

मनजीत : (भौंक जी के पास आकर) सर जी, आप स्कॉच किसमें पसंद करेंगें, पानी में या सोडे में?

कवि कोंचू : गुरु जी, ऑन दी रॉक्स ही लेते हैं

**( सरदार जी पैग बनाने के लिए जाते हैं और अंदर से सतवंत चिकन और सलाद की प्लेट लेकर आती है। कवि कौंचू को देखकर**

**आश्चर्य से)**

सतवंत : कवि कौंचू, आप! आप तो आगरा गए हुए थे?

कवि : बस अभी आ ही रहा हूं, गुरुदेव की कृपा हो गई, ये कार में ले आए। इनसे मिलिए भाभी जी ये हैं श्री भौंक जी . . .समझो सारे कवि सम्मेलन और पुरस्कार इनके कदमों में रहता है. . .बड़े योग्य हैं।

**(दोनों नमस्ते करते हैं)**

सतवंत : बड़ी खुशी हुई आप आए। (सरदार से) हम सब किचन में हैं. . .कोई चीज चाहिए तो बुला लेना।

महादेवन : भाभी जी आप लोग बिलकुल ठीक हो, वहीं रहना और मिसेज अहूजा को भी रखना। (आंख मारकर अहूजा से . . .) क्यों अहूजा. . .

अहूजा : (नशे में) ठीक बिलकुल ठीक

**(सतवंत जाती है। मनजीत कवि भौंक के साथ-साथ औरों को भी गिलास देता है। सब कवि भौंक के गिलास के साथ गिलास टकरा कर चीयर्स करते हैं।)**

कवि भौंक : आप जानते हैं चियर्स करते समय गिलास क्यों टकराए जाते हैं ?

**(कुछ क्षण के सनाटे के बाद)**

महादेवन : चैक करने का खातिर कि गिलास साला तो टूट नहीं गया

बनर्जी : नोंई जैसे स्कूल शुरु होने से पहले घंटी बजता वैसे ही पार्टी शुरु होने का ये घंटी

मनजीत : घंटी नहीं घंटा. . .सब मिलकर गिलास टकराते हैं तो घंटा बजता है. . .पड़ोस तक खबर हो जाती है कि लोग ऐश कर रहे हैं. . .

कवि भौंक : (मुस्कराते हुए) इसमें से ऐसा कुछ नहीं है। क्या है कि इस मदिरा का आनंद आपकी हर ज्ञानेंद्रिय, उठाती है- हाथ स्पर्श करते हैं, आंखें देखती हैं, जीभ स्वाद चखती है, नाक सूंघती है पर कान इसके आनंद से वंचित रह जाते हैं। कानों को भी मदिरा का स्वाद चखाने के लिए गिलास टकराए जाते हैं और चियर्स बोला जाता है।

कवि कौंचू : वाह ! वाह! क्या बात कही है गुरुदेव आपने ! मुकर्रर... एक बार फिर कहें गुरुदेव!

बनर्जी : (गैंडा जी मुंह खोलते ही हैं कि )नो कवि नो, हम सबको एक बार में ही सौमझ आ गया, दोबारा रिपीट करने का जोरूरत नईं। ये कोवी सोम्मेलन नहीं है कोवी कोंचू, ये सरदार मोनजीत सिंह का पार्टी. . . ये तुम्हारा फ्रेंड बहोत अच्छा बात बोला. . . एकदम न्यू बात बोला. . .ये एकदम जीनियस (कवि गैंडा के पास जाकर उसे चूमता है) तुम एकदम जीनियस. . .कोवी जी, इनका पोरिचय बोलो

कवि कौंचू : (मंच पर बोलने के अंदाज में खड़ा हो जाता है) मैं आप लोगों का परिचय एक महान विभूति से करा रहा हूं . . .कवि भौंक जी (खुद ही तालियां बजाता है। दूसरों को ताली बजाने का संकेत करता है। कवि भौंक उठकर अभिवादन स्वीकार करते हैं।) आपने अभी इनकी मौलिक कल्पना का आनंद उठाया। ये देश के सभी मंचों पर अपनी इस मौलिक कल्पना के झंडे गाड़ चुके हैं। जि समंच पर ये मौजूद नहीं होते हैं वहां कवि लोग इसे अपनी बताकर तालियां पिटवा लेते हैं। आप विश्व-साहित्य की महान विभूति हैं और आप अनेक अकादमियों के करीबी हैं। इनकी चरणधूलि का चंदन माथे पर लगाने के लिए, संतनकी भीड़ लगी रहती है। ये साहित्य के चांद सूरज हैं। (तालियां बजाता है। सब बजाते हैं।)

बैनर्जी : महादेवन, ये क्या बोला, कुछ समझ आया?

महादेवन : (नशे में) कौन बोला. . .क्या?

बैनर्जी : ये साला कवि कौंच जो बोला?

महादेवन : नहीं. . . उसकी बात सुनकर तो हमारा दारू उतर गया।

बैनर्जी : हमारा भी. . .पर तुम ताली क्यों बजाया?

महादेवन : हम कहां बजाया. . .वो तो कवि ने बजवाया, हमने भी (हिजड़े की तरह) ताली बजा दिया।

**(दोनों हंसते हैं)**

**(इस बीच नेपथ्य से सोते रहो गीत का धीमा-धीमा स्वर गूंजता है पार्टी में पीकर झूकने. . .संगीत की धुन पर लुढ़कने के साथ बत्तियां मद्धम होती है।)**

## अंक-दो

दृश्य 1

**(मंच के अग्र भाग में गोल घेरा बनाकर, पुलिस की वर्दी में ग्यारह लोग वैसे ही गुंथे हैं जैसे क्रिकेट के खिलाड़ी मैच आरंभ होने के पहले। तीन पुलिस कर्मी जिनकी की पीठ पर लिखा है- पोलिश टेंशन रामगढ़)**

उद्घोषक : सर्दी की रात में पुलिस थाना जैसे कोई मंदिर किसी श्मशान के किनारे। इंस्पेक्टर खौफ सिंह अपने सहकर्मियों के साथ थाने की शोभा बढ़ा रहे हैं। वैसे पुलिस को देखकर ईमानदार कांपता है पर इस समय सर्दी के कारण थाना कांप रहा है। इस कंपाहट को दूर करने की योजना बनाई जा रही है। सब एक झुंड में बैठे हैं। इस समय सर्दी दूर करने का उपाय ढूंढना प्रथमिकता है न कि किसी वारदात के न हाने के जाए उपाय करना। ये वैसे ही है जैसे चुनाव के समय पार्टी का चुनाव जीतना प्राथमिकता होता है न कि देश की सेवा करना। अब साहब चुनाव जीतेंगें तो ही देश की सेवा कर पाएंगें, विपक्ष में रहकर खाक देशसेवा होगी। ऐसे ही, हे संतों! सर्दी दूर होगी तो वारदात रोकने की हिम्मत बनेगी वरना बाबा जी की घंटा वारदात रोकेगा। तो आइए देखें कि आपके इलाके के थाने में सर्दी मिटाने के क्या युद्ध स्तरीय उपाय किए जा रहे हैं

**(उद्घोषक से हटकर प्रकाश का गोला झुरमुट पर पड़ता है और प्रकाश का गोला पड़ने के बाद धीरे धीरे अंगड़ाई तोड़ते हुए बारी बारी से सब एक ही ब्रह्म वाक्य बोलते हुए खड़े होते हैं- बहुत ठंडी है।)**

**समूहगान**

ठंडी ठंडी ठंडी रे, ठंडी ठंडी ठंडी रे
वो खाएं मुर्गा-मुर्गी हम शकरकंदी रे।
उनके पास सूट-बूट,
अपनी पास बंडी रे
ठंडी ठंडी ठंडी रे, ठंडी ठंडी ठंडी रे

उनके पास स्टेन गन
अपनी पास डंडी रे
ठंडी ठंडी ठंडी रे, ठंडी ठंडी ठंडी रे

गुरु के पास घंटा बड़ा
अपने पास घंटी रे
ठंडी ठंडी ठंडी रे, ठंडी ठंडी ठंडी रे

उनके पास विश्व सुंदरी
अपने पास रंडी रे
ठंडी ठंडी ठंडी रे, ठंडी ठंडी ठंडी रे
उनके पास रुपया पैसा
अपने पास मंदी रे
ठंडी ठंडी ठंडी रे, ठंडी ठंडी ठंडी रे।

कैसे मिटे ठंडी रे, कैसे मिटे ठंडी रे!
कोई मुर्गा फांस, खाने को मिले मुर्गी
मर्डर केस ला,किसी की करें कुर्की
कच्ची दारू बिकवा, हमें मिले पक्की
चकले खुलवा, थाने में नाचे इमरती

ऐसे मिटे ठंडी रे, ऐसे मिटे ठंडी रे,
ठंडी ठंडी ठंडी रे, ठंडी ठंडी ठंडी रे।

**(गाते हुए मंच से जाते हैं और कुछ पल के सन्नाटे के साथ अंधेरा है। इस सननाटे को सीटी और 'जागते रहो' की आवाज तोड़ती है। मोहल्ले के चौकीदार का प्रवेश। एक दो बार जागते रहो कह रहे चौकीदार दर्शकों की ओर उन्मुख होता है।)**

**दृश्य-2**

चौकीदार : (स्वर में नेपाली उच्चारण) मैं इस मोहल्ले का चौकीदार होता शॉब! यहां बहुत बड़ा-बड़ा और हमारे जैसा छोटा-छोटा लोग रहता। बड़े-बड़े शॉब लोगों का मैं चौकीदार-चौकीदार भीम बहादुर। अपना काम यह लाठी पकड़कर बस जागते रहो बोलना, वो भी तक तक जब तक शॉब लोग सो नहीं जाता। इधर मोहल्ले का बत्ती बंद हुआ. . .उधर हमारा आंख बंद हुआ। यही हमारा ड्यूटी। आजकल चोर-डाकू के पास स्टेनगन होता और हमारे पास यह लाठी होता। इस लाठी से हम चोर-डाकू भगाएगा ! इस लाठी से तो साला गधा भी नहीं भागता, ढेंचू-ढेंचू बोलता (नेपथ्य से गधे के रेंकने की आवाज आती है) चोप शाला रात को भी चैन नहीं लेता। (कुछ क्षण रुककर) हमको एक बात समझ नहीं आया शॉब,जब हम जागते रहो बोलता तो शॉब लोग सो क्यों जाता ? खैर शाब लोग का मरजी होता, शॉब लोग सोएगा तो हम भी सोएगा। (इधर-उधर देखकर) आज सरदार जी के यहां पार्टी था। ये साला जिस दिन पार्टी होता हमारा सोने का टाईम कम हो जाता है। पर सुबह खाने को बढ़िया मिलता। सरदार जी के यहां से तो क्या चिकन मिलता कबाब. . .कल भी मिलेगा। हमारे साथ हमारा साथी टौमी भी खाएगा। टोमी हमारा सच्चा साथी। अभी वो दूसरे मोहल्ले में अपनी गर्ल फ्रेंड से मिलने का गया। हम भी बोला कि आज तो पार्टी के कारण लेट सोएगा, तुम भी ऐश कर आओ। सब सो जाता, हम भी सो जाता, पर हमारा टौमी जागता रहता। झूठन खाने के मामले में आदमी और जानवर में कोई फर्क नहीं होता, साहब! खाना तो वो ही होता, जो

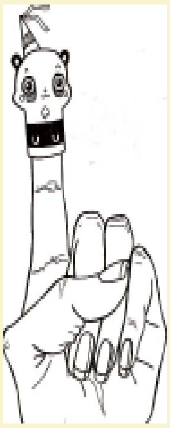

साहब लोगों की टेबल पर सजता। बस फर्क इतना होता, साहब की टेबल पर सिर्फ आदमी लोग खाता, पर जूठन जैसे ही फेंका जाता उसे कुत्ता, कौवा, बिल्ली, सूअर और हमारे जैसा इंसान- कोई भी खा सकता। जूठन तो फ्री मिलता नं, उसका कोई कीमत नहीं होता, जूठन खाने वाले का भी कोई कीमत नहीं होता। पर हमारा साहब लोग अच्छा, हमको पेपर प्लेट में खाना देता। (कुछ देर रुक कर, इधर-उधर देखकर उबासी लेते हुए) सबका बत्ती गुल हो गया। (उबासी लेते हुए) आज बहुत ठंडी होता (कांपते हुए) जय बजरंग बली तोड़ ठंडी की नली का जाप करता है और मंच के दाएं कोने में बैठा-बैठा सो जाता है।)

**(एक क्षण को अंधेरा, प्रकाश मंच के बाएं कोने से प्रविष्ट शराबी को घेरे में लेता है। एक शराबी लड़खड़ाता हुआ मंच पर प्रवेश करता है। पहनावा शरीफों का है सूट-बूट पेंट-टाई।)**

शराबी : ये सड़क बहुत नीचे ऊपर हो गई है. . . हिच। मेरा घर पता नहीं कहा खो गया. . . ओ मेरे घर तू कहां है. . .तू कहां है मेरे घर, माई स्वीट होम तू कहां है? (चौकीदार के पास पहुंचकर) ओह पुलिस जी, सलाम! तुमने मेरे घर को तो इधर से जाते नहीं देखा? (चौकीदार गहरी नींद में सोया है, जवाब नहीं देता है) तू सोच रहा है मैंने पी है, नई. . .तूने मुझे शराबी कहा स्टूपेड बल्डी फूल । तू बोलता क्यों नहीं. . . क्या तू मर गया है. . .मर गया. . .अच्छा मर ले . . .(कह कर आगे बढ़ता है)। रोता हुआ सा। मर गया,मेरा दोस्त मर गया। मेरा दोस्त मर गया।

**(थोड़ी देर लड़खड़ाते हुए इधर-उधर घूमता है) माई स्वीट होम की रट लगाता है। महादेवन के घर के सामने आता है।)**

शराबी : मेरा घर, ये रहा घर. . . घर तूं यहां खड़ा है, गुड. . . (घंटी बजाने के अंदाज में स्विच पर हाथ से दबाता है, घंटी बजती है। अंदर से कोई आवाज नहीं आती। शराबी फिर घंटी बजाता है)

महादेवन : (नेपथ्य से) आइयो, कौन है ?(शराबी फिर घंटी बजाता है)
(फिर नेपथ्य से) आइयो हम बोला, कौन है?
(कल्याणी की आवाज) ऐसे दरवाजा नई खोलना।
(महादेवन की आवाज) अरे हम डरता नई . . . (दरवाजा खोलने का स्वर, मंच के बाई ओर से महादेवन शराबी के पास आ जाता है।)

महादेवन : आइयो तुम कौन? इतनी रात को हमारा घंटी क्यों बजाया?

शराबी : माई स्वीट होम!

महोदेवन : आइयो ये तुमारा नई, हमारा स्वीट होम होता जी!

**(इतनी देर में कुछ दूर पर कलयाणी आकर खड़ी हो जाती है)**

शराबी : (शराबी उसी अंदाज में) माई डार्लिंग मैं आ गया।

महादेवन : (शराबी को धकेलते हुए) आइयो, तुम हमारी वाईफ को माई डार्लिंग बोला. . .हम छोड़ेगा नई। आइयो तुम्हारा हिम्मत कैसे हुआ शराब पीकर हमारा घर में घुसने का . . .हमारी घंटी को अपना घंटी समझकर बजाया, हम दरवाजा खोला, कुछ नई बोला . . .हमारे घर को अपना स्वीट होम बोला, हम कुछ नहीं बोला. . .अब तुम हमारी वाईफ को माई डार्लिंग बोला. . .हम छोड़ेगा नई (गले से पकड़ना चाहता है. . .शराबी लंबा है। महादेवन उसे पकड़ नहीं पाता है।)

शराबी : ये मेरा घर है,मेरी डार्लिंग का घर है, हट . . .हट (महादेवन को धक्का देता है)

महादेवन : तूने मुझको धक्का मारा. . .महादेवन को धक्का मारा. . .मेरे घर में धक्का मारा. . . हम तुमको छोड़ेगा नई।

**(महादेवन शराबी को फिर पकड़ने को कोशिश करता है. . .बीच में हमको धक्का मारा बोलता है. . .शराबी महादेवन को गले से पकड़कर हुंकारता है।)**

महादेवन : (अपने को विवश पाकर) ऐ. . .ऐ. . . स्वामी! हमको छोड़ो नं। कोई बात नई तुम हमको धक्का मारा, हम बहुत खुश, तुम कितना अच्छा धक्का मारता. . .क्या मलाई के जैसा तुम धक्का मारा हमको. . . तुमको इस धक्के पर पद्मश्री मिलना चाहिए. . . हम प्रधानमंत्री को बोलेगा। (शराबी के पेट पर हाथ फिराकर) ये तुम्हारा पेट कितना सुंदर- गोल-गोल अच्छा-अच्छा, हमको छोड़ो नं. . .(शराबी महादेवन को धक्का देकर गिरा देता है)

महादेवन : (गिरने पर लंगडाते हुए उठता है) अरे हमको मार दिया. . .बचाओ. . . हमको मार दिया. . .कल्याणी. . .कल्याणी. . .हमको मार डाला, चोर. . .चोर

**(शोर मचाते भागता है. . .शराबी भी पीछे भागता है. . .बचाओ-बचाओ का शोर मचाता है। शोर सुनकर चौकीदार हड़बड़ा कर उठता है . . .लाठी टोपी संभालता है. . .नींद में लड़खड़ाता है।)**

चौकीदार : पता नई क्या गड़बड़ हो गया. . .देखता हूं . . . (शोर वाली दिशा में भागता है। मंच पर अंधेरा)

दृश्य-3

**(चौकीदार के जाते ही मंच की दूसरी ओर से क्या हुआ, क्या हुआ करते हुए सरदार जी और उनकी पत्नी, श्री और श्रीमती बैनर्जी और बंसल का प्रवेश, सब नींद में आंखें मल रहे हैं।)**

बंसल : लगता है. . .लगता है मोहल्ले में कोई चोर आ गया है. . .

**(चोर शब्द सुनते ही श्रीमती बैनर्जी चिल्लाती है 'उड़ी मां चोर चोर . . .। सब घबरा जाते हैं और चोर-चोर चिल्लाने हैं।)**

मनजीत : ओए कित्थे आ चोर . . .ओदी ते . . . (श्रीमती बैनर्जी से) भाभी जी कित्थे आ चोर?

बैनर्जी : सोरदार जी चोर नई. . . हमारा वाईफ उशके नाम से डोर गया था. . .

बंसल : सही कै रहे हो, सही कै रहे हो। भाभी जी,चोर से डरने की क्या बात है. . .चोर भी तो आदमी होता है कोई जिन भूत नहीं. . . हम किसी से कम नहीं हैं।

सतवंत : डरन की तो बात है बंसल जी, चोर के पास हथियार होते हैं और हम लोग खाली हाथ हैं. . .

बंसल : सही कै रहे हो, सही कै रहे हो पर भाभी जी शोले में गब्बर ने कहा है- जो डर गया सो मर गया।

मनजीत : (इस बीच बैनर्जी को एक ओर ले जाकर,कान में फुसफुसाकर) इस मुफतखोर बंसल के सामने पार्टी की बात मत करना। सबको समझा देना।

**(इस बीच फिर चोर-चोर पकड़ो. . .बचाओ का शोर उठता है. . .सतवंत,बंसल, बैनर्जी और जयश्री छिपने की कोशिश करते हैं।)**

मनजीत : छुपो न मित्तरों. . . आ जाओ बैनर्जी. . . आओ बंसल साहब. . .चोर भी आदमी होंदा है, कोई जिन भूत नई. . .असी हैं नं. . . डरो ना।

बंसल : सही कै रहे हो, सही कै रहे हो। हम डर के नहीं भागा था, हम तो बैनर्जी का साथ दे रहा था. . .

बैनजी : तुम जानता हमारा वाईफ का दिल बड़ा साफ्ट. . .वो जौल्दी डौरता. . .हम तो. . .

सतवंत : ये लोग भागे तो मैं भी भाग गई. . .

मनजीत : ओए तूं ता सोणी सिखणी हैं, चोर सौरे नूं अंख मार दे तो मर जावे (हंसता है) जा जयश्री भाभी के पास चली जा, ओ जादा डर गई है।

बंसल : सही कै रहे हो, सही कै रहे हो।

**(इतने में अहूजा का प्रवेश)**

आहूजा : (धीमे और नजाकत के अंदाज में) नमस्ते मनजीत सिह जी।

मनजीत जी : आओ अहूजा सॉब. . .तुसी भी आओ।

आहूजा : और भाभी जी कैसी हैं. . .?

मनजीत : ठीक है. . .देख सामने मिसेज बनर्जी के साथ खड़ी ऐ. . .

आहूजा : क्या हुआ मोहल्ले में क्या चोर जी आ गए हैं. . .

बंसल : सही कै रहे हो, सही कै रहे हो. . .चोर ही लॉगता है

अहूजा : नमस्ते बंसल साहब, भाभी जी कैसी हैं?

बंसल : हमारा भाभी कल ही स्टेट्स गया, अभी फोन आया कि ठीक है

अहूजा : मैं आपकी नहीं अपनी भाभी, यानि आपकी वाईफ का हाल पूछ रहा हूं

बंसल : सही कै रहे हो, सही कै रहे हो, वो घर में बच्चों के साथ. . .

आहूजा : बैनर्जी सॉब नमस्कार. . .भाभी जी कैसी हैं।

बैनर्जी : भालो. . .बहुत भालो. . .(बाजू से पकड़कर एक ओर ले जाते हुए) सोरदार जी बोला कि बोंसल के सामने आज का पार्टी का बात नहीं करना. . .

अहूजा : मैं इस मुफतखोर की रग-रग जानता हूं, तभी तो ऐसे मिल रहा हूं जैसे पहली बार मिल रहा हूं

बैनर्जी : तुम बहोत इंटेलीजेंट. . .हमारे मुंह से विह्सकी का बास तो नहीं आता

अहूजा : थोड़ा बहुत आ रहा है, बंसल से दूर से ही बात करना।

**(इतने में चौकीदार भागता हुआ सा आता है)**

चौकीदार : शॉब उधर बहुत झगड़ा हो रहा. . .महादेवन साहब को एक शराबी पीटता शॉब।

**(सरदारजी, अहूजा और बैनर्जी तीनों एक साथ चौंककर- शराबी!)**

चौकीदार : शॉब उधर महादेवन शॉब मेम साब बहुत रोता।

सतवंत : मैं क्या सरदार जी हमें चलना चाहिए, महादेवन साहब की हैल्प करनी चाहिए . . .पड़ोसी-पड़ोसी के काम आता है. . .

बंसल : सही कै रहे हो, सही कै रहे हो. . .हमको

पड़ोसी का मदद करना चाहिए. . .मैं अपनी जोरू को बोलकर अभी आता हूं. . .सतवंत भाभी ने ठीक कहा कि चोर के पास हथियार भी हो सकता है. . .मैं. . .मैं कुछ लेकर आता हूं।

**( बात करते ही चल देता है )**

मनजीत : साला चूआ

बैनर्जी : हमको जॉल्दी चलना चाहिए।

जयश्री : देखो. . .अपना खॉली हाथ तो जाओ नई . . .शोराबी का क्या भरोसा. . .सोबजी कॉटने का छुरी रॉख लो. . .

सतवंत : मैं क्या सुनों. . .तुंसा भी अपनी किरपान ले जाओ

मनजीत : ओए सोणओ तूं भी ऐसे ही तरह फिकर करती है . . .देख फिकर कर कर के तूं अपने बाल चिट्टे कर लये हैं. . .बुड्डी लगने लगी है. . . फिकर न किया कर. . .(श्रीमती बैनर्जी से) चिंता न करो भाभी जी. . .चोर नूं ते असां मोर बनाके आयेंगे . . .(चौकीदार हंसता है)

मनजीत : ओए तूं क्यों दांत फाड़ रहा है. . .ओये महादेवन साहब पिट रहे हैं और तेरे दांत निकल रहे हैं, हमारी बात सुनकर हंसता है? ओए हम तुझे चुटकला लगते हैं. . .चल हमारे साथ ड्यूटी कर।

चौकीदार : शॉब! महादेवन शॉब ने बोला बैनर्जी शॉब के यहां से पुलिस को फोन करना. . .

मनजीत : ठीक है. . .ये ठीक है. . . (श्रीमती बैनर्जी से) भाभी जी आप जरा पुलिस को फोन करो जल्दी . . .हम जाकर देखते हैं गड़बड़ की है. . .(सतवंत से) भागवाने तूं भी यहीं रह, हम आते हैं चोर का मक्कु ठप के।

सतवंत : मैं जरा घर बंद कर के आती हूं. . . जल्दी-जल्दी में ताला लगाना ही भूल गई . . .आप चलो भैन जी और फोन करो।

जयश्री : हम अबी करता है फोन. . .एस.एच.ओ. को बोलेगा. . .कितना गड़बड़. . .कोई सिक्योरिटी नई. . .हम कल ही होम मिनिस्टर को लैटर लिखेगा. . .(मनजीत, बैनर्जी,बंसल और अहूजा जिस ओर से चौकीदार आया था उस ओर,उसके साथ, जाते हैं। सतवंत और जयश्री बैनर्जी के घर की ओर जाते हैं। प्रकाश का गोला हाथ में फोन पकड़े और कुरसी पर बैठी जयश्री पर पड़ता है। श्रीमती बैनर्जी फोन को घुमाने लगती है।)

जयश्री : (फोन की घंटी बजती है। हैलो की आवाज आने पर) हैलो हम जौयश्री बोलता. . .ये मालवीय नौगर पुलिस स्टेशन है क्या

आवाज : जी नहीं रेलवे एंक्वारी है

जयश्री : ओह हो. . .एक्शक्यूज मी. . .बाई द वे आजकल ट्रेन इतना लेट क्यों चलता?

आवाज : रासते में गप्पे मारती रहती हैं।

जयश्री : वॉट?. . . आमी तुम्हारे जी.एम. को लैटर लिखेगा. . . मिनिस्टर को बोलेगा आप लोग लेडिज के साथ ऐसे टॉक करते हैं. . .एक लेडीज से बात करने का तमीज नई है. . . (फोन काटता है) बीच में फोन काट दिया।

**( फिर फोन डायल करती हैं. . .बड़बड़ाती रहती हैं। )**

बैनर्जी : हैलो. . .हैलो. . .पुलिस स्टेशन।

आवाज : नहीं मैडम जैन संस

बैनर्जी : ओह जैन संस (खुश होकर) आपने अभी तक शॉप खोली है. . .

आवाज : नहीं मैडम (स्टॉक टेकिंग के कारण लेट हो गए . . .मैं यहीं सो रहा हूं. . .

बैनर्जी : गुड. . . देखिए वैसे तो मैंने सुबह फोन करना था. . .अब मिल ही गया तो . . .बाई द वे. . .मैंने आपके यहां से अपने हसबैंड का पुल ओवर लिया था. . .उसका ग्रीन कलर ब्लू कलर लग रहा है. . .कस्टमर को ऐसे चीट नहीं करना चाहिए।

आवाज : मैडम आप सुबह दुकान पर आकर बात करना।

जयश्री : ओ हो ठीक है। बाई द वे, आपके यहां सेल कब लग रही है. . .आप लोग सेल में भी चीट करता है. . .ऐसे चीट नहीं करना चाहिए. . .मैं एक लैटर मिनिस्टर को लिख रही हूं। (फोन कटता है) स्टूपिड रास्कल, फोन काट दिया। कस्टमर को ठीक से अटेंड करते ही नहीं हैं (फिर फोन घुमाती है बड़बड़ाती है. . .)

जयश्री : हैलो. . .हैलो. . .पुलिस स्टेशन।

आवाज : नहीं श्मशान घाट।

जयश्री : सॉरी आपको डिस्टर्ब किया. . .रांग नंबर मिल मिल गया. . .वैसे बाई द वे आप डे नाईट सर्विस देते हैं?

आवाज : आप जब मरजी आ जाएं।

जयश्री : आना नहीं है. . . यूं ही जनरल नॉलेज के लिए पूछती था. . .यू नो इन्फोरमेशन तो सबका होना चाहिए नं।

सतवंत : (प्रवेश करते) पुलिस को फोन हुआ. . . वहां बहुत झगड़ा हो रया है

जयश्री : नई . . .सब रांग नंबर मिलता. . .ये फोन ही गौड़बड़. . .(गुस्से में) हम बैनर्जी को कई बार बोला, नया कनैक्शन लेने का पर वो. . .

सतवंत : छड्डो. . .बंसल ने कर लिया. . .

जयश्री : बंसल ने फोन किया! कॉल पर खर्च किया?

सतवंत : वो बहोत डर गया है. . .चलो असीं चलते हैं. . .कल्याणी भाभी की मदद करते हैं।

**( दोनों चलती हैं। मंच पर अंधेरा )**

**दृश्य-5**

**( मंच पर लड़ने-झगड़ने के शोर के साथ प्रकाश होता है। मंच के दायीं ओर मनजीत, बैनर्जी, अहूजा, बंसल एक साथ खड़े हैं।)**

बैनर्जी : बेचारा महादेवन पिट रहा है. . .

बंसल : सही कै रहे हो, सही कै रहे हो।

मनजीत : चलो उसे बचाते हैं

बैनर्जी : नां सोरदार जी, हमको कानून हाथ में नहीं लेना है. .

बंसल : सही कै रहे हो, सही कै रहे हो।

अहूजा : दुष्ट. . . किस निर्ममता से प्रहार कर रहा है। इसके पास तो चाकू भी हो सकता है. . .

बैनर्जी : रिवाल्वर भी हो सकता है. . .

बंसल : सही कै रहे हो, सही कै रहे हो।

मनजीत : ओए क्या सही कै रहे हो। उधर बेचारे महादेवन को मार पड़ रही है और कह रहे हो सही है? बेचारे नूं कितनी पड़ रही है . . .चलो बचाएं।

बैनर्जी : न सरदार जी. . .अहूजा ने पुलिस को फोन कर दिया, महादेवन के साथ हम भी पिट गया तो. . .पुलिस आता. . .उसी को कानून हाथ में लेने दो न. . .(उसके कान में फुसफुसाते हुए) तुम तो जानता कि हम लोग भी पिया हुआ है. . .पुलिस आया और हमसे उसको बास आ गया तो हमपर भी केस बन जाएगा।

**( इस बीच महादेव और शराबी लड़ते हुए मंच पर आते हैं। शराबी महादेवन को मार रहा है उसके पकड़े फाड़ रहा है। महादेवन का पहनावा अजीब है- उसने बनियान पहनी है और उसपर बच्चों के स्कूल की टाई पहनी हुई है, लुंगी पर स्कूल की बेल्ट पहनी हुई है।)**

महादेवन : अइयो. . .हमको मार डाला. . .अरे कोई हमको बचाओ. ..हम शराबी से पिटता. . .

अहूजा : हाय कैसा पिट रहा है महादेवन. . .कैसा दृश्य है. . .बेचारी भाभी जी उधर सहायक की पुकार मचा रही है. . .(जोर से पुकारकर) भाभी जी कैसी हैं ?

मनजीत : ओए पुलिस और आग बुझाने वाले तो सब कुछ होने के बाद आते हैं. . .उन्हें तो आकर जन गण मन ही करना होता है।

**( इस बीच महादेवन शराबी को नीचे गिरा लेता है ) लो हमारे पट्ठे ने उसे ढा लिया है . . .डरने की बात नहीं. . .चलो. . .अब तो चलो। ( सब जाते हैं। शराबी को पकड़ते. . .उसे बांधने का अभिनय करते हैं. . .मंच के एक ओर खड़ा कर देते हैं। सबकी छातियां चौड़ी हैं।)**

आहूजा : आप तो बहुत वीर निकले (महादेवन छाती फुलाता है). . .बहुत पराक्रमी हैं. . .और भाभी जी कैसी हैं.?

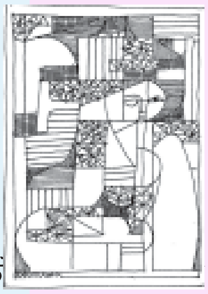

महादेवन : भाभी! अरे भाभी को क्या होना. . .जो होना हमको होना. . .हम शराबी का मुकाबला किया। उसने हमारा कपड़ा फाड़ा. . .हमको उसका चटनी बनाया

बंसल : सही कै रहे हो, सही कै रहे हो. . .तुमको शराबी ने मारा. . .बहुत मारा. . .तुम भी चटनी बनाया।

अहूजा : (शराबी को दो लगाते हुए) अरे मद्यप तूने महादेवन साहब को मारा दुष्ट. . .अन्यायी . . .शरीफ आदमी को मारता है. . .शरम नहीं आती. . .भाभी जी कैसी हैं?

बैनर्जी : अहूजा कानून हाथ में मत लें. . .उसे मत मार . . .तेरी उंगलियों के निशान आ जाएंगे। (अहूजा हाथ देखता है. . .उसे कोट से रगड़ने लगता है)

शराबी : ओए मुझे खोल दो. . .वरना

**( अहूजा, बंसल और बैनर्जी डर के दूर हटते हैं।)**

सरदारजी : चिंता न करो महादेवन साहब, हम सब अब गए है. . .हुआ क्या था महादेवन?

महादेवन : होना क्या. . .हम अपनी फैमली के साथ सोता, ये घंटी बजाकर हमारी वाईफ को डार्लिंग बोला . . .हम भी किसी से डरता नई. . .हम इसका खूब पिटाई किया. . .फिर हमसे माफी मांगता पहले हमको मारा. . . फिर माफी मांगता. . .हम नई देगा. . .ये शराबी हम को मारा, ये शराब पीकर लफड़ा

किया. . .इसको पुलिस पकड़ना जी

अहूजा : मैंने पुलिस को फोन कर दिया है, आती ही होगी. . .मद्य पीकर शरीफ आदमी से हिंसा करता है. . .

बैनर्जी : अहूजा, केवल ये ही मदप. . .मदप अरे शराबी नईं है, हम लोगों ने भी तो थोड़ा पिया है . . . हमारे मुंह से भी तो बास आ रही है . . . पुलिस आया और हमको भी पकड़ा तो. . .? हम पर केस बनाया तो ? महादेवन हम लोग चलता. . .

महादेवन : बास तो हमारे मुह से भी आता. . .पुलिस हमारा भी केस बनाया तो. . .हम भी तुम्हारे साथ चलता

मनजीत : ओए महादेवन तुझे तो शराबी ने पीटा है, तूं तो यही रह. . .हम भी यही हैं. . .

बंसल : सही कै रहे हो, सही कै रहे हो। तुम लोगों ने कहां पिया, कहीं पार्टी था क्या?

मनजीत : पार्टी होती तो तुझे न बुलाते? हम सब ने घर में ही थोड़ी-थोड़ी पी है। मित्रों थोड़ी पीने में कोई खराबी नहीं है. . . थोड़ी से फर्क नहीं पड़ता. . .डरने दी कोई गल नई है . . .शराब पीना गलत बात नई हैं. . .पीकर झगड़ा करना गलत है. . .क्यों बंसल साब!

बंसल : सही के रहे हो. . .थोड़ी में कोई खराबी नहीं।

बनर्जी : पुलिस वाले के पास इंचीटेप नईं होता कि नापे कितना पीया. . .वो तो सूंघता. . .पीया कि नहीं पिया? उसको तो केस बनाने का बहाना चाहिए।

अहूजा : बैनर्जी ठीक कह रहा है, हमें सावधान होना पड़ेगा. . .कहीं उलटा चोर कोतवाल को न पकड़ ले

बंसल : सही कै रहे हो. . .पर हम चोर थोड़ी हैं।

अहूजा : बंसल साहब हम कोतवाल हैं चोर तो. . . (सब हंसते हैं)

मनजीत : चुप, एक तरफ हो जाओ वो देखो पुलिस वाले आ रहे हैं। महादेवन तूं अपनी उधर चल. . .हम कोने में इधर खड़े हैं. . .

**(इस कोने में अंधेरा हो जाता है ।)**

**दृश्य-5**

**(मंच के दायें ओर से पुलिस का प्रवेश। चौकीदार से)**

सब-इंस्पेक्टर : ओए कहां हुआ है कांड. . .कहां है डाकू?

चौकीदार : शॉब डाकू नहीं शराबी है शाब।

सब-इंस्पेक्टर : डाकू नहीं है शराबी है। ओए हम ऐसे ही इतनी देर करके आए. . .हमें तो फोन पर डाकू बताया गया था. . .पब्लिक भी पुलिस को डराने से बाज नहीं आती है. . .अब शराबी को पकड़ना सब-इंस्पेक्टर का काम है? ये काम तो हमारा शराफतसिंह ही कर लेता आज। की रात तो हो गई बेकार शराबी से क्या मिलेगा हजार दो हजार? और यदि कच्ची पीने वाला हुआ तो बस मारने को मिलेंगें दो- चार घूंसे । (चौकीदार से) क्यों बे किस साले ने हमको फोन किया था, पहले तो उसको अंदर करता हूं...पुलिस को गलत इन्फरमेशन देता है...

चौकीदार : शॉब वो तो पता नहीं...

शराफतसिंह : साहब बड़ा इज्जतदार लोगों का इलाका लग रहा है। जल्दी कर लो... कहीं कोई ऊपर फोन न कर दे...

सब-इंस्पेक्टर : ये तूने सही कहा, शराफतसिंह।मोहल्ला तो इज्जत वाला है, शराबी भी इज्जत वाला ही होगा यानि मालवाला। इन इज्जत वालों को अपनी इज्जत बचाने की बहोत चिंता होती है... इसके लिए ये कुछ भी कर देते हैं... हो सकता है हमारी किस्मत अच्छी हो रामसिंह और अपनी कुछ चांदी कट जाए। (चौकीदार से) शराबी के पास कोई हथियार तो नहीं है?

चौकीदार : नहीं शॉब उसे तो पकड़कर बांध दिया है. . .

सब-इंस्पेक्टर : पकड़ लिया है,चल शराफतसिंह,कृष्ण सिंह,जल्दी ड्यूटी करो. . .शराबी को गिरफ्तार कर लो। (चौकीदार दौड़कर आता है, जहां सब लोग खड़ा है।)

चौकीदार : शॉब. . .शॉब पुलिस आ गया है. . .शराबी को पकड़ने। (सरदार और बैनर्जी (घबराकर एक साथ) शराबी को पकड़ने पुलिस. . . पुलिस आ गई

मनजीत : महादेवन! तू चिंता मत करना. . .पुलिस आ गई है. . .तूं शराबी के पास खड़ा हो, हम यहीं छुपे खड़े हैं... चिंता मत करना

महादेवन : अइयो हमको अकेला छोड़कर जाता. . . पुलिस के सामने अकेला छोड़ता।

अहूजा : (महादेवन आलिंगन करते हुए) चिंता मत कीजिए महादेवन जी हम आपके पास ही हैं . .रक्षक दल आ गया है और अपराधी को हमने बांधा ही हुआ है. . .भाभी जी ठीक-ठाक हैं. . .आप तो अकड़ कर शराबी के पास खड़े हो जाओ।

बंसल : सही कै रहे हो. . . जरूरत पड़ेगा तो मैं आ जाऊंगा. . . मैंने तो पी ही नहीं है।

मनजीत : (बंसल की नकल उतारते हुए) सही कै रहे हो. . . सही कै रहे हो।

**(महादेवन शराबी के पास जाता है। शराबी फिर जोर से चिल्लाता है, महादेवन उससे दूर हो कर खड़ा हो जाता है।पुलिस आते ही महादेवन को पकड़कर मारने लगती है. . .वो बचाओ बचाओ चिल्लाता है।)**

महादेवन : अइयो मर गया. . .अइयो पुलिस ने मार दिया। मुझको क्यों मारता जी. . .

सब-इंस्पेक्टर : साले दारू पीकर झगड़ा करता. . .

महादेवन : अइयो हम शराबी नई. . .हम झगड़ा नई किया है।

सब -इंस्पेक्टर : सब ऐसे ही बोलते. . .डंडे पड़ते ही. . . तेरी तो।

**(बसंल पुलिस वाले के पास आता है।)**

बंसल : इंस्पेक्टर साहब ये सही कै रहा है. . .

सब-इंस्पेक्टर : ये सही कह रहा है और हम गलत. . .तो अब पुलिस को पब्लिक बताएगी कि चोर कौन है. . .अबे हमें सब पता है शराबी कौन है और जुआरी कौन और चोर कौन . . . हम तो उड़ती चिड़िया की पहचान लेते हैं

चौकीदार : शॉब शराबी तो उधर बंधा है, ये तो अपना महादेवन शॉब है,शराबी ने इनके साथ मार-पीट किया. . .

सब-इंस्पेक्टर : (महादेवन का गिरेबान छोड़ते हुए) माफ करना . . .आपकी शक्ल और ड्रैस देखकर लगा. . .ये आपने लूंगी के ऊपर बेल्ट. . .

और बनियान के ऊपर टाई क्यूं बांधा है बदमाशो जैसा।

महादेवन : ये बेल्ट तो हमारे छोटे बच्चे का. . .ये सुबह स्कूल जाता. . .सुबह जाने का जल्दी . . .कभी टाई नईं मिलता. . .कभी बेल्ट नहीं मिलता। टाई हमारा वाईफ पहनकर सोता. . .और बेल्ट हम बांधकर सोता. . .

सब-इंस्पेक्टर : ओए एक्सक्यूज मी. . .अच्छा तो बदमाश ये हैं। क्यों बे हराममजादे. . .शक्ल शरीफों की बना रखी हे. . .बहरुपिये शरीफ बनता है . . .तेरे धोखे मे हमने शरीफ आदमी को पीट दिया. . .(उसे मारता है।)

महादेवन : मारो. . .और मारो. . .इसने हमको मारा. . . हमारा कमीज फाड़ा. . .इसको मारा. . . आपका तरक्की होगा. . .मारो. . .(जब इंस्पेक्टर शराबी को मार लेता है)

**(आहूजा इंस्पेक्टर के पास जाकर)**

आहूजा : आप तो बड़े रौब वाले हो. . .स्मार्ट हो. . . भाभी जी कैसी हैं ?

सब-इंस्पेक्टर : (अहूजा का ऊपर से नीचे की तरह देखता है) पहनावे से तो भई तूं इस शराबी की तरह शरीफ लग रया है. . . तूं भी तो लफड़ेबाज नहीं है इसकी तरह. . .ये शराफत में छुपे बदमाश बहुत खतरनाक होते हैं. . . भई ये बता कि तूं भाभी किसे कह रैया था . . .(मुंह पास लाता है तो अहूजा का उससे शराब की गंध आती है। )

अहूजा : (डरते हुए) वो आपने भी अभी मुझे भई कहा न तो. . .

इंसपेक्टर : भइए ये तो हम शरीफों के मोहल्ले में आए है तो भई कह रहे हैं वरना हमारे मुंह से जो फूल झड़ते हैं, उनमें कांटे ज्यादा होते हैं . . . अब बिना साला कहे हमारा काम नहीं चलता. . .रोज बीसियों को साला बोलते हैं . . . तो क्या ढेर सारे साले पाल लेंगे हम . . . समझा

अहूजा : जी, समझ गया. . .

सब-इंस्पेक्टर : हमसे ड्यूटी पर मजाक ठीक नही होता . . .हमारे साथ रिश्ता जोड़ना बहुत महंगा पड़ता है. . .जानता नहीं कि हमारी दोस्ती भी अच्छी नहीं होती और दुश्मनी तो बहुत महंगी पड़ती है. . .मेरा तो अभी ब्याह नहीं हुआ है. . .चल उधर बैठे हमें ड्यूटी करने दे. . .। (यह कहकर शराबी को एक दो हाथ लगाता है, शराबी से) क्यों बे, शराब पीकर मारा-मारी करता है. . .शरीफ आदमी को पीटता है (सूंघते हुए) क्यों बे कौन सी पी है?

शराबी : नहीं शॉब में तो. . .

सब-इंस्पेक्टर : चुप साले . . .ठर्रा पिया लग रहा है. . . विह्सकी पीने वाला शरीफ होता है. . .दंगा नहीं करता है।

शराबी : सॉब. . .सॉब. . . मैं. . .

सब-इंस्पेक्टर : चुप साले इंक्यवारी करने दे। महादेवन की ओर जाते हुए कागज पर लिखने की मुद्रा में हां तो इसने शराब पीकर आपको मारा।

महादेवन : बहुत मारा. . .इतने हमारी वाईफ को डार्लिंग भी कहा. . .शराब के नशे में हमारा कमीज भी फाड़ा. . .हम इसको नई छोड़ेगा।

सब-इंस्पेक्टर : कुछ बोतलें होंगी दारू की आपके पास?

महादेवन : उसका क्या करना?

सब-इंस्पेक्टर : एविडेंस चाहिए कि नहीं. . .ये कैसे प्रूफ होगा कि इसने दारू पिया था. . .

महादेवन : (अकेले ले जाकर) वो सॉब जरा गड़बड़ . . .हम बहुत थोड़ा पीने वाला. . .अपने पास कोई खाली बोतल नई. . .हमारा वाईफ ने रद्दी वाले को बेच डाला जी. . .वैरी सॉरी जी. . .

सब-इंस्पेक्टर : आप तो समझदार होकर बच्चों सी बात करते हैं। पढ़े लिखे हैं महादेवन साहब। खाली बोतलों का हम क्या करेंगे. . . एविडेंस के लिए इससे शराब की बोतल मौजूद होनी चाहिए नं. . .जरा बढ़िया ह्विसकी की दो चार बोतलें ले आइए. . . साले पर चोरी का जुर्म भी लगा दूंगे। ठोस सबूत इकट्ठे करता हूं मैं। आप जरा बोतल का इंतजाम करो. . .आस-पड़ोस से ले लें। मैं इस साले का इंतजाम करता हूं। वरना मैं कुछ नहीं कर पाऊंगा, हो सकता है इस लफड़े में आप फंस जाएं, आपको थाने आना पड़े. . .पांच छह चक्कर तो लग ही जाएंगें. . .

महादेवन : अइयो. . .हमें थाने नहीं ले जाना. . .हम इज्जतदार आदमी. . .क्लास वन गौवरमेंट सर्वेंट होता. . .हमें थाने नई जाना. . .हम अभी एविडेंस लाता, (आहूजा और महादेवन का प्रस्थान)

सब-इंस्पेक्टर : (शराबी की ओर) क्यों बे एक तो शराब पीता है और फिर दूसरे घर में घुसकर चोरी करता है।

शराबी : इस्पेक्टर साहब मैं पढ़ा लिखा इज्जतदार आदमी हूं. . . एम बी ए हूं

सब इंस्पेक्टर : तूं चाहे बीए हो या एम.बी.ए., हमें क्या लेना! हम पर अपनी पढ़ाई का रौब मारता है? आजकल पढ़े लिखों की हालत न देख रहा है तूं. . .मंदी के इस दौर में पढ़े लिखे इतनी तेजी से बेरोजगार हो रहे हैं जितनी तेजी से क्राईम का ग्राफ बढ़ रहा है। क्राईम का ग्राफ बढता है तो थाने बढ़ते हैं। तेरे यहां मंदी है और अपने यहां तेजी। आजकल पढ़ा लिखा होना मतलब बेरोजगारी। ज्यादा पढ़ना-लिखना आदमी को कोल्हू का बंधवा बैल बना देता है और हमारे जैसा कम पढ़ा लिखा छुट्टै सांड की तरह घूमता है. . . समझा? चल बता तूने इस मोहल्ले में क्या-क्या चुराया है?

शराबी : इंस्पेक्टर साहब मैं चोर नहीं हूं. . .

सब-इंस्पेक्टर : तेरे कहने से क्या होता है. . .वो तो हमें देखना है तूं क्या है? हमारे गवाह जो कहेंगे हम तो वो ही मानेंगे और जो हम मानेंगे वही तो हमारे गवाह कहेंगे। अब हम मानेंगे कि तूं चोर है तो गवाह कहेंगे कि तूं चोर है और जब गवाह कहेंगे कि तूं चोर है तो हमें तो मानाना ही पड़ेगा। चल बेट्टी के शराफत से चोरी का माल निकाल दे. . .हमारी छटी इंदरी कै रही है कि तूने पांच हजार का माल चुराया है. . .

शराबी : नई साहब मैंने चोरी नहीं की. . .

सब-इंस्पेक्टर : अबे तब से राग जै जैवंती ही गा रहा है . . .शराफतसिंह ले साले की तलाशी. . . निकाल जो भी है इसकी जेब में

शराबी : सच जानिए इंस्पेक्टर साहब मैं बहुत शरीफ आदमी हूं। सरकारी नौकर हूं पहली सैलरी मिली थी. . . दोसतों को पार्टी दी. . . पहली बार पी. . .दोस्तों ने ज्यादा पिला दी उससे बहक गया।

सब-इंस्पेक्टर : बहकने का कुछ तो जुर्माना देना पड़ेगा नं, अब तूं सरकारी नौकर है, तेरी नयी-नयी नौकरी लगी है, और मैंने तुझे इस मौहल्ले की गवाही पर थाने में बदं कर दिया तो तेरी नौकरी भी गयी। तेरा केस तो कम-से कम पचास हजार का बनता है. . .पर तूं नौजवान है. . .हम भी नौजवान हैं. . .नौजवानों के लिए हमारे दिल में बहोत प्यार. . .इसलिए सस्ते में छोड़ रहा हूं । आज तो तुझे तन्खाह मिली होगी?. . .अच्छे बच्चे की तरह चुपचाप माल निकाल दे।

**(चेहरे पर विवशता है जेब से रुपए निकालकर गिनने लगता है कि इंस्पेक्टर झपट्टा मारकर छीन लेता है।)**

सब-इंस्पेक्टर : अबे गिनकर हमें सेवा शुल्क देता है. . .गिन हम लेंगे. . .हमने तो गिन भी लिए. . .कम होते तो तूं गिनता ? तूं तो फुट अब यहां से

फुट ले. . .तूं भी याद रखेगा कि किस शरीफ इंस्पेक्टर से पाला पड़ा था. . . कोई केस नहीं बना रहा हूं

**(इस बीच महादेवन का प्रवेश उसके हाथ में शराब की तीन बोतलें हैं। उन्हें इंस्पेक्टर के चरणों पर रखकर)**

महादेवन : इंस्पेक्टर साहब, बस इतनी ही हैं. . . (शराबी की ओर इशारा करके) इसको जरूर अंदर करना मांगता. . .इसने हमारी कल्याणी को डार्लिंग बोला. . .

सब-इंस्पेक्टर : अबे हमें पता है क्या करना है. . .ज्यादा चैं चैं मत कर. . .एक तो पब्लिक की शांति भंग करता है और दूसरे हमें कानून सिखाता है. . .चलो सब चुपचाप सो जाओ और कानून को अपना काम करने दो. . .(जोर से) फूटो यहां से. . .अब कोई खड़ा मिल गया तो साले को बंद कर दूंगा (डंडा घूमाता है आहूजा, महादेवन, शराबी डरकर भागते हैं।) देखा आपने, मोहल्ला हो या देश. . .शांति कैसे स्थापित होती है। इस पब्लिक को तो डंडे के जोर से ही ठीक किया जा सकता है. . .देखो पुलिस वालों को कानून सिखाते हैं. . .(हंसकर) कानून. . .(डंडे को घुमाते हुए) इससे बड़ा कानून कोई है. . .नंहीं नं इसलिए हमारी प्रार्थना है कि हमें अपना काम करने दो और आप लोग. . .हमारी प्रार्थना (कुटिल मुस्कान के साथ) मान लो वरना. . . (डंडा दिखाते हुए) इसे अपना रस्ता मालूम है। अब ओ चौकीदार. . .

चौकीदार : आया शॉब. . .

सब-इंस्पेक्टर : चल साले ड्यूटी कर. . .सुला सबको अपनी लोरी से

चौकीदार : सोते रहो. . .सोते रहो।
ठंडी ठंडी ठंडी रे,
ठंडी ठंडी ठंडी रे
मोहल्ले को लगी ठंडी रे
पुलिस की पड़ी डंडी रे
नींद आई ठंडी ठंडी रे
ठंडी ठंडी ठंडी रे, ठंडी ठंडी ठंडी रे।

73 साक्षर अपार्टमेंट्स
ए-3, पश्चिम विहार
नई दिल्ली-110063

**ge ikl r l|% idkf'kr**
**dN egRoi.k iLrd**

- - -dguk t:jh Fkk
dUg;kyky unu
eY;%250 #i,
idk'kd% lkef;d idk'ku

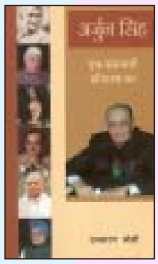


vtu flg ,d lg;k=h bfrgkl dk
jke'kj.k tk'kh
eY;%600 #i,
idk'kd%jktdey idk'ku

xg ?kj vk;k g
fnfod je'k
eY;%175 #i,
idk'kd%fdrkc?kj idk'ku

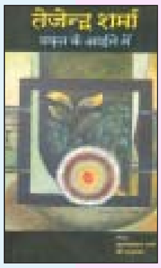


rtUæ 'kek
oDr d vkbu e
eY;%400 #i,
idk'kd%jpuk le;
liknd
ctukjk;.k 'kek
gfj HkVVukxj

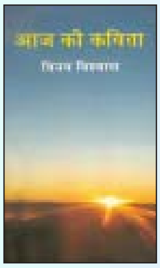


vkt dh dfork
fou; fo'okl
eY;%550 #i,
idk'kd%jktdey idk'ku

lyxrh unh
lj'k lB
eY;%150 #i,
idk'kd% ioh.k idk'ku

राजेन्द्र त्यागी

# पालतू राजनीति में

शहर भर में पालतू सारी रात वार्तालाप में व्यस्त रहे। गली-मुहल्ले में जाकर, घर-घर जा-जाकर। गई जगह तो नुक्कड़ सभाओं जैसा आलम था। शहर स्तब्ध था। एक-दूसरे को फूटी आंख भी न सुहाने वालों के बीच अचानक प्रेम संबंध! स्तब्ध होने के साथ-साथ शहर भयभीत भी था। शहर सोच रहा था कि पालतुओं के मध्य ऐसा प्रेम व्यवहार, ऐसा सौहार्द पूर्ण वार्तालाप पहले, न तो कभी देखा और न सुना! कहीं कोई मुसीत न खड़ी कर दें। पालतू आने वाले खतरे को भी दूर से भांप लेते हैं, पालतुओं के मध्य इतनी सक्रियता, कहीं सभावित खतरे के कारण ही तो नहीं! कारण कुछ भी हो, कोई न कोई खतरा तो अवश्य है। यही सोच-सोचकर शहर भयभीत भी था। बावजूद इसके शहर सोया, मगर श्वान निद्रा में!

दरअसल शहर पालतू-प्रेमी था। किसी कमबख्त का कोई वीरान घर ऐसा होगा, जो पालतुओं से शोभायमान न हो, उनकी मधुर आवाज से गुंजायमान न हो। कमजोर वर्ग कमजोरों पर स्नेहिल हाथ फिराकर पालतू-प्रेमी होने का अहसास कर लेते थे। मध्यवर्गीय अपनी-अपनी हैसियत के हिसाब से बाकायदा एक-दो पाले रखते थे। उच्चवर्ग की तो बात ही अलग थी, जब तक दो-तीन पालतू और दो-तीन बे-पालतू फालतू में दरवाजे पर न हों तो कैसी रईसी! शहर में नेताओं की भी कमी न थी। छुट भइया से लेकर बड़-भइया तक हर किस्म के और हर स्तर के नेता शहर के बाशिंदे थे। और यह भी जग जाहिर है कि नेता के दरवाजे पर एक-दो पालतू न हो, तो काहे की नेतागीरी।

मंत्रीजी और विधायक जी का आवाज भी शहर की शोभा बढ़ा रहा था। उनके दरवाजे पर पालतुओं की संख्या! नहीं-नहीं, हमने गिनने की ज़हमत क्या, कभी हिम्मत भी नहीं की और करते भी, तो क्या गिन पाते! कुछ स्थायी पालतू थे, तो कुछ फालतू। कुछ दरवाजे पर ही जमे रहते तो अधिकांश आवागमनित रहते थे। कुछ जड़-खरीद थे, तो कुछ टुकड़ा देखकर पूंद हिलाने की परिवर्तित प्रवृति के धनी! शहर में ऐसे पालतुओं की संख्या भी कम न थी, जिन्हें नेता किस्म के जीव म्यूनिसैलीटी के लॉकअप से समय-समय पर मुक्त कराते रहते हैं। दरअसल नेतागीरी में म्यूनिसपैलीटी के लॉकअप से रिहा पालतू कुछ ज्यादा ही कारगर साबित होते हैं। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि मथुरा-वृंदावन में गाय का जैसा महतव प्राप्त है, वैसा ही महत्व इस शहर में पालतुओं को प्राप्त है।

पालतुओं की सक्रियता के कारण जब सूचना शहर स्तब्ध था, भयभीत था। ऐसे में मंत्रीजी का घर चैन की नींद में सो रहा था। मंत्रीजी पूरे घटनाक्रम से वाकिफ जो थे। हुआ यों कि एक दिन मंत्रीजी के पालतू पिल्लू सिंह के मन में ख्याल आया कि जब ऐरे-गैरे भी हमारे बल पर सत्ता के गलियारों में आराम फरमा रहे हैं, तो क्यों न हम भी उन गलियारों का मजा लें। एक दिन मंत्रीजी के प्रिय पालतू पिल्लू सिंह ने सक्रिय राजनीति में प्रवेश करने की इच्छा उनके सामने जाहिर की।

प्रिय पिल्लू की इच्छा सुन मंत्रीजी स्तब्ध रह गए। आश्चर्यचकित मंत्रीजी बोले, 'तू और राजनीति में!. . .तुझे इस पचड़े में पड़ने की क्या आवश्यकता! मैं हूं न!'

मंत्रीजी के वचन सुन पालतू मन ही मन बोला, बात ठीक है, मुझमें और तुम में शक्ल के अलावा अंतर भी क्या है! फिर वह बोला, 'मालिक इसमें हर्ज भी क्या है? एक और जगह दो हो जाएंगे। पालतू ने राजनैतिक पैंतरा चलते हुए कहा, यहां भी पालतू हूं, वहां भी पालतू रहूंगा।'

मंत्रीजी ने दूसरा सवालिया निशान लगाया, मगर राजनीति के काबिल तेरी हैसियत कहां और न ही चरित्र।'

पूंछ हिलाते हुए पिल्लू बोल, 'मालिक! तुम्हारे विरोधी उस नेता की हैसियत मुझ से बेहतर है? वह भी तो आज सत्ता-सुख भोग रहा है! रही चरित्र की बात, तो आप ही बताओ मालिक राजनीति और चरित्र का परस्पर मेल कैसा? ये तो दोनों ही दो अलग-अलग ध्रुवों की अलग विचारधारा हैं! फिर भी एक बात बताओं तुम्हारे विरोधी दल के नेता के मुकाबले मेरा चरित्र कहां कमजोर है? वह तो जिस थाली में खाता है, उसी में छेद करता है।'

पिल्लू दौड़ा-दौड़ा बाहर की ओर गया और वहां से खाने की थाली उठाकर लाया और मंत्रीजी को थाली दिखाकर बोला, 'बरसों से इसी थाली में खाना खा रहा हूं, कहीं एक भी छेद है, इस थाली में।'

पिल्लू ने जीभ से राल टपकाई और बोला, 'मालिक! मैं तुम्हारे टुकड़े खाता हूं और केवल तुम्हारे हर तलवे चाटता हूं और वह! उसने तो तुम्हारे भी तलवे चाटे, और उसके भी और न जाने किस-किस के तलवे चाटकर टिकट ले गया! फिर भी आप मेरे चरित्र को राजनीति के काबिल नहीं मानते।'

पिल्लू भावुक हो गया और आंसू टपकाता हुआ बोला, 'मालिक! उसने तलवे चाटना हमने सीखा, पूंछ हिलाना हमसे सीखा, काटना हमसे सीखा, भौंकना हमसे सीखा और सभी कुछ हमसे सीखकर फिर उनका दुरुपयोग किया! मैंने अपने चारित्रिक गुणों का कम से कम कभी दुरुपयोग तो नहीं किया! आपने जिस पर गुर्राने के लिए कहा, मैं उस पर गुर्राया, जिसे काटने के लिए कहा, उसे काटा और वह. . .!'

मंत्रीजी के दिमाग में बता कुछ-कुछ धंसी। बात तो ठीक कह रहा है। मेरे विरोध से तो कहीं ज्यादा ही बेहतर है और फिर राजधानी जाकर भी तो पालतू ही रहेगा। वहां भी तो एक अदद भौंकने वाला, गुर्राने वाला,

काटने वाला चाहिए ही! वैसे भी राजनीति तो ऐसे गंगा है, जिसमें उतरकर सभी दूध के धुले हो जाते हैं। वहां कोई भेद-भाव तो है नहीं, सब धान सत्ताईस सेर! सोच-विचार करने के बाद मंत्री जी बोले, 'ठीक है! तू कहता है, तो राजनीति की पवित्र धारा में तेरा प्रवेश करा देता हूं। मगर कुछ व्यवहारिक अड़चनें आएंगी, उनसे कैसे निपटेगा?'

एकलव्य बन पिल्लू ने मंत्रीजी के चरणों में ही बैठे-बैठे राजनीति के गुर सीख लिए थे। वह तलवे चाटता-चाटता राजनीति के सभी दांव पेच और रहस्यों से परिचित हो गया था, अतः उसने आत्मविश्वास के साथ कहा, 'कैसी व्यवहारिक अड़चनें, मालिक! बताएं, आपकी शरण में रहकर राजनीति की पैंतरेबाजी सीखी है, सभी अड़चने सहज ही हल कर लूंगा।'

मंत्रीजी बोले, 'तुम भाषण देना तो जानते ही नहीं? बिना भाषण के नेतागीरी कैसे संभव, बरखुरदार!'

मंत्रीजी की आशंका सुन पिल्लू ने ठहाका लगाया और मन ही मन बोला, मालिक तुम भी तो मेरी ही तरह भाषण देते हो। तुरंत ही पिल्लू ने अपने आपको सहज किया और बोला, 'माननीय! अधिकांश नेता मेरे ही सुर में भाषण देते हैं। उन्होंने यह कला हम ही से तो सीखी है और आप जानते ही हैं, मैं तो इस कला में निपुण हूं। इस कला के आधार पर ही तो मुझे आपका पालतू होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।. . . नहीं, नहीं भाषण देना कोई समस्या नहीं है!' शंका निवारण कर पिल्लू ने वाणी को विराम दिया और मंत्रीजी के मुख से नई व्यवहारिक दिक्कत सुनने की प्रतीक्षा करने लगा।

'भाषण तो ठीक है, मगर इस देश में तो गरीब, अमीर मध्यवर्गीय सभी तबके के जीव हैं। सभी का समर्थन कैसे प्राप्त करोगे?' मंत्री जी ने अगला सवाल किया।

पिल्लू बिना किसी लागलपेट के बोला, 'जैसे आप जुटा लेते हैं, मालिक!'

पिल्लू का उत्तर सुन मंत्रीजी सकपका गए और बोले, 'क्या मतलब?'

'साफ तो है, मालिक! गरीब तबके को मैं शोषण से मुक्ति दिलाने की बात करूंगा। उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत करने के लिए समाजवाद का नारा बुलंद करूंगा।'

'मगर, बरखुरदार! पूंजीपतियों से क्या कहोगे? उनके बिना तो राजनीति नहीं चला करती!'

'मैं जानता हूं, मालिक! चार-पांच साल में केवल वोट के लिए ही गरीब आम आदमी की आवश्यकता पड़ती है, किंतु अमीर से तो रोज-रोज कमरबंद घिसना है। अतः उनके कान में कहूंगा, तुम्हारे खिलाफ सर्वहारा संगठित हो रहे हैं, मैं उनसे तुम्हारी रक्षा करूंगा। जहां कहीं आवश्यकता होगी तुम्हारे हित में आवाज उठाऊंगा। और मालिक आगे की बात भी बता देता हूं, सभी एक स्थान पर मिल गए, तो सर्वोदय का सिद्धांत जिंदाबाद! सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय! . . . जैसा गाल वैसा तमाचा!'

पिल्लू सिंह की राजनैतिक विचारधारा सुन, मंत्री के चेहरे पर गंभीर भाव काबिज़ हो गए। पालतू और अपने बीच किसी प्रकार का पर्दा न रखने की गलती पर उन्हें पछतावा आने लगा। और सोचने लगे पछताने से भी अब क्या होता है, चिड़ियां तो अब खेत चुग कर ही दम लेंगी। कोशिश बस यही होनी चाहिए कि नुकसान कम से कम हो। इस पछताने के गलियारे बाहर निकलने का प्रयास करते हुए मंत्रीजी ने शंकायुक्त अंतिम प्रश्न किया, 'यह तो ठीक है कि राजनीति के हर पैंतरे का तुम्हें ज्ञान है, किंतु प्रिय पिल्लू! राजनीति में पालतुओं के प्रवेश को विरोधी दल के नेता मुद्दा बना लेंगे और राजनीति की शुद्धता, शुचिता को आधार बनाकर इसका विरोध करेंगे। इस मुद्दे पर आम जनता भी उनके साथ हो जाएगी! तक क्या करोगे?' ही आत्मविश्वास झलक रहा था।

नेताजी ने आश्चर्य व्यक्त करते हुए कहा, 'मेरा फार्मूला!'

'हां, मालिक! आपका फार्मूला!. . . जिस प्रकार राजनीति में प्रवेश पा चुका प्रत्येक अपराधी राजनीति के अपराधीकरण के खिलाफ बोलता है। उसी प्रकार मैं भी जहां आवश्यकता होगी राजनीति में पालतुओं के प्रवेश खिलाफ खुलकर बोलूंगा और अपने साथियों से भी खिलाफत कराऊंगा। मगर मालिक पतनाला तो वहीं गिरेगा जहां मैं चाहूंगा!'

अंततः मरता क्या न करता की तर्ज पर मंत्रीजी ने उसे राजनीति में प्रवेश करने में प्रिय पालतू पिल्लू सिंह को हर संभव सहायता देने का वचन दे ही दिया। वे जानते थे यदि न भी देते तो भी पिल्लू का राजनीति में प्रवेश-निषेध वैसे ही असंभव था जैसे कि राजनीति में भ्रष्टाचार अथवा अपराध निषेध! मंत्रीजी ने गीली आंखों से उसे आशीर्वाद देते हुए कहा, 'जाओ वत्स! पालतू-रथ पर सवार होकर जनसंपर्क करते हुए दिल्ली प्रवेश करो। मैं तुम्हारे स्वागत के लिए वहां तत्पर हूं।'

भोर हुई उनींदा-उनींदा सा शहर जागा। शहर अभी रात में भय और स्तब्धता से मुक्त भी न हो पाया था कि आंख खुलते ही शहर के सभी पालतुओं को सेंटर पार्क की ओर गमन करते पाया। शहर की आंखें फटी की फटी रह गई।

दरअसल सेंटर पार्क में पालतू एकता कमेटी की सभा थी। इसी सभा के आयोजन के लिए शहर के पालतू रातभर जनसंपर्क और गुफ्तगू में मशगूल थे। इसी सभा के बाद मंत्रीजी के पालतू ने बिरादरी की सहमति प्राप्त कर उनके अधिकारों की रक्षा के लिए संघर्ष का बिगुल बजाना था। और इसी पार्क से रथ पर सवार होकर पालतू-रथ-यात्रा का शुभारंभ भी करना था। और समूचे देश की यात्रा करते हुए समापन राजधानी जाकर करने की योजना थी।

धीरे-धीरे समूचा पार्क पालतुओं से भर गया था। चारों दिशाएं पालतू एकता जिंदाबाद के नारों से गुंजायमान थी। भीड़ की तादाद देखकर गली मोहल्ले के पालतुओं ने जाकर पिल्लू सिंह को सूचना दी। सूचना पाते ही पिल्लू ने अपने कारवां के साथ पार्क की चारदीवारी में प्रवेश किया। उसने आज मलमल पर स्थान किया था। माथे पर तिलक सुसज्जित था और गले में तिरंगा पट्टा। पिल्लू को देखते ही जिंदाबाद के नारे गूंजने लगे। मंच पर आकर पिल्लू ने हाथ में लहराकर सभी का अभिवादन किया और मान-सम्मान की रस्म अदा होने के उपरांत उसने भाषण दिया।

अपने भाषण में उसने सर्वहारा, अक्सरियत, अक़ल्लीयत, दलित, समाजवाद, साम्यवाद, सामाजिक न्याय, सर्वजन हिताय-सर्वजन सुखास और सर्वोदय जैसे राजनीतिक

**शेष पृष्ठ 65 पर. . .**

**मनजीत शर्मा 'मीरा'**

# महंगाई मार गई

सुबह उठकर सबसे पहले 'हिंदुस्तान' में जो मुख्य खबर पढ़ी वह थी–आग लगी महंगाई को।

पिछले तेरह साल का रिकार्ड तोड़ते हुए महंगाई की दर ग्यारह फीसदी का आंकड़ा पार कर चुकी थी। शेयर बाजार औंधे मुंह गिरकर सेंसेक्स को 517 अंक लुढ़का चुका था। मुद्रा स्फीति की आसमान छूती दरों ने बाजार का मनोबल तोड़कर रख दिया था। प्रतिष्ठित एवं नामी कंपनियों के शेयर नीचे आ गए थे। बस नाममात्र की कंपनियों के शेयर ही स्थिर थे।

कुछ बैंक अधिकारियों की टिप्पणी छपी थी कि बाजार दरों में बढ़ोतरी होना तय है इसलिए निवेशक बाजार से दूर ही रहें तो बेहतर है। हां, उनके लिए सोने में निवेश सोने में सुहागे जैसा था।

हम अखबार के पृष्ठ पर पृष्ठ पलटते जा रहे थे लेकिन हर तरफ महंगाई का ही रोना था। मजबूरन हमें वही खबरें बार-बार पढ़नी पड़ रही थीं।

महंगाई की मार से जो सबसे ज्यादा और बुरी तरह प्रभावित थीं वह थीं गृहणियां। उनके अनुसार पिछले सप्ताह आम की जो पेटी 150 रुपए में आती थी उसकी कीमत अब 250 रुपए अदा करनी पड़ रही थी। हरी सब्जियां, दालें, चावल, अनाज, कपड़े, तेल, दूध, घी, चायपत्ती, मटर, सोयाबीन, मक्का, मिर्च, मसाले, पेट्रोल और डीजल हर चीज उछाल पर थी और बेचारी गृहणियां बासमती चावल को केवल सूंघकर फिर उसी बोरी में रख देती थीं और मोटा चावल खरीदने पर मजबूर थीं।

एक ओर वित्त मंत्री का कहना था कि दो अंकों पर पहुंची महंगाई पर काबू पाने के लिए सरकार हर संभव कदम उठाएगी तो दूसरी ओर अर्थशास्त्रियों के अनुसार 'महंगाई अभी और बढ़ेगी' का अंदेशा लोगों की नींद हराम करने के लिए काफी था।

हां, इस बात पर सभी एकमत थे कि महंगाई चाहे पेट्रोलियम पदार्थों की वजह से बढ़े या खाद्य-पदार्थों की वजह से, इसका खामियाजा आम आदमी को ही भुगतना पड़ता है। जेब कटती है तो आम आदमी की, पेट काट-काटकर की गई बचत को दीमक चाटती है तो आम आदमी की और पेट पिचकता है तो आम आदमी का।

अब हम कोई रईसजादे तो थे नहीं कि महंगाई पर छपी ढेर सारी खबरों का हम पर कोई असर नहीं होता। सरकारी दफ्तर में बाबू ही तो थे। वही नौ से पांच की नौकरी और बंधी-बंधाई तनख्वाह। कोई ऊपरी आमदनी भी नहीं। महंगाई से आहत हम अपना सिर धुनने ही लगे थे कि श्रीमती जी ने रेडियो चालू कर दिया, 'रसोई गैस की कीमतें पचास रुपए तक बढ़ा दी गई हैं। सरकार का मानना है कि सिर्फ पैट्रो पदार्थों की वजह से ही महंगाई नहीं बढ़ी है बल्कि लौह अयस्क, स्टील, कपास, दूध, सी-फिश और संतरे जैसी वस्तुओं का भी इसमें बड़ा योगदान है...।' मन में आया कि वहीं बैठे-बैठे चप्पल उठाकर रेडियो पर दे मारे पर हिम्मत नहीं पड़ी। क्योंकि जमीन पर गिरकर रेडियो टूटता तो हमारा और बहुत संभव है चप्पल भी जख्मी हो जाती। अब ये रिस्क लेने को हम कतई तैयार नहीं थे। कल रात पता नहीं किसकी शक्ल देखकर सोए थे कि सुबह छः बजे से आठ बजे तक महंगाई के बारे में ही पढ़-सुन रहे थे। हमें याद आया कि रात को चेहरा तो हमने अपना ही देखा था। लेकिन चेहरे का महंगाई से क्या संबंध? चूंकि महंगाई रूपी कीट हमारे दिमाग में घुसकर खूब उत्पात मचा रहा था इसलिए हमारा दिमाग घूमने लगा। हमें ऐसा लगा जैसे कोई बड़ी-बड़ी घीया, कद्दू, आलू, प्याज, लौकी हमारे सिर पर फोड़ रहा है और हम पगलाने लगे हैं। बड़ी मुश्किल से हमने अपने दिमाग पर नियंत्रण कर खुद को संभाला क्योंकि हम बैठे बिठाए पगलाने के इलाज का खर्च तो कम से कम नहीं ही वहन कर सकते थे।

तभी श्रीमती जी की आवाज कानों में पड़ी, 'मुन्ना के बापू, चाय बना दें....?'

हम दो कप चाय पीते हैं एक अखबार पढ़ने से पहले और दूसरा अखबार पढ़ने के बाद। लेकिन महंगाई की मार को देखते हुए हमने चाय के दूसरे कप के लिए मना कर दिया। श्रीमती जी को हमारी 'ना' से बड़ी हैरानी हुई। बोलीं, 'क्या बात है मुन्ना के बापू, तबियत तो ठीक है?... दूसरी चाय काहे नहीं पीओगे?' हमने कहा, 'भागवान, अब एक कप पर ही गुजारा करना पड़ेगा। चायपत्ती, चीनी, दूध, गैस, तेल, अनाज सबकी कीमतें आसमान तक उछल रही हैं। टिफिन में भी तीन की बजाए दो ही रोटी रखना। आज से हम पानी ज्यादा पिया करेंगे। और देखो, तुम भी अपनी एक रोटी कम कर दो। बैठे-बैठे मुटिया रही हो।'

श्रीमती जी को अपनी रोटी कम करने की बात इतनी नागवार गुजरी कि कमरे में जाकर एक मुड़ी-तुड़ी लाल-सी पर्ची उठा लाई। हमने पूछा क्या है तो तुनककर बोलीं कि खुद ही देख लो।

हमने पर्ची खोल कर देखी तो पानी का बिल था। यानि श्रीमती जी ने जले पर नमक छिड़कते हुए जता दिया था कि देखती हूं अब कितना पानी पीते हो। आए बड़े मेरी रोटियां गिनने वाले, हुंह...।

ऑफिस पहुंचे तो वहां भी यही चर्चा गर्म थी। हर बाबू के पास महंगाई का ही किस्सा था। महंगाई से निपटने के लिए युद्ध स्तर पर कई तरह की योजनाएं बनाई जा रही थीं। बाबू अपनी बरसों पुरानी आदतें तक बदलने को तैयार थे। एक कह रहा था मैं पांच की बजाए तीन बीड़ी ही पिया करूंगा। अब ये कहने वाला ही जानता था और हम भी जानते थे कि किसी भी तरह के नशे की

लत वाले लोग मुसीबत के समय अपने नशे की मात्रा बढ़ा तो सकते हैं लेकिन घटा कदापि नहीं। फिर भी कहने में क्या हर्ज था। दूसरा कह रहा था कि अब मैं दो लीटर के बजाए डेढ़ लीटर दूध ही लिया करूंगा और आधा लीटर पानी मिला दिया करूंगा। यानि नमक लगे ना फिटकरी और रंग चौखा। दूध में पानी मिलाने की बात पर हमें अपना पानी का बिल याद आ गया कि भई इसकी हैसियत इतनी तो है कि दूध में पानी मिला सके। तीसरा अपने बच्चों को प्राइवेट स्कूल से निकालकर सरकारी स्कूल में दाखिल करने की बात कर रहा था। यानि जो सरकार बढ़ती महंगाई पर आंखें मूंदे बैठी है उसी की शरण में जाने की कोशिश। अब सरकारम् शरणम् गच्छामि: के अलावा मरता क्या ना करता। चौथे को कोई फिक्र नहीं थी। उसका कहना था कि वह कर्ज लेकर अपनी सारी जरूरतें पूरी करेगा और छठे वेतन आयोग के बाद मिलने वाले एरियर से अपना सारा कर्जा चुकता कर देगा। लेकिन छठे वेतन आयोग की रिपोर्ट का तो कहीं दूर-दूर तक अता-पता नहीं था।

यानि जितने बाबू, उतनी योजनाएं, उतने बदलाव। हमने भी अपनी चाय और रोटी में कटौती की योजना बताई तो सब हमारा मुंह देखने लगे। अब उन सबमें सबसे ज्यादा लाचार और तंगहाल तो हम ही थे क्योंकि जिनकी बीबियां भी कमाती थीं उन्हें तो कोई फर्क पड़ने वाला था नहीं। उलटा वे तो महंगाई भत्ते और मकान भत्ते में होने वाली बढ़त से खुश ही थे जबकि हमें लग रहा था कि हमें 'सिटी ब्यूटीफुल' से दूर किसी दूर-दराज के छोटे-से कस्बे में ही प्रस्थान करना पड़ेगा।

शाम को टेलीविजन चालू किया तो हर चैनल पर पिछले एक घंटे से महंगाई का ही रोना रोया जा रहा था, 'आज हम आपको बताएंगे कि कैसे महंगाई चुपके से आकर हमारी जेबों को काट रही है, हमारी बचत को चट कर रही है। महंगाई रूपी सांप कैसे अपना फन उठाकर हमारी खाने-पीने की चीजों को विषैला कर रहा है। कैसे. . .? कैसे. . .? महंगाई के दानव से लड़ना है तो अब जाग जाओ. . .।'

और अगले ही पल हमारा ध्यान भंग हो गया। श्रीमती जी ने सुबह की तरह ही एक लाल-सी मुड़ी-तुड़ी पर्ची हमें फिर पकड़ा दी। हम पहले ही चोट खाए हुए थे इसलिए तुरंत समझ गए। झट से टेलीविजन बंद कर दिया। हमने महसूस किया कि हमारी श्रीमती जी को भी घर-खर्च की उतनी ही चिंता है जितनी हमें। आवाज में शहद घोलते हुए हमने कहा, 'हमारी सबेर की बात दिल को मत लगाना। पेटभर रोटी खाई कि नहीं? कित्ती दुबला रही हो। हम कुछ ना कुछ जुगाड़ करेंगे।'

श्रीमती जी पसीज गई, 'का जुगाड़ करोगे? सारा दिन तो दफ्तर में खटत हो।'

'तुम चिंता काहे करती हो?. . .और नहीं तो सुबह उठकर 'हिंदुस्तान' ही बेचेंगे।'

'का?' श्रीमती जी की आंखें भय से फैल गईं।

'हमारा मतलब है, अखबार बेचेंगे। पैसा भी मिलेगा और महंगाई की खबरें भी नहीं पढ़नी पड़ेंगी।'

'काहे. . .?'

अरे भई, जब टैम ही नहीं होगा तो खबरें कब पढ़ेंगे?'

श्रीमती जी की आंखें छलकने को हो आईं। हमने बात का रुख बदलते हुए कहा, 'मुन्ना का कर रहा है?'

'अभी सोया है। बहुत थक गया था। आज स्कूल से पैदल आया है।'

'पैदल क्यों?. . .रिक्शा वाला नहीं आया क्या?'

श्रीमती जी कुछ नहीं बोलीं।

हम सब समझ गए।

'देखो मुन्ना की मां, अब हम इतने गए-गुजरे भी नहीं है कि अपने फूल-से मुन्ना को पैदल स्कूल भेजें। कल रिक्शा वाले को बोल देना कि हमार बबुआ को घर से स्कूल और स्कूल से घर छोड़कर जाया करे, हां. . .।'

मुन्ना की स्कूल की छुट्टियां होने पर इस बार हमने गांव जाने का कार्यक्रम बनाया था ताकि अपने मां-बाबूजी से मिल सकें लेकिन हाय री महंगाई! हमें अपनी यह हसरत पूरी होती नजर नहीं आ रही थी।

काफी देर तक हम इसी उधेड़बुन में रहे कि इस महंगाई रूपी राक्षस से कैसे निपटा जाए।

हमने कहीं पढ़ा था कि अगर खाना धीरे-धीरे चबा-चबाकर खाया जाए तो खाने के दौरान मस्तिष्क अपना सिगनल सही समय पर 'सेटैटी सेंटर' में पहुंचा देता है। यानि यह वह अवस्था होती है जब व्यक्ति को खाना खाने के बाद संतुष्टि होने का संदेश मिलता है और जाहिर है इसके बाद कोई भी व्यक्ति ज्यादा नहीं खा सकता। इस अनोखी तकनीक से खाना खाने से व्यक्ति को कैलोरी, ऊर्जा तो मिलती ही है साथ ही उसका शरीर स्वस्थ भी बना रहता है। जबकि जल्दी-जल्दी खाना खाने से व्यक्ति अधिक खा लेता है और इससे पहले कि ब्रेन सिगनल 'सेटैटी सेंटर' तक पहुंच पाए व्यक्ति की तोंद खाने से ठूंस-ठूंसकर भर चुकी होती है।

भला हो उन डॉक्टरों का जिन्होंने ऐसी-ऐसी महान खोजें की हैं जो मुसीबत के वक्त काम आ सकती हैं। वैसे हमारे बुजुर्ग तो सदियों से कहते आ रहे हैं कि खाने का एक कौर कम से कम बत्तीस बार चबाकर खाना चाहिए लेकिन आज की रफ्तार-भरी जिंदगी में इतना धीरज किसके पास है।

हमने भी आज चाय और रोटी में कटौती की थी। सोचा रात का भोजन इसी तकनीक से किया जाए।. . .लेकिन यह क्या? हम तो भोजन पर ऐसे टूट पड़े जैसे कुत्ता हड्डी पर। और जब तक ब्रेन सिगनल हमारे 'सेटैटी सेंटर' तक पहुंचता हम पांच रोटियां डकार चुके थे। लेकिन हमने हिम्मत नहीं हारी। एक नुस्खा फेल हुआ तो क्या हुआ। हिम्मते मर्दा तो मददे खुदा।

डॉक्टरों द्वारा ईजाद किए गए कई और नुस्खे भी हमारे मस्तिष्क में चक्कर काटने लगे। मसलन, नीम की दातुन करने से दांत और मसूढ़े स्वस्थ रहते हैं। ज्यादा नमक, मिर्च, घी, तेल, चीनी और मसालों का उपयोग स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

हमारे घर के सामने ही नीम का पेड़ लगा है लेकिन हमें उसकी कभी याद नहीं आई थी। पर आज हमने कॉलगेट को अलविदा कहने का मन बना ही लिया।

सरकार भी जानती है कि हिंदुस्तान की जनता इतनी चतुर और कुशल तो है ही कि स्वयं को परिस्थितियों के अनुसार ढाल सकती है। सरकार की सोच पर मुहर लगाने के ख्याल से हम कमर कसकर राशन की सूची बनाने बैठ गए और हिसाब लगाया कि

यदि आटे में तीन किलो, चीनी में आधा किलो, चायपत्ती में दो सौ ग्राम, घी में आधा किलो, दूध में आधा लीटर और नमक, मिर्च, मसालों, सब्जियों में एक निश्चित हिसाब से कटौती की जाए तो कितने रुपयों की बचत हो सकती है कि उतनी ही तनख्वाह में पूरा महीना आराम से निकल जाए। हम उंगलियों पर हिसाब लगाते जा रहे थे। गणित में बेशक हम जरा कमजोर हैं लेकिन घर के राशन-पानी की व्यवस्था हम इस प्रकार करना चाहते थे जैसे कोई चार्टर्ड अकाउंटेंट किसी कंपनी का लेखा-जोखा रखता है।

बड़ी कार्य-कुशलता से हमने राशन की सूची तैयार करके अपने तकिए के नीचे इस ख्याल से रख ली कि इससे पहले कि महंगाई के तेवर और बढ़ें सुबह उठकर सबसे पहले सुपर बाजार से राशन लेकर आएंगे।

सुबह से शाम महंगाई का जाप करते-करते ना जाने कब हमारी आंख लग गई।

'आज लग गई. . .आग लग गई. . .।' चारों तरफ से कुछ ऐसी ही आवाजें आ रही थीं। लोग इधर-उधर भागे जा रहे थे। हमने एक आदमी को रोक कर पूछा, 'भाई, आग कहां लगी है?'

'उधर, गर्म बाजार में।'

'गर्म बाजार में?. . .कैसे?'

'मियां, खुद ही देख लो। हमसे क्या पूछते हो।' उसने हमें ऐसे घूरा जैसे हम कोई अजूबा हों।

हम आगे बढ़ते गए। एक तरफ बड़ा ही विचित्र नजारा था। कुछ गधे गाड़ियों को खींच रहे थे। हमने फिर किसी से इसका कारण पूछा। पता चला कि पेट्रोल की कमी गधों से पूरी की जा रही है। कुछ और दूर गए तो कुछ युवतियां 'शार्ट्स' में घूम रही थीं। तहकीकात की तो पता चला कि कॉलेज की लड़कियों ने अपने कपड़ों में कटौती करके महंगाई के खिलाफ अभियान छेड़ा है। एक पल के हमारे मस्तिष्क में हलचल हुई कि महंगाई और कितनी बढ़े कि 'शार्ट्स' शब्द के सामने 'अति' शब्द और जुड़ जाए। तभी हमें पत्थर से ठोकर लगी और हम लंगड़ाते हुए जैसे-तैसे गर्म बाजार पहुंचे।

'भिंडी कैसे दी?' हमने एक रेहड़ी वाले से पूछा।

'दो रुपए की एक।' कहकर उसने सब्जियों पर पानी का छिड़काव करना शुरू कर दिया।

हम आश्चर्यचकित. . . भौंचक्क। दूसरी रेहड़ी पर पहुंचे।

'भइया, प्याज कैसे दिए?'

'बीस रुपए का एक।'

हम तो जैसे आसमान से गिरे।

'और ये आलू, टिंडे, लौकी, टमाटर?'

'आलू 15 रुपए का एक, टिंडे 14 के दो, टमाटर 10 का 100 ग्राम और लौकी 80 रुपए प्रति नग।'

उसने एक झटके में हमें सारी जानकारी दे दी। अब हमें समझ आ गया था कि गर्म बाजार में कौन-सी आग लगी है।

' कितना तोल दूं?' रेहड़ी वाले ने हमें किंकर्त्तव्यविमूढ़ देखा तो खुद ही पूछा।

हम बिना कोई जवाब दिए और आगे बढ़ गए जहां एक फल वाला आवाज लगा-लगाकर ग्राहकों को बुला रहा था।

'बाबूजी, हमारी रेहड़ी वाला ठीक होगा। बाकी सबने तो लूट मचा रखी है। इस बार रेट पूछकर हम अपनी मानसिक शांति भंग नहीं करना चाहते थे अतः तुरंत आदेश दिया, 'दो किलो।'

रेहड़ी वाला हमें आंखें फाड़कर देखने लगा।

'ऐसे कैसे देख रहे हो भइया?. . . तोलो. . .आम तोलो. . .।

उसने हमें फिर ऐसे घूरा जैसे हम पगला गए हों या किसी अजायबघर से आए हों।

'ये लो साहब. . .आपने अच्छी बोहनी करवा दी। घर में जरूर कोई फंक्शन होगा। अब बाकी आधा किलो आम और बचे हैं। भगवान की दया से आपके जैसे ग्राहक रोज मिल जाएं तो. . .'

'तो. . .तो क्या. . .?'

'कुछ नहीं बाबूजी. . .भगवान बड़ा दयालु है।'

हमें उसकी बात का अर्थ तो समझ नहीं आया।

हमें उसकी बात का अर्थ तो समझ नहीं आया। बहरहाल हमने पूछा, 'कितने पैसे हुए?'

'420 रुपए साहब।'

'क्या. . .?' हमें जैसे गश-सा आ गया।

'होश में तो हो?'

'आप 418 रुपए दे देना। सुबह-सुबह बोहनी का टाइम है। दो रुपए हम छोड़े देते हैं।'

'साला, चार सौ बीस।' हमने मन ही मन उसे कोसा और आमों से भरा थैला उसकी रेहड़ी पर उलटाकर बुड़बुड़ाते हुए आगे बढ़ गए। रेहड़ी वाले की लानतें-मलानतें दूर तक हमारे कानों में लट्ठ मारती रहीं। हमारी गर्दन शर्म से झुकी जा रही थी।

हम लगभग दौड़ते हुए राशन की एक बड़ी-सी दुकान जिस पर 'उचित दर का राशन मॉल' का बड़ा-सा बोर्ड लगा था, में घुस गए। इतनी बड़ी दुकान में सिर्फ एक ग्राहक था और पूरी की पूरी दुकान खाली पड़ी थी। नौकर उस इकलौते ग्राहक को सामान तोल रहा था और दुकानदार टेलीविजन पर समाचार देख रहा था। बेचारा और कर भी क्या सकता था।

हमने उसकी ओर कोई खास तवज्जो नहीं दी और 'शो-केस' में रखे खाद्य-पदार्थों को निहारने लगे। छोटे-छोटे खानों में हर वस्तु का थोड़ा-थोड़ा माल रखा हुआ था। हमने मन ही मन दुकानदार की तारीफ की। रहा नहीं गया तो कह ही दिया, 'आपका प्रबंधन बहुत बढ़िया है। ऐसा तो हमने पहली बार ही देखा है कि आटा, दाल, चावल, चीनी, घी, तेल आदि को नमूने के तौर पर 'शो-केस' में सजाकर रखा गया हो। ग्राहक को इससे बहुत सुविधा रहती है।'

दुकानदार ने हमारे चेहरे की ओर ऐसे देखा कि हम यहां भी नर्वस हो गए।

'लगता है घर की सारी शॉपिंग आपकी धर्मपत्नी करती हैं। ये जो 'शो-केस' में सामान रखा हुआ है ना, ये नमूने के लिए नहीं है। बोलिए क्या-क्या तुलवा दूं?'

'तभी टेलीविजन पर समाचार वाचक की आवाज सुनाई पड़ी, 'महंगाई की खबर सुनकर चार रिक्शेवालों की मौत। दो मजदूरों ने महंगाई के बोझ तले दम तोड़ा. . .। तीन कामवालियां घायल जिनकी हालत अभी भी गंभीर बनी हुई है। कद्दू के नीचे दबी एक कामवाली को बड़ी मुश्किल से क्रेन की सहायता से बाहर निकाला गया। बाकी दोनों कामवालियां आलू और प्याज के नचे दब गई थीं जिन्हें उनके दयालु मालिकों ने बड़ी हिम्मत से बचाया। खबर मिलने तक उनकी

सांसें रुक-रुककर चल रही थीं।'

खबर सुनकर हमारी सांस भी रुकने लगी। शब्दों की संवेदना हमारे कानों से उतरकर दिल में उतर रही थी। प्रतिदिन कमाकर खाने वालों की हालत वाकई दयनीय होती है। काम मिला तो ठीक नहीं तो फाके। ऐसे लोग बेचारे गर्मी में लू और सर्दी में ठंड से ही मर जाते हैं।

अनायास हमारी नजरें टी.वी. स्क्रीन तक गईं। देखा एक मजूर चावल और दूसरा गेहूं के दाने के नीचे अभी भी दबा पड़ा था। अब हमारा दुकान में खड़ा रहना भी मुश्किल हो गया। हमने फटाफट राशन की सूची दुकानदार को थमाई और कहा कि राशन घर भिजवा दे। पैसे भी वहीं दे देंगे। दुकानदार ने हमें एक 'स्क्रैच-कार्ड' पकड़ा दिया और बताया कि 'लक्की कूपन स्कीम' चालू की है जो भी उपहार निकले दुकान पर आकर ले जाना। हमने सोचा इतने बड़े 'मॉल' के मालिक ही ऐसी आकर्षक योजनाएं चलाते हैं, शायद वॉशिंग मशीन या फ्रिज ही निकल आए।

सब्जी के बिना भी गुजारा मुश्किल ही था। सोचा थोड़ी-बहुत सब्जी और मुन्ना के लिए एक-आध फल भी खरीदते चलें। हम नजरें बचाकर दोबारा गर्म बाजार पहुंचे। आम और सब्जी वाले ने हमें देखकर मुंह दूसरी तरफ फेर दिया। हम भी उनसे छुपते-छुपाते दूर कोने में खड़ी रेहड़ियों के पास पहुंचे। मोलभाव करने के पश्चात हमने दस भिंडियां, दो प्याज, दो आलू और दो सौ ग्राम टमाटर खरीदे। लौकी खरीदने की हमारी हिम्मत नहीं हुई। मुन्ना के लिए एक आम खरीदा जो काफी झकझक के बाद रेहड़ी वाले ने हमें पचास रुपए में दिया।

फल और सब्जी खरीदने के बाद हम थैला और मुंह दोनों लटकाए घर पहुंचे तो नौकर राशन लेकर खड़ा था। बिल देखकर हमें नानी याद आ गई। भुगतान के लिए चालीस रुपए कम पड़ गए। कहां से लाएं? हम चाहते तो नहीं थे लेकिन मुन्ना की गुल्लक तोड़ने के अलावा इस समय हमारे पास कोई और चारा नहीं था। अब केवल एक पांच का सिक्का ही गुल्लक में शेष रह गया था।

तभी हमें 'स्क्रैच कार्ड' का ध्यान आया। हमने कमीज की जेब टटोली और कार्ड श्रीमती जी के हवाले कर कहा कि भई, तुम तो घर की लक्ष्मी हो, अन्नपूर्णा हो, तुम्हीं स्क्रैच करो शायद तुम्हारे भाग्य से कोई बढ़िया आइटम निकल आए। श्रीमती जी ने खुशी-खुशी कार्ड स्क्रैच किया। लिखा था, 'मॉल पर पधारने के लिए धन्यवाद। कृपया इसी तरह मनोबल बनाए रखें।' यानि ऊंची दुकान, फीका पकवान। कार्ड पढ़कर श्रीमती जी ने हमें ऐसे देखा जैसे हम बहुत बड़े बेवकूफ हों। पर खुदा की कसम! पता नहीं क्यों, हमें मॉल के मालिक पर बिल्कुल भी गुस्सा नहीं आया।

खैर! श्रीमती जी ने पुराने डिब्बों को टांड पर रख सारा राशन छोटी-छोटी डिब्बियों, दवा की खाली शीशियों और नमकदानी में भरा और कहने लगीं कि मुन्ना को खांसी और बुखार है। ए.टी.एम. से कुछ रुपए निकाल लाओ। मुन्ना के लिए कैमिस्ट से दवाई लेते आएंगे। कम से कम डॉक्टर की फीस के पैसे तो बचेंगे।

मुन्ना को बुखार की बात सुनकर में पसीने छूटने लगे। हमने उसे गोद में उठाया और दुलारने लगे। मुन्ना के बुखार की तपन से हमारा तन और मन दोनों जल रहे थे। धन कितना जलेगा इसकी खबर अभी हमें नहीं हुई थी। उसे गोद में लिए-लिए पैदल ही ए.टी.एम. तक पहुंचे। इतना भी ध्यान नहीं रहा कि साइकिल पर ही बिठा लें। ऐसी बात नहीं है कि हमारे पास स्कूटर नहीं है। है भई। आखिर सरकार स्कूटर-लोन किसलिए देती है। वो बात अलग है कि अभी तक किश्तें नहीं उतरी हैं। न्यूनतम दर पर जो बनवाई हैं। समय तो लगेगा। लेकिन पेट्रोल कहां से लाएं? अपनी ही टंकी पिचक रही है तो स्कूटर की टंकी कहां से भरवाएं? हमें सबसे ज्यादा गुस्सा इस पापी पेट पर ही आता है कि ऐ खुदा! तू अगर पेट नहीं लगाता तो तेरा क्या बिगड़ जाता।

खैर! ए.टी.एम. पर बैलेंस चैक किया तो खाते में सिर्फ सौ रुपए ही शेष थे। अब या तो मुन्ना की खांसी की दवा ले लो या बुखार की। हमने सोचा कि खांसी की दवा में अल्कोहल की मात्रा काफी रहती है। दवा पीकर मुन्ना चैन की नींद तो सो रहेगा। यही सोचकर हम खांसी की दवा खरीदकर घर आ गए और सोचने लगे कि किस-किस खर्च में और कटौती की जाए कि मुन्ना की बुखार की दवा भी आ जाए। दवा पीकर मुन्ना चैन से सो गया। उसके इस तरह काफी देर तक चैन से सोए रहने से हम घबरा गए और चिल्लाने लगे, 'मुन्ना. . .मुन्ना . . .मुन्ना. . .।'

'क्या हुआ मुन्ना के बापू. . .बेमौसम क्यों चिल्लाते हो?' श्रीमती जी ने हमें झिंझोड़ा तो हम चौंककर उठ बैठे।

'मुन्ना कहां है?' हमारे हलक से बमुश्किल आवाज निकली।

'मुन्ना तो मजे में सो रहा है। आज स्कूल की छुट्टी जो है।'

हमारी जान में जान आई। शुक्र है हम स्वप्न-लोक में विचरण कर रहे थे क्योंकि सुपर बाजार की महंगाई से निपटने के लिए ही हमें कितने पापड़ बेलने पड़ रहे थे ऊपर से ये गर्म बाजार की महंगाई. . .? उफ! तौबा-तौबा! उसने तो हमें भिंडी, लौकी, टमाटर, प्याज और राशन के ऐसे-ऐसे हथौड़े मारे कि हम अभी तक सदमे में हैं।

हमने महसूस किया कि हम शक्तिहीन होते जा रहे हैं। इस लोक की महंगाई स्वप्नलोक में भी हमारा पीछा नहीं छोड़ रही थी। हम बेहद दहशत में थे क्योंकि हमने सारे उपाय करके तो देख ही लिए थे। अब इसके अलावा हम और कर भी क्या सकते थे कि सिर पकड़कर सिर्फ और सिर्फ यह सोचें कि इस देश के डॉक्टरों ने ऐसी कौन-सी तकनीक या दवा ईजाद की है जो महंगाई के साथ-साथ उसके खौफ से भी निजात दिला सके।

1192-बी, सै

**. . . पृष्ठ 61 का शेष**

जुम्लों का खुलकर इस्तेमाल किया। सर्वजन को उनके अधिकारों की रक्षा के प्रति आश्वस्त कर रथयात्रा का शुभारंभ किया। नेता पिल्लू सिंह ने अपने दल में कुछ गधों को भी शामिल करने की मंच से घोषणा की। उसमें से एक वयोवृद्ध को राजधानी विजय रथ पर सम्मानित स्थान भी दिया और उसकी मेहनत, ईमानदारी और वफादारी की चर्चा करते-करते उसने दल-बल सहित राजधानी की ओर कूंच किया। और, शहर! . . .अतीत और वर्तमान को भुलाकर भविष्य की चिंता में डूब गया।

एच.आई.जी.-10
अभय खंड-प्रथम, इंदिरापुरम्
गाजियाबाद-201012 (उ.प्र.)

डॉ. अरुणा सीतेश

# 'वह'- विरोधी बिल

**अरुणा सीतेश का नाम हिंदी-साहित्य जगत का एक चर्चित नाम है। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से स्वस्थ सामाजिक मूल्यों की स्थापना की है। बहुत कम लोगों को पता होगा कि उन्होंने गंभीर व्यंग्य रचनाएं भी लिखी हैं। 'व्यंग्य यात्रा' को उनके पति, प्रख्यात साहित्यकार सीतेश आलोक के माध्यम से अरुणा सीतेश जी की कुछ व्यंग्य रचनाएं प्राप्त हुई हैं। उनमें से एक रचना 'व्यंग्य यात्रा' के पाठकों के लिए प्रस्तुत है। 'व्यंग्य यात्रा' सीतेश आलोक की हृदय से आभारी है।**

**– संपादक**

सिनेमा हॉल से निकलते समय उत्तेजना से मीरा पप्पू थरथरा रही थी। 'इतना बड़ा धोखा रोज़ हम सब के साथ होता है और हमें अब तक पता ही नहीं चला। उनको अपना ही नहीं, सारी नारी जाति का ही नहीं, सारे देश का भविष्य अंधकारमय दिखाई दे रहा था। आज तो पति से दो टूक फैसला करना ही होगा, और अधिक दिन वे आंखों में धूल नहीं झोंक सकेंगे। नहीं, शायद इससे काम न चले। वे महिला संघ की प्रेसीडेंट भी तो है। महिला संघ के द्वारा बात उठाना अधिक ठीक होगा। सब सदस्यों को यह पिक्चर दिखाना भी जरूरी है। धोखा अकेले उन्हीं के साथ तो नहीं हो रहा है, इस धोखे की शिकार तो सभी महिलाएं हैं। 'वह' कितना बड़ा खतरा है–भला कौन समझ पाया होगा? महिलाएं तो ठहरीं भोली भाली–भगवान ने उनका पल्ला बांध दिया छंटे हुए घाघों से और तुर्रा यह कि वे ही उल्टा कहते हैं कि स्त्री का चरित्र एवं पुरुष के भाग्य को समझ पाना असंभव है। जो भी हो, इस राज का पर्दाफ़ाश तो करना ही होगा।

घर पहुंचते ही उन्होंने दफ्तर में फोन किया। पति की सेक्रेट्री की आवाज़ आई–'हलो'। उनके तन बदन में आग लग गई–'तो ये चुड़ैल अब भी वहीं है। सात बज चुके हैं। अब देखूं ये क्या बहाना बनाते हैं।'

बच्चे अगर दो दो थप्पड़ों में ही सहम कर पढ़ने न बैठ गए होते तो पता नहीं क्या होगा। नौकर को भी वो डांट बताई कि वह बाहर बीड़ी पीने चला गया। पति के आने के समय तक वे बेचैनी से जल बिन मीन की तरह छटपटाती हुई इधर उधर घूमती रहीं।

पति आए तो उन्होंने ऊपर से नीचे तक जासूसाना दृष्टि से देखा। क्षण भर को उन्हें अफसोस हुआ कि विशेष जांच के लिए उनके हाथ में दूरबीन क्यों न हुई।

'कहां रहे?' उन्होंने सच उगलवाने की गरज़ से पति को ललकारा।

'बहुत काम है आजकल', मिस्टर पप्पू ने सोफ़े पर निढाल लेटते हुए कहा।

उन्होंने आंख सिकोड़ते हुए गर्दन हिला कर मन ही मन सोचा–'अच्छा बच्चू! सारे बहाने धरे रह जायेंगे। न उस चुड़ैल को झोटा पकड़ के निकलवाया तो मेरा नाम भी मीरा नहीं।'

कोट लेकर टांगने के बहाने लंबी लंबी सांसें लेकर हर तरफ़ सूंघ डाला। खुशबू तो नहीं आई लेकिन. . .

आंखें चौड़ी करके कोट का मुआयना किया. . .कहीं कोई बाल भी नहीं दिखा लेकिन. . .।

छंटे हुए खिलाड़ी कोई सुराग नहीं छोड़ते। कोई बात नहीं। मैंने भी नाकों चने न चबवा दिए तो मेरा नाम नहीं।. . .

महिला संघ के हॉल में साढ़े तीन बजे से ही चहल-पहल शुरू हो गई। सब की ज़बान पर एक ही सवाल–आख़िर हुआ क्या जो आपातकालीन मीटिंग बुलानी पड़ी। आज साड़ियों और जेवरों पर भी नज़र नहीं टिकी। मीरा पप्पू का सुबह सुबह फ़ोन आया तभी से दिमाग परेशान है। अटकलों पर अटकलें।

'आप लोगों ने 'पति पत्नी और वो' देखी है? मीटिंग शुरू होते ही मीरा पप्पू ने खड़े होकर पूछा।

ऐसा अटपटा सवाल! समझ नहीं आया हंसे या रोएं। रेनु पचौरी ने कनपटी पर उंगली छुआ कर पुष्पा हप्पू को इशारा किया कि मामला यहां गड़बड़ लगता है।

'नहीं देखी हो तो तुरंत देख डालिए. . .मैं जानती हूं आप लोग अंग्रेजी फ़िल्में ही देखती हैं। मैंने स्वयं हिंदी फ़िल्में न देखने की क़सम खाई थी। पर कल. . .कल जो कुछ हुआ, जो कुछ मैंने देखा उसके बाद . . .उसके बाद तो समझिए मैं, मैं नहीं रही . . .' मीरा छत में पता नहीं क्या खोजे जा रही थी।

अब तो किसी को भी उनका पेंच ढीला होने में संदेह नहीं रहा।

'हम सभी के पति बड़े-बड़े ओहदों पर हैं। आए दिन लंबे लंबे दौरों पर जाते हैं। रोज़ रात देर तक दफ़्तर में काम करते हैं और अधिकतर छुट्टियां भी दफ़्तर में ही बिताते हैं। है कि नहीं?'

सब के सिर सहमति में आप से आप हिल गए।

'मैं भी यही समझती रही. . .पर कल मुझे पता चला असलियत इससे बिल्कुल उल्टी है. . .हम सब आज तक धोखा खाती रहीं, बेवकूफ बनती रहीं। हमारी सिधाई का हमारे पतियों ने ख़ूब फ़ायदा उठाया, पर हम अब इस धोखाधड़ी को एक पल भी और बर्दाश्त नहीं करेंगे। महिला संघ. . .' मीरा पप्पू ने मुट्ठी बांध कर हाथ ऊपर उठाया

पर उनकी श्रोताओं को तो अभी तक बात का सिर पैर ही समझ नहीं आया था। कुछेक क्षण रुक कर नारा उन्होंने स्वयं ही पूरा किया–'जिंदाबाद'। फिर दुहराया 'महिला संघ–जिंदाबाद, नारी एकता'।

'ज़िंदाबाद. . .ज़िंदाबाद'। अचानक हॉल गूंज उठा। इस नारे तक समस्या न समझ पाने के कारण अब तक चुप बैठी सदस्याएं भी चुप नहीं रह पायीं। ठीक है, मसला नहीं पता तो नहीं पता। बाद में समझ लेंगे। पर इतने अहम् नारे पर चुप कैसे रहा जाए? सब ने अपनी मुट्ठियां बांध कर हवा में लहरा दीं और गले फाड़ दिए।

'प्यारी बहनों, आप नहीं जानतीं कि काम का बहाना बना कर ये पति लोग क्या गुलछर्रे उड़ाते हैं। कल शाम अलका की आंटी मुझे खींच कर न ले गई होती ये पिक्चर दिखाने तो मैं भी कहां जान पाती? पहली बार मुझे पता चला कि सेक्रेट्रीयों/स्टेनो से इन लोगों की कैसी सांठ–गांठ रहती है', मीरा पप्पू ने दसवीं बार रुमाल से मुंह पोंछते हुए कहा।

'हाय दैया' के से अंदाज़ में कई एक महिलाएं 'ओह मॉय गॉड' कह कर निढाल हो गईं।

कुछ का बौखलाहट के मारे बुरा हाल था– 'तो ये राज़ है मिस्टर के आधी–आधी रात को घर पहुंचने का। बहाना बिज़नेस डील का. . .'

'दफ़्तर में काम करने के लिए आठ घंटे तय किए गए हैं। सरकार क्या पागल है जो आठ घंटे तय करके बारह–चौदह घंटे का काम इन लोगों को सौंप देगी?'

अनिता सूद गहरे पश्चाताप से भर उठीं। वह आज तक बेकार ही सरकार को गालियां देती रही कि अफ़सरों को बीबी–बच्चों की तरफ़ ध्यान देने का समय ही नहीं मिलता। मिस्टर सूद कहते कि दिन भर तो पब्लिक डीलिंग में निकल जाता है. . . फ़ाइलें कब निपटाएं? भोली–भाली वह कैसे जान पाती कि आज तक बेवकूफ़ों के स्वर्ग में रहती आयी है?

'ग़ौर कीजिए कि नियत घंटों के बाद दफ़्तरों में कौन रुकता है। बाबू लोग कैसे समय से जाकर समय से लौट आते हैं? वे काम नहीं करते क्या? सुनने में तो यहां तक आता है कि काम निकलवाना हो तो बाबू के पास जाओ। फ़ाइल आगे बढ़ाएगा तो बाबू। साहब के दस्तख़त कराएगा तो बाबू। फिर बाबू लोग कैसे पांच बजते ही दफ़्तर छोड़ देते हैं? बात साफ है–नियत समय के बाद स्टेनो/सेक्रेटी वाले ही दफ़्तर में रुकते हैं। बाकी भला क्यों रुकेंगे? किसके लिए रुकेंगे?' मीरा पप्पू के रुकते ही हॉल' शेम शेम की आवाजों से गूंज उठा।

'मैंने असलियत आपके सामने रख दी। अब आप सब मिल कर तय करें कि हमें क्या करना है, हमें क्या करना चाहिए जिससे. . .' तालियों की गड़गड़ाहट में उनका अंतिम वाक्य डूब गया।

मामला गंभीर था। गंभीरता से ही उस पर विचार विमर्श हुआ। बहुत देर तक होता रहा। हैरानी तो इस बात की थी कि महिला प्रधानमंत्री के होते हुए भी देश की स्त्रियों के साथ ऐसा अन्याय होता रहा और सरकारी तंत्र के पुर्जे ही इसे बढ़ावा देते रहे। पर इस बात की खुशी भी थी कि प्रधानमंत्री के कानों में अगर यह बात एक बार डाल दी जाए तो अफ़सरशाही की मनमानी एक भी दिन नहीं चल पाएगी।

गीता गप्पू का सुझाव था कि बहस व्यापक स्तर पर सरकारी और ग़ैर सरकारी सभी क्षेत्रों को मद्देनज़र रख कर की जाए।

यह भी सवाल उठाया गया कि सेक्रेट्री या स्टेनो के लिए महिलाओं की ही नियुक्ति क्यों की जाती है, क्यों की जानी चाहिए? क्या पुरुष इनके सब दायित्वों को सफलतापूर्वक नहीं निभा सकते? इसी से पतियों के इरादों का खोट पता चल जाता है।

तुर्रा यह कि इन पदों के लिए महिलाओं का सुंदर, चुस्त, कमसिन होना भी आवश्यक समझा जाता है। क्या दक्षता का इन सब चीजों से कोई संबंध है? इससे भी पतियों के इरादे आयने की तरह स्पष्ट हो जाते हैं। है कि नहीं?

उस पर पतियों का रात को देर देर से आना. . .ऐसी हालत में पत्नियों का परेशान हो उठना स्वाभाविक नहीं क्या?

रमा गैंज़ ने कहा कि महिला सेक्रेट्री का चलन अंग्रेजों के ज़माने में ही हुआ होगा। और अंग्रेज़ों ने कुछ सोच समझ कर ही ऐसा किया होगा। अत: हमें सोच विचार करके ही इस मुद्दे पर निर्णय लेना चाहिए। जल्दबाज़ी में नहीं। नीता सिंह का कहना था कि पुरुष सेक्रेट्री की मांग करना अपनी बहनों के रोज़गार के एक बहुत व्यापक आयाम को बंद करना होगा। यह स्त्री जाति के साथ गद्दारी होगी।

सुझाव पर सुझाव। कुछ माने गए। कुछ रद्द हो गए। धैर्य एवं अपनत्व का अद्भुत समां बंधा था। मजाल थी जो किसी की कोई बात किसी के दिल में ख़ंजर सी उतर जाए।

हेमा भार्गव को एक ही शिकायत रही–इतने अहम् मसले पर विचार करना था जो प्रेस के किसी प्रतिनिधि को अवश्य बुलाना था। रात भर में ही देश के कोने कोने में मर्दों का यह कच्चा चिट्ठा पहुंच जाता। कल का सवेरा नारी जाति के लिए एक नया सवेरा होता। मीरा पप्पू ने स्वीकार किया कि बौखलाहट में वे कुछ भी नहीं सोच पायीं। भविष्य के लिए इस बात को नोट कर लिया गया।

तय हुआ कि मर्द लोग चाहें तो महिला सेक्रेट्री ही रख लें लेकिन कुछ शर्तें होंगी जिनका अक्षरश: पालन करना अनिवार्य होगा। सर्वसम्मति से एक दस–सूत्रीय ज्ञापन भी तैयार किया गया जो इस प्रकार है–

1. पैंतीस वर्ष से कम आयु की महिला की किसी भी हालत में नियुक्ति न हो।
2. महिला कम से कम दो बच्चों की मां हो।
3. उसका रंग काला अथवा दबता गेहुंआ हो। गोरी महिलाओं से आवेदन पत्र मंगाए ही न जाएं।
4. दफ़्तर में स्कर्ट पहनने की सख्त मनाही हो।
5. ऊंचे गले और पूरी बाहों के ब्लाउज पहनना अनिवार्य हो। नाभि दर्शाना साड़ी बांधने पर पहली बार मौखिक हिदायत, दूसरी बार लिखित हिदायत और उसके बाद कड़ा फ़ाइन हो।
6. ओठों पर लिपस्टिक और बालों में वेपी पर निषेध हो।
7. कानी अथवा/शीतला माता के प्रकोप से ग्रस्त महिलाओं के लिए बीस प्रतिशत स्थान आरक्षित हों।

**शेष पृष्ठ 69 पर. . .**

शम्भूनाथ सिंह

# बाजार में निकला हूं

इस उथल-पुथल से लबरेज दुनियां में कब किसकी बधिया बैठ जाए, कब कौन स्पुतनिक बन ऊंची उड़ान भर ले जाए, कब कौन पुराने ट्रैक पर लौट जाए, कब कौन नये पैक में अवतरित हो जाए कहा ज़रा कठिन है। अब देखिए, इन दिनों बाजारों का मिजाज का नये ढंग और निराले अंदाज में है। अर्थशास्त्र के नियम से बंधा तो कत्तई नहीं। मांग और आपूर्ति के आधार पर भी नहीं। बस यूं समझ लीजिए कि बिल्कुल एक नये आकर्षक रूप में। एकदम बदला बदला रंग ढंग। अब आप को ढूंढे से भी वो बाजार नहीं मिलेगा, जहां सौदा-सुलुफ निबटा कर लोग पत्ता के दोना में कचौड़ी और जलेबी का आनंद लेते थे। ऐसा आनंद जैसे 'आठहु सिधी नवों निधी' को प्राप्त कर गये हो। अब वो शर्मा जी भी नहीं रहे, जो परले दर्जे के बाजारू किस्म के जीव हुआ करते थे। चाहे सांस लेना भुला जाएं, बाजार जाना नहीं भूलते थे। वो भी खरीददारी करने कम, मोल भाव करने ज्यादा, मगर जाते जरूर थे। अगर कभी नागा मारना ही पड़ा, तो निम्न रक्त-चाप के मरीज की तरह अकबकाने लगते थे। तब लोग उन्हें बजाए चीनी चटाने के, टांग टुंग कर बाजार पहुंचा देते थे, और बाजार पहुंचते ही शर्मा जी गुल्ल-फुल्ल। बेचारे लौट कर रेडियो के समाचार वाचक की तर्ज पर, एक सांस में अरहर मूंग से लेकर धनिया मिर्ची तक का बाजार भाव बांच देते। मगर अब वो बात कहां? चट्टी से लेकर पेठिया तक, मंडी से लेकर हाट तक सब एक-एक कर वीर गति को प्राप्त होते जा रहे हैं, और अब जो इनके स्थान पर नयी पौध अवतरित हो रही है, उसका नाम है, वॉल स्ट्रीट, दलाल स्ट्रीट, स्टॉक एक्सचेंज और 'जबड़ा' बाजार। जिसे चलताऊ भाषा में शापिंग मॉल कहा जाता है। जहां अरबों-खरबों दाएं से बाएं, और बाएं से दाएं ऐसे खिसक जाते हैं, कि न खरीदने वाले के माथे पर शिकन न बेचने वाले के बदन में खरोंच। आप चाहे ताली पीटियो या माथा।

सो हम भी निकल लिए एक दिन नये बाजार की तरफ। बाजार सचमुच नयनाभिराम, दर्शनीय, मन खैंचू। सलमा सितारों से चमचमो होर्डिंग में लिखा था 'विश्व-बाजार में आपका स्वागत है।' मेरा माथा ठनका, यह विश्व बाजार क्या बला है? बाजार तो बाजार होता है, जहां लोग अपने जरूरत सामान खरीदते-बेचते हैं। इसी उधेड़ बुन में आगे बढ़ा। बाजार की तो सचमुच रंगत ही बदली हुई थी। एक से एक बढ़ कर चमचमाते हुए साईन बोर्ड, आंखें चुंधियाती, लाल, पीली, हरी, नीली बत्तियां। शो केश ऐसा, कि छूने को जी ललचाए, माल ऐसा कि बिन खरीदे रहा न जाए। गहमा-गहमी भाग-दौड़, आपा-धापी, शोरगुल, क्रेता से विक्रेता तक बदहवास। हां, मैले कुचैले, चिथड़े वाले, इस बाजार से बाहर धकियाए जा रहे थे। आखिर बाजार का बाजारूपन भी तो बरकरार रखना है। सो 'छूर ही रहो ऐ! भुक्खड़ों! की तर्ज पर उन्हें गरदानियां दिया गया था। एक क्षण तो पछतावा होने लगा, नाहक इतने दिनों तक विमुख रहा बाजार से। फिर सिर झटक कर शामिल हो लिया रेला में। बाजार सचमुच विश्व बाजार का आभास दे रहा था। तमाम तरह के देसी-विदेशी मुखौटे उड़ते फिर रहे थे बाजार में। कमतर कपड़ों में आधुनिकाएं मटक रही थीं, छोड़े-छिछोड़े उनके पीछे लट्टू भये जा रहे थे। यहां सब कुछ बेचा और खरीदा जा रहा था। 'एक ही छत के नीचे सब कुछ' की तर्ज पर नहीं, बल्कि अलग-अलग स्टॉल लगा कर।

पहला स्टॉल हथियारों का था। एक से बढ़कर एक घातक हथियार, बमवर्षक, युद्धक विमान एवं जानलेवा उपकरण, बमों की विशेष वेराइटी, अणु से लेकर परमाणु तक, हाइड्रोजन से लेकर नेपाम तक। खरीद लेने को जी मचल जाए। कोई भी आइटम लेने पर, एक जहाज विदेशी कचरा मुफ्त। जी, हां, विदेशी कचरा भी तो मेरे लिए नेमत है। पैसे की चिंता आप न करें। बगल में विदेशी बैंक है न, चमड़ी उधेड़ लेने की शर्त पर, मनचाहा कर्ज देने को तैयार। रोटी के लिए भले कर्ज न मिले, बम के लिए अवश्य मिलेगा। दलाल कमीशन खोर, लोगों को पटा पटा कर दुकान के अंदर भेज रहे थे।

एक स्टाल पर नंगई, गुंडई, दादागिरी धौंस पट्टी बेची जा रही थी। बाहुबली टाइप के ग्राहकों का जमावड़ा था यहां पर। शरीफ ग्राहक तो पास फटकने की हिम्मत भी नहीं जुटा पाते थे। अगर नमूने के तौर पर दो-चार धौल-धप्पा फ्री में मिल गया तो लेने के देने पड़ जाएंगे।

अगले स्टॉक पर 'ग्रेट सेल' लगा हुआ है, क्रिकेटर बिक रहे हैं, फिल्मी हीरो-हिरोइनें बिक रही हैं। धन-पति थैले का मुंह खोले बैठे हैं। ऊंचा से ऊंचा दाम लगा लो, चल गया तो बेड़ा पार लगा देना। हीरोइनें कपड़े के हिसाब से बिक रही हैं। जितना कम कपड़ा, उतना ज्यादा दाम। नंगी तो 'हॉट-केक' की तरह बिक रही हैं।

आगे बढ़ो! टेंट में माल है तो, यहां आदमी बिक रहा है। चाहे साबूत खरीद लो, या टुकड़े में, आंख, नाक, कान, गुर्दा, फेफड़ा, दिमाग, सब बिक रहा है। यह बात अलग है कि साबूत आदमी का दाम बहुत कम है। सिर्फ रोटी प्याज पर-फिर भी ग्राहक नहीं मिल पा रहा है। थक हार कर आदमी घर लौट जाता है। कल तक बिकने की आस लिए।

एक समझदार व्यक्ति ने बीच बाजार में ही कोचिंग इंस्टीट्यूट खोल रखा है। बाकायदा अपहरण, फिरौती, जाल-साजी, तस्करी, लूट-पाट, राहजनी, हत्या, बलात्कार आदि में डिग्री, डिप्लोमा स्तर का प्रशिक्षण

देकर पैसा बटोर रहा है। उधर बेकार लोग यहां से पढ़ कर लाभान्वित हो रहे हैं।

अगली दुकान सांप्रदायिकता की है। साथ में दंगा फैलाने की किताब मुफ्त। चंदन टीका भगवाधारी से लेकर लंबा कुर्ता, छोटे पाजामा वाले ग्राहकों का जमघट लगा है। पाखंड और अंधविश्वास चाहिए तो वो भी उपलब्ध है। उपहार के तौर पर गंडा, ताबीज रियायती दर पर।

हां! यह स्टाल खूब जगमगा रहा है, जवान लड़के-लड़कियों से लेकर जईफ बुजुर्ग भी यहां मक्खियों की तरह भिनभिना रहे हैं। यहां पर निर्लज्जता बेची जा रही है। थोक खरीद-कीजिए, नंगापन की एक सी. डी. ईनाम पाइए।

बाजू वाले स्टाल पर जातिवाद, प्रदेशवाद, क्षेत्रीयता और अलगाव वाद की सेल लगा रखी है। 'बेहया के लत्तर' की तरह किसी भी जमीन पर भरपूर फसल की गारंटी दी जा रही है। पहले कुछ खास प्रदेशों में ही इसकी उपज होती थी। अब सारा देश इसकी पैदावार में लग गया है। बल्कि देश की मुख्य उपज यही हो गयी है।

कुछ लोग पक्का स्टाल न मिलने की सूरत में फुटपाथ पर ही जम गये हैं। छोटे-छोटे पैकेटों में आंसू, हंसी, ममता, खुशी, प्रेम, करुणा, अपनत्व, भाईचारा, मेल-मिलाप, सौहार्द, दया, मानवता, स्नेह, इज्जत, अस्मत, लज्जा, बेच कर अच्छी कमाई कर रहे हैं। क्योंकि बगल वाले फुटपाथी से उनका कंपटीशन है। वो लगभग मुफ्त में घृणा, द्वेष, ईर्ष्या, दुश्मनी, वैमनस्य, नफरत, गम, क्रूरता, क्रोध, लालसा इत्यादि बेच रहा है। दाम इतना कम है कि लोग डब्बा भर-भर कर खरीद रहे हैं। या यूं कहिए लूट रहे हैं।

वाह रे! बाजार-सॉरी, विश्व बाजार। खरीददारों के लिस्ट चुक जाएं, सामान की कमी नहीं। आप भले थक जाएं, माल हमेशा तरोताजा। आखिर विश्व बाजार जो ठहरा। थक कर मैं भी लौटने को हुआ। पर एक कर्मकांड बाकी था।

गेट के बगल में एक बड़ा सा शामियाना लगा है। बीचो-बीच सजा धजा कर देश का नक्शा रखा हुआ था। उद्घोषक गला फाड़-फाड़ कर चिल्ला रहा था, 'पुड़िया फरोश' की अंदाज में। अभी अभी, जल्दी ही, इसकी नीलामी होने वाली है। आईए, जल्दी आईए! ऊंची से ऊंची बोली लगा कर इसे खरीद ले जाइए। इतना सुंदर, सस्ता और टिकाऊ माल न अब तक मिला था, न मिलेगा। माल के स्वयंभू मालिक बन बैठे धोती, कुर्ता, टोपी, पाजामा में, मूछों पर ताव दे रहे थे। बीच बीच में गेट के तरफ भी आतुर निगाहें दौड़ा लेते। बोली लगाने वाले गेट के बाहर सूट, बूट, टाई, हैट में चहल कदमी कर रहे थे। बीच में बाधा बने कुछ लोग, दोनों के मंसूबों पर पानी फेर रहे थे। नारे बाजी कर रहे थे। 'चाहे जितना दाम लगालो, देश हमारा नहीं बिकेगा।' रस्सा कशी जारी थी। पर कब तक! जब देश के तथाकथित मालिक ही नीलामी पर आमादा हैं। तो बकरे की अम्मा कब तक जान की खैर मांगेगी। (बहरहाल, प्रति रोधकों के बुलंद हौसले को देख कर आस की एक लौ तो जरूर टिमटिमा रही है) रब्बा खैर!

मामला तनातनी की हद तक पहुंचते देख वहां से खिसक लेने में ही अपनी भलाई समझी। मगर इतना आसान थोड़े है, आज के बाजार से सुरक्षित बच निकलना। ठोकर लगना ही था। सो गिरे धड़ाम से। आंख खुल गयी। देखा, चारपाई से मेरा संबंध विच्छेद हो चुका था। मैं धूल धूसरित हो छत की ओर एकटक देखे जा रहा था।

**क्वा. नं.-19/2/1**
**गोविन्दपुर, हाउसिंग कॉलोनी**
**जमशेदपुर-831015**

. . . **पृष्ठ 67 का शेष**

8. सेक्रेट्री की नियुक्ति से संबद्ध पूरी कार्यवाही में आद्योपरांत कम से कम दो वरिष्ठ अफ़सरों की बीवियां आमंत्रित सदस्यों की हैसियत से रहें।
9. छुट्टी के दिन अथवा दफ़्तर के समय के बाद बॉस के कमरे में जाने की ही नहीं, दफ़्तर में रुकने की भी कड़ी मनाही हो, बहाना चाहे कितना भी तगड़ा क्यों न हो।
10. डिक्टेशन लेने के लिए अथवा किसी अन्य कार्य से बॉस के कमरे में जाना हो तो किसी तीसरे व्यक्ति का वहां रहना अनिवार्य हो।

भेंट के दौरान प्रतिनिधि मंडल ने प्रधानमंत्री को स्थिति की गंभीरता से बार बार अवगत कराया। यदि वर्तमान स्थिति को यथावत चलने दिया गया तो पत्नियों का ध्यान घर को सुचारु रूप से चलाने में कैसे लगेगा? दफ़्तर में बैठे पति के कमरे में हो रहे क्रिया कलापों की कल्पना में उलझा उनका मन नून तेल लकड़ी में कैसे लगेगा? बच्चों की तरफ़ भी वे ध्यान नहीं दे पायेंगी जिससे बच्चे ग़लत रास्तों पर चलेंगे-बच्चे जो राष्ट्र का भविष्य हैं, देश की शान हैं, वे ही भटक गए तो देश का क्या होगा? लिहाजा देश के हित में यह परमावश्यक है कि उपरोक्त मांगों का समावेश करते हुए संसद के आने वाले अधिवेशन में एक 'वह' विरोधी बिल पेश किया जाए, जिसके लिए बहुमत सरकार पहले ही इकट्ठा कर ले। हर्ष का विषय है कि प्रधानमंत्री ने उन सबकी कठिनाइयों को पूरे पंद्रह मिनट तक ध्यान से सुना ही नहीं, अपितु इस संबंध में उपयुक्त कार्यवाही करने का भी आश्वासन दिया।

समाचार मिला है कि महिला संघ की जनरल बॉडी ने गत मंगलवार को हुई सभा में निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किए :

1. अलका की आंटी को संघ की आजीवन सदस्या बनाया जाये। न वे मीरा पप्पू को पिक्चर दिखाने ले जातीं, न यह गूढ़ सत्य उजागर होता।
2. नियमित रूप से संघ की सब सदस्याएं हिंदी फ़िल्में देखें जिससे उन्हें पता रहे कि उनके अपने जीवन में और उनके आसपास क्या कुछ हो रहा है।
3. स्थिति की गंभीरता को देखते हुए, प्रत्येक शहर के महिला संघ से संपर्क स्थापित करके शीघ्रातिशीघ्र एक राष्ट्रीय अधिवेशन का आयोजन किया जाए जिसमें इस तरह की महत्वपूर्ण सामाजिक चेतना प्रदान करने वाली सब फ़िल्मों को टैक्स फ़्री किए जाने की भी मांग हो।

**प्रेषक : सीतेश आलोक,**
**120 (प्रथम तल)**
**सेक्टर-15 ए, नोएडा-201301**

सुरेन्द्र सुकुमार

# जूतों का महत्व

गत दिनों मुझे एक जोड़ी जूते खरीदने थे। सो जूतों के बारे में सोचता रहा। दो दिन बाद मैं बहुत चौंका कि चिंतन में लगातार जूता ही चल रहा है यानि कि जूता दिमाग में भी चलने लगा। अब तक तो यही सुना था कि जूता लोगों के बीच में चलता है।

अब दिमाग में जूता घुसा तो ऐसा घुसा कि जूते के विषय में नये-नये तथ्य सामने आने लगे। यों तथ्यों को नये कहना भी गलत होगा। है तो वो बहुत पुराने बहुत आम, पर अब तक दिमाग में नहीं आए। दूकानदार ने तो दार्शनिक मुद्रा में सत्य उद्घाटित किया कि 'जूतों से आदमी की पहचान होती है, आदमी की सबसे पहली नज़र जूतों पर ही पड़ती है। जूतों से आदमी का स्तर नापा जा सकता है। यानि कि जूते स्टैंडर्ड की पहचान होते हैं। अब यह तथ्य बड़ी-बड़ी कंपनियों भी जान गयी हैं इसलिए अब बहुत बड़ी-बड़ी अंतर्राष्ट्रीय कंपनियां जूते के मार्केट में उतर आयी हैं। अब जूता कैसा है इससे मतलब नहीं है जूता किस कंपनी का है यह महत्वपूर्ण है। आपके जूते किस ब्रांड के हैं यह पता चलते ही यह पता पड़ जाएगा कि आप उद्योगपति हैं, बड़े व्यापारी हैं, बड़े अफसर हैं मध्मम दर्जे के आदमी हैं, क्लर्क हैं या चपरासी हैं। जूतों को देखकर आप आसानी से पता कर सकते हैं कि अमुक आदमी का आर्थिक स्तर लगभग ऐसा है यानि कि जूता आदमी का मेजरमेंट है।'

यदि आपकी नज़र में कोई ऐसा जूता आए जिसके तलवे घिसे पिटे हैं फटीचर हैं और किसी जवान लड़के के पैर में हैं तो आप समझ जायंगे कि बेचारा बेरोजगार है गरीबी का मारा है और ऐसे जूते किसी प्रौढ़ व्यक्ति के पैर में हों तो आप तत्काल समझ जायंगे कि बेचारा परिस्थिति का मारा है जवान लड़का बेरोजगार है जवान लड़की शादी के लिए तैयार है आदि-आदि यानि कि जूते आपकी सच्ची कहानी आसानी से बयां कर देते हैं। इसलिए कुछ चालाक लोग अपने हालात छुपाने के लिए यानि कि अपनी इज्जत बचाने के लिए बढ़िया कंपनी का महंगा जूता पहनते हैं चाहे इसके लिए उनको कितने ही जूते चटखाने पड़ें। कहने

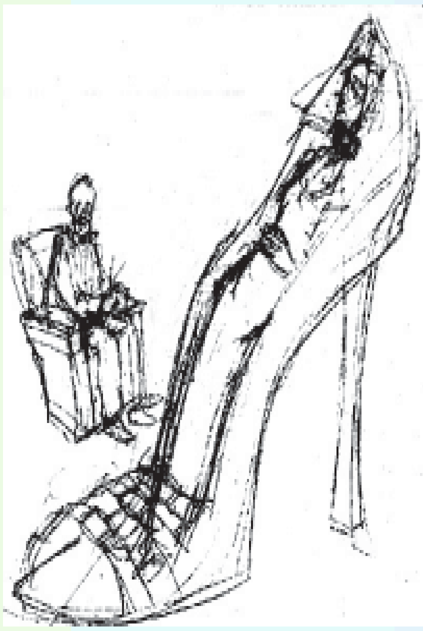

का मतलब आदमी की इज्जत का रखवाला जूता ही होता है यदि एकदम यथार्थ में देखें तो यह बात सोलह आना सही है कि यदि जूता पैरों में पड़ा हो तो इज्जत बढ़ाता है। और यही अगर सर पर पहुंच जाए तो वर्षों की इज्जत पल भर में मिट्टी में मिल जाए। यदि कोई गलत-शलत तरीके से धनाढ्य होकर अहंकारी हो जाता है तो ऐसे लोगों के लिए ही एक मुहावरा प्रचलित है कि 'पैरों की जूती सर पर पहुंचने लगी है।'

जूता ही आदमी की इज्जत घटा सकता है जूता ही आदमी की इज्जत बढ़ा सकता है। आप कितना ही बेशकीमती सूट पहन लें और कीमती टाई लगा लें। रेबैन का चश्मा पहन लें और बिना जूते के नंगे पैर सड़क पर निकल आएं लोग आपको पागल समझने लगेंगे (हां एक अपवाद चित्रकार हुसैन को छोड़ दें तो यों जूता न पहनने के कारण ही वे अपने चित्रों से अधिक चर्चा में आए यहां भी कारण जूता ही रहा) यानि कि जूतों के कारण आप संभ्रांत व्यक्ति गिने जाते हैं लीजिए यदि जूते आपने हाथ में ले लिए और चलाने लगे किसी पर तो पल भर में ही आप संभ्रांत से बदतमीज आदमी कहे जाने लगेंगे। सिद्ध यह होता है कि जूता पहनने के काम आता है और खाने के काम भी, जूता पहनने से इज्जत बढ़ती है और जूता खाने से इज्जत घटती है।

यदि सही अर्थों में देखा जाए तो जूते का सर्वाधिक महत्व है। व्यक्तिगत जीवन में भी, समाज में भी, राजनीति में भी, यानि कि जीवन के हर क्षेत्र में जूतों का सर्वाधिक महत्व है। इसका चलन बहुआयामी है। यह निर्बाध रूप से गली-मुहल्ले, सड़कों से लेकर विधान सभा और संसद तक में चलता है। जब कोई मंत्री कोई बड़ा घोटाला अपनी 'जूतों' की नोक पर कर लेता है तब संसद में महीनों 'जूता' चलता है। यानि कि देश की सभी समस्याएं दर किनार बस जूता ही प्रमुख। इसको इसको इस तरह से भी देखा जा सकता है। जिसका जूता पुजता है वही नेता पुजता है। आप बड़े राष्ट्रीय चरित्रवान नेता हैं तो बने रहिए। यदि आपका जूता नहीं पुज रहा है तो कोई आपको दो टके में भी नहीं पूंछेगा। और अगर आपका जूता पुज रहा है तो आप कोई भी हों, डकैत हों, कत्ली

**शेष पृष्ठ 72 पर. . .**

रमेश सैनी

# भगवान के दरबार में जूता

मुझे लगता है भगवान एक दिन मेरी प्रार्थना सुन लेगा। अत: आजकल मैं रोज मंदिर जाता हूं। रोज मंदिर में प्रार्थना करता हूं, मगर अभी तक भगवान के मंदिर में मेरी प्रार्थना स्वीकार नहीं हुई है। अब रोज सुबह मंदिर जाता हूं। शाम को मंदिर जाता हूं। भगवान किसी भी समय मेरी प्रार्थना सुन लें। मैं उनसे यही प्रार्थना करता हूं, हे भगवान, मेरा कोई दुमुंहा फटा जूता चुरा ले। फिर मंदिर में जूते एक्सचेंज कर लूंगा। मैं चाहता हूं कोई मेरा जूता चुरा ले, या कोई सज्जन पुरुष धोखे से मेरा जूता पहन ले, जिससे मैं अपनी पसंद के अनुसार उसके बदले मैं अच्छा जूता एक्सचेंज कर लूं। एक्सचेंज से चोरी के आरोप में बच जाऊंगा। मगर मेरा जूता अभी चोरी नहीं गया।

मैं जूता को ऐसी जगह रखता हूं, जिससे सबकी नजर पड़ जाये। देखने में मेरे जूते बहुत अच्छे लगते हैं, दिन में दो बार पालिस करता हूं, जिससे उनकी चमक कम न हो। मगर लोग धोखे में नहीं आते हैं। वे मेरे जूते की ओर नजर घुमाना भी पसंद नहीं करते हैं, और देखकर मुंह बिचका देते हैं। शायद मुझे लगता है लोग मेरे जूते की सच्चाई जानते हैं। जूते चोरी जाएं मैंने अनेक तरीके निकाले। जैसे जूते ऐसी जगह रखता हूं, जहां पर सबकी नजर पड़ जाय, या भीड़ वाली जगह पर रखता हूं, जहां पर लोग धोखे से या जानबूझकर पहन लें। मगर मेरा यह सपना कभी पूरा नहीं हुआ।

रविवार को मैंने सूर्य मंदिर के व्यवस्थापक से पूछा, क्यों भाई! क्या यहां जूते चोरी जाते हैं। मेरा इरादा था, शायद वह 'हां' कहें और कहे कि यहां पर काफी जूते जाते हैं, साथ ही सावधान करें, 'भाई जूते संभाल कर रखो'। मगर उसने ऐसा कुछ नहीं कहा और इत्तला दी कि सुरक्षा व्यवस्था इतनी तगड़ी है कि परिंदा भी पर नहीं मार सकता। यहां पर जूते का अलग रूम है, और वह भी मुफ्त। आप यहां पर जूते रखें, और निश्चिंत होकर दर्शन करें। आप अपने जूते की चिंता न करें। हमारे ऊपर छोड़ दें, मानो आपके जूते का सौ फीसदी बीमा हो गया। फिर आप टोकन लें या न लें। इस मंदिर में अच्छे-अच्छे चोरों की आत्मा या हृदय परिवर्तन हो जाता है। यह अभी-अभी हुआ है, वरना पुराना रिकार्ड ठीक नहीं है। इस मंदिर में नियमित आने वाले श्रद्धालु जानते हैं, इसलिये वे पुराने जूते पहन कर आते हैं। क्योंकि उन्हें नये की गारंटी ही नहीं है, और नये श्रद्धालु की चिंता हम करते हैं। तब मैंने कहा, आपकी इस तरह की व्यवस्था से तो अच्छा भला जूते चोरी का व्यवसाय चौपट हो जायेगा। इससे काफी लोग बेरोजगार हो जायेंगे और सरकार के सामने नयी समस्या हो जायेगी, और आपका अनुकरण यदि शादी ब्याह के समय किया गया, एक अच्छी भली जूता चोरी के नेग की परंपरा लुप्त हो जायेगी, और भारतीय संस्कृति का एक पन्ना गायब हो जायेगा। अत: आप से सविनय निवेदन है कि आप मंदिर में जूता चोरी को प्रोत्साहित करें। मगर वे मेरी बात सुनकर एक अधपके नेता के समान मुस्कुरायें। नेताओं के मुस्कराने के अनेक अर्थ होते हैं और उनके अनुयायी अपने फायदे के हिसाब से अर्थ लगा लेते हैं। मेरे सामने यह समस्या थी कि 'क्या अर्थ लगाऊं' फिर मैंने साहस करके कहा-आप सिर्फ मुस्कुरायें नहीं, वरन् स्पष्ट करें। तब उन्होंने मुस्कुराहट पर विराम लगा दिया और चुप हो गये। उनकी चुप्पी से मुझे कुछ आउटपुट निकलता नजर नहीं आया। उनकी नेताओं जैसी चुप्पी थी। उनकी चुप्पी देख मैं सहम गया और उनकी चुप्पी तोड़ने के लिए कहा- 'भाई साहब! आपकी यह व्यवस्था काफी दुरुस्त है। आप ऐसा क्यों नहीं करते कि अपनी इस व्यवस्था की जानकारी पुलिस को बता दें जिससे चोरियों होना रुक जायें। सारा शहर चैन की नींद सोये। मुहल्ले का चौकीदार रात को न चिल्लाये-जागते-जागते रहो।' मेरी बात सुन कर उनके चेहरे पर पुन: मुस्कान दौड़ गयी। उनकी मुस्कान देख मैं घबड़ा गया। उनमें अजीब सा परिवर्तन हो रहा था। वे मुझे पूरा नेता में परिवर्तित होते दिखने लगे। मैं उनको जनता के समान नमन करने वाला था, कि वे बीच में बोल पड़े मगर इस बार वे उपदेश देने वाले नेता की मुद्रा में थे, भाई साहब ये सब जूता चोर ही थे, जिन्होंने तरक्की कर बड़े-बड़े सामानों पर हाथ फेरना आरंभ कर दिया। हम उन्हें क्या सलाह देंगे, वे ही सलाह देते हैं, और हम अमल करते हैं, आपको तो मालूम होगा चोर सिपाही का खेल। जब वे कुछ दक्षिणा की अपेक्षा करते हैं, तो हम जूता चुरवा देते हैं, जूता चोर से अपनी दक्षिणा ले लेते हैं, इसीलिये हम कहते हैं कि यहां की व्यवस्था मजबूत है, अत: मैंने सोचा यहां पर जूता चुरवाना भी खतरे से खाली नहीं है और लौट पड़ा। मुझे उल्टे पांव लौटते देख उन्होंने कहा अजीब आदमी है। जूता चोरी के डर से भगवान के दर्शन भी नहीं करता। फिर मैंने अपने जूते की ओर देखा। बड़ी खराब तकदीर लेकर आया है या मुझे अपनी तकदीर पर रोना आया कि मेरा जूता चुराने लायक नहीं है। देवानंद ने एक फिल्म में डायलॉग बोला था-जिसके जूते चमकते हैं उसकी किस्मत चमकती है। मैं सोचता हूं अपनी किस्मत को चमकाना है, तो चमकते जूते से इसे बदलना होगा। मेरी इच्छा है कि किसी तरह जूते चोरी हो जाएं।

एक दिन एक प्रतिष्ठित मंदिर गया।

वहां हमेशा अधिक भीड़ रहती है। मुझे लगा यहां पर मेरी इच्छा अवश्य पूरी होगी। मैंने नजर दौड़ाकर जगह तलाशना शुरू किया, जहां से जूते चोरी हो जाय, और मैं दूसरे जूते पहन लूं। एक अच्छी जगह तलाश कर अपने जूते उतार दिये और दूर जाकर बैठ गया। सामने भगवान के दर्शन भी कर रहा था, और साथ ही पलटकर अपने जूते भी देख रहा था मंदिर में भीड़ काफी थी। मेरा मन प्रार्थना में नहीं लग रहा था। मैं सोच रहा था, कि अब जूते गए, तब गए। मगर निराशा ही हाथ लगी। फिर भगवान का ध्यान लगाने की कोशिश की। पलटकर देखा मेरे जूते गायब। मैंने सोचा अपना काम हो गया। अपनी जगह से उठा और अपने जूते के पास रखे जूते पहनकर आगे चल पड़ा कि किसी ने पीछे से मेरे कंधे पर हाथ रखा। मेरी रूह कांप गयी। मैं लगभग पसीने-पसीने हो गया। पीछे मुड़ कर देखा तो सामने मेरा एक पुराना मित्र खड़ा था। उसने छूटते ही कहा-'साले तुम भी' मैंने कहा-क्या मतलब?

- बेटा मुझसे मतलब पूछते हो? उसने कहा।
- क्या कर रहे हो स्पष्ट करो, मैंने कहा।
- साल जूता चुराते शरम नहीं आती?
- जूते चुराते? क्या मतलब, मैंने कोई जूता नहीं चुराया।
- जरा अपने चरणों पर नजर डालो, साले हमसे बनते हो।

मुझे तो मालुम था, फिर भी अनजान बनते हुए अपने पैरों पर नजर डाला और आश्चर्य से कहा, ओह मेरे जूते? ये बदल गये। फिर आसपास नजर दौड़ाई मुझे तो मालूम था कि मेरे जूते चले गए। फिर परेशानी का दिखावा करते हुए कहा, 'ओह मेरे जूते बदल गए। कोई धोखे से मेरे जूते पहन गया और अपने छोड़ गया, और मैंने उसे धोखे से पहन लिया।'

- बेटा ये दिखावा मत कर? उसने कहा।

मैंने सोचा कितने दिनों से कोशिश कर रहा था। जब कोशिश रंग लायी तो लफड़ा हो गया। यह भी लगभग 20 वर्ष के बाद मिला वो भी इस माहौल में। खैर फिर मेरी नजर उसके पैरों पर पड़ी। उसने मेरे जूते पहने थे। मैंने कहा-'बेटा ये तो मेरे जूते हैं।'

- 'मैं कहां कह रहा हूं कि यह मेरे जूते हैं?' उसने उत्तर दिया।
- फिर तेरे जूते कहां हैं? मैंने पूछा।
- मैं तो कभी मंदिर जूते पहन कर नहीं आता हूं। मंदिर नंगे पैर ही आता जाता है। और अच्छे जूते मिल गए, उसे भगवान का प्रसाद मानकर पहन लेता हूं। मगर इस बार धोखा खा गया।
- नये के चक्कर में पुराना पहन लिया। उसने कहा।
- ओह! मैंने कहा।
- 'अब जैसे ऊपर वाले की मर्जी अब जल्दी यहां से निकल पड़ वरना वो जूते पड़ेंगे कि गिन नहीं पाएगा।' और हम लोग वहां से खिसक लिए।

245/ए.एफ.सी.आई. लाईन
त्रिमूर्ति नगर, दमोह नाका
जबलपुर (म.प्र.) 482002

**. . . पृष्ठ 70 का शेष**

हों, अपराधी हों, बलात्कारी हों, महाभ्रष्ट हों, लोग आपको नेताजी, राजा साहब, कुंवर साहब आदि-आदि संबोधनों से संबोधित करेंगे। राजनीतिक पार्टियों में भी यही हाल है जिस नेता का जूता पुज रहा है पूरी पार्टी उसकी ही। अब कांग्रेस को ही लो। इस समय सोनियां जी का जूता पुज रहा है, कहते रहो विदेशी नहीं आती हिंदी, नहीं आता भाषण देना, न सही सभी कांग्रेसी उनके जूतों की नोक पर। जिसका जूता पुजता है वही शासन करता है। भाजपा में देखिए अटल जी कितने ही भले, महान, विद्वान चरित्रवान, सर्वश्रेष्ठ वक्ता, राजनीतिक गुरु हैं। हैं तो बने रहिए जूता आडवानी और मोदी का ही पुजता है। समाजवादी पार्टी में मुलायम सिंह का जूता पुज रहा था पर अमर सिंह मुलायम सिंह का जूता पूज-पूज कर खुद अपना जूता पुजवाने लगे और बसपा में अकेली मायावती का जूता पुज रहा है इन्होंने भी कांसीराम का जूता पूज-पूज कर उनके जीवनकाल में उनसे ही अपना जूता पुजवो लगी थीं। कुछ लोग ऐसे भी हैं जिनका जूता समूची राजनीति और अपराधनीति में पुजता है जैसे अपने बालठाकरे। ऐसे ही थे श्री चंद्रशेखर। अब वी.पी. सिंह बड़े सिंह बने फिरे पर जूता नहीं पुजवा पाए तो राजनीति के क्षितिज पर पहुंच गए राजनीति में केवल वही सफल हो सकता है जो या तो जूता-पुजवाता रहे या जूता पूजता रहे।

जूता पुजवाने या पूजने की कोई नयी परंपरा नहीं है। यह परंपरा इस देश में सदियों से चली आ रही है। राजा रजवाड़ों के जमाने में, राजा, महाराजाओं, नवाबों, सूबेदारों, हाकिम हुक्कामों और शहर कोतवाल का जूता पुजता था। अंग्रेजों के जमाने में अंग्रेजों का जूता पुजता था और कुछ लोग उनका जूता पूज पूज कर, राय साहब राय बहादुर बनकर अपना जूता पुजवाते थे। तो आज बड़े-बड़े नेताओं, बड़े-बड़े अपराधियों, आला अधिकारियों और शहर कोतवाल का जूता पुजता है। बड़े से बड़ा काम चांदी के जूते से बन जाता है। मुहावरा भी है चांदी का जूता, चांद गरम।

यों इससे पहले भी अगर नज़र दौड़ाएं त्रेता युग में जाएं तो उस युग में तो बाकायदा 14 वर्षों तक राज सिंहासन पर रख कर जूतों को पूजा गया राम के खड़ाऊं उस जमाने के जूते ही तो थे। लीजिए राम भले ही बन-बन नंगे पैर डोलते रहे पर अयोध्या में जूते राम के ही पुजते रहे और भरत उन जूतों को पूज-पूज कर ही महान बन गए। आज भी जूतों को पूज-पूज कर मूर्ख और छुटभइये महान बन जाते हैं।

कहने का मतलब जिसका जूता पुजता है वही इलाके पर शासन करता है वही प्रदेश पर शासन करता है वही देश पर शासन करता है और वही विश्व पर शासन करता है आज पूरे विश्व में अमेरिका का जूता पुज रहा है। सिद्ध यह होता है कि जूता व्यक्ति से इलाके से प्रदेश, देश से और विश्व से भी बड़ा होता है इसलिए मेरी समझ में तो यही आता है कि जूते को राष्ट्रीय चिह्न घोषित कर देना चाहिए।

गंगा-विहार, सुरेन्द्र नगर, अलीगढ़-202001

डॉ. यश गोयल

# कानून व्यवस्था पर निबंध

टीचरजी ने जब पुराने विषय निबंध लिखने के लिए सुझाये तो छात्राओं ने नाक-भौंह सिकोड़ी यह कहकर कि गाय-भैंस-शेर-बाघ-आर्थिक स्थिति-मल्टीनेशनल्स पर निबंध लिखने से क्या लाभ होगा। समय बदल रहा है तेजी से। राजस्थान बीमारू श्रेणी से निकलकर विकसित/विकासशील राज्यों की श्रेणी में आ गया हैं। राज्य उदीयमान है। इन्वेस्टमेंट (पूंजी निवेश) बहुतायत से दहलीज पर खड़ा है।

टीचरजी ने छात्राओं से कहा कि वे अपनी मर्जी से किसी भी ताजा विषय पर लेख लिखें। उसे वे पुरस्कृत भी करेंगी। पुरस्कार में एक पेंसिल/चॉक भी मिल सकता है। सभी प्रसन्न कि उन्हें आजादी मिली जो शायद पिछले 61 वर्षों में नहीं मिली थी। दस-पंद्रह मिनट का समय दिया गया।

एक छात्रा ने अपने संक्षिप्त निबंध में कुछ इस तरह लिखा : आरक्षण, गोलीकांड, डकैती, ब्लास्ट और राज्य में कानून व्यवस्था।

आरक्षण पर एक जाति वर्ग पिछले दो साल से आंदोलनरत। गोलीकांड ने लील ली 60 से अधिक जानें। श्रीगंगानगर के रावला में किसान पानी मांग रहे थे पुलिस ने गोली चलाई 6 लोग मरे। सोहेला में पानी मांग रहे किसानों पर गोली चली - 5 मरे। घड़साना में चंदू राम भी पुलिस गोली का शिकार हुआ। ऋषभदेव मंदिर में एक आदिवासी की पुलिस की बंदूक से मौत। कोटड़ा में एक व्यक्ति पुलिस गोली का शिकार।

इसके अलावा गोलीकांड कई और भी हुए उनमें सैकड़ों इंसान घायल होकर पहुंचे उनमें प्रमुख हैं—मंड़ावा (झुंझुनूं), तबादले के विरोध में ग्रामीणों पर गोली चली। थाने के बाहर डग (झालावाड़) में गोली चली थी।

अश्रु गैस और रबड़ बुलैट का इस्तेमाल उतना ही हुआ जितनी बार आंदोलनकारियों पर लाठीचार्ज किया गया।

राज्य की राजधानी में ही नहीं कई जगह बैंक लुट गये। अजमेर की दरगाह और जयपुर सीरियल बम्ब ब्लास्ट में मरने वालों और घायलों की संख्या असीमित है। 66 तो जयपुर में सरकारी तौर पर बम्ब धमाकों में शहीद हुए। सैकड़ों अस्पताल में अभी भी इलाजरत हैं। अजमेर में सिर्फ तीन मरे थे। कोई अपराधी पकड़ में नहीं आया। क्योंकि जांच चल रही है।

जहरीली शराब पीकर दर्जनों लोग मर गये। यह सिलसिला इसलिए रुका कि गली-गली में दारू की दुकानें खुली थीं। शराब पीकर कईयों की जीवन लीला अस्पताल में कई लीवर के कई रोगों से हुई।

सड़कों पर हो रही दुर्घटनाओं का जिक्र करते हुए छात्रा के आंसू निकल आए। आए दिन दसियों लोग सड़क हादसे में मर रहे हैं। बावजूद इसके कि सरकार राहत पैकेज की घोषणाएं किये जा रही है। मरने वालों का नकद मुआवजा बढ़ा रही है। मृतकों के आश्रित को नौकरी दे रही है। अपराधियों के मुकदमें वापिस ले रही है। राज-काज तब भी मुस्करा रहा हैं उन चीयर्स गर्ल्स की तरह जो क्रिकेट के मैदान में अंगप्रदर्शन से दर्शकों का मनोरंजन कर रही हैं।

जैस ही टीचरजी ने निबंध पढ़ा उसके रौंगटे खड़े हो गये। छात्रा को डांटते हुए टीचरजी बोली, 'तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई यह लिखने की। तुम्हें मालूम होना चाहिए कि राज्य में अपराध दर कम हो रही है। यह तथ्य गृहमंत्री कई बार विधान सभा में प्रस्तुत कर चुके हैं। गोली चलाना सरकार की मजबूरी होती है। आत्मरक्षा और जनता की सुरक्षा के लिए गोली चलानी पड़ती है। देखती नहीं कि पूरा राज्य किलेनुमा सुरक्षा में मजफूज़ है। चंद लोग हैं जो राजशाही से तंग आकर विद्रोह करते हैं। आम नागरिक कितना प्रसन्न है। चुनाव की प्रतीक्षा कर रहा है। तुमने ऐसा निबंध लिख कर राज्य सरकार की नाक कटवाने की सोच का परिचय दिया है। तुम खड़ी हो जाओ। दोनों हाथ आगे करो।'

छात्रा हिम्मत से खड़ी हुई। दोनों हथेलियां टीचरजी के आगे कर दी। तड़ाक-तड़ाक से बेंत के निशान गोरे-मासूम हाथों की हथलियों पर छप गये। छात्रा के एक आंसू नहीं आया। क्योंकि मनुष्य की मौतों का जिक्र करते हुए वह पहले ही अंदर तक रो चुकी थी।

486, जादोन नगर, दुर्गापुरा, जयपुर


## रमाकान्त स्मृति कहानी पुरस्कार

रमाकान्त स्मृति कहानी पुरस्कार हेतु 2008 में प्रकाशित किसी युवा लेखक की किसी कहानी ने यदि आपको बहुत प्रभावित किया हो और आपको लगे कि यही वह कहानी है जिसे 2009 का रमाकांत स्मृति कहानी पुरस्कार मिलना चाहिए तो उसकी एक प्रति अपनी संस्तुति के साथ इस पते पर 31 मई, 2008 तक अवश्य भेज दीजिए। इस बार के निर्णायक हैं श्री विजयमोहन सिंह।

**संयोजक,**
**रमाकान्त स्मृति**
**कहानी पुरस्कार समिति**
**सी-3/51, सादतपुर**
**दिल्ली-110094**

राजेन्द्र उपाध्याय

# मधुमेही रोगी की व्यथाकथा

रसीले फलों की ओर देखो, मगर चूसो नहीं। उन्हें चूसने खाने, पीने, काटने की मनाही है। बचपन में खेत से तोड़कर जो गन्ना चूसता था– उसकी रह रहकर याद आती है। बाल्टी में ठंडे पानी में भर कर जो आम चूसने की प्रतियोगिता होती थी– वह भी अब एक भूली-बिसरी कथा बनकर रह गई है। केवल करेला खाओ, जामुन चूसो, लौकी का रस पियो। आम न खाओ, केला न खाओ, सेब न खाओ, अमरूद न खाओ, आड़ू, प्लम, नासपाती कुछ न खाओ। केवल देखो–रसीले अनारों की ओर। केवल देखकर ही उनका रस लो, जैसे युवतियों को देखकर लेते हो। छुओ नहीं उन्हें। केवल देखकर ही उन पर कविता लिखो। अंगवर्णन करो।

यह जीवन तो व्यर्थ ही गया। मधुमेह रोगी क्या करे। केवल रोटी-करेला खाकर रहे। दाल-चावल-आलू का भुर्ता नहीं। पूड़ी, परांठा, घी नहीं। परहेज, परहेज, परहेज।

जब से मधुमेह का दीमक शरीर में लगा है– रोज सुबह घूमने जाता हूं। मित्रों के फोन आते हैं– 'साहब! मोर्निंगवॉक को गए हो ऊपर वाले बोलते हैं ताना मारकर।' अच्छा अब मोर्निंगवॉक भी शुरु कर दिया है।' पत्नी कहती है वहां भी टाईट कपड़े पहने लड़कियों को देखने जाते होगे।

घूमने न जाओ– तो दिन पर 'मधुचर्या' बनी रहती है। दिनभर नींद, बस नींद, ऐसी कैसी नींद। सुस्ती सी छाई रहती है। बदन में। चलने-फिरने में दिक्कत आती है। पसीने-पसीने हो जाता हूं।

अपने दफ्तर के पास मधुमेह शिविर लगा था– जांच कराने गया तो डरा दिया। कुछ दिन में आपकी आंखें खराब हो जाएंगी– गुर्दे खराब हो जाएंगे– पैरों की हड्डियां गल जाएंगी। इ.सी.जी. किया। सब किया। एग गोरी डॉक्टरनी बैठी थी– उसके पास गया– उसने 'डाईट पार्टी' (भोजन मानचित्र) बना दिया। सुबह ये खाना है, ये नहीं खाना है। देखा तो संसार के सब मधुरतम पदार्थ और वस्तुएं तज्य हैं। केवल देखने भर को हैं– जैसे केला, आम, चीकू, अंगूर, सब देखने भर को है। केवल उबला हुआ अनाज खाएं। दूध गाय-भैंस का नहीं पिए। मदर डेयरी का घी निकला हुआ पिए। चावल-आलू न खाएं। कचोरी-समोसा-चाट सब बंद। केवल अमरूद खाएं। गन्ने का रस क्या कोई भी रस न पिएं। जीवन में रस ही नहीं बचा है।

आज जब यह सब लिख रहा हूं तो पता लगा कि आज विश्व मधुमेह दिवस है। विश्व में एक ओर तो इतनी सारी कड़वाहट है, दूसरी तरफ उतनी ही तादाद से मीठे लोगों की संख्या भी बढ़ती ही जा रही है। मधुमेह की बीमारी एक बड़ी महामारी का रूप लेती जा रही है, हर वर्ष कई नए रोगियों का पता चलता है। कई रोगी तो ऐसे हैं जिन्हें मधुमेह की बीमारी तो है परंतु वो इससे बेखबर मधुर जीवन जीते रहते हैं। डॉक्टर पूछता है क्या आपके पिताजी को ये बीमारी हैं? मैं कहता हूं– 'हैं'। उनके पिताजी को भी थी। मैं कहता हूं– 'पता नहीं' गांव में रहनेवाले दादा कहां मधुमेह की जांच कराने जाते। हो भी तो क्या? खूब पैदल चलते थे। गन्ना चूसते थे। बगैर भूख लगे खाना खाते नहीं थे। इतने बजे नाश्ता कर ही लेना है। लंच कर ही लेना है एक बजे–ऐसी कोई मजबूरी नहीं थी। दादा लंबी आयु पाकर गोलोकवासी हुए।

अब दीपावली त्यौहार पर इतनी मिठाइयां आईं–सब केवल देखकर ही फ्रिज में रख दी। कोई आएगा तो खिलाएंगे। आए भी कहा तो मिठाई देखकर दूर से ही हाथ जोड़ने लगे। 'कविजी! कुछ कड़वा' रखा हो तो पिलाइए?' मैं भी कई जगह गया– मिठाई देखकर दूर से ही हाथ जोड़ता रहा। 'कड़वा' भी मना किया। 'कड़वा' भी भीतर जाकर मीठा हो जाता है। जामुन की गुठली हो तो दीजिए। करेला खाईए खिलाईए। हमारे दफ्तर में हर मंगलवार को एक हनुमान भक्त हनुमान जी का प्रसाद लाते हैं। दूर से ही मना करता हूं। फिर भी आग्रह के आगे और बजरंगबली के आगे झुकना पड़ता है। थोड़ा सा तो लीजिए करके मुट्ठी भर देते हैं। हारकर लेकर चपरासी को देना पड़ता है या कई बार कोई नहीं मिला तो पैंट की जेब से रख लिया। बाद में उस जेब में भी चींटियां हो गईं। चीटियां इतनी ज्यादा चीनी खाती हैं। चींटियों को मधुमेह क्यों नहीं होता। बाथरूम में भी कई बार चींटियां परिवार के किसी सदस्य को मधुमेह होने का पता देती है।

हाल में अशोक वाजपेयी के कलाओं के अंतराबंध में गया। वहां भोजन का अंर्तसंबंध देखा गया। रायते के साथ चिकन और मटन और रसगुल्ला भी शोभायमान था। मैं जन्मजात कवि हूं और जन्मजात शाकाहारी भी हूं। पर अच्छे-अच्छे मधुरकवियों को रसगुल्ला खाते देख उत्साहवर्धन हुआ। मन के हारे हार है। मन के हारे हार गया। रसगुल्ला मुंह में रखा गया। दिव्यआनंद प्राप्त हुआ। खाकर मरना है। भूखे क्यों मरते। पत्नी भी वहां टोकने को नहीं थी। वह तो 'पनीर' भी नहीं खाने देती।

संसार भर में लगभग 17 करोड़ 7 लाख मधुमेह के रोगी हैं, जिनकी संख्या विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार सन 2015 तक बढ़कर 30 करोड़ हो जाएगी। भारत में उस समय मेरे मधुमेह-सखाओं की संख्या 5 करोड़ सात लाख हो जाएगी। हो सकता है तब तक आज के कई रसगुल्ला प्रेमी गोलोकवासी हो जाए। या कोई ऐसा रामदास आए जो मधुमेह के नाश के लिए रसगुल्ला के उत्पादन, विक्रय पर ही प्रतिबंध लगा दे या जो कोई रसगुल्ला गुलाब जामुन खाता दिखे उस पर पांच सौ का जुर्माना ही ठोंक दे।

**21-बी, लॉ अपार्टमेंट्स**
**कड़कड़डूमा, दिल्ली-110092**

## राजेन्द्र त्यागी

# पालतू राजनीति में

शहर भर में पालतू सारी रात वार्तालाप में व्यस्त रहे। गली-मुहल्ले में जाकर, घर-घर जा-जाकर। गई जगह तो नुक्कड़ सभाओं जैसा आलम था। शहर स्तब्ध था। एक-दूसरे को फूटी आंख भी न सुहाने वालों के बीच अचानक प्रेम संबंध! स्तब्ध होने के साथ-साथ शहर भयभीत भी था। शहर सोच रहा था कि पालतुओं के मध्य ऐसा प्रेम व्यवहार, ऐसा सौहार्द पूर्ण वार्तालाप पहले, न तो कभी देखा और न सुना! कहीं कोई मुसीत न खड़ी कर दें। पालतू आने वाले खतरे को भी दूर से भांप लेते हैं, पालतुओं के मध्य इतनी सक्रियता, कहीं सभावित खतरे के कारण ही तो नहीं! कारण कुछ भी हो, कोई न कोई खतरा तो अवश्य है। यही सोच-सोचकर शहर भयभीत भी था। बावजूद इसके शहर सोया, मगर श्वान निद्रा में!

दरअसल शहर पालतू-प्रेमी था। किसी कमबख्त का कोई वीरान घर ऐसा होगा, जो पालतुओं से शोभायमान न हो, उनकी मधुर आवाज से गुंजायमान न हो। कमजोर वर्ग कमजोरों पर स्नेहिल हाथ फिराकर पालतू-प्रेमी होने का अहसास कर लेते थे। मध्यवर्गीय अपनी-अपनी हैसियत के हिसाब से बाकायदा एक-दो पाले रखते थे। उच्चवर्ग की तो बात ही अलग थी, जब तक दो-तीन पालतू और दो-तीन बे-पालतू फालतू में दरवाजे पर न हों तो कैसी रईसी! शहर में नेताओं की भी कमी न थी। छुट भइया से लेकर बड़-भइया तक हर किस्म के और हर स्तर के नेता शहर के बाशिंदे थे। और यह भी जग जाहिर है कि नेता के दरवाजे पर एक-दो पालतू न हो, तो काहे की नेतागीरी।

मंत्रीजी और विधायक जी का आवाज भी शहर की शोभा बढ़ा रहा था। उनके दरवाजे पर पालतुओं की संख्या! नहीं-नहीं, हमने गिनने की ज़हमत क्या, कभी हिम्मत भी नहीं की और करते भी, तो क्या गिन पाते! कुछ स्थायी पालतू थे, तो कुछ फालतू। कुछ दरवाजे पर ही जमे रहते तो अधिकांश आवागमनित रहते थे। कुछ जड़-खरीद थे, तो कुछ टुकड़ा देखकर पूंद हिलाने की परिवर्तित प्रवृति के धनी! शहर में ऐसे पालतुओं की संख्या भी कम न थी, जिन्हें नेता किस्म के जीव म्यूनिसैलीटी के लॉकअप से समय-समय पर मुक्त कराते रहते हैं। दरअसल नेतागीरी में म्यूनिसपैलीटी के लॉकअप से रिहा पालतू कुछ ज्यादा ही कारगर साबित होते हैं। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि मथुरा-वृंदावन में गाय का जैसा महतव प्राप्त है, वैसा ही महत्व इस शहर में पालतुओं को प्राप्त है।

पालतुओं की सक्रियता के कारण जब सूचना शहर स्तब्ध था, भयभीत था। ऐसे में मंत्रीजी का घर चैन की नींद में सो रहा था। मंत्रीजी पूरे घटनाक्रम से वाकिफ जो थे। हुआ यों कि एक दिन मंत्रीजी के पालतू पिल्लू सिंह के मन में ख्याल आया कि जब ऐरे-गैरे भी हमारे बल पर सत्ता के गलियारों में आराम फरमा रहे हैं, तो क्यों न हम भी उन गलियारों का मजा लें। एक दिन मंत्रीजी के प्रिय पालतू पिल्लू सिंह ने सक्रिय राजनीति में प्रवेश करने की इच्छा उनके सामने जाहिर की।

प्रिय पिल्लू की इच्छा सुन मंत्रीजी स्तब्ध रह गए। आश्चर्यचकित मंत्रीजी बोले, 'तू और राजनीति में!. . .तुझे इस पचड़े में पड़ने की क्या आवश्यकता! मैं हूं न!'

मंत्रीजी के वचन सुन पालतू मन ही मन बोला, बात ठीक है, मुझमें और तुम में शक्ल के अलावा अंतर भी क्या है! फिर वह बोला, 'मालिक इसमें हर्ज भी क्या है? एक और जगह दो हो जाएंगे। पालतू ने राजनैतिक पैंतरा चलते हुए कहा, यहां भी पालतू हूं, वहां भी पालतू रहूंगा।'

मंत्रीजी ने दूसरा सवालिया निशान लगाया, मगर राजनीति के काबिल तेरी हैसियत कहां और न ही चरित्र।'

पूंछ हिलाते हुए पिल्लू बोल, 'मालिक! तुम्हारे विरोधी उस नेता की हैसियत मुझ से बेहतर है? वह भी तो आज सत्ता-सुख भोग रहा है! रही चरित्र की बात, तो आप ही बताओ मालिक राजनीति और चरित्र का परस्पर मेल कैसा? ये तो दोनों ही दो अलग-अलग ध्रुवों की अलग विचारधारा हैं! फिर भी एक बात बताओं तुम्हारे विरोधी दल के नेता के मुकाबले मेरा चरित्र कहां कमजोर है? वह तो जिस थाली में खाता है, उसी में छेद करता है।'

पिल्लू दौड़ा-दौड़ा बाहर की ओर गया और वहां से खाने की थाली उठाकर लाया और मंत्रीजी को थाली दिखाकर बोला, 'बरसों से इसी थाली में खाना खा रहा हूं, कहीं एक भी छेद है, इस थाली में।'

पिल्लू ने जीभ से राल टपकाई और बोला, 'मालिक! मैं तुम्हारे टुकड़े खाता हूं और केवल तुम्हारे हर तलवे चाटता हूं और वह! उसने तो तुम्हारे भी तलवे चाटे, और उसके भी और न जाने किस-किस के तलवे चाटकर टिकट ले गया! फिर भी आप मेरे चरित्र को राजनीति के काबिल नहीं मानते।'

पिल्लू भावुक हो गया और आंसू टपकाता हुआ बोला, 'मालिक! उसने तलवे चाटना हमने सीखा, पूंछ हिलाना हमसे सीखा, काटना हमसे सीखा, भौंकना हमसे सीखा और सभी कुछ हमसे सीखकर फिर उनका दुरुपयोग किया! मैंने अपने चारित्रिक गुणों का कम से कम कभी दुरुपयोग तो नहीं किया! आपने जिस पर गुर्राने के लिए कहा, मैं उस पर गुर्राया, जिसे काटने के लिए कहा, उसे काटा और वह. . .!'

मंत्रीजी के दिमाग में बता कुछ-कुछ धंसी। बात तो ठीक कह रहा है। मेरे विरोध से तो कहीं ज्यादा ही बेहतर है और फिर राजधानी जाकर भी तो पालतू ही रहेगा। वहां भी तो एक अदद भौंकने वाला, गुर्राने वाला,

काटने वाला चाहिए ही! वैसे भी राजनीति तो ऐसे गंगा है, जिसमें उतरकर सभी दूध के धुले हो जाते हैं। वहां कोई भेद-भाव तो है नहीं, सब धान सत्ताईस सेर! सोच-विचार करने के बाद मंत्री जी बोले, 'ठीक है! तू कहता है, तो राजनीति की पवित्र धारा में तेरा प्रवेश करा देता हूं। मगर कुछ व्यवहारिक अड़चनें आएंगी, उनसे कैसे निपटेगा?'

एकलव्य बन पिल्लू ने मंत्रीजी के चरणों में ही बैठे-बैठे राजनीति के गुर सीख लिए थे। वह तलवे चाटता-चाटता राजनीति के सभी दांव पेच और रहस्यों से परिचित हो गया था, अतः उसने आत्मविश्वास के साथ कहा, 'कैसी व्यवहारिक अड़चनें, मालिक! बताएं, आपकी शरण में रहकर राजनीति की पैंतरेबाजी सीखी है, सभी अड़चने सहज ही हल कर लूंगा।'

मंत्रीजी बोले, 'तुम भाषण देना तो जानते ही नहीं? बिना भाषण के नेतागीरी कैसे संभव, बरखुरदार!'

मंत्रीजी की आशंका सुन पिल्लू ने ठहाका लगाया और मन ही मन बोला, मालिक तुम भी तो मेरी ही तरह भाषण देते हो। तुरंत ही पिल्लू ने अपने आपको सहज किया और बोला, 'माननीय! अधिकांश नेता मेरे ही सुर में भाषण देते हैं। उन्होंने यह कला हम ही से तो सीखी है और आप जानते ही हैं, मैं तो इस कला में निपुण हूं। इस कला के आधार पर ही तो मुझे आपका पालतू होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।. . . नहीं, नहीं भाषण देना कोई समस्या नहीं है!' शंका निवारण कर पिल्लू ने वाणी को विराम दिया और मंत्रीजी के मुख से नई व्यवहारिक दिक्कत सुनने की प्रतीक्षा करने लगा।

'भाषण तो ठीक है, मगर इस देश में तो गरीब, अमीर मध्यवर्गीय सभी तबके के जीव हैं। सभी का समर्थन कैसे प्राप्त करोगे?' मंत्री जी ने अगला सवाल किया।

पिल्लू बिना किसी लागलपेट के बोला, 'जैसे आप जुटा लेते हैं, मालिक!'

पिल्लू का उत्तर सुन मंत्रीजी सकपका गए और बोले, 'क्या मतलब?'

'साफ तो है, मालिक! गरीब तबके को मैं शोषण से मुक्ति दिलाने की बात करूंगा। उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत करने के लिए समाजवाद का नारा बुलंद करूंगा।'

'मगर, बरखुरदार! पूंजीपतियों से क्या कहोगे? उनके बिना तो राजनीति नहीं चला करती!'

'मैं जानता हूं, मालिक! चार-पांच साल में केवल वोट के लिए ही गरीब आम आदमी की आवश्यकता पड़ती है, किंतु अमीर से तो रोज-रोज कमरबंद घिसना है। अतः उनके कान में कहूंगा, तुम्हारे खिलाफ सर्वहारा संगठित हो रहे हैं, मैं उनसे तुम्हारी रक्षा करूंगा। जहां कहीं आवश्यकता होगी तुम्हारे हित में आवाज उठाऊंगा। और मालिक आगे की बात भी बता देता हूं, सभी एक स्थान पर मिल गए, तो सर्वोदय का सिद्धांत जिंदाबाद! सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय! . . . जैसा गाल वैसा तमाचा!'

पिल्लू सिंह की राजनैतिक विचारधारा सुन, मंत्री के चेहरे पर गंभीर भाव काबिज़ हो गए। पालतू और अपने बीच किसी प्रकार का पर्दा न रखने की गलती पर उन्हें पछतावा आने लगा। और सोचने लगे पछताने से भी अब क्या होता है, चिड़ियां तो अब खेत चुग कर ही दम लेंगी। कोशिश बस यही होनी चाहिए कि नुकसान कम से कम हो। इस पछताने के गलियारे बाहर निकलने का प्रयास करते हुए मंत्रीजी ने शंकायुक्त अंतिम प्रश्न किया, 'यह तो ठीक है कि राजनीति के हर पैंतरे का तुम्हें ज्ञान है, किंतु प्रिय पिल्लू! राजनीति में पालतुओं के प्रवेश को विरोधी दल के नेता मुद्दा बना लेंगे और राजनीति की शुद्धता, शुचिता को आधार बनाकर इसका विरोध करेंगे। इस मुद्दे पर आम जनता भी उनके साथ हो जाएगी! तक क्या करोगे?' ही आत्मविश्वास झलक रहा था।

नेताजी ने आश्चर्य व्यक्त करते हुए कहा, 'मेरा फार्मूला!'

'हां, मालिक! आपका फार्मूला!. . . जिस प्रकार राजनीति में प्रवेश पा चुका प्रत्येक अपराधी राजनीति के अपराधीकरण के खिलाफ बोलता है। उसी प्रकार मैं भी जहां आवश्यकता होगी राजनीति में पालतुओं के प्रवेश खिलाफ खुलकर बोलूंगा और अपने साथियों से भी खिलाफत कराऊंगा। मगर मालिक पतनाला तो वहीं गिरेगा जहां मैं चाहूंगा!'

अंततः मरता क्या न करता की तर्ज पर मंत्रीजी ने उसे राजनीति में प्रवेश करने में प्रिय पालतू पिल्लू सिंह को हर संभव सहायता देने का वचन दे ही दिया। वे जानते थे यदि न भी देते तो भी पिल्लू का राजनीति में प्रवेश-निषेध वैसे ही असंभव था जैसे कि राजनीति में भ्रष्टाचार अथवा अपराध निषेध! मंत्रीजी ने गीली आंखों से उसे आशीर्वाद देते हुए कहा, 'जाओ वत्स! पालतू-रथ पर सवार होकर जनसंपर्क करते हुए दिल्ली प्रवेश करो। मैं तुम्हारे स्वागत के लिए वहां तत्पर हूं।'

भोर हुई उनींदा-उनींदा सा शहर जागा। शहर अभी रात में भय और स्तब्धता से मुक्त भी न हो पाया था कि आंख खुलते ही शहर के सभी पालतुओं को सेंटर पार्क की ओर गमन करते पाया। शहर की आंखें फटी की फटी रह गई।

दरअसल सेंटर पार्क में पालतू एकता कमेटी की सभा थी। इसी सभा के आयोजन के लिए शहर के पालतू रातभर जनसंपर्क और गुफ्तगू में मशगूल थे। इसी सभा के बाद मंत्रीजी के पालतू ने बिरादरी की सहमति प्राप्त कर उनके अधिकारों की रक्षा के लिए संघर्ष का बिगुल बजाना था। और इसी पार्क से रथ पर सवार होकर पालतू-रथ-यात्रा का शुभारंभ भी करना था। और समूचे देश की यात्रा करते हुए समापन राजधानी जाकर करने की योजना थी।

धीरे-धीरे समूचा पार्क पालतुओं से भर गया था। चारों दिशाएं पालतू एकता जिंदाबाद के नारों से गुंजायमान थी। भीड़ की तादाद देखकर गली मोहल्ले के पालतुओं ने जाकर पिल्लू सिंह को सूचना दी। सूचना पाते ही पिल्लू ने अपने कारवां के साथ पार्क की चारदीवारी में प्रवेश किया। उसने आज मलमल पर स्थान किया था। माथे पर तिलक सुसज्जित था और गले में तिरंगा पट्टा। पिल्लू को देखते ही जिंदाबाद के नारे गूंजने लगे। मंच पर आकर पिल्लू ने हाथ में लहराकर सभी का अभिवादन किया और मान-सम्मान की रस्म अदा होने के उपरांत उसने भाषण दिया।

अपने भाषण में उसने सर्वहारा, अक्सरियत, अक़ल्लीयत, दलित, समाजवाद, साम्यवाद, सामाजिक न्याय, सर्वजन हिताय-सर्वजन सुखास और सर्वोदय जैसे राजनीतिक

**शेष पृष्ठ 65 पर. . .**

मनजीत शर्मा 'मीरा'

# महंगाई मार गई

सुबह उठकर सबसे पहले 'हिंदुस्तान' में जो मुख्य खबर पढ़ी वह थी–आग लगी महंगाई को।

पिछले तेरह साल का रिकार्ड तोड़ते हुए महंगाई की दर ग्यारह फीसदी का आंकड़ा पार कर चुकी थी। शेयर बाजार औंधे मुंह गिरकर सेंसेक्स को 517 अंक लुढ़का चुका था। मुद्रा स्फीति की आसमान छूती दरों ने बाजार का मनोबल तोड़कर रख दिया था। प्रतिष्ठित एवं नामी कंपनियों के शेयर नीचे आ गए थे। बस नाममात्र की कंपनियों के शेयर ही स्थिर थे।

कुछ बैंक अधिकारियों की टिप्पणी छपी थी कि बाजार दरों में बढ़ोतरी होना तय है इसलिए निवेशक बाजार से दूर ही रहें तो बेहतर है। हां, उनके लिए सोने में निवेश सोने में सुहागे जैसा था।

हम अखबार के पृष्ठ पर पृष्ठ पलटते जा रहे थे लेकिन हर तरफ महंगाई का ही रोना था। मजबूरन हमें वही खबरें बार–बार पढ़नी पड़ रही थीं।

महंगाई की मार से जो सबसे ज्यादा और बुरी तरह प्रभावित थीं वह थीं गृहणियां। उनके अनुसार पिछले सप्ताह आम की जो पेटी 150 रुपए में आती थी उसकी कीमत अब 250 रुपए अदा करनी पड़ रही थी। हरी सब्जियां, दालें, चावल, अनाज, कपड़े, तेल, दूध, घी, चायपत्ती, मटर, सोयाबीन, मक्का, मिर्च, मसाले, पेट्रोल और डीजल हर चीज उछाल पर थी और बेचारी गृहणियां बासमती चावल को केवल सूंघकर फिर उसी बोरी में रख देती थीं और मोटा चावल खरीदने पर मजबूर थीं।

एक ओर वित्त मंत्री का कहना था कि दो अंकों पर पहुंची महंगाई पर काबू पाने के लिए सरकार हर संभव कदम उठाएगी तो दूसरी ओर अर्थशास्त्रियों के अनुसार 'महंगाई अभी और बढ़ेगी' का अंदेशा लोगों की नींद हराम करने के लिए काफी था।

हां, इस बात पर सभी एकमत थे कि महंगाई चाहे पेट्रोलियम पदार्थों की वजह से बढ़े या खाद्य–पदार्थों की वजह से, इसका खामियाजा आम आदमी को ही भुगतना पड़ता है। जेब कटती है तो आम आदमी की, पेट काट–काटकर की गई बचत को दीमक चाटती है तो आम आदमी की और पेट पिचकता है तो आम आदमी का।

अब हम कोई रईसजादे तो थे नहीं कि महंगाई पर छपी ढेर सारी खबरों का हम पर कोई असर नहीं होता। सरकारी दफ्तर में बाबू ही तो थे। वही नौ से पांच की नौकरी और बंधी–बंधाई तनख्वाह। कोई ऊपरी आमदनी भी नहीं। महंगाई से आहत हम अपना सिर धुनने ही लगे थे कि श्रीमती जी ने रेडियो चालू कर दिया, 'रसोई गैस की कीमतें पचास रुपए तक बढ़ा दी गई हैं। सरकार का मानना है कि सिर्फ पैट्रो पदार्थों की वजह से ही महंगाई नहीं बढ़ी है बल्कि लौह अयस्क, स्टील, कपास, दूध, सी–फिश और संतरे जैसी वस्तुओं का भी इसमें बड़ा योगदान है...।' मन में आया कि वहीं बैठे–बैठे चप्पल उठाकर रेडियो पर दे मारे पर हिम्मत नहीं पड़ी। क्योंकि जमीन पर गिरकर रेडियो टूटता तो हमारा और बहुत संभव है चप्पल भी जख्मी हो जाती। अब ये रिस्क लेने को हम कतई तैयार नहीं थे। कल रात पता नहीं किसकी शक्ल देखकर सोए थे कि सुबह छः बजे से आठ बजे तक महंगाई के बारे में ही पढ़–सुन रहे थे। हमें याद आया कि रात को चेहरा तो हमने अपना ही देखा था। लेकिन चेहरे का महंगाई से क्या संबंध? चूंकि महंगाई रूपी कीट हमारे दिमाग में घुसकर खूब उत्पात मचा रहा था इसलिए हमारा दिमाग घूमने लगा। हमें ऐसा लगा जैसे कोई बड़ी–बड़ी घीया, कद्दू, आलू, प्याज, लौकी हमारे सिर पर फोड़ रहा है और हम पगलाने लगे हैं। बड़ी मुश्किल से हमने अपने दिमाग पर नियंत्रण कर खुद को संभाला क्योंकि हम बैठे बिठाए पगलाने के इलाज का खर्च तो कम से कम नहीं ही वहन कर सकते थे।

तभी श्रीमती जी की आवाज कानों में पड़ी, 'मुन्ना के बापू, चाय बना दें....?'

हम दो कप चाय पीते हैं एक अखबार पढ़ने से पहले और दूसरा अखबार पढ़ने के बाद। लेकिन महंगाई की मार को देखते हुए हमने चाय के दूसरे कप के लिए मना कर दिया। श्रीमती जी को हमारी 'ना' से बड़ी हैरानी हुई। बोलीं, 'क्या बात है मुन्ना के बापू, तबियत तो ठीक है?... दूसरी चाय काहे नहीं पीओगे?' हमने कहा, 'भागवान, अब एक कप पर ही गुजारा करना पड़ेगा। चायपत्ती, चीनी, दूध, गैस, तेल, अनाज सबकी कीमतें आसमान तक उछल रही हैं। टिफिन में भी तीन की बजाए दो ही रोटी रखना। आज से हम पानी ज्यादा पिया करेंगे। और देखो, तुम भी अपनी एक रोटी कम कर दो। बैठे–बैठे मुटिया रही हो।'

श्रीमती जी को अपनी रोटी कम करने की बात इतनी नागवार गुजरी कि कमरे में जाकर एक मुड़ी–तुड़ी लाल–सी पर्ची उठा लाई। हमने पूछा क्या है तो तुनककर बोलीं कि खुद ही देख लो।

हमने पर्ची खोल कर देखी तो पानी का बिल था। यानि श्रीमती जी ने जले पर नमक छिड़कते हुए जता दिया था कि देखती हूं अब कितना पानी पीते हो। आए बड़े मेरी रोटियां गिनने वाले, हुंह...।

ऑफिस पहुंचे तो वहां भी यही चर्चा गर्म थी। हर बाबू के पास महंगाई का ही किस्सा था। महंगाई से निपटने के लिए युद्ध स्तर पर कई तरह की योजनाएं बनाई जा रही थीं। बाबू अपनी बरसों पुरानी आदतें तक बदलने को तैयार थे। एक कह रहा था मैं पांच की बजाए तीन बीड़ी ही पिया करूंगा। अब ये कहने वाला ही जानता था और हम भी जानते थे कि किसी भी तरह के नशे की

लत वाले लोग मुसीबत के समय अपने नशे की मात्रा बढ़ा तो सकते हैं लेकिन घटा कदापि नहीं। फिर भी कहने में क्या हर्ज था। दूसरा कह रहा था कि अब मैं दो लीटर के बजाए डेढ़ लीटर दूध ही लिया करूंगा और आधा लीटर पानी मिला दिया करूंगा। यानि नमक लगे ना फिटकरी और रंग चौखा। दूध में पानी मिलाने की बात पर हमें अपना पानी का बिल याद आ गया कि भई इसकी हैसियत इतनी तो है कि दूध में पानी मिला सके। तीसरा अपने बच्चों को प्राइवेट स्कूल से निकालकर सरकारी स्कूल में दाखिल करने की बात कर रहा था। यानि जो सरकार बढ़ती महंगाई पर आंखें मूंदे बैठी है उसी की शरण में जाने की कोशिश। अब सरकारम् शरणम् गच्छामि: के अलावा मरता क्या ना करता। चौथे को कोई फिक्र नहीं थी। उसका कहना था कि वह कर्ज लेकर अपनी सारी जरूरतें पूरी करेगा और छठे वेतन आयोग के बाद मिलने वाले एरियर से अपना सारा कर्जा चुकता कर देगा। लेकिन छठे वेतन आयोग की रिपोर्ट का तो कहीं दूर-दूर तक अता-पता नहीं था।

यानि जितने बाबू, उतनी योजनाएं, उतने बदलाव। हमने भी अपनी चाय और रोटी में कटौती की योजना बताई तो सब हमारा मुंह देखने लगे। अब उन सबमें सबसे ज्यादा लाचार और तंगहाल तो हम ही थे क्योंकि जिनकी बीबियां भी कमाती थीं उन्हें तो कोई फर्क पड़ने वाला था नहीं। उलटा वे तो महंगाई भत्ते और मकान भत्ते में होने वाली बढ़त से खुश ही थे जबकि हमें लग रहा था कि हमें 'सिटी ब्यूटीफुल' से दूर किसी दूर-दराज के छोटे-से कस्बे में ही प्रस्थान करना पड़ेगा।

शाम को टेलीविजन चालू किया तो हर चैनल पर पिछले एक घंटे से महंगाई का ही रोना रोया जा रहा था, 'आज हम आपको बताएंगे कि कैसे महंगाई चुपके से आकर हमारी जेबों को काट रही है, हमारी बचत को चट कर रही है। महंगाई रूपी सांप कैसे अपना फन उठाकर हमारी खाने-पीने की चीजों को विषैला कर रहा है। कैसे. . .? कैसे. . .? महंगाई के दानव से लड़ना है तो अब जाग जाओ. . .।'

और अगले ही पल हमारा ध्यान भंग हो गया। श्रीमती जी ने सुबह की तरह ही एक लाल-सी मुड़ी-तुड़ी पर्ची हमें फिर पकड़ा दी। हम पहले ही चोट खाए हुए थे इसलिए तुरंत समझ गए। झट से टेलीविजन बंद कर दिया। हमने महसूस किया कि हमारी श्रीमती जी को भी घर-खर्च की उतनी ही चिंता है जितनी हमें। आवाज में शहद घोलते हुए हमने कहा, 'हमारी सबेर की बात दिल को मत लगाना। पेटभर रोटी खाई कि नहीं? कित्ती दुबला रही हो। हम कुछ ना कुछ जुगाड़ करेंगे।'

श्रीमती जी पसीज गई, 'का जुगाड़ करोगे? सारा दिन तो दफ्तर में खटत हो।'

'तुम चिंता काहे करती हो?. . .और नहीं तो सुबह उठकर 'हिंदुस्तान' ही बेचेंगे।'

'का?' श्रीमती जी की आंखें भय से फैल गईं।

'हमारा मतलब है, अखबार बेचेंगे। पैसा भी मिलेगा और महंगाई की खबरें भी नहीं पढ़नी पड़ेंगी।'

'काहे. . .?'

अरे भई, जब टैम ही नहीं होगा तो खबरें कब पढ़ेंगे?'

श्रीमती जी की आंखें छलकने को हो आईं। हमने बात का रुख बदलते हुए कहा, 'मुन्ना का कर रहा है?'

'अभी सोया है। बहुत थक गया था। आज स्कूल से पैदल आया है।'

'पैदल क्यों?. . .रिक्शा वाला नहीं आया क्या?'

श्रीमती जी कुछ नहीं बोलीं।

हम सब समझ गए।

'देखो मुन्ना की मां, अब हम इतने गए-गुजरे भी नहीं है कि अपने फूल-से मुन्ना को पैदल स्कूल भेजें। कल रिक्शा वाले को बोल देना कि हमार बबुआ को घर से स्कूल और स्कूल से घर छोड़कर जाया करे, हां. . .।'

मुन्ना की स्कूल की छुट्टियां होने पर इस बार हमने गांव जाने का कार्यक्रम बनाया था ताकि अपने मां-बाबूजी से मिल सकें लेकिन हाय री महंगाई! हमें अपनी यह हसरत पूरी होती नजर नहीं आ रही थी।

काफी देर तक हम इसी उधेड़बुन में रहे कि इस महंगाई रूपी राक्षस से कैसे निपटा जाए।

हमने कहीं पढ़ा था कि अगर खाना धीरे-धीरे चबा-चबाकर खाया जाए तो खाने के दौरान मस्तिष्क अपना सिगनल सही समय पर 'सेटैटी सेंटर' में पहुंचा देता है। यानि यह वह अवस्था होती है जब व्यक्ति को खाना खाने के बाद संतुष्टि होने का संदेश मिलता है और जाहिर है इसके बाद कोई भी व्यक्ति ज्यादा नहीं खा सकता। इस अनोखी तकनीक से खाना खाने से व्यक्ति को कैलोरी, ऊर्जा तो मिलती ही है साथ ही उसका शरीर स्वस्थ भी बना रहता है। जबकि जल्दी-जल्दी खाना खाने से व्यक्ति अधिक खा लेता है और इससे पहले कि ब्रेन सिगनल 'सेटैटी सेंटर' तक पहुंच पाए व्यक्ति की तोंद खाने से ठूंस-ठूंसकर भर चुकी होती है।

भला हो उन डॉक्टरों का जिन्होंने ऐसी-ऐसी महान खोजें की हैं जो मुसीबत के वक्त काम आ सकती हैं। वैसे हमारे बुजुर्ग तो सदियों से कहते आ रहे हैं कि खाने का एक कौर कम से कम बत्तीस बार चबाकर खाना चाहिए लेकिन आज की रफ्तार-भरी जिंदगी में इतना धीरज किसके पास है।

हमने भी आज चाय और रोटी में कटौती की थी। सोचा रात का भोजन इसी तकनीक से किया जाए।. . .लेकिन यह क्या? हम तो भोजन पर ऐसे टूट पड़े जैसे कुत्ता हड्डी पर। और जब तक ब्रेन सिगनल हमारे 'सेटैटी सेंटर' तक पहुंचता हम पांच रोटियां डकार चुके थे। लेकिन हमने हिम्मत नहीं हारी। एक नुस्खा फेल हुआ तो क्या हुआ। हिम्मते मर्दा तो मददे खुदा।

डॉक्टरों द्वारा ईजाद किए गए कई और नुस्खे भी हमारे मस्तिष्क में चक्कर काटने लगे। मसलन, नीम की दातुन करने से दांत और मसूढ़े स्वस्थ रहते हैं। ज्यादा नमक, मिर्च, घी, तेल, चीनी और मसालों का उपयोग स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

हमारे घर के सामने ही नीम का पेड़ लगा है लेकिन हमें उसकी कभी याद नहीं आई थी। पर आज हमने कॉलगेट को अलविदा कहने का मन बना ही लिया।

सरकार भी जानती है कि हिंदुस्तान की जनता इतनी चतुर और कुशल तो है ही कि स्वयं को परिस्थितियों के अनुसार ढाल सकती है। सरकार की सोच पर मुहर लगाने के ख्याल से हम कमर कसकर राशन की सूची बनाने बैठ गए और हिसाब लगाया कि

यदि आटे में तीन किलो, चीनी में आधा किलो, चायपत्ती में दो सौ ग्राम, घी में आधा किलो, दूध में आधा लीटर और नमक, मिर्च, मसालों, सब्जियों में एक निश्चित हिसाब से कटौती की जाए तो कितने रुपयों की बचत हो सकती है कि उतनी ही तनख्वाह में पूरा महीना आराम से निकल जाए। हम उंगलियों पर हिसाब लगाते जा रहे थे। गणित में बेशक हम जरा कमजोर हैं लेकिन घर के राशन-पानी की व्यवस्था हम इस प्रकार करना चाहते थे जैसे कोई चार्टर्ड अकाउंटेंट किसी कंपनी का लेखा-जोखा रखता है।

बड़ी कार्य-कुशलता से हमने राशन की सूची तैयार करके अपने तकिए के नीचे इस ख्याल से रख ली कि इससे पहले कि महंगाई के तेवर और बढ़ें सुबह उठकर सबसे पहले सुपर बाजार से राशन लेकर आएंगे।

सुबह से शाम महंगाई का जाप करते-करते ना जाने कब हमारी आंख लग गई।

'आज लग गई. . .आग लग गई. . .।' चारों तरफ से कुछ ऐसी ही आवाजें आ रही थीं। लोग इधर-उधर भागे जा रहे थे। हमने एक आदमी को रोक कर पूछा, 'भाई, आग कहां लगी है?'

'उधर, गर्म बाजार में।'

'गर्म बाजार में?. . .कैसे?'

'मियां, खुद ही देख लो। हमसे क्या पूछते हो।' उसने हमें ऐसे घूरा जैसे हम कोई अजूबा हों।

हम आगे बढ़ते गए। एक तरफ बड़ा ही विचित्र नजारा था। कुछ गधे गाड़ियों को खींच रहे थे। हमने फिर किसी से इसका कारण पूछा। पता चला कि पेट्रोल की कमी गधों से पूरी की जा रही है। कुछ और दूर गए तो कुछ युवतियां 'शार्ट्स' में घूम रही थीं। तहकीकात की तो पता चला कि कॉलेज की लड़कियों ने अपने कपड़ों में कटौती करके महंगाई के खिलाफ अभियान छेड़ा है। एक पल के हमारे मस्तिष्क में हलचल हुई कि महंगाई और कितनी बढ़े कि 'शार्ट्स' शब्द के सामने 'अति' शब्द और जुड़ जाए। तभी हमें पत्थर से ठोकर लगी और हम लंगड़ाते हुए जैसे-तैसे गर्म बाजार पहुंचे।

'भिंडी कैसे दी?' हमने एक रेहड़ी वाले से पूछा।

'दो रुपए की एक।' कहकर उसने सब्जियों पर पानी का छिड़काव करना शुरू कर दिया।

हम आश्चर्यचकित. . . भौंचक्क। दूसरी रेहड़ी पर पहुंचे।

'भइया, प्याज कैसे दिए?'

'बीस रुपए का एक।'

हम तो जैसे आसमान से गिरे।

'और ये आलू, टिंडे, लौकी, टमाटर?'

'आलू 15 रुपए का एक, टिंडे 14 के दो, टमाटर 10 का 100 ग्राम और लौकी 80 रुपए प्रति नग।'

उसने एक झटके में हमें सारी जानकारी दे दी। अब हमें समझ आ गया था कि गर्म बाजार में कौन-सी आग लगी है।

' कितना तोल दूं?' रेहड़ी वाले ने हमें किंकर्तव्यविमूढ़ देखा तो खुद ही पूछा।

हम बिना कोई जवाब दिए और आगे बढ़ गए जहां एक फल वाला आवाज लगा-लगाकर ग्राहकों को बुला रहा था।

'बाबूजी, हमारी रेहड़ी वाला ठीक होगा। बाकी सबने तो लूट मचा रखी है। इस बार रेट पूछकर हम अपनी मानसिक शांति भंग नहीं करना चाहते थे अत: तुरंत आदेश दिया, 'दो किलो।'

रेहड़ी वाला हमें आंखें फाड़कर देखने लगा।

'ऐसे कैसे देख रहे हो भइया?. . . तोलो. . .आम तोलो. . .।

उसने हमें फिर ऐसे घूरा जैसे हम पगला गए हों या किसी अजायबघर से आए हों।

'ये लो साहब. . .आपने अच्छी बोहनी करवा दी। घर में जरूर कोई फंक्शन होगा। अब बाकी आधा किलो आम और बचे हैं। भगवान की दया से आपके जैसे ग्राहक रोज मिल जाएं तो. . .'

'तो. . .तो क्या. . .?'

'कुछ नहीं बाबूजी. . .भगवान बड़ा दयालु है।'

हमें उसकी बात का अर्थ तो समझ नहीं आया।

हमें उसकी बात का अर्थ तो समझ नहीं आया। बहरहाल हमने पूछा, 'कितने पैसे हुए?'

'420 रुपए साहब।'

'क्या. . .?' हमें जैसे गश-सा आ गया।

'होश में तो हो?'

'आप 418 रुपए दे देना। सुबह-सुबह बोहनी का टाइम है। दो रुपए हम छोड़े देते हैं।'

'साला, चार सौ बीस।' हमने मन ही मन उसे कोसा और आमों से भरा थैला उसकी रेहड़ी पर उलटाकर बुड़बुड़ाते हुए आगे बढ़ गए। रेहड़ी वाले की लानतें-मलानतें दूर तक हमारे कानों में लट्ठ मारती रहीं। हमारी गर्दन शर्म से झुकी जा रही थी।

हम लगभग दौड़ते हुए राशन की एक बड़ी-सी दुकान जिस पर 'उचित दर का राशन मॉल' का बड़ा-सा बोर्ड लगा था, में घुस गए। इतनी बड़ी दुकान में सिर्फ एक ग्राहक था और पूरी की पूरी दुकान खाली पड़ी थी। नौकर उस इकलौते ग्राहक को सामान तोल रहा था और दुकानदार टेलीविजन पर समाचार देख रहा था। बेचारा और कर भी क्या सकता था।

हमने उसकी ओर कोई खास तवज्जो नहीं दी और 'शो-केस' में रखे खाद्य-पदार्थों को निहारने लगे। छोटे-छोटे खानों में हर वस्तु का थोड़ा-थोड़ा माल रखा हुआ था। हमने मन ही मन दुकानदार की तारीफ की। रहा नहीं गया तो कह ही दिया, 'आपका प्रबंधन बहुत बढ़िया है। ऐसा तो हमने पहली बार ही देखा है कि आटा, दाल, चावल, चीनी, घी, तेल आदि को नमूने के तौर पर 'शो-केस' में सजाकर रखा गया हो। ग्राहक को इससे बहुत सुविधा रहती है।'

दुकानदार ने हमारे चेहरे की ओर ऐसे देखा कि हम यहां भी नर्वस हो गए।

'लगता है घर की सारी शॉपिंग आपकी धर्मपत्नी करती हैं। ये जो 'शो-केस' में सामान रखा हुआ है ना, ये नमूने के लिए नहीं है। बोलिए क्या-क्या तुलवा दूं?'

'तभी टेलीविजन पर समाचार वाचक की आवाज सुनाई पड़ी, 'महंगाई की खबर सुनकर चार रिक्शेवालों की मौत। दो मजदूरों ने महंगाई के बोझ तले दम तोड़ा. . .। तीन कामवालियां घायल जिनकी हालत अभी भी गंभीर बनी हुई है। कद्दू के नीचे दबी एक कामवाली को बड़ी मुश्किल से क्रेन की सहायता से बाहर निकाला गया। बाकी दोनों कामवालियां आलू और प्याज के नचे दब गई थीं जिन्हें उनके दयालु मालिकों ने बड़ी हिम्मत से बचाया। खबर मिलने तक उनकी

सांसें रुक-रुककर चल रही थीं।'

खबर सुनकर हमारी सांस भी रुकने लगी। शब्दों की संवेदना हमारे कानों से उतरकर दिल में उतर रही थी। प्रतिदिन कमाकर खाने वालों की हालत वाकई दयनीय होती है। काम मिला तो ठीक नहीं तो फाके। ऐसे लोग बेचारे गर्मी में लू और सर्दी में ठंड से ही मर जाते हैं।

अनायास हमारी नजरें टी.वी. स्क्रीन तक गईं। देखा एक मजूर चावल और दूसरा गेहूं के दाने के नीचे अभी भी दबा पड़ा था। अब हमारा दुकान में खड़ा रहना भी मुश्किल हो गया। हमने फटाफट राशन की सूची दुकानदार को थमाई और कहा कि राशन घर भिजवा दे। पैसे भी वहीं दे देंगे। दुकानदार ने हमें एक 'स्क्रैच-कार्ड' पकड़ा दिया और बताया कि 'लक्की कूपन स्कीम' चालू की है जो भी उपहार निकले दुकान पर आकर ले जाना। हमने सोचा इतने बड़े 'मॉल' के मालिक ही ऐसी आकर्षक योजनाएं चलाते हैं, शायद वॉशिंग मशीन या फ्रिज ही निकल आए।

सब्जी के बिना भी गुजारा मुश्किल ही था। सोचा थोड़ी-बहुत सब्जी और मुन्ना के लिए एक-आध फल भी खरीदते चलें। हम नजरें बचाकर दोबारा गर्म बाजार पहुंचे। आम और सब्जी वाले ने हमें देखकर मुंह दूसरी तरफ फेर दिया। हम भी उनसे छुपते-छुपाते दूर कोने में खड़ी रेहड़ियों के पास पहुंचे। मोलभाव करने के पश्चात हमने दस भिंडियां, दो प्याज, दो आलू और दो सौ ग्राम टमाटर खरीदे। लौकी खरीदने की हमारी हिम्मत नहीं हुई। मुन्ना के लिए एक आम खरीदा जो काफी झकझक के बाद रेहड़ी वाले ने हमें पचास रुपए में दिया।

फल और सब्जी खरीदने के बाद हम थैला और मुंह दोनों लटकाए घर पहुंचे तो नौकर राशन लेकर खड़ा था। बिल देखकर हमें नानी याद आ गई। भुगतान के लिए चालीस रुपए कम पड़ गए। कहां से लाएं? हम चाहते तो नहीं थे लेकिन मुन्ना की गुल्लक तोड़ने के अलावा इस समय हमारे पास कोई और चारा नहीं था। अब केवल एक पांच का सिक्का ही गुल्लक में शेष रह गया था।

तभी हमें 'स्क्रैच कार्ड' का ध्यान आया। हमने कमीज की जेब टटोली और कार्ड श्रीमती जी के हवाले कर कहा कि भई, तुम तो घर की लक्ष्मी हो, अन्नपूर्णा हो, तुम्हीं स्क्रैच करो शायद तुम्हारे भाग्य से कोई बढ़िया आइटम निकल आए। श्रीमती जी ने खुशी-खुशी कार्ड स्क्रैच किया। लिखा था, 'मॉल पर पधारने के लिए धन्यवाद। कृपया इसी तरह मनोबल बनाए रखें।' यानि ऊंची दुकान, फीका पकवान। कार्ड पढ़कर श्रीमती जी ने हमें ऐसे देखा जैसे हम बहुत बड़े बेवकूफ हों। पर खुदा की कसम! पता नहीं क्यों, हमें मॉल के मालिक पर बिल्कुल भी गुस्सा नहीं आया।

खैर! श्रीमती जी ने पुराने डिब्बों को टांड पर रख सारा राशन छोटी-छोटी डिब्बियों, दवा की खाली शीशियों और नमकदानी में भरा और कहने लगीं कि मुन्ना को खांसी और बुखार है। ए.टी.एम. से कुछ रुपए निकाल लाओ। मुन्ना के लिए कैमिस्ट से दवाई लेते आएंगे। कम से कम डॉक्टर की फीस के पैसे तो बचेंगे।

मुन्ना को बुखार की बात सुनकर में पसीने छूटने लगे। हमने उसे गोद में उठाया और दुलारने लगे। मुन्ना के बुखार की तपन से हमारा तन और मन दोनों जल रहे थे। धन कितना जलेगा इसकी खबर अभी हमें नहीं हुई थी। उसे गोद में लिए-लिए पैदल ही ए.टी.एम. तक पहुंचे। इतना भी ध्यान नहीं रहा कि साइकिल पर ही बिठा लें। ऐसी बात नहीं है कि हमारे पास स्कूटर नहीं है। है भई। आखिर सरकार स्कूटर-लोन किसलिए देती है। वो बात अलग है कि अभी तक किश्तें नहीं उतरी हैं। न्यूनतम दर पर जो बनवाई हैं। समय तो लगेगा। लेकिन पेट्रोल कहां से लाएं? अपनी ही टंकी पिचक रही है तो स्कूटर की टंकी कहां से भरवाएं? हमें सबसे ज्यादा गुस्सा इस पापी पेट पर ही आता है कि ऐ खुदा! तू अगर पेट नहीं लगाता तो तेरा क्या बिगड़ जाता।

खैर! ए.टी.एम. पर बैलेंस चैक किया तो खाते में सिर्फ सौ रुपए ही शेष थे। अब या तो मुन्ना की खांसी की दवा ले लो या बुखार की। हमने सोचा कि खांसी की दवा में अल्कोहल की मात्रा काफी रहती है। दवा पीकर मुन्ना चैन की नींद तो सो रहेगा। यही सोचकर हम खांसी की दवा खरीदकर घर आ गए और सोचने लगे कि किस-किस खर्च में और कटौती की जाए कि मुन्ना की बुखार की दवा भी आ जाए। दवा पीकर मुन्ना चैन से सो गया। उसके इस तरह काफी देर तक चैन से सोए रहने से हम घबरा गए और चिल्लाने लगे, 'मुन्ना. . .मुन्ना . . .मुन्ना. . .।'

'क्या हुआ मुन्ना के बापू. . .बेमौसम क्यों चिल्लाते हो?' श्रीमती जी ने हमें झिंझोड़ा तो हम चौंककर उठ बैठे।

'मुन्ना कहां है?' हमारे हलक से बमुश्किल आवाज निकली।

'मुन्ना तो मजे में सो रहा है। आज स्कूल की छुट्टी जो है।'

हमारी जान में जान आई। शुक्र है हम स्वप्न-लोक में विचरण कर रहे थे क्योंकि सुपर बाजार की महंगाई से निपटने के लिए ही हमें कितने पापड़ बेलने पड़ रहे थे ऊपर से ये गर्म बाजार की महंगाई. . .? उफ! तौबा-तौबा! उसने तो हमें भिंडी, लौकी, टमाटर, प्याज और राशन के ऐसे-ऐसे हथौड़े मारे कि हम अभी तक सदमे में हैं।

हमने महसूस किया कि हम शक्तिहीन होते जा रहे हैं। इस लोक की महंगाई स्वप्नलोक में भी हमारा पीछा नहीं छोड़ रही थी। हम बेहद दहशत में थे क्योंकि हमने सारे उपाय करके तो देख ही लिए थे। अब इसके अलावा हम और कर भी क्या सकते थे कि सिर पकड़कर सिर्फ और सिर्फ यह सोचें कि इस देश के डॉक्टरों ने ऐसी कौन-सी तकनीक या दवा ईजाद की है जो महंगाई के साथ-साथ उसके खौफ से भी निजात दिला सके।

1192-बी, सै

**. . . पृष्ठ 61 का शेष**

जुम्लों का खुलकर इस्तेमाल किया। सर्वजन को उनके अधिकारों की रक्षा के प्रति आश्वस्त कर रथयात्रा का शुभारंभ किया। नेता पिल्लू सिंह ने अपने दल में कुछ गधों को भी शामिल करने की मंच से घोषणा की। उसमें से एक वयोवृद्ध को राजधानी विजय रथ पर सम्मानित स्थान भी दिया और उसकी मेहनत, ईमानदारी और वफादारी की चर्चा करते-करते उसने दल-बल सहित राजधानी की ओर कूंच किया। और, शहर! . . .अतीत और वर्तमान को भुलाकर भविष्य की चिंता में डूब गया।

एच.आई.जी.-10
अभय खंड-प्रथम, इंदिरापुरम्
गाजियाबाद-201012 (उ.प्र.)

डॉ. अरुणा सीतेश

# 'वह'- विरोधी बिल

**अरुणा सीतेश का नाम हिंदी-साहित्य जगत का एक चर्चित नाम है। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से स्वस्थ सामाजिक मूल्यों की स्थापना की है। बहुत कम लोगों को पता होगा कि उन्होंने गंभीर व्यंग्य रचनाएं भी लिखी हैं। 'व्यंग्य यात्रा' को उनके पति, प्रख्यात साहित्यकार सीतेश आलोक के माध्यम से अरुणा सीतेश जी की कुछ व्यंग्य रचनाएं प्राप्त हुई हैं। उनमें से एक रचना 'व्यंग्य यात्रा' के पाठकों के लिए प्रस्तुत है। 'व्यंग्य यात्रा' सीतेश आलोक की हृदय से आभारी है।**

**– संपादक**

सिनेमा हॉल से निकलते समय उत्तेजना से मीरा पप्पू थरथरा रही थी। 'इतना बड़ा धोखा रोज़ हम सब के साथ होता है और हमें अब तक पता ही नहीं चला। उनको अपना ही नहीं, सारी नारी जाति का ही नहीं, सारे देश का भविष्य अंधकारमय दिखाई दे रहा था। आज तो पति से दो टूक फैसला करना ही होगा, और अधिक दिन वे आंखों में धूल नहीं झोंक सकेंगे। नहीं, शायद इससे काम न चले। वे महिला संघ की प्रेसीडेंट भी तो है। महिला संघ के द्वारा बात उठाना अधिक ठीक होगा। सब सदस्यों को यह पिक्चर दिखाना भी जरूरी है। धोखा अकेले उन्हीं के साथ तो नहीं हो रहा है, इस धोखे की शिकार तो सभी महिलाएं हैं। 'वह' कितना बड़ा खतरा है–भला कौन समझ पाया होगा? महिलाएं तो ठहरीं भोली भाली–भगवान ने उनका पल्ला बांध दिया छंटे हुए घाघों से और तुर्रा यह कि वे ही उल्टा कहते हैं कि स्त्री का चरित्र एवं पुरुष के भाग्य को समझ पाना असंभव है। जो भी हो, इस राज का पर्दाफ़ाश तो करना ही होगा।

घर पहुंचते ही उन्होंने दफ्तर में फोन किया। पति की सेक्रेट्री की आवाज़ आई–'हलो'। उनके तन बदन में आग लग गई–'तो ये चुड़ैल अब भी वहीं है। सात बज चुके हैं। अब देखूं ये क्या बहाना बनाते हैं।'

बच्चे अगर दो दो थप्पड़ों में ही सहम कर पढ़ने न बैठ गए होते तो पता नहीं क्या होगा। नौकर को भी वो डांट बताई कि वह बाहर बीड़ी पीने चला गया। पति के आने के समय तक वे बेचैनी से जल बिन मीन की तरह छटपटाती हुई इधर उधर घूमती रहीं।

पति आए तो उन्होंने ऊपर से नीचे तक जासूसाना दृष्टि से देखा। क्षण भर को उन्हें अफसोस हुआ कि विशेष जांच के लिए उनके हाथ में दूरबीन क्यों न हुई।

'कहां रहे?' उन्होंने सच उगलवाने की गरज़ से पति को ललकारा।

'बहुत काम है आजकल', मिस्टर पप्पू ने सोफ़े पर निढाल लेटते हुए कहा।

उन्होंने आंख सिकोड़ते हुए गर्दन हिला कर मन ही मन सोचा–'अच्छा बच्चू! सारे बहाने धरे रह जायेंगे। न उस चुड़ैल को झोटा पकड़ के निकलवाया तो मेरा नाम भी मीरा नहीं।'

कोट लेकर टांगने के बहाने लंबी लंबी सांसें लेकर हर तरफ़ सूंघ डाला। खुशबू तो नहीं आई लेकिन. . .

आंखें चौड़ी करके कोट का मुआयना किया. . .कहीं कोई बाल भी नहीं दिखा लेकिन. . .।

छंटे हुए खिलाड़ी कोई सुराग नहीं छोड़ते। कोई बात नहीं। मैंने भी नाकों चने न चबवा दिए तो मेरा नाम नहीं।. . .

महिला संघ के हॉल में साढ़े तीन बजे से ही चहल-पहल शुरू हो गई। सब की ज़बान पर एक ही सवाल–आख़िर हुआ क्या जो आपातकालीन मीटिंग बुलानी पड़ी। आज साड़ियों और जेवरों पर भी नज़र नहीं टिकी। मीरा पप्पू का सुबह सुबह फ़ोन आया तभी से दिमाग परेशान है। अटकलों पर अटकलें।

'आप लोगों ने 'पति पत्नी और वो' देखी है? मीटिंग शुरू होते ही मीरा पप्पू ने खड़े होकर पूछा।

ऐसा अटपटा सवाल! समझ नहीं आया हंसे या रोएं। रेनु पचौरी ने कनपटी पर उंगली छुआ कर पुष्पा हप्पू को इशारा किया कि मामला यहां गड़बड़ लगता है।

'नहीं देखी हो तो तुरंत देख डालिए. . .मैं जानती हूं आप लोग अंग्रेजी फ़िल्में ही देखती हैं। मैंने स्वयं हिंदी फ़िल्में न देखने की क़सम खाई थी। पर कल. . .कल जो कुछ हुआ, जो कुछ मैंने देखा उसके बाद . . .उसके बाद तो समझिए मैं, मैं नहीं रही . . .' मीरा छत में पता नहीं क्या खोजे जा रही थी।

अब तो किसी को भी उनका पेंच ढीला होने में संदेह नहीं रहा।

'हम सभी के पति बड़े-बड़े ओहदों पर हैं। आए दिन लंबे लंबे दौरों पर जाते हैं। रोज़ रात देर तक दफ़्तर में काम करते हैं और अधिकतर छुट्टियां भी दफ़्तर में ही बिताते हैं। है कि नहीं?'

सब के सिर सहमति में आप से आप हिल गए।

'मैं भी यही समझती रही. . .पर कल मुझे पता चला असलियत इससे बिल्कुल उल्टी है. . .हम सब आज तक धोखा खाती रहीं, बेवकूफ बनती रहीं। हमारी सिधाई का हमारे पतियों ने ख़ूब फ़ायदा उठाया, पर हम अब इस धोखाधड़ी को एक पल भी और बर्दाश्त नहीं करेंगे। महिला संघ. . .' मीरा पप्पू ने मुट्ठी बांध कर हाथ ऊपर उठाया

पर उनकी श्रोताओं को तो अभी तक बात का सिर पैर ही समझ नहीं आया था। कुछेक क्षण रुक कर नारा उन्होंने स्वयं ही पूरा किया–'जिंदाबाद'। फिर दुहराया 'महिला संघ–जिंदाबाद, नारी एकता'।

'ज़िंदाबाद. . .ज़िंदाबाद'। अचानक हॉल गूंज उठा। इस नारे तक समस्या न समझ पाने के कारण अब तक चुप बैठी सदस्याएं भी चुप नहीं रह पायीं। ठीक है, मसला नहीं पता तो नहीं पता। बाद में समझ लेंगे। पर इतने अहम् नारे पर चुप कैसे रहा जाए? सब ने अपनी मुट्ठियां बांध कर हवा में लहरा दीं और गले फाड़ दिए।

'प्यारी बहनों, आप नहीं जानतीं कि काम का बहाना बना कर ये पति लोग क्या गुलछर्रे उड़ाते हैं। कल शाम अलका की आंटी मुझे खींच कर न ले गई होती ये पिक्चर दिखाने तो मैं भी कहां जान पाती? पहली बार मुझे पता चला कि सेक्रेट्रीयों/स्टेनो से इन लोगों की कैसी सांठ-गांठ रहती है', मीरा पप्पू ने दसवीं बार रुमाल से मुंह पोंछते हुए कहा।

'हाय दैया' के से अंदाज़ में कई एक महिलाएं 'ओह मॉय गॉड' कह कर निढाल हो गईं।

कुछ का बौखलाहट के मारे बुरा हाल था– 'तो ये राज़ है मिस्टर के आधी-आधी रात को घर पहुंचने का। बहाना बिज़नेस डील का. . .'

'दफ़्तर में काम करने के लिए आठ घंटे तय किए गए हैं। सरकार क्या पागल है जो आठ घंटे तय करके बारह-चौदह घंटे का काम इन लोगों को सौंप देगी?'

अनिता सूद गहरे पश्चाताप से भर उठीं। वह आज तक बेकार ही सरकार को गालियां देती रही कि अफ़सरों को बीबी-बच्चों की तरफ़ ध्यान देने का समय ही नहीं मिलता। मिस्टर सूद कहते कि दिन भर तो पब्लिक डीलिंग में निकल जाता है. . . फ़ाइलें कब निपटाएं? भोली-भाली वह कैसे जान पाती कि आज तक बेवकूफ़ों के स्वर्ग में रहती आयी है?

'ग़ौर कीजिए कि नियत घंटों के बाद दफ़्तरों में कौन रुकता है। बाबू लोग कैसे समय से जाकर समय से लौट आते हैं? वे काम नहीं करते क्या? सुनने में तो यहां तक आता है कि काम निकलवाना हो तो बाबू के पास जाओ। फ़ाइल आगे बढ़ाएगा तो बाबू। साहब के दस्तख़त कराएगा तो बाबू। फिर बाबू लोग कैसे पांच बजते ही दफ़्तर छोड़ देते हैं? बात साफ है–नियत समय के बाद स्टेनो/सेक्रेटी वाले ही दफ़्तर में रुकते हैं। बाकी भला क्यों रुकेंगे? किसके लिए रुकेंगे?' मीरा पप्पू के रुकते ही हॉल' शेम शेम की आवाजों से गूंज उठा।

'मैंने असलियत आपके सामने रख दी। अब आप सब मिल कर तय करें कि हमें क्या करना है, हमें क्या करना चाहिए जिससे. . .' तालियों की गड़गड़ाहट में उनका अंतिम वाक्य डूब गया।

मामला गंभीर था। गंभीरता से ही उस पर विचार विमर्श हुआ। बहुत देर तक होता रहा। हैरानी तो इस बात की थी कि महिला प्रधानमंत्री के होते हुए भी देश की स्त्रियों के साथ ऐसा अन्याय होता रहा और सरकारी तंत्र के पुर्जे ही इसे बढ़ावा देते रहे। पर इस बात की खुशी भी थी कि प्रधानमंत्री के कानों में अगर यह बात एक बार डाल दी जाए तो अफ़सरशाही की मनमानी एक भी दिन नहीं चल पाएगी।

गीता गप्पू का सुझाव था कि बहस व्यापक स्तर पर सरकारी और ग़ैर सरकारी सभी क्षेत्रों को मद्देनज़र रख कर की जाए।

यह भी सवाल उठाया गया कि सेक्रेट्री या स्टेनो के लिए महिलाओं की ही नियुक्ति क्यों की जाती है, क्यों की जानी चाहिए? क्या पुरुष इनके सब दायित्वों को सफलतापूर्वक नहीं निभा सकते? इसी से पतियों के इरादों का खोट पता चल जाता है।

तुर्रा यह कि इन पदों के लिए महिलाओं का सुंदर, चुस्त, कमसिन होना भी आवश्यक समझा जाता है। क्या दक्षता का इन सब चीजों से कोई संबंध है? इससे भी पतियों के इरादे आयने की तरह स्पष्ट हो जाते हैं। है कि नहीं?

उस पर पतियों का रात को देर देर से आना. . .ऐसी हालत में पत्नियों का परेशान हो उठना स्वाभाविक नहीं क्या?

रमा गैंज़ ने कहा कि महिला सेक्रेट्री का चलन अंग्रेजों के ज़माने में ही हुआ होगा। और अंग्रेज़ों ने कुछ सोच समझ कर ही ऐसा किया होगा। अत: हमें सोच विचार करके ही इस मुद्दे पर निर्णय लेना चाहिए। जल्दबाज़ी में नहीं। नीता सिंह का कहना था कि पुरुष सेक्रेट्री की मांग करना अपनी बहनों के रोज़गार के एक बहुत व्यापक आयाम को बंद करना होगा। यह स्त्री जाति के साथ गद्दारी होगी।

सुझाव पर सुझाव। कुछ माने गए। कुछ रद्द हो गए। धैर्य एवं अपनत्व का अद्भुत समां बंधा था। मजाल थी जो किसी की कोई बात किसी के दिल में ख़ंजर सी उतर जाए।

हेमा भार्गव को एक ही शिकायत रही–इतने अहम् मसले पर विचार करना था जो प्रेस के किसी प्रतिनिधि को अवश्य बुलाना था। रात भर में ही देश के कोने कोने में मर्दों का यह कच्चा चिट्ठा पहुंच जाता। कल का सवेरा नारी जाति के लिए एक नया सवेरा होता। मीरा पप्पू ने स्वीकार किया कि बौखलाहट में वे कुछ भी नहीं सोच पायीं। भविष्य के लिए इस बात को नोट कर लिया गया।

तय हुआ कि मर्द लोग चाहें तो महिला सेक्रेट्री ही रख लें लेकिन कुछ शर्तें होंगी जिनका अक्षरश: पालन करना अनिवार्य होगा। सर्वसम्मति से एक दस-सूत्रीय ज्ञापन भी तैयार किया गया जो इस प्रकार है–

1. पैंतीस वर्ष से कम आयु की महिला की किसी भी हालत में नियुक्ति न हो।
2. महिला कम से कम दो बच्चों की मां हो।
3. उसका रंग काला अथवा दबता गेहुंआ हो। गोरी महिलाओं से आवेदन पत्र मंगाए ही न जाएं।
4. दफ़्तर में स्कर्ट पहनने की सख्त मनाही हो।
5. ऊंचे गले और पूरी बाहों के ब्लाउज पहनना अनिवार्य हो। नाभि दर्शाना साड़ी बांधने पर पहली बार मौखिक हिदायत, दूसरी बार लिखित हिदायत और उसके बाद कड़ा फ़ाइन हो।
6. ओठों पर लिपस्टिक और बालों में वेपी पर निषेध हो।
7. कानी अथवा/शीतला माता के प्रकोप से ग्रस्त महिलाओं के लिए बीस प्रतिशत स्थान आरक्षित हों।

**शेष पृष्ठ 69 पर. . .**

शम्भूनाथ सिंह

# बाजार में निकला हूं

इस उथल-पुथल से लबरेज दुनियां में कब किसकी बधिया बैठ जाए, कब कौन स्पुतनिक बन ऊंची उड़ान भर ले जाए, कब कौन पुराने ट्रैक पर लौट जाए, कब कौन नये पैक में अवतरित हो जाए कहा ज़रा कठिन है। अब देखिए, इन दिनों बाजारों का मिजाज का नये ढंग और निराले अंदाज में है। अर्थशास्त्र के नियम से बंधा तो कत्तई नहीं। मांग और आपूर्ति के आधार पर भी नहीं। बस यूं समझ लीजिए कि बिल्कुल एक नये आकर्षक रूप में। एकदम बदला बदला रंग ढंग। अब आप को ढूंढे से भी वो बाजार नहीं मिलेगा, जहां सौदा-सुलुफ निबटा कर लोग पत्ता के दोना में कचौड़ी और जलेबी का आनंद लेते थे। ऐसा आनंद जैसे 'आठहु सिधी नवों निधी' को प्राप्त कर गये हो। अब वो शर्मा जी भी नहीं रहे, जो परले दर्जे के बाजारू किस्म के जीव हुआ करते थे। चाहे सांस लेना भुला जाएं, बाजार जाना नहीं भूलते थे। वो भी खरीददारी करने कम, मोल भाव करने ज्यादा, मगर जाते जरूर थे। अगर कभी नागा मारना ही पड़ा, तो निम्न रक्त-चाप के मरीज की तरह अकबकाने लगते थे। तब लोग उन्हें बजाए चीनी चटाने के, टांग टुंग कर बाजार पहुंचा देते थे, और बाजार पहुंचते ही शर्मा जी गुल्ल-फुल्ल। बेचारे लौट कर रेडियो के समाचार वाचक की तर्ज पर, एक सांस में अरहर मूंग से लेकर धनिया मिर्ची तक का बाजार भाव बांच देते। मगर अब वो बात कहां? चट्टी से लेकर पेठिया तक, मंडी से लेकर हाट तक सब एक-एक कर वीर गति को प्राप्त होते जा रहे हैं, और अब जो इनके स्थान पर नयी पौध अवतरित हो रही है, उसका नाम है, वॉल स्ट्रीट, दलाल स्ट्रीट, स्टॉक एक्सचेंज और 'जबड़ा' बाजार। जिसे चलताऊ भाषा में शापिंग मॉल कहा जाता है। जहां अरबों-खरबों दाएं से बाएं, और बाएं से दाएं ऐसे खिसक जाते हैं, कि न खरीदने वाले के माथे पर शिकन न बेचने वाले के बदन में खरोंच। आप चाहे ताली पीटियो या माथा।

सो हम भी निकल लिए एक दिन नये बाजार की तरफ। बाजार सचमुच नयनाभिराम, दर्शनीय, मन खैंचू। सलमा सितारों से चमचमो होर्डिंग में लिखा था 'विश्व-बाजार में आपका स्वागत है।' मेरा माथा ठनका, यह विश्व बाजार क्या बला है? बाजार तो बाजार होता है, जहां लोग अपने जरूरत सामान खरीदते-बेचते हैं। इसी उधेड़ बुन में आगे बढ़ा। बाजार की तो सचमुच रंगत ही बदली हुई थी। एक से एक बढ़ कर चमचमाते हुए साईन बोर्ड, आंखें चुंधियाती, लाल, पीली, हरी, नीली बत्तियां। शो केश ऐसा, कि छूने को जी ललचाए, माल ऐसा कि बिन खरीदे रहा न जाए। गहमा-गहमी भाग-दौड़, आपा-धापी, शोरगुल, क्रेता से विक्रेता तक बदहवास। हां, मैले कुचैले, चिथड़े वाले, इस बाजार से बाहर धकियाए जा रहे थे। आखिर बाजार का बाजारूपन भी तो बरकरार रखना है। सो 'छूर ही रहो ऐ! भुक्खड़ों! की तर्ज पर उन्हें गरदानियां दिया गया था। एक क्षण तो पछतावा होने लगा, नाहक इतने दिनों तक विमुख रहा बाजार से। फिर सिर झटक कर शामिल हो लिया रेला में। बाजार सचमुच विश्व बाजार का आभास दे रहा था। तमाम तरह के देसी-विदेशी मुखौटे उड़ते फिर रहे थे बाजार में। कमतर कपड़ों में आधुनिकाएं मटक रही थीं, छोड़े-छिछोड़े उनके पीछे लट्टू भये जा रहे थे। यहां सब कुछ बेचा और खरीदा जा रहा था। 'एक ही छत के नीचे सब कुछ' की तर्ज पर नहीं, बल्कि अलग-अलग स्टॉल लगा कर।

पहला स्टॉल हथियारों का था। एक से बढ़कर एक घातक हथियार, बमवर्षक, युद्धक विमान एवं जानलेवा उपकरण, बमों की विशेष वेराइटी, अणु से लेकर परमाणु तक, हाइड्रोजन से लेकर नेपाम तक। खरीद लेने को जी मचल जाए। कोई भी आइटम लेने पर, एक जहाज विदेशी कचरा मुफ्त। जी, हां, विदेशी कचरा भी तो मेरे लिए नेमत है। पैसे की चिंता आप न करें। बगल में विदेशी बैंक है न, चमड़ी उधेड़ लेने की शर्त पर, मनचाहा कर्ज देने को तैयार। रोटी के लिए भले कर्ज न मिले, बम के लिए अवश्य मिलेगा। दलाल कमीशन खोर, लोगों को पटा पटा कर दुकान के अंदर भेज रहे थे।

एक स्टाल पर नंगई, गुंडई, दादागिरी धौंस पट्टी बेची जा रही थी। बाहुबली टाइप के ग्राहकों का जमावड़ा था यहां पर। शरीफ ग्राहक तो पास फटकने की हिम्मत भी नहीं जुटा पाते थे। अगर नमूने के तौर पर दो-चार धौल-धप्पा फ्री में मिल गया तो लेने के देने पड़ जाएंगे।

अगले स्टॉक पर 'ग्रेट सेल' लगा हुआ है, क्रिकेटर बिक रहे हैं, फिल्मी हीरो-हिरोइनें बिक रही हैं। धन-पति थैले का मुंह खोले बैठे हैं। ऊंचा से ऊंचा दाम लगा लो, चल गया तो बेड़ा पार लगा देना। हीरोइनें कपड़े के हिसाब से बिक रही हैं। जितना कम कपड़ा, उतना ज्यादा दाम। नंगी तो 'हॉट-केक' की तरह बिक रही हैं।

आगे बढ़ो! टेंट में माल है तो, यहां आदमी बिक रहा है। चाहे साबूत खरीद लो, या टुकड़े में, आंख, नाक, कान, गुर्दा, फेफड़ा, दिमाग, सब बिक रहा है। यह बात अलग है कि साबूत आदमी का दाम बहुत कम है। सिर्फ रोटी प्याज पर-फिर भी ग्राहक नहीं मिल पा रहा है। थक हार कर आदमी घर लौट जाता है। कल तक बिकने की आस लिए।

एक समझदार व्यक्ति ने बीच बाजार में ही कोचिंग इंस्टीट्यूट खोल रखा है। बाकायदा अपहरण, फिरौती, जाल-साजी, तस्करी, लूट-पाट, राहजनी, हत्या, बलात्कार आदि में डिग्री, डिप्लोमा स्तर का प्रशिक्षण

देकर पैसा बटोर रहा है। उधर बेकार लोग यहां से पढ़ कर लाभान्वित हो रहे हैं।

अगली दुकान सांप्रदायिकता की है। साथ में दंगा फैलाने की किताब मुफ्त। चंदन टीका भगवाधारी से लेकर लंबा कुर्ता, छोटे पाजामा वाले ग्राहकों का जमघट लगा है। पाखंड और अंधविश्वास चाहिए तो वो भी उपलब्ध है। उपहार के तौर पर गंडा, ताबीज रियायती दर पर।

हां! यह स्टाल खूब जगमगा रहा है, जवान लड़के-लड़कियों से लेकर जईफ बुजुर्ग भी यहां मक्खियों की तरह भिनभिना रहे हैं। यहां पर निर्लज्जता बेची जा रही है। थोक खरीद-कीजिए, नंगापन की एक सी. डी. ईनाम पाइए।

बाजू वाले स्टाल पर जातिवाद, प्रदेशवाद, क्षेत्रीयता और अलगाव वाद की सेल लगा रखी है। 'बेहया के लत्तर' की तरह किसी भी जमीन पर भरपूर फसल की गारंटी दी जा रही है। पहले कुछ खास प्रदेशों में ही इसकी उपज होती थी। अब सारा देश इसकी पैदावार में लग गया है। बल्कि देश की मुख्य उपज यही हो गयी है।

कुछ लोग पक्का स्टाल न मिलने की सूरत में फुटपाथ पर ही जम गये हैं। छोटे-छोटे पैकेटों में आंसू, हंसी, ममता, खुशी, प्रेम, करुणा, अपनत्व, भाईचारा, मेल-मिलाप, सौहार्द, दया, मानवता, स्नेह, इज्जत, अस्मत, लज्जा, बेच कर अच्छी कमाई कर रहे हैं। क्योंकि बगल वाले फुटपाथी से उनका कंपटीशन है। वो लगभग मुफ्त में घृणा, द्वेष, ईर्ष्या, दुश्मनी, वैमनस्य, नफरत, गम, क्रूरता, क्रोध, लालसा इत्यादि बेच रहा है। दाम इतना कम है कि लोग डब्बा भर-भर कर खरीद रहे हैं। या यूं कहिए लूट रहे हैं।

वाह रे! बाजार-सॉरी, विश्व बाजार। खरीददारों के लिस्ट चुक जाएं, सामान की कमी नहीं। आप भले थक जाएं, माल हमेशा तरोताजा। आखिर विश्व बाजार जो ठहरा। थक कर मैं भी लौटने को हुआ। पर एक कर्मकांड बाकी था।

गेट के बगल में एक बड़ा सा शामियाना लगा है। बीचो-बीच सजा धजा कर देश का नक्शा रखा हुआ था। उद्घोषक गला फाड़-फाड़ कर चिल्ला रहा था, 'पुड़िया फरोश' की अंदाज में। अभी अभी, जल्दी ही, इसकी नीलामी होने वाली है। आईए, जल्दी आईए! ऊंची से ऊंची बोली लगा कर इसे खरीद ले जाइए। इतना सुंदर, सस्ता और टिकाऊ माल न अब तक मिला था, न मिलेगा। माल के स्वयंभू मालिक बन बैठे धोती, कुर्ता, टोपी, पाजामा में, मूछों पर ताव दे रहे थे। बीच बीच में गेट के तरफ भी आतुर निगाहें दौड़ा लेते। बोली लगाने वाले गेट के बाहर सूट, बूट, टाई, हैट में चहल कदमी कर रहे थे। बीच में बाधा बने कुछ लोग, दोनों के मंसूबों पर पानी फेर रहे थे। नारे बाजी कर रहे थे। 'चाहे जितना दाम लगालो, देश हमारा नहीं बिकेगा।' रस्सा कशी जारी थी। पर कब तक! जब देश के तथाकथित मालिक ही नीलामी पर आमादा हैं। तो बकरे की अम्मा कब तक जान की खैर मांगेगी। (बहरहाल, प्रति रोधकों के बुलंद हौसले को देख कर आस की एक लौ तो जरूर टिमटिमा रही है) रब्बा खैर!

मामला तनातनी की हद तक पहुंचते देख वहां से खिसक लेने में ही अपनी भलाई समझी। मगर इतना आसान थोड़े है, आज के बाजार से सुरक्षित बच निकलना। ठोकर लगना ही था। सो गिरे धड़ाम से। आंख खुल गयी। देखा, चारपाई से मेरा संबंध विच्छेद हो चुका था। मैं धूल धूसरित हो छत की ओर एकटक देखे जा रहा था।

**क्वा. नं.-19/2/1**
**गोविन्दपुर, हाउसिंग कॉलोनी**
**जमशेदपुर-831015**

. . . **पृष्ठ 67 का शेष**

8. सेक्रेट्री की नियुक्ति से संबद्ध पूरी कार्यवाही में आद्योपरांत कम से कम दो वरिष्ठ अफ़सरों की बीवियां आमंत्रित सदस्यों की हैसियत से रहें।
9. छुट्टी के दिन अथवा दफ़्तर के समय के बाद बॉस के कमरे में जाने की ही नहीं, दफ़्तर में रुकने की भी कड़ी मनाही हो, बहाना चाहे कितना भी तगड़ा क्यों न हो।
10. डिक्टेशन लेने के लिए अथवा किसी अन्य कार्य से बॉस के कमरे में जाना हो तो किसी तीसरे व्यक्ति का वहां रहना अनिवार्य हो।

भेंट के दौरान प्रतिनिधि मंडल ने प्रधानमंत्री को स्थिति की गंभीरता से बार बार अवगत कराया। यदि वर्तमान स्थिति को यथावत चलने दिया गया तो पत्नियों का ध्यान घर को सुचारु रूप से चलाने में कैसे लगेगा? दफ़्तर में बैठे पति के कमरे में हो रहे क्रिया कलापों की कल्पना में उलझा उनका मन नून तेल लकड़ी में कैसे लगेगा? बच्चों की तरफ़ भी वे ध्यान नहीं दे पायेंगी जिससे बच्चे ग़लत रास्तों पर चलेंगे-बच्चे जो राष्ट्र का भविष्य हैं, देश की शान हैं, वे ही भटक गए तो देश का क्या होगा? लिहाजा देश के हित में यह परमावश्यक है कि उपरोक्त मांगों का समावेश करते हुए संसद के आने वाले अधिवेशन में एक 'वह' विरोधी बिल पेश किया जाए, जिसके लिए बहुमत सरकार पहले ही इकट्ठा कर ले। हर्ष का विषय है कि प्रधानमंत्री ने उन सबकी कठिनाइयों को पूरे पंद्रह मिनट तक ध्यान से सुना ही नहीं, अपितु इस संबंध में उपयुक्त कार्यवाही करने का भी आश्वासन दिया।

समाचार मिला है कि महिला संघ की जनरल बॉडी ने गत मंगलवार को हुई सभा में निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किए :

1. अलका की आंटी को संघ की आजीवन सदस्या बनाया जाये। न वे मीरा पप्पू को पिक्चर दिखाने ले जातीं, न यह गूढ़ सत्य उजागर होता।
2. नियमित रूप से संघ की सब सदस्याएं हिंदी फ़िल्में देखें जिससे उन्हें पता रहे कि उनके अपने जीवन में और उनके आसपास क्या कुछ हो रहा है।
3. स्थिति की गंभीरता को देखते हुए, प्रत्येक शहर के महिला संघ से संपर्क स्थापित करके शीघ्रातिशीघ्र एक राष्ट्रीय अधिवेशन का आयोजन किया जाए जिसमें इस तरह की महत्वपूर्ण सामाजिक चेतना प्रदान करने वाली सब फ़िल्मों को टैक्स फ़्री किए जाने की भी मांग हो।

**प्रेषक : सीतेश आलोक,**
**120 (प्रथम तल)**
**सेक्टर-15 ए, नोएडा-201301**

सुरेन्द्र सुकुमार

# जूतों का महत्व

गत दिनों मुझे एक जोड़ी जूते खरीदने थे। सो जूतों के बारे में सोचता रहा। दो दिन बाद मैं बहुत चौंका कि चिंतन में लगातार जूता ही चल रहा है यानि कि जूता दिमाग में भी चलने लगा। अब तक तो यही सुना था कि जूता लोगों के बीच में चलता है।

अब दिमाग में जूता घुसा तो ऐसा घुसा कि जूते के विषय में नये-नये तथ्य सामने आने लगे। यों तथ्यों को नये कहना भी गलत होगा। है तो वो बहुत पुराने बहुत आम, पर अब तक दिमाग में नहीं आए। दूकानदार ने तो दार्शनिक मुद्रा में सत्य उद्घाटित किया कि 'जूतों से आदमी की पहचान होती है, आदमी की सबसे पहली नज़र जूतों पर ही पड़ती है। जूतों से आदमी का स्तर नापा जा सकता है। यानि कि जूते स्टैंडर्ड की पहचान होते हैं। अब यह तथ्य बड़ी-बड़ी कंपनियों भी जान गयी हैं इसलिए अब बहुत बड़ी-बड़ी अंतर्राष्ट्रीय कंपनियां जूते के मार्केट में उतर आयी हैं। अब जूता कैसा है इससे मतलब नहीं है जूता किस कंपनी का है यह महत्वपूर्ण है। आपके जूते किस ब्रांड के हैं यह पता चलते ही यह पता पड़ जाएगा कि आप उद्योगपति हैं, बड़े व्यापारी हैं, बड़े अफसर हैं मध्मम दर्जे के आदमी हैं, क्लर्क हैं या चपरासी हैं। जूतों को देखकर आप आसानी से पता कर सकते हैं कि अमुक आदमी का आर्थिक स्तर लगभग ऐसा है यानि कि जूता आदमी का मेजरमेंट है।'

यदि आपकी नज़र में कोई ऐसा जूता आए जिसके तलवे घिसे पिटे हैं फटीचर हैं और किसी जवान लड़के के पैर में हैं तो आप समझ जायंगे कि बेचारा बेरोजगार है गरीबी का मारा है और ऐसे जूते किसी प्रौढ़ व्यक्ति के पैर में हों तो आप तत्काल समझ जायंगे कि बेचारा परिस्थिति का मारा है जवान लड़का बेरोजगार है जवान लड़की शादी के लिए तैयार है आदि-आदि यानि कि जूते आपकी सच्ची कहानी आसानी से बयां कर देते हैं। इसलिए कुछ चालाक लोग अपने हालात छुपाने के लिए यानि कि अपनी इज्जत बचाने के लिए बढ़िया कंपनी का महंगा जूता पहनते हैं चाहे इसके लिए उनको कितने ही जूते चटखाने पड़ें। कहने

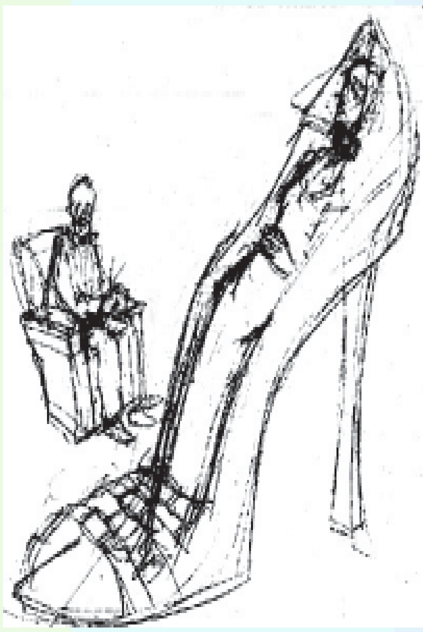

का मतलब आदमी की इज्जत का रखवाला जूता ही होता है यदि एकदम यथार्थ में देखें तो यह बात सोलह आना सही है कि यदि जूता पैरों में पड़ा हो तो इज्जत बढ़ाता है। और यही अगर सर पर पहुंच जाए तो वर्षों की इज्जत पल भर में मिट्टी में मिल जाए। यदि कोई गलत-शलत तरीके से धनाढ्य होकर अहंकारी हो जाता है तो ऐसे लोगों के लिए ही एक मुहावरा प्रचलित है कि 'पैरों की जूती सर पर पहुंचने लगी है।'

जूता ही आदमी की इज्जत घटा सकता है जूता ही आदमी की इज्जत बढ़ा सकता है। आप कितना ही बेशकीमती सूट पहन लें और कीमती टाई लगा लें। रेबैन का चश्मा पहन लें और बिना जूते के नंगे पैर सड़क पर निकल आएं लोग आपको पागल समझने लगेंगे (हां एक अपवाद चित्रकार हुसैन को छोड़ दें तो यों जूता न पहनने के कारण ही वे अपने चित्रों से अधिक चर्चा में आए यहां भी कारण जूता ही रहा) यानि कि जूतों के कारण आप संभ्रांत व्यक्ति गिने जाते हैं लीजिए यदि जूते आपने हाथ में ले लिए और चलाने लगे किसी पर तो पल भर में ही आप संभ्रांत से बदतमीज आदमी कहे जाने लगेंगे। सिद्ध यह होता है कि जूता पहनने के काम आता है और खाने के काम भी, जूता पहनने से इज्जत बढ़ती है और जूता खाने से इज्जत घटती है।

यदि सही अर्थों में देखा जाए तो जूते का सर्वाधिक महत्व है। व्यक्तिगत जीवन में भी, समाज में भी, राजनीति में भी, यानि कि जीवन के हर क्षेत्र में जूतों का सर्वाधिक महत्व है। इसका चलन बहुआयामी है। यह निर्वाध रूप से गली-मुहल्ले, सड़कों से लेकर विधान सभा और संसद तक में चलता है। जब कोई मंत्री कोई बड़ा घोटाला अपनी 'जूतों' की नोक पर कर लेता है तब संसद में महीनों 'जूता' चलता है। यानि कि देश की सभी समस्याएं दर किनार बस जूता ही प्रमुख। इसको इसको इस तरह से भी देखा जा सकता है। जिसका जूता पुजता है वही नेता पुजता है। आप बड़े राष्ट्रीय चरित्रवान नेता हैं तो बने रहिए। यदि आपका जूता नहीं पुज रहा है तो कोई आपको दो टके में भी नहीं पूंछेगा। और अगर आपका जूता पुज रहा है तो आप कोई भी हों, डकैत हों, कत्ली

शेष पृष्ठ 72 पर. . .

रमेश सैनी

# भगवान के दरबार में जूता

मुझे लगता है भगवान एक दिन मेरी प्रार्थना सुन लेगा। अतः आजकल मैं रोज मंदिर जाता हूं। रोज मंदिर में प्रार्थना करता हूं, मगर अभी तक भगवान के मंदिर में मेरी प्रार्थना स्वीकार नहीं हुई है। अब रोज सुबह मंदिर जाता हूं। शाम को मंदिर जाता हूं। भगवान किसी भी समय मेरी प्रार्थना सुन लें। मैं उनसे यही प्रार्थना करता हूं, हे भगवान, मेरा कोई दुमुंहा फटा जूता चुरा ले। फिर मंदिर में जूते एक्सचेंज कर लूंगा। मैं चाहता हूं कोई मेरा जूता चुरा ले, या कोई सज्जन पुरुष धोखे से मेरा जूता पहन ले, जिससे मैं अपनी पसंद के अनुसार उसके बदले मैं अच्छा जूता एक्सचेंज कर लूं। एक्सचेंज से चोरी के आरोप में बच जाऊंगा। मगर मेरा जूता अभी चोरी नहीं गया।

मैं जूता को ऐसी जगह रखता हूं, जिससे सबकी नजर पड़ जाये। देखने में मेरे जूते बहुत अच्छे लगते हैं, दिन में दो बार पालिस करता हूं, जिससे उनकी चमक कम न हो। मगर लोग धोखे में नहीं आते हैं। वे मेरे जूते की ओर नजर घुमाना भी पसंद नहीं करते हैं, और देखकर मुंह बिचका देते हैं। शायद मुझे लगता है लोग मेरे जूते की सच्चाई जानते हैं। जूते चोरी जाएं मैंने अनेक तरीके निकाले। जैसे जूते ऐसी जगह रखता हूं, जहां पर सबकी नजर पड़ जाय, या भीड़ वाली जगह पर रखता हूं, जहां पर लोग धोखे से या जानबूझकर पहन लें। मगर मेरा यह सपना कभी पूरा नहीं हुआ।

रविवार को मैंने सूर्य मंदिर के व्यवस्थापक से पूछा, क्यों भाई! क्या यहां जूते चोरी जाते हैं। मेरा इरादा था, शायद वह 'हां' कहें और कहे कि यहां पर काफी जूते जाते हैं, साथ ही सावधान करें, 'भाई जूते संभाल कर रखो'। मगर उसने ऐसा कुछ नहीं कहा और इत्तला दी कि सुरक्षा व्यवस्था इतनी तगड़ी है कि परिंदा भी पर नहीं मार सकता। यहां पर जूते का अलग रूम है, और वह भी मुफ्त। आप यहां पर जूते रखें, और निश्चिंत होकर दर्शन करें। आप अपने जूते की चिंता न करें। हमारे ऊपर छोड़ दें, मानो आपके जूते का सौ फीसदी बीमा हो गया। फिर आप टोकन लें या न लें। इस मंदिर में अच्छे-अच्छे चोरों की आत्मा या हृदय परिवर्तन हो जाता है। यह अभी-अभी हुआ है, वरना पुराना रिकार्ड ठीक नहीं है। इस मंदिर में नियमित आने वाले श्रद्धालु जानते हैं, इसलिये वे पुराने जूते पहन कर आते हैं। क्योंकि उन्हें नये की गारंटी ही नहीं है, और नये श्रद्धालु की चिंता हम करते हैं। तब मैंने कहा, आपकी इस तरह की व्यवस्था से तो अच्छा भला जूते चोरी का व्यवसाय चौपट हो जायेगा। इससे काफी लोग बेरोजगार हो जायेंगे और सरकार के सामने नयी समस्या हो जायेगी, और आपका अनुकरण यदि शादी ब्याह के समय किया गया, एक अच्छी भली जूता चोरी के नेग की परंपरा लुप्त हो जायेगी, और भारतीय संस्कृति का एक पन्ना गायब हो जायेगा। अतः आप से सविनय निवेदन है कि आप मंदिर में जूता चोरी को प्रोत्साहित करें। मगर वे मेरी बात सुनकर एक अधपके नेता के समान मुस्कुरायें। नेताओं के मुस्कराने के अनेक अर्थ होते हैं और उनके अनुयायी अपने फायदे के हिसाब से अर्थ लगा लेते हैं। मेरे सामने यह समस्या थी कि 'क्या अर्थ लगाऊं' फिर मैंने साहस करके कहा-आप सिर्फ मुस्कुरायें नहीं, वरन् स्पष्ट करें। तब उन्होंने मुस्कुराहट पर विराम लगा दिया और चुप हो गये। उनकी चुप्पी से मुझे कुछ आउटपुट निकलता नजर नहीं आया। उनकी नेताओं जैसी चुप्पी थी। उनकी चुप्पी देख मैं सहम गया और उनकी चुप्पी तोड़ने के लिए कहा- 'भाई साहब! आपकी यह व्यवस्था काफी दुरुस्त है। आप ऐसा क्यों नहीं करते कि अपनी इस व्यवस्था की जानकारी पुलिस को बता दें जिससे चोरियों होना रुक जायें। सारा शहर चैन की नींद सोये। मुहल्ले का चौकीदार रात को न चिल्लाये-जागते-जागते रहो।' मेरी बात सुन कर उनके चेहरे पर पुनः मुस्कान दौड़ गयी। उनकी मुस्कान देख मैं घबड़ा गया। उनमें अजीब सा परिवर्तन हो रहा था। वे मुझे पूरा नेता में परिवर्तित होते दिखने लगे। मैं उनको जनता के समान नमन करने वाला था, कि वे बीच में बोल पड़े मगर इस बार वे उपदेश देने वाले नेता की मुद्रा में थे, भाई साहब ये सब जूता चोर ही थे, जिन्होंने तरक्की कर बड़े-बड़े सामानों पर हाथ फेरना आरंभ कर दिया। हम उन्हें क्या सलाह देंगे, वे ही सलाह देते हैं, और हम अमल करते हैं, आपको तो मालूम होगा चोर सिपाही का खेल। जब वे कुछ दक्षिणा की अपेक्षा करते हैं, तो हम जूता चुरवा देते हैं, जूता चोर से अपनी दक्षिणा ले लेते हैं, इसीलिये हम कहते हैं कि यहां की व्यवस्था मजबूत है, अतः मैंने सोचा यहां पर जूता चुरवाना भी खतरे से खाली नहीं है और लौट पड़ा। मुझे उल्टे पांव लौटते देख उन्होंने कहा अजीब आदमी है। जूता चोरी के डर से भगवान के दर्शन भी नहीं करता। फिर मैंने अपने जूते की ओर देखा। बड़ी खराब तकदीर लेकर आया है या मुझे अपनी तकदीर पर रोना आया कि मेरा जूता चुराने लायक नहीं है। देवानंद ने एक फिल्म में डायलॉग बोला था-जिसके जूते चमकते हैं उसकी किस्मत चमकती है। मैं सोचता हूं अपनी किस्मत को चमकाना है, तो चमकते जूते से इसे बदलना होगा। मेरी इच्छा है कि किसी तरह जूते चोरी हो जाएं।

एक दिन एक प्रतिष्ठित मंदिर गया।

वहां हमेशा अधिक भीड़ रहती है। मुझे लगा यहां पर मेरी इच्छा अवश्य पूरी होगी। मैंने नजर दौड़ाकर जगह तलाशना शुरू किया, जहां से जूते चोरी हो जाय, और मैं दूसरे जूते पहन लूं। एक अच्छी जगह तलाश कर अपने जूते उतार दिये और दूर जाकर बैठ गया। सामने भगवान के दर्शन भी कर रहा था, और साथ ही पलटकर अपने जूते भी देख रहा था मंदिर में भीड़ काफी थी। मेरा मन प्रार्थना में नहीं लग रहा था। मैं सोच रहा था, कि अब जूते गए, तब गए। मगर निराशा ही हाथ लगी। फिर भगवान का ध्यान लगाने की कोशिश की। पलटकर देखा मेरे जूते गायब। मैंने सोचा अपना काम हो गया। अपनी जगह से उठा और अपने जूते के पास रखे जूते पहनकर आगे चल पड़ा कि किसी ने पीछे से मेरे कंधे पर हाथ रखा। मेरी रूह कांप गयी। मैं लगभग पसीने-पसीने हो गया। पीछे मुड़ कर देखा तो सामने मेरा एक पुराना मित्र खड़ा था। उसने छूटते ही कहा-'साले तुम भी' मैंने कहा-क्या मतलब?

– बेटा मुझसे मतलब पूछते हो? उसने कहा।
– क्या कर रहे हो स्पष्ट करो, मैंने कहा।
– साल जूता चुराते शरम नहीं आती?
– जूते चुराते? क्या मतलब, मैंने कोई जूता नहीं चुराया।
– जरा अपने चरणों पर नजर डालो, साले हमसे बनते हो।

मुझे तो मालुम था, फिर भी अनजान बनते हुए अपने पैरों पर नजर डाला और आश्चर्य से कहा, ओह मेरे जूते? ये बदल गये। फिर आसपास नजर दौड़ाई मुझे तो मालूम था कि मेरे जूते चले गए। फिर परेशानी का दिखावा करते हुए कहा, 'ओह मेरे जूते बदल गए। कोई धोखे से मेरे जूते पहन गया और अपने छोड़ गया, और मैंने उसे धोखे से पहन लिया।'

– बेटा ये दिखावा मत कर? उसने कहा।

मैंने सोचा कितने दिनों से कोशिश कर रहा था। जब कोशिश रंग लायी तो लफड़ा हो गया। यह भी लगभग 20 वर्ष के बाद मिला वो भी इस माहौल में। खैर फिर मेरी नजर उसके पैरों पर पड़ी। उसने मेरे जूते पहने थे। मैंने कहा-'बेटा ये तो मेरे जूते हैं।'

– 'मैं कहां कह रहा हूं कि यह मेरे जूते हैं?' उसने उत्तर दिया।
– फिर तेरे जूते कहां हैं? मैंने पूछा।
– मैं तो कभी मंदिर जूते पहन कर नहीं आता हूं। मंदिर नंगे पैर ही आता जाता है। और अच्छे जूते मिल गए, उसे भगवान का प्रसाद मानकर पहन लेता हूं। मगर इस बार धोखा खा गया।
– नये के चक्कर में पुराना पहन लिया। उसने कहा।
– ओह! मैंने कहा।
– 'अब जैसे ऊपर वाले की मर्जी अब जल्दी यहां से निकल पड़ वरना वो जूते पड़ेंगे कि गिन नहीं पाएगा।'

और हम लोग वहां से खिसक लिए।

245/ए.एफ.सी.आई. लाईन
त्रिमूर्ति नगर, दमोह नाका
जबलपुर (म.प्र.) 482002

**. . . पृष्ठ 70 का शेष**

हों, अपराधी हों, बलात्कारी हों, महाभ्रष्ट हों, लोग आपको नेताजी, राजा साहब, कुंवर साहब आदि-आदि संबोधनों से संबोधित करेंगे। राजनीतिक पार्टियों में भी यही हाल है जिस नेता का जूता पुज रहा है पूरी पार्टी उसकी ही। अब कांग्रेस को ही लो। इस समय सोनियां जी का जूता पुज रहा है, कहते रहो विदेशी नहीं आती हिंदी, नहीं आता भाषण देना, न सही सभी कांग्रेसी उनके जूतों की नोक पर। जिसका जूता पुजता है वही शासन करता है। भाजपा में देखिए अटल जी कितने ही भले, महान, विद्वान चरित्रवान, सर्वश्रेष्ठ वक्ता, राजनीतिक गुरु हैं। हैं तो बने रहिए जूता आडवानी और मोदी का ही पुजता है। समाजवादी पार्टी में मुलायम सिंह का जूता पुज रहा था पर अमर सिंह मुलायम सिंह का जूता पूज-पूज कर खुद अपना जूता पुजवाने लगे और बसपा में अकेली मायावती का जूता पुज रहा है इन्होंने भी कांसीराम का जूता पूज-पूज कर उनके जीवनकाल में उनसे ही अपना जूता पुजवो लगी थीं। कुछ लोग ऐसे भी हैं जिनका जूता समूची राजनीति और अपराधनीति में पुजता है जैसे अपने बालठाकरे। ऐसे ही थे श्री चंद्रशेखर। अब वी.पी. सिंह बड़े सिंह बने फिरे पर जूता नहीं पुजवा पाए तो राजनीति के क्षितिज पर पहुंच गए राजनीति में केवल वही सफल हो सकता है जो या तो जूता-पुजवाता रहे या जूता पूजता रहे।

जूता पुजवाने या पूजने की कोई नयी परंपरा नहीं है। यह परंपरा इस देश में सदियों से चली आ रही है। राजा रजवाड़ों के जमाने में, राजा, महाराजाओं, नवाबों, सूबेदारों, हाकिम हुक्कामों और शहर कोतवाल का जूता पुजता था। अंग्रेजों के जमाने में अंग्रेजों का जूता पुजता था और कुछ लोग उनका जूता पूज पूज कर, राय साहब राय बहादुर बनकर अपना जूता पुजवाते थे। तो आज बड़े-बड़े नेताओं, बड़े-बड़े अपराधियों, आला अधिकारियों और शहर कोतवाल का जूता पुजता है। बड़े से बड़ा काम चांदी के जूते से बन जाता है। मुहावरा भी है चांदी का जूता, चांद गरम।

यों इससे पहले भी अगर नज़र दौड़ाएं त्रेता युग में जाएं तो उस युग में तो बाकायदा 14 वर्षों तक राज सिंहासन पर रख कर जूतों को पूजा गया राम के खड़ाऊं उस जमाने के जूते ही तो थे। लीजिए राम भले ही बन-बन नंगे पैर डोलते रहे पर अयोध्या में जूते राम के ही पुजते रहे और भरत उन जूतों को पूज-पूज कर ही महान बन गए। आज भी जूतों को पूज-पूज कर मूर्ख और छुटभइये महान बन जाते हैं।

कहने का मतलब जिसका जूता पुजता है वही इलाके पर शासन करता है वही प्रदेश पर शासन करता है वही देश पर शासन करता है और वही विश्व पर शासन करता है आज पूरे विश्व में अमेरिका का जूता पुज रहा है। सिद्ध यह होता है कि जूता व्यक्ति से इलाके से प्रदेश, देश से और विश्व से भी बड़ा होता है इसलिए मेरी समझ में तो यही आता है कि जूते को राष्ट्रीय चिह्न घोषित कर देना चाहिए।

गंगा-विहार, सुरेन्द्र नगर, अलीगढ़-202001

डॉ. यश गोयल

# कानून व्यवस्था पर निबंध

टीचरजी ने जब पुराने विषय निबंध लिखने के लिए सुझाये तो छात्राओं ने नाक-भौंह सिकोड़ी यह कहकर कि गाय-भैंस-शेर-बाघ-आर्थिक स्थिति-मल्टीनेशनल्स पर निबंध लिखने से क्या लाभ होगा। समय बदल रहा है तेजी से। राजस्थान बीमारू श्रेणी से निकलकर विकसित/विकासशील राज्यों की श्रेणी में आ गया हैं। राज्य उदीयमान है। इन्वेस्टमेंट (पूंजी निवेश) बहुतायत से दहलीज पर खड़ा है।

टीचरजी ने छात्राओं से कहा कि वे अपनी मर्जी से किसी भी ताजा विषय पर लेख लिखें। उसे वे पुरस्कृत भी करेंगी। पुरस्कार में एक पेंसिल/चॉक भी मिल सकता है। सभी प्रसन्न कि उन्हें आजादी मिली जो शायद पिछले 61 वर्षों में नहीं मिली थी। दस-पंद्रह मिनट का समय दिया गया।

एक छात्रा ने अपने संक्षिप्त निबंध में कुछ इस तरह लिखा : आरक्षण, गोलीकांड, डकैती, ब्लास्ट और राज्य में कानून व्यवस्था।

आरक्षण पर एक जाति वर्ग पिछले दो साल से आंदोलनरत। गोलीकांड ने लील ली 60 से अधिक जानें। श्रीगंगानगर के रावला में किसान पानी मांग रहे थे पुलिस ने गोली चलाई 6 लोग मरे। सोहेला में पानी मांग रहे किसानों पर गोली चली - 5 मरे। घड़साना में चंदू राम भी पुलिस गोली का शिकार हुआ। ऋषभदेव मंदिर में एक आदिवासी की पुलिस की बंदूक से मौत। कोटड़ा में एक व्यक्ति पुलिस गोली का शिकार।

इसके अलावा गोलीकांड कई और भी हुए उनमें सैकड़ों इंसान घायल होकर पहुंचे उनमें प्रमुख हैं–मंड़ावा (झुंझुनूं), तबादले के विरोध में ग्रामीणों पर गोली चली। थाने के बाहर डग (झालावाड़) में गोली चली थी।

अश्रु गैस और रबड़ बुलैट का इस्तेमाल उतना ही हुआ जितनी बार आंदोलनकारियों पर लाठीचार्ज किया गया।

राज्य की राजधानी में ही नहीं कई जगह बैंक लुट गये। अजमेर की दरगाह और जयपुर सीरियल बम्ब ब्लास्ट में मरने वालों और घायलों की संख्या असीमित है। 66 तो जयपुर में सरकारी तौर पर बम्ब धमाकों में शहीद हुए। सैकड़ों अस्पताल में अभी भी इलाजरत हैं। अजमेर में सिर्फ तीन मरे थे। कोई अपराधी पकड़ में नहीं आया। क्योंकि जांच चल रही है।

जहरीली शराब पीकर दर्जनों लोग मर गये। यह सिलसिला इसलिए रुका कि गली-गली में दारू की दुकानें खुली थीं। शराब पीकर कईयों की जीवन लीला अस्पताल में कई लीवर के कई रोगों से हुई।

सड़कों पर हो रही दुर्घटनाओं का जिक्र करते हुए छात्रा के आंसू निकल आए। आए दिन दसियों लोग सड़क हादसे में मर रहे हैं। बावजूद इसके कि सरकार राहत पैकेज की घोषणाएं किये जा रही है। मरने वालों का नकद मुआवजा बढ़ा रही है। मृतकों के आश्रित को नौकरी दे रही है। अपराधियों के मुकदमें वापिस ले रही है। राज-काज तब भी मुस्करा रहा हैं उन चीयर्स गर्ल्स की तरह जो क्रिकेट के मैदान में अंगप्रदर्शन से दर्शकों का मनोरंजन कर रही हैं।

जैस ही टीचरजी ने निबंध पढ़ा उसके रौंगटे खड़े हो गये। छात्रा को डांटते हुए टीचरजी बोली, 'तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई यह लिखने की। तुम्हें मालूम होना चाहिए कि राज्य में अपराध दर कम हो रही है। यह तथ्य गृहमंत्री कई बार विधान सभा में प्रस्तुत कर चुके हैं। गोली चलाना सरकार की मजबूरी होती है। आत्मरक्षा और जनता की सुरक्षा के लिए गोली चलानी पड़ती है। देखती नहीं कि पूरा राज्य किलेनुमा सुरक्षा में मजफूज़ है। चंद लोग हैं जो राजशाही से तंग आकर विद्रोह करते हैं। आम नागरिक कितना प्रसन्न है। चुनाव की प्रतीक्षा कर रहा है। तुमने ऐसा निबंध लिख कर राज्य सरकार की नाक कटवाने की सोच का परिचय दिया है। तुम खड़ी हो जाओ। दोनों हाथ आगे करो।'

छात्रा हिम्मत से खड़ी हुई। दोनों हथेलियां टीचरजी के आगे कर दी। तड़ाक-तड़ाक से बेंत के निशान गोरे-मासूम हाथों की हथलियों पर छप गये। छात्रा के एक आंसू नहीं आया। क्योंकि मनुष्य की मौतों का जिक्र करते हुए वह पहले ही अंदर तक रो चुकी थी।

486, जादोन नगर, दुर्गापुरा, जयपुर


## रमाकान्त स्मृति कहानी पुरस्कार

रमाकान्त स्मृति कहानी पुरस्कार हेतु 2008 में प्रकाशित किसी युवा लेखक की किसी कहानी ने यदि आपको बहुत प्रभावित किया हो और आपको लगे कि यही वह कहानी है जिसे 2009 का रमाकांत स्मृति कहानी पुरस्कार मिलना चाहिए तो उसकी एक प्रति अपनी संस्तुति के साथ इस पते पर 31 मई, 2008 तक अवश्य भेज दीजिए। इस बार के निर्णायक हैं श्री विजयमोहन सिंह।

**संयोजक,**
**रमाकान्त स्मृति**
**कहानी पुरस्कार समिति**
**सी-3/51, सादतपुर**
**दिल्ली-110094**

राजेन्द्र उपाध्याय

# मधुमेही रोगी की व्यथाकथा

रसीले फलों की ओर देखो, मगर चूसो नहीं। उन्हें चूसने खाने, पीने, काटने की मनाही है। बचपन में खेत से तोड़कर जो गन्ना चूसता था– उसकी रह रहकर याद आती है। बाल्टी में ठंडे पानी में भर कर जो आम चूसने की प्रतियोगिता होती थी– वह भी अब एक भूली-बिसरी कथा बनकर रह गई है। केवल करेला खाओ, जामुन चूसो, लौकी का रस पियो। आम न खाओ, केला न खाओ, सेब न खाओ, अमरूद न खाओ, आड़ू, प्लम, नासपाती कुछ न खाओ। केवल देखो–रसीले अनारों की ओर। केवल देखकर ही उनका रस लो, जैसे युवतियों को देखकर लेते हो। छुओ नहीं उन्हें। केवल देखकर ही उन पर कविता लिखो। अंगवर्णन करो।

यह जीवन तो व्यर्थ ही गया। मधुमेह रोगी क्या करे। केवल रोटी-करेला खाकर रहे। दाल-चावल-आलू का भुर्ता नहीं। पूड़ी, परांठा, घी नहीं। परहेज, परहेज, परहेज।

जब से मधुमेह का दीमक शरीर में लगा है– रोज सुबह घूमने जाता हूं। मित्रों के फोन आते हैं– 'साहब! मोर्निंगवॉक को गए हो ऊपर वाले बोलते हैं ताना मारकर।' अच्छा अब मोर्निंगवॉक भी शुरु कर दिया है।' पत्नी कहती है वहां भी टाईट कपड़े पहने लड़कियों को देखने जाते होगे।

घूमने न जाओ– तो दिन पर 'मधुचर्या' बनी रहती है। दिनभर नींद, बस नींद, ऐसी कैसी नींद। सुस्ती सी छाई रहती है। बदन में। चलने-फिरने में दिक्कत आती है। पसीने-पसीने हो जाता हूं।

अपने दफ्तर के पास मधुमेह शिविर लगा था– जांच कराने गया तो डरा दिया। कुछ दिन में आपकी आंखें खराब हो जाएंगी– गुर्दे खराब हो जाएंगे– पैरों की हड्डियां गल जाएंगी। इ.सी.जी. किया। सब किया। एग गोरी डॉक्टरनी बैठी थी– उसके पास गया– उसने 'डाईट पार्टी' (भोजन मानचित्र) बना दिया। सुबह ये खाना है, ये नहीं खाना है। देखा तो संसार के सब मधुरतम पदार्थ और वस्तुएं तज्य हैं। केवल देखने भर को हैं– जैसे केला, आम, चीकू, अंगूर, सब देखने भर को है। केवल उबला हुआ अनाज खाएं। दूध गाय-भैंस का नहीं पिए। मदर डेयरी का घी निकला हुआ पिए। चावल-आलू न खाएं। कचोरी-समोसा-चाट सब बंद। केवल अमरूद खाएं। गन्ने का रस क्या कोई भी रस न पिएं। जीवन में रस ही नहीं बचा है।

आज जब यह सब लिख रहा हूं तो पता लगा कि आज विश्व मधुमेह दिवस है। विश्व में एक ओर तो इतनी सारी कड़वाहट है, दूसरी तरफ उतनी ही तादाद से मीठे लोगों की संख्या भी बढ़ती ही जा रही है। मधुमेह की बीमारी एक बड़ी महामारी का रूप लेती जा रही है, हर वर्ष कई नए रोगियों का पता चलता है। कई रोगी तो ऐसे हैं जिन्हें मधुमेह की बीमारी तो है परंतु वो इससे बेखबर मधुर जीवन जीते रहते हैं। डॉक्टर पूछता है क्या आपके पिताजी को ये बीमारी हैं? मैं कहता हूं– 'हैं'। उनके पिताजी को भी थी। मैं कहता हूं– 'पता नहीं' गांव में रहनेवाले दादा कहां मधुमेह की जांच कराने जाते। हो भी तो क्या? खूब पैदल चलते थे। गन्ना चूसते थे। बगैर भूख लगे खाना खाते नहीं थे। इतने बजे नाश्ता कर ही लेना है। लंच कर ही लेना है एक बजे–ऐसी कोई मजबूरी नहीं थी। दादा लंबी आयु पाकर गोलोकवासी हुए।

अब दीपावली त्यौहार पर इतनी मिठाइयां आईं–सब केवल देखकर ही फ्रिज में रख दी। कोई आएगा तो खिलाएंगे। आए भी कहा तो मिठाई देखकर दूर से ही हाथ जोड़ने लगे। 'कविजी! कुछ कड़वा' रखा हो तो पिलाइए?' मैं भी कई जगह गया– मिठाई देखकर दूर से ही हाथ जोड़ता रहा। 'कड़वा' भी मना किया। 'कड़वा' भी भीतर जाकर मीठा हो जाता है। जामुन की गुठली हो तो दीजिए। करेला खाईए खिलाईए। हमारे दफ्तर में हर मंगलवार को एक हनुमान भक्त हनुमान जी का प्रसाद लाते हैं। दूर से ही मना करता हूं। फिर भी आग्रह के आगे और बजरंगबली के आगे झुकना पड़ता है। थोड़ा सा तो लीजिए करके मुट्ठी भर देते हैं। हारकर लेकर चपरासी को देना पड़ता है या कई बार कोई नहीं मिला तो पैंट की जेब से रख लिया। बाद में उस जेब में भी चींटियां हो गईं। चीटियां इतनी ज्यादा चीनी खाती हैं। चींटियों को मधुमेह क्यों नहीं होता। बाथरूम में भी कई बार चींटियां परिवार के किसी सदस्य को मधुमेह होने का पता देती है।

हाल में अशोक वाजपेयी के कलाओं के अंतराबंध में गया। वहां भोजन का अंर्तसंबंध देखा गया। रायते के साथ चिकन और मटन और रसगुल्ला भी शोभायमान था। मैं जन्मजात कवि हूं और जन्मजात शाकाहारी भी हूं। पर अच्छे-अच्छे मधुरकवियों को रसगुल्ला खाते देख उत्साहवर्धन हुआ। मन के हारे हार है। मन के हारे हार गया। रसगुल्ला मुंह में रखा गया। दिव्यआनंद प्राप्त हुआ। खाकर मरना है। भूखे क्यों मरते। पत्नी भी वहां टोकने को नहीं थी। वह तो 'पनीर' भी नहीं खाने देती।

संसार भर में लगभग 17 करोड़ 7 लाख मधुमेह के रोगी हैं, जिनकी संख्या विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार सन 2015 तक बढ़कर 30 करोड़ हो जाएगी। भारत में उस समय मेरे मधुमेह-सखाओं की संख्या 5 करोड़ सात लाख हो जाएगी। हो सकता है तब तक आज के कई रसगुल्ला प्रेमी गोलोकवासी हो जाए। या कोई ऐसा रामदास आए जो मधुमेह के नाश के लिए रसगुल्ला के उत्पादन, विक्रय पर ही प्रतिबंध लगा दे या जो कोई रसगुल्ला गुलाब जामुन खाता दिखे उस पर पांच सौ का जुर्माना ही ठोंक दे।

21-बी, लॉ अपार्टमेंट्स
कड़कड़डूमा, दिल्ली-110092

पूरन सरमा

# मोबाइल एनसाइक्लोपीडिया

यह बस व्यवस्था पर व्यंग्य नहीं है। यदि यह रचना व्यंग्य हो जाती है तो इसकी संपूर्ण जिम्मेदारी मैं अपने पर नहीं लेकर मुसद्दीलाल पर डालना चाहूंगा। मुसद्दीलाल को तो आप भी जानते होंगे। वही मुसद्दीलाल जो बस की सीट पर आपके बराबर में बैठा आपको अपनी चिंताओं में एकाग्र नहीं होने देता। आप कहीं कंस्ट्रेशन को सचेष्ट होते हैं, तभी वह अपना एकालाप प्रारंभ कर आपको बोरियत के चरम पर पहुंचाता है। मुसद्दीलाल अधेड़ उम्र का झोला लटकाये पूरी बस में बस इधर से उधर होता रहता है। वह हर यात्री से परिचय पाना चाहता है। परिवहन व बस सेवा से जुड़ी सभी समस्याओं के समाधान हैं उसके पास। वह बसों का समय, कितनी संख्या में किस मार्ग पर कौन-सी बसें चल रही हैं आदि की वैविध्यपूर्ण जानकारी रखता है। मुसद्दीलाल का कहना है कि जब वह उस कालोनी में रहने आया था, तब एक भी बस नहीं चलती थी और उसी ने बसों का श्री गणेश करवाया। हम लोग तो उसके किये का सुफल भोग रहे हैं।

मुसद्दीलाल बसों में इस तरह थूकता है—जैसे वे उसके निजी स्वामित्व की हों, नगर बस सेवा को उसने ही बहाल किया हुआ है अन्यथा अव्यवस्था होने में थोड़ी भी देर नहीं लगे। मैं तो यह भी कह सकता हूं कि मुसद्दीलाल यदि नहीं होते तो शहर की बसें शमशान लगतीं। उन्हीं की देन है कि आज बसें आबाद हैं। मुसद्दीलाल की उपस्थिति बड़ी सुखद होती है। पूरे यात्री उन्हें मनोरंजन मानकर बसों में बने हुए हैं, जिस गंभीरता से बस व्यवस्था को उन्होंने लिया है—वह बसों का निजीकरण करने के लिए पर्याप्त है।

मुसद्दीलाल आपकी बगल में बैठा कभी अकेला बड़बड़ायेगा तो कभी आपको खिड़की से सड़क पर दौड़ती दूसरी बसों के सामान्य ज्ञान से परिचित करायेगा। वह कहेगा वह बस सांगानेर जा रही है तो दूसरी बस मानसरोवर। वह कहेगा कि उसने घर से निकलने में थोड़ी देर कर दी अन्यथा वह पांच मिनट पहले गंतव्य पर पहुंच गया होता। वह हर बस स्टैंड पर सजगता से देखता है कि कितनी सवारियां बस में आयीं तथा थोड़ी देर में वह पुख्ता आंकड़ा आपको मिल जायेगा। वह यात्रियों की आपस की बातें, कंडक्टर और ड्राइवर का मनमुटाव तथा किराये को लेकर होने वाली हुज्जत का आंखों देखा हाल सुनाता रहता है। वह कभी यह भी कहता है कि बस आजादी का ऐसा फल है— जिसे खाने से लोकतंत्र का अस्तित्व बना रहता है। इस प्रकार से मुसद्दीलाल अब बस में कंडक्टर से कहीं ज्यादा बेहतर स्थिति को प्राप्त हो गया है।

मुसद्दीलाल बस में बैठता नहीं, वह लोगों को बैठाता है। उसे कोई अपने साथ बैठने को कहे या न कहे, वह अपने हाथ से सवारियों को बैठे रहने का संकेत देता रहता है।

अनेक लोग तो ऐसे हैं तो उसे देखते ही आंखें चार करने की हिम्मत नहीं जुटा पाते हैं। वे जानते हैं, उससे साक्षात्कार होते ही वे अपने अमन-चैन से हाथ धो बैठेंगे। इसलिए वे यथासंभव इस उड़ते तीर से नहीं भिड़ना चाहते। मुसद्दीलाल आपसी सद्भाव तथा राष्ट्रीय विकास का द्योतक है। वह राष्ट्रीय भावनाओं से लबरेज सामयिक राजनीति पर बेलोस अपनी अमूल्य टिप्पणी देता रहता है। उस समय पर वह इतना गंभीर रहता है कि आपके भी एक बार तो उसे देखते ही रोंगटे खड़े हो जायें। उस समय मुसद्दीलाल शहीदाना अंदाज में राष्ट्र की एकता और अखंडता का आह्वान करते देखा जा सकता है।

मेरा जब सबसे पहले उससे मिलन हुआ तो मैं नहीं जान पाया था कि यह बला इतनी विकट है। अपना विजिटिंग कार्ड देकर उसने आगाह किया था— संभालकर रखना, बहुत काम आयेगा। मैं कार्ड को बिना देखे रखने लगा तो उसने निर्देशित किया— 'पहले कार्ड को पढ़ो तो सही। बिना देखे ही कैसे रख रहे हो?' हार कर मैंने अनमने भाव से कार्ड देखा तो उसमें उसकी तमाम डिग्रियां अंकित थीं। कुल ग्यारह परीक्षायें उत्तीर्ण करने के बाद वह व्यवस्था कायम करने में सफल हो सका था। उसी दिन वह मेरे और अधिक पास आया और कान में बोला— 'मेरा सभी बसों में बहुत सम्मान होता है, यात्री मुझे बैठाने को अपनी सीटों से खड़े हो जाते हैं।'

मैं बोला— 'लेकिन आप तो खड़े हुए हैं? किसी ने बैठाया क्यों नहीं?'

वह बोला— 'अभी मुझे किसी ने देखा नहीं।'

जबकि मैंने पाया कि बस की अधिकांश सवारियां उन्हें देख कर हंस रही थी। वह फिर बोला— 'इसी डर से कि कहीं बस में मेरे सम्मान में अफरा-तफरी न मच जाये, मैं किसी कोने में भीड़ में दुबका खड़ा रहता हूं।'

मैंने पिंड छुड़ाने की दृष्टि से कहा— 'अब भी आप किसी कोने में जा छिपें, हो सकता है लोग आपको देख लें।' वह वाकई पीछे कोने में डरा-सहमा सा जा खड़ा हुआ। मैंने राहत की सांस ली। जान बची और लाखों पाये।

एक दिन फिर मुसद्दी मेरे पास बस में आया और बोला— 'तुमने देखा, लोग मुझे कितना सम्मान देते हैं?'

मैंने कहा— 'हां, मैंने देख लिया है। आपने जो यह अद्भुत शक्ति पायी है— इसके आगे तो मैं भी नतमस्तक हूं। लेकिन मेरी दोनों टांगों में दर्द है— इसलिए न तो मैं सम्मान में खड़ा हो सकता हूं और न ही आपको सीट दे सकता हूं।'

हरीश कुमार 'अमित'

# कुत्ते क्यों न हुए

मुसद्दी की कनपटियां भृकुटियों के साथ तन गईं और वह फिर कोने में जा दुबका, तब से आज तक मुसद्दी वहीं खड़ा है और मुझे गुस्से में घूरे जा रहा है।

उसका क्रोध वाजिब है– क्योंकि लोग उसे गंभीरता से नहीं ले रहे हैं और उसका सम्मान नहीं कर रहे हैं। इसके लिए वह अपने आपको दोषी नहीं मानते अपितु मुझे अपराधी ठहराते हैं। उनका मानना है कि मैंने ही लोगों को जागरूक किया है तथा नगर बस सेवा में रोज यात्रा करने वाले यात्रियों में मैंने ही कोई विरोध भावना पनपायी है। जबकि असलियत यह है कि वह स्वयं वाचाल, चिपकू, सिर खाऊ तथा बोर करने वाला प्राणी है। उसने कभी खुद के गिरेबान में नहीं झांका। उसने मेरे में झांका है और मैं उसका जानी दुश्मन हो गया हूं।

फिर भी मुसद्दी समय की आवश्यकता है। वह परिवहन विभाग जो पूछताछ की व्यवस्था नहीं कर पाया 'मोबाइल एनसाइक्लोपीडिया' है, वह बसों के उद्‌भव और विकास के साथ उसके दायरों में हुये घोटालों तक को आत्मसात किये हुए है। वह स्त्रियों पर अधिक मेहरबान है। पास में यदि पुरुष बैठा हुआ है तो येन-केन सांस्कृतिक मर्यादाओं का स्मरण करवाकर उठा देगा तथा महिला को बराबर में बैठा लेगा। वह सांस्कृतिक भावभूमि को सदैव बल देता आया है तथा संस्कृति के भाव बिंदुओं का प्रचार करता रहा है। मुसद्दीलाल से आप भी मिलें तो सम्मान में अपनी सीट से खड़े हो जायें। वह मुस्कुराकर उस पर बैठ जायेगा, आप जहर का घूंट पीकर रह जायेंगे, सीट से नहीं उठे तो वह बस के कोने में आपको घूरता दिखायी देगा। देख लें आप उसकी नजरों का सामना कर पायेंगे या नहीं?

124/61-62, अग्रवाल फार्म
मानसरोवर, जयपुर-302020 (राजस्थान)

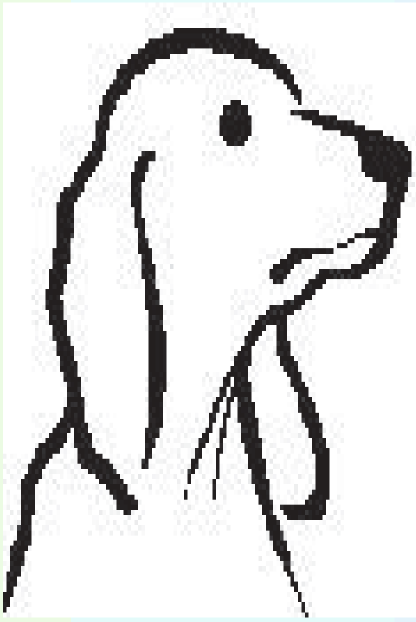

सुना है ऐसे फॉर्म हाउस भी हैं जहां कुत्ते छुट्टियां मना सकते हैं। कुत्तों के मालिक जब खुद छुट्टियां मनाने कहीं जाते हैं, तो अपने कुत्तों की देखभाल के लिए उन्हें ऐसे फॉर्म हाउसों में छोड़ देते हैं। अपनी-अपनी किस्मत की बात है साहब!

ऐसी योजनाएं हम अक्सर बनाते रहते हैं कि इस साल तो नहीं, पर अगले साल कहीं-न-कहीं छुट्टियां मनाने जरूर जाएंगे। बीवी-बच्चे जब यह पूछते हैं कि अगले साल क्यों, इस साल क्यों नहीं, तो हम कोई-न-कोई अदद बहाना बनाकर उन्हें इस साल कहीं बाहर न जा सकते की एक नहीं कई वजहें बता दिया करते हैं। वैसे दरअसल वजह तो एक ही होती है- कड़की, पर यह सच उन लोगों के सामने कहां-कहां। सो वजह के तौर पर हम कभी दफ़्तर के काम की बात कह दिया करते हैं तो कभी बच्चों की होने वाली परीक्षाओं का हौवा दिखा दिया करते हैं।

हमें तो पालतू कुत्तों के छुट्टियां मनाने की बात पर ही हैरानी होती है। ऐसे कुत्ते तो सारा साल वैसे ही छुट्टी पर होते हैं। सुबह-शाम अपने मालिक (या मालकिन) के साथ घर से बाहर घूमने जाना, दिन-भर खाना-पीना, मालिक (या मालकिन) और उसके परिवार के साथ लाड़ लड़ाना, जब-तब पूंछ हिलाना, ज़रूरत पड़े तो दिन में एकाध बार भौंक लेना और रात को बढ़िया बिस्तर में सो जाना यही काम तो वे सारे दिन में किया करते हैं। ऐसे कामों को करते हुए वे छुट्टियां ही तो मना रहे होते हैं, कोई ड्यूटी तो बजा नहीं रहे होते जो उन्हें छुट्टियां बिताने के लिए आलीशान फॉर्म हाउसों की जरूरत पड़े।

इससे उलट हम जैसे लोगों की ज़िंदगी तो दिन-रात नरक की आग की भट्टी में झुलसने जैसी होती है। सुबह से रात तक भागदौड़, नौकरी बजाने के झंझट, पैसों की दिक्कत, परिवार की मुश्किलें और न जाने क्या-क्या। हम लोगों के लिए छुट्टी का प्रोग्राम बनाने की बात सोचता भी एक दण्ड जैसा है। ऐसे किसी प्रोग्राम के बारे में सोचना शुरू करते ही सबसे पहले तो पैसों की कमी का भूत सिर चढ़कर नाचने लगता है। घर-परिवार की पचासों जरूरतें जब सामने हों तो छुट्टियां मनाने की बात सोचना भी पाप लगता है।

सच तो यह है कि इस तरह घिसट-घिसटकर मनाई गई छुट्टियों में भी हमें उन कुत्तों की ही याद आती रहती है, जिनका वर्णन हमने शुरू में किया है। रह-रहकर यही बात हमारे मन में चक्कर काटती रहती है कि हम इंसान ही क्यों हुए, हम उसी तरह के कुत्ते क्यों न हुए जिनके लिए छुट्टियां मनाने के वास्ते फॉर्म हाउस बने हुए हैं।

304, एम.एस.-4,
केन्द्रीय विहार, सै
गुडगांव-122003 (हरियाणा)

शरद उपाध्याय

# साहब का जाना

साहब चले गए। सब कुछ अचानक ही हुआ। मुख्यालय से अचानक आदेश आया और हंसते-खेलते साहब चले गए। वे हंस रहे थे, ठहाके लगा रहे थे, अठखेलियां कर रहे थे, भक्तजनों की भीड़ में मगन थे, भक्तजन मुग्धभाव से उनकी लीलाओं को देख रहे थे। सामान्यजन, भक्तजनों द्वारा किए गए वर्णन को सुनकर धन्य महसूस कर रहे थे। कि अचानक साहब चले गए। साहब बहुत दिनों से थे व सबसे बड़ी बात लाभ के पद पर थे। लाभ के पद पर होने से उनकी महत्ता कई गुना बढ़ जाती थी। वैसे कार्यालय में कई तरह के साहब पाए जाते थे। बड़ा कार्यालय था, भांति-भांति के विभाग थे तो नाना प्रकार के साहब भी थे। पर उन सबमें उनकी बात निराली थी।

वे सरकार में थे। पर उनकी भी अपनी एक सरकार थी। सरकार के अपने नियम थे। तो उन्होंने भी समानान्तर रूप से एक सरकार चला रखी थी। सरकार अपने हिसाब से नियम बनाती, पर उनकी व्याख्या वे अपने हिसाब से ही करते थे। सरकार नियम पर नियम बनाती, वे तोड़ते चले जाते। सरकार जिस बात के लिए रोक लगाती। वे उसे खुले रूप से करते। उनकी दबंगता और बहादुरी के किस्से आमजनों के लिए चर्चा के विषय थे।

वैसे साहब कई तरह के होते हैं। पर उनकी बात निराली ही थी। चूंकि साहब थे तो स्वाभाविक रूप से उनके बहुत से चमचे थे। चमचों की कई किस्में थी। कोई खास था, कोई साधारण। कोई इन चमचों का भी खास था, कोई उपचमचा था, तो कोई सबचमचा था। साहब के पास बहुत से काम थे। काम के कारण उनके पास समय कम रहता था। जो कम समय बचता था, उस समय कोपाने के लिए भक्तजनों में कड़ी प्रतिस्पर्धा थी। साहब भी आधुनिक-युग के अवतार थे तो प्रसाद व सेवा से ही स्वाभाविक रूप से प्रसन्न होते थे। लोग 'भेंट-पूजा' चढ़ाते व वे 'कार्य' रूपी आशीश देते। इसी तरह ठीक चल रहा था कि अचानक साहब के जाने के आदेश आ गए।

अब जब आदेश आ गए। तो एकदम माहौल बदल गया। जो अत्यधिक निकट थे, वे हतप्रभ रह गए। भवसागर में भगवान के अकेले छोड़ देने से व्यथित थे, इतनी मेहनत से प्रभु की निकटता हासिल की थी। अब क्या होगा,'सबचमचों' 'उपचमचों' व सामान्यजन पर कैसे रोब गांठेंगे। प्रभु की लीलाऐं सुनने के लिए जिस तरह सामान्यजन

चाय-नाश्ते का भोग लगाते थे, अब कोई पानी की भी नहीं पूछेगा।

जो लोग विरोधी थे व इस कारण सताए गए थे। उनकी प्रसन्नता देखते ही बनती थी। चूंकि अब साहब चले ही गए थे, किसी बात का डर नहीं था। इसलिए उन्होंने इस भाव को छुपाने की कोशिश भी नहीं की। शाम तक इस भाव ने सामान्य भाव का रूप ले लिया।

साहब स्वंय भी इस स्थिति से हतप्रभ थे। जीवन भर से लाभ के पदों की आदत पड़ी हुई थी। जो प्रभामंडल उनके चारों ओर बना हुआ था। वो अब उन्हें स्वंय को भी धुंधला नजर आने लगा था। बहुत से लोगों ने आज ही उनके मलिन चेहरे को भली-भांति देखा अन्यथा अत्यधिक तेज के कारण वे कभी ठीक से मुखमंडल को निहार भी नहीं पाए था। पर तमाम स्थितियों के बावजूद यह सत्य था कि वे जा चुके थे। चूंकि उनका जाना एक निरपेक्ष सत्य था। इसलिए वे चुप थे। उनके ग्रह, उपग्रह व सब-उपग्रह सभी मौन थे। विरोधी मुखर थे।

शाम को पार्टी थी। जिस अफसर के मुंह से बोल निकलते ही दहशत का माहौल छा जाता था। उसकी पार्टी में सबसे पहले आने वाला शख्स वो ही था। लोग धीरे-धीरे आ रहे थे। फिर पार्टी भी सम्पन्न हुई। उस पार्टी में सभी लोग एक ही विषय पर बात कर रहे थे कि यह अफसर कितना खराब था व आने वाला अफसर कितना दरियादिल है। आने वाले अफसर के संबंध किससे कितने मधुर है और उसका दूर-दराज का कौन रिश्तेदार यहां रहता था। अफसर की प्रशस्ति-चालीसा का विधिवत पाठ शुरू हो चुका था।

अफसर चूंकि साधारण से पद पर, साधारण-सी जगह जा रहा था। अतः रात को बस-अडडे् पर इक्का-दुक्का लोग ही इकठठे् हुए। इतनी रात को अपनी नींद कौन खराब करता और फिर सभी लोगों को जल्दी सुबह उठना भी तो था। उठना क्यों था. . .अरे भई नया अफसर सुबह पांच बजे वाली ट्रेन से आ जो रहा था। सभी लोगों को उन्हें टाईम से लेने जाना भी था। ऐसे स्वर्णिम अवसर को कौन मूर्ख भला छोड़ सकता था।

175 आदित्य आवास गोपाल विहार
कोटा-1324001

**प्रेमचंद्र स्वर्णकार**

# व्हेन आई वाज मिनिस्टर

वे मंत्री रहे हैं यह बात उन्हें रोज और शायद हम घंटे याद रहती है। लेकिन विडम्बना है कि नई पीढ़ी भूल चुकी है, सो उन्हें बार-बार लोगों को याद दिलाना पड़ता है। अपने कथन के प्रायः प्रत्येक पैरा में एक वाक्य जोड़ना नहीं भूलते 'व्हेन आई वाज ए मिनिस्टर' कई बार वे अपने कथन की शुरुआत भी अंग्रेजी के इस संक्षिप्त वाक्य से करते हैं। लोग इस वाक्य को सुनते-सुनते ऊब चुके हैं। पीठ पीछे कहते भी हैं– 'ठीक है महोदय, मान गए आप मंत्री थे। लेकिन आपने अपने कार्यकाल में क्या किया कि हम समझें आप मंत्री थे। एक कारखाना भी तो अपने क्षेत्र में खुलवा नहीं पाए। चलो ठीक है कारखाना दूर की बात है, बस-बीस युवकों को नौकरी दिलवा दी होती?'

लोग तो भगवान की भी आलोचना करते हैं। उन्हें भी इसकी चिंता नहीं है कि लोग क्या कह रहे हैं या उनकी समस्याएं हैं वे तो जी रहे हैं केवल भूतकाल के उस हिस्से में जिसमें वो मंत्री पद पर आसीन थे। वह उनका स्वर्णिम काल था। उनके जीवन की चरम उपलब्धि थी। वे कहते हैं– 'वह ईमानदारी का जमाना था, हमने काल भले उतने नहीं करवाए लेकिन कोई बतला दे किसी से एक पैसा भी रिश्वत के रूप में लिया हो। व्हेन आई वाज दा मिनिस्टर, देयर वाज नो करप्सन।' आगे वे जोड़ते हैं– 'हमें अपनी और पार्टी की इज्जत का ध्यान रहता था। आज तो लोग प्रश्न पूछने के पैसे ले रहे हैं। हद हो गई। ऐसी राजनीति हमने न कभी की है न करेंगे।'

सुनने वाले मन में कहते हैं तभी लोग शायद आपका नाम भूल गए हैं। आज तो जननेता खूब काम भी करवा रहे हैं और खूब कमाई भी कर रहे हैं। यह आवश्यक भी है। यदि वे कमाई नहीं करेंगे तो चुनाव में पचासों लाख खर्च कैसे करेंगे। आखिर उन्हें राजनीति हमेशा करना है। कोई एक बार जीतकर घर थोड़े बैठ जाना है।

चुनाव खर्च के संबंध में बात चलने पर वे कहते हैं, 'अब तो लोग करोंडों चुनावों में फूंक देते हैं। हमारे वक्त तो पचास-साठ हजार में चुनाव लड़ लेते थे। यू डोन्ट विलीव. . . मैं स्वयं चुनाव में पचपन हजार खर्च करके विधायक बना फिर मंत्री बन गया। इस खर्च में भी पचास हजार मुझे पार्टी ने दिये। अब बतलाइये मैं क्यों करता भ्रष्टाचार।'

एक पत्रकार ने उनसे पूछा, 'आपने अपने कार्यकाल में कुछ विदेश यात्राएं भी की थीं। एक बार उद्योगों का अध्ययन करेन पूरी टीम के साथ विदेश गए थे। लेकिन आपके कार्यकाल में कोई उद्योग क्यों स्थापित नहीं हो सका?'

'अरे यही तो गलतफहमी है आप लोगों में। व्हेन आई वाज ए मिनिस्टर तब प्रदेश में अनेकों उद्योगों की योजनाएं बनीं और स्वीकृत हुईं। कुछ शुरू भी हुईं। लेकिन श्रेय अगली सरकार ले गई। उस वक्त हमने इस मामले का विरोध भी किया था। लेकिन आप तो जानते हैं जो पॉवर में होता है वह गलत को भी सही साबित करवा देता है। और शिलान्यास करने वाले का नाम कम, उद्घाटन करने वाले का ज्यादा होता है।' एक बार के चुनाव में हारने के बाद आपने विगत तीस वर्षों में फिर चुनाव लड़ने की बात क्यों नहीं सोची?' पत्रकार ने पुनः पूछा, 'सोची क्यों नहीं। दो-तीन बार पार्टी से टिकट भी मांगा लेकिन आपको सही बात बतलाऊं, हमारी पार्टी में वरिष्ठ नेताओं की पूंछ ही नहीं रही। हमारे समय, आई मीन व्हेन आई वाज मिनिस्टर, बुजुर्ग नेताओं की बहुत इज्जत और कद्र थी। उनको चुनाव लड़ने के लिए मनाया जाता था। वे पार्टी की नाक होते थे। आज तो किसी भी ऐरे-गेरे या नए लड़के को टिकट दे दी जाती है। जिसे न बोलने की तमीन न बात करने का।'

सही कह रहे हैं आप, सर और आज यह केवल आपकी पार्टी का नहीं प्रायः सभी पार्टियों का हाल है। लेकिन आपको सक्रिय राजनीति छोड़ना नहीं थी।' उस मुंह लगे पत्रकार ने सलाह देते हुए कहा।

अरे जनाब मैंने राजनीति छोड़ी कहां थी। मैं तो जीवनभर इसमें सक्रिय रहना चाहता था। लेकिन कुछ पार्टी को भी तो सोचना था। एक बार हारने से इतने वरिष्ठ नेता को दूध से मक्खी की तरह तो नहीं निकाला जाता है।' वे असंतुष्ट होकर बोले।

जरूरी नहीं कि सत्ता में रहकर ही राजनीति की जाए आप पार्टी को सहयोग देने के लिए संगठन का काम भी देख सकते थे।' पत्रकार बोला।

'देखिए जनाब इस तरह की बातें केवल कहने में अच्छी लगती है। सच्ची बात यह है कि बगैर सत्ता के केंद्र बिंदु बने आपको न पार्टी वाले पूछते हैं न जनता। और जिस पार्टी में मेरी उपेक्षा हो रही हो, उसके संगठन में आकर भी मैं क्या कर लेता। क्या पार्टी के लोग मेरी सुनते। पार्टी के लिए क्या मेरा इतना त्याग कम है कि अन्य नेताओं की तरह मैंने दल नहीं बदला। आजीवन एक ही पार्टी में रहा और रहूंगा। मैंने जब राजनीति में कदम रक्खा था तभी मेरे गुरु ने मंत्र दिया था कभी दल नहीं बदलना। इसके अलावा जब मैं मंत्री था मुझे बड़े-बड़े ऑफर आए लेकिन मैंने पार्टी के खातिर ठुकरा दिए। हमारे जमाने में कुछ सिद्धांत भी हुआ करते थे। जिन पर मैं अभी भी चल रहा हूं। आज तो मंत्री बनने के लिए लोग कपड़े की तरह दल बदलते हैं। व्हेन आई वाज ए मिनिस्टर, उस वक्त सिद्धांत की राजनीति हुआ करती थी। राजनेताओं का एक केरेक्टर है आप स्वयं जानते हैं। कहने की जरूरत नहीं है। यह सुन पत्रकार खिसक लिए इस वायरेस के प्रभाव में उन्हें भी कल कहना न पड़ जाए– 'व्हेन आई वाज ए जर्नलिस्ट।

गायत्री नगर
पोस्ट-दमोह (म.प्र.)

तारिक असलम 'तस्नीम'

# मत पूछिये मॉल का हाल. . .

'अजी सुनते हो! इस महीने का सामान बनिये के यहां से नहीं आएगा। मूआ एक नंबर का लटपटिया. . .बेईमान है। शीतल बाबू की पत्नी कह रही थी। अब जो भी खरीदारी करनी है मॉल से करो। वहां चीज बढ़िया और चार पैसे किफायत भी होती है। मोल-भाव की भी बचत। बनिये का क्या है। किसी चीज में दो पैसे कम कर देगा और किसी चीज में चार पैसे बढ़ाकर वसूल लेगा। यह सब धंधा मॉल में नहीं होता, फिर सारी चीजें एक ही जगह मिल जाती हैं। कभी इस दुकान कभी उस दुकान जाने की नौबत नहीं आती। कुछ समझे आप?'

श्रीमती जी की छप्पन छुरी-सी बातें कानों में पड़ीं। चमनलाल कान खूजाने लगे। गिरगिट की तरह गर्दन ऊंची कर पत्नी की ओर देखा, जो हाथ में नारियल का झाड़ू पकड़े पूरी हंटरवाली दिख रही थी। वह पत्नी के चुप होने की राह देख रहे थे और वह भी कि पंजाब मेल की तरह धड़धड़ाते शब्दों के बाण छोड़े जा रही थी।

'अच्छा भाग्यवान! इस महीने की खरीदारी मॉल में ही करेंगे।'

उन्होंने उसके रौद्र रूप देखते हुए हामी भरी।

'भगवान! आप ही जैसा सबको पति दे।' वह बुदबुदायी। अखबार का वह पन्ना चमनलाल के सामने ही था, जिसमें बिग बाजार, बाजार कोलकाता, विशाल के विज्ञापन छपे थे और बच्ची के फ्रॉक से लेकर टोमाटो सॉस तक न्यूनतम दर पर खरीदने की सलाह दी जा रही थी। चमनलाल सोचने लगे, 'प्रत्येक घर परिवार के आवश्यकता कोल्ड ड्रिंक्स, शास, बिस्कुट, जाम, टुथब्रश, प्लास्टिक जार, चाय, अचार, जूस, क्लास क्लीनर से पूरी पड़ जाए, फिर तो बचत ही बचत है। अब इस बात को पत्नी से कैसे कहें कि जो चीनी बाजार में इक्कीस रुपये हैं। वह मॉल में बाईस रुपये पड़ेगी। इसी प्रकार जो काबली चला आम दुकानों पर पैंतालीस रूपये मिलती है। वहां पैकिंग के बाद पूर साठ रुपये पड़ती है। और तो और जो सरसों तेल बनिये के दुकान पर ब्रांडेड एक लीटर के पैक में अस्सी रुपये में आती है। और तो और जो सरसों तेल बनिये के दुकान पर ब्रांडेड एक लीटर के पैक में अस्सी रुपए में आती है। वहां सतासी रुपए में पड़ेगी। ऊपर से कई तरह के टैकस भी हमको ही चुकाना होगा? यह रहस्य पत्नी को कैसे समझाएं?'

इसी उधेड़बुन में चमनलाल खोये हुए थे कि पत्नी चिल्लाई, 'अजी! क्यों बंदर सी शक्ल बनाये हुए हो? बाजार नहीं चलना क्या? दुकानें कब की खुल गयी होंगी? फिर बहुत सारी चीजों की खरीदारी करनी है। सब मॉल की तारीफ कर रही हैं पड़ोसनें। जब देखो, उधर ही मुंह उठाए चली जा रही है, जैसे वहां सारा का सारा सामान मुफ्त में बंट रहा है। मीरा बता रही थी कि चारों ओर भीड़भाड़ सी मची रहती है, जिसको देखो ट्राली लेकर रैक से सामान उठाकर भरने में लगा है। कितना बढ़िया लगेगा जी, जब हम लोग भी शान से एक सामान चुनकर खरीदेंगे?' पत्नी ने बड़े ही गदगद भाव से पति की ओर देखा, जिसकी आंखों में सप्तरंगी कल्पनाएं जगमगा रही थीं। चमनलाल की समझ में नहीं आ रहा था कि ऐसी परिस्थिति में वह क्या करे? पत्नी को कैसे मनाए! मॉल सरीखे बाजार उनके लिए नहीं बने हैं? वहां कार और हवाई जहाज में यात्रा करने वाले लोग जाते हैं. . .जिनके लिए रुपए पैसे कोई मायने नहीं रखते या फिर वेतन के अलावा मोटी रकम उगाहने में माहिर लोग। जिन्हें शोक होता है। मनपसंद चीजें खरीदने का। क्रेज जानने का। हर चीज ब्रांडेड हासिल करने का। भला यह सब मैं कैसे सोच सकता हूं?'

'देखो! भाग्यवती, हम लोग सुखदेव बनिये के यहां ही चलते हैं जो आड़े वक्त में हमें जरूरत की चीजें उधार भी दे देता है। अब वहां जाएंगे तो फिर बनिये के कैसे उधार लेंगे। जो उधार के दाम दो पैसे अधिक लेता है किंतु तुम समझती क्यों नहीं भाग्यमती। जहां तुम जाने को छटपटा रही हो, जल बिन मछली सी तड़प रही हो। वहां चाकर अपना बजट खराब करोगी. . .अरे हम लोग दाल रोटी खाने वाले आम आदमी हैं और आम आदमी को ऐसे सपने देखना शोभा नहीं देता, जो किसी शर्त पर पूरे नहीं पड़ते हो।' चमनलाल ने बहुत सोच-समझ कर पत्नी को समझने की कोशिश की। उसे सही गलत का पाठ रटाया।'

'तुम रहे निरे बुद्धू ही बुद्धू। अरे एक बार चलकर देख तो लें। आखिर माजरा क्या है? फिर किसी मुहल्ले वाले ने देख लिया तो सब पर कितना रोब पड़ेगा? सामान तो हम अपनी औकात के हिसाब से ही खरीदेंगे। हमें दिखावा थोड़े ही करना है जो मैं अनाप चीजें खरीदने को कहूंगी। क्या समझे?' यह कहते हुए भाग्यवती मुस्कुरायी। चमनलाल भी इक मुस्कान पर लाल हो गए।

चमनलाल ने मन ही मन कहा, 'तेरा भी जवाब नहीं भाग्यमती। चल तेरी कसक भी पूरी किये देते हैं। आटे चावल का भाव भी मालूम पड़ जाएगा तुझको? मेरा क्या है?

संपादक / कथा सागर
प्लाट-6 / सै
फुलवारी शरीफ, पटना-801505

कुलदीप तलवार

# कवि नहीं फवि

कवि सुना था, लेकिन फवि नहीं। हमारे पड़ोस में एक कवि महोदय रहते हैं, दूर-दूर तक कवि-सम्मेलनों में 'बुक' होकर जाते हैं। इन्हीं के एक मित्र हैं जो हमें भी जानते हैं। जब भी वे कवि जी के घर आते हैं तब नीचे से आवाज लगाते हैं, 'कविजी घर पर हैं?' जब यह आवाज हमारे कानों में गूंजती है तब ऐसा लगता है कि उनके दांत टूट गये हैं और अब जब वे 'क' बोलते हैं तो मुंह से 'फ' निकलता है। इस रहस्य की तह में जाने पर मालूम हुआ कि ऐसी कोई बात नहीं, बल्कि वह जानबूझकर कविजी को फविजी कहते हैं। एक दिन हमने पूछ ही लिया कि फवि क्या बला है, तो कहने लगे कि भाई यह एक राज की बात है, फिर भी आपसे क्या छिपाना, फवि उसे कहते हैं जिसे कवि होने पर संदेह किया जा सकता है।

गोया, यह कवियों की वह किस्म है जो केवल कवि-सम्मेलनों में कविता-पाठ करते हैं। उनके जीवन का लक्ष्य केवल कवि-सम्मेलन का मंच है। कवि-सम्मेलन चाहे वह किसी भी तरह का हो, और उसे किसी ने भी करवाया हो, उनका इसमें शामिल होना आवश्यक है। कवियों की यह बिरादरी कवि-सम्मेलनों में जाने के लिए काफिलों में पैदल, खच्चरों पर, बैलगाड़ियों में, तांगों में, लारियों में और रेलगाड़ियों में सफर करती दिखाई देती है। मौसम की कोई बंदिश नहीं। गरमी हो तो कुरता-पायजामें में जाएंगे, सरदी हो तो कंबल और चेस्टर में जाएंगे। दफ्तर से बीमारी की छुट्टी लेकर जाएंगे, बीमार होंगे तो दवा की शीशी हाथ में लेकर जाएंगे।

हमारे साथवाले मुहल्ले में ही एक वयोवृद्ध कवि हैं जिनका उपनाम है 'बेधड़क मुरादाबादी'। वे इस मैदान के पुराने खिलाड़ी हैं। बहुत-से चेले पाल रखे हैं। उनके अड्डे पर कवि-सम्मेलनों में जाने के प्रोग्राम बनते हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि एक ही दिन में दो-दो तीन-तीन कवि-सम्मेलन अलग-अलग जगह पर होते हैं। ऐसे में बेधड़कजी यह तय करते हैं कि कौन-सा कवि कहां जाएगा। किस-किस कवि का क्या-क्या पारिश्रमिक होगा, उसमें से संयोजक का और बुक करने वाले का कितना हिस्सा होगा। बेधड़कजी की बैठक में काफी रौनक रहती है। ऐसा नजर आता है कि यह बेधड़कजी का मकान नहीं, बल्कि कोई बाजा कंपनी है जहां पर मांग आते ही आठ-आठ दस-दस की टोलियां में कविगण भेजे जाते हैं। इन लोगों की सीजन में चांदी होती है, अलबत्ता इनका सीजन बाजेवालों से अलग होता है। सीजन के समय मुंहमांगे दाम मिलते हैं। दिन में सोते हैं और रात को कवि-सम्मेलनों में जाते हैं। जब कई दिनों के बाद घर वापस लौटते हैं तब उनकी गोद ही नहीं जेब भी नोटों से भरी होती है। एक मित्र का कहना है कि एक सीजन ही कमाई से पूरे साल की रोटियां कमा लेते हैं।

जहां तक उनके काव्य का सवाल है, ये लोग- 'साहबे-दीवान' नहीं होते, लेकिन हां, सात-आठ कविताओं के रचयिता जरूर कहलाये जाते हैं। इन कविताओं में एक-दो हास्य की कविताएं होती हैं, एक-दो मंहगाई-भ्रष्टाचार की और एक-दो वीररस की। ऐसे ही एक कवि महोदय हैं, उपनाम है 'बिगुल'। जब वे गांव में रहते थे तब मां-बाप ने नाम रखा था 'राधेश्याम'। गांव से रोजगार की तलाश में जब शहर आये तब दौड़ते-दौड़ते थक गये। यहां तक कि फांकों की नौबत आ गयी। एक दिन उनकी मुलाकात बेधड़कजी से हो गयी। बेधड़कजी ने उन्हें दो-चार पंक्तियां पकड़ा दीं, कुछ दिन पूर्वाभ्यास कराया और फिर मंच पर चढ़ा दिया। पांच-सात कवि-सम्मेलनों में ही उनकी गुड्डी चढ़ गयी। 'बिगुल' जी का बिगुल बजने लगा। एक दिन बिगुलजी से मिलने उनके गांववाले शहर आये। उनको ढूंढते-ढूंढते थक गये, लेकिन उनका कहीं पता नहीं चला। दरअसल, उनको राधेश्याम के नाम से कोई नहीं जानता था। आखिर उन्होंने एक सज्जन के पूछने पर जब राधेश्याम जी का हुलिया बताया तब वे सज्जन बोल पड़े, 'जी हां, वह तो बिगुलजी हैं, मैं आपको मिलवाये देता हूं।' यह सुनकर गांववाले ठंडी सांस भरते हुए बोले, 'साहब, गांव में तो वे अच्छे-भले थे अब शहर में आकर बिगुल बन गये हों तो हम कह नहीं सकते।'

अब हम भी सोचते हैं कि किसी बेधड़क के चेले बन जाएं।

ए-39, अशोक नगर
गाजियाबाद

^ubl èkkjk*

अप्रैल-मई 2009 अंक

**लघुकथा विशेषांक**

हिंदी लघुकथा के विशिष्ट रचनाकारों की रचनात्मकता से पूर्ण समृद्ध अंक

**संपादक**
प्रथमराज सिंह

**संपादक**
शिवनारायण

**संपर्क**
सूर्यपुरा हाऊस, बोरिंग रोड पटना

**अशोक गौतम**

# इस दर्द की दवा क्या है

अपने घर में वैसे तो हर रोज किसी को कुछ न कुछ हुआ करता है, किसी को जुकाम है तो किसी को खांसी। किसी को घुटने में दर्द रहता है तो किसी को सिर में दर्द। किसी को जुलाब लगे होते हैं तो किसी को कब्जी हुई होती है। कई बार तो ये सब देख कर मन करता है कि सरकार से अनुरोध करूं कि हे सरकार! मुझे कुछ दे या न दे पर मेरे घर में एक सरकारी अस्पताल का फट्टा ही लगा दे। कम से कम दफ्तर में साहब को भी मुझे बकने की बीमारी से मुक्ति मिले और मुझे भी साहब की किच-किच से मोक्ष मिले। रिटायरमेंट के इन बचे दो महीनों में तो शान से सिर उठा कर समय पर दफ्तर जा सकूं। पर जिसकी किस्मत में घरवालों ने इज्जत से जीने का एक पल भी शेष न रखा हो वहां विधाता भी बेचारा क्या लिखे! उस रोज विधाता मिला था, अचानक। तब मैं खुद से खुद की नजरें बचाता सड़ी सब्जी आधे दाम में ले रहा था। क्या करूं भाई साहब, मजबूरी है। अब परिवार को कुछ न कुछ तो खिलाना ही है न! आदमी कुछ खाकर बीमार हो तो बीमारी के आगे शर्मिंदा नहीं होना पड़ता। दूसरी ओर घर के सफल मुखिया होने का भ्रम भी बना रहता है।

'और बंधु, क्या हाल हैं?' विधाता ने पीछे से मेरा झोला खींचा।

'कौन?' मुझे गुस्सा आया। पर फिर शांत हो गया कि यार तू इस वक्त बाजार में है और बाजार में किसी का कुछ भी खींचा जा सकता है। पीछे मुड़ा तो अजीब-सा बंदा देखा। बंदे बड़े-बड़े देखे पर ऐसा न देखा था। मैंने अपना गुस्सा आगे के बंदे पर पान की पीक के साथ पिचकते कहा, 'आपको मैंने पहले कहीं देखा नहीं, माफ कीजिएगा।'

'यार मैं वही हूं जिसके आगे तुम सबेरे उठने से पहले रोज नाक रगड़ते हो कि हे विधाता, आज से तो मेरी किस्मत बदल दे। आज कुछ फुर्सत में था तो मैंने सोचा कि आज क्यों न खुद-ब-खुद चलकर . . .' कह अपने को विधाता कहने वाला मुस्कुराया।

'तो यार, क्या किस्मत लिख तूने मुझे इस लोक में भेजा? जा मैं तुझसे कोई बात नहीं करता। गधे की भी इससे अच्छी किस्मत होती है। और मैं तो आदमी था!'

'गुस्सा थूको मित्र! कुछ मेरी सुनो तो सच का पता चले।' कह विधाता ने बड़ी आत्मीयता से मेरे गृहस्थी के भार से टूटे कंधों पर अपने दोनों हाथ रखे तो मेरा गुस्सा कुछ शांत हुआ।

'तो कहो, क्या कहना चाहते हो? वैसे भी आज तक मैंने सभी को सुना ही है। कहने का मौका तो भगवान ने मेरी किस्मत में लिखा ही नहीं।' कहते कहते मेरा जुकाम से बंद हुआ गला और रुंध गया।

'मैं कहना यह चाहता हूं कि मैंने तो तुम्हें यहां भेजते हुए तुम्हारी किस्मत में मौज की मौज लिखी थी, पर तुमने गृहस्थी बसा चादर से बाहर पांव निकाल लिए तो मैं भी क्या करूं? पांव चादर के अंदर ही रखना किसका धर्म बनता है? मेरा या तुम्हारा? वैसे विश्वास न हो तो ये रिकार्ड देख लो।' कह वह अपने सूटकेस को वहीं खोलता आगे बोला, 'आप लोगों के साथ सबसे बड़ी मुश्किल यही है। पंगा खुद लेते हो और दोष मुझे देते हो। अब मैं तो आप लोगों की जानदार किस्मत ही लिख सकता हूं न। किस्मत की इज्जत बचाए रखने के लिए संभल कर चलना तो आप लोगों को ही पड़ेगा। फिर दोष देते फिरते हो। ये कहां का न्याय है बंधु? अब मैं चुप! बंदे ने कुछ कहने लायक छोड़ा ही नहीं। बात उसकी बिलकुल सच थी।

'तो अब कुछ हो सकता है क्या?'

'क्यों नहीं, इस देश में हर चीज का इलाज करने वाले संसद से सड़क तक झोला खोला बैठे हैं करके, करवाके तो देखो। नहीं करने, करवाने के बहाने हजारों हैं, सरकार की तरह।'

'कैसे? यहां तो हर दवाई में खोट है। खोट वाली दवाई का क्या इलाज करेगी? सरकार महंगाई का इलाज करती है तो वह इलाज से बाहर हो जाती है, सरकार भुखमरी का इलाज करती है तो वह इलाज से बाहर हो जाती है, सरकार बेरोजगारी का इलाज करती है तो वह इलाज से परे हो जाती है, सरकार भ्रष्टाचार का इलाज करती है तो वह इलाज से परे हो जाता है, सरकार भय का इलाज करती है तो वह इलाज से परे हो जाता है, ऐसे में मैं कौन सी दवाई लूं?'

'ईमानदार होने की दवाई लो।' कह वे अंतर्ध्यान हो लिए।

ये दवाई किस स्टोर पर मिलेगी भाई साहब? सारा शहर तो छान चुका हूं। यहां के दवाई वालों के पास तो यह आउट आफ स्टाक चल रही है। आपके शहर हो तो कृपया भेज दीजिएगा।

गौ
नजदीक मेन वाटर टै

साहित्य संस्कृति एवं
सामाजिक चेतना का पाक्षिक
ftUnk ykx
**संपादक**
संजना तिवारी
**संपादकीय सलाहकार**
राधेश्याम तिवारी
**संपर्क**
एफ-119/1, फेज-2
अंकुर एन्क्लेव, करावल नगर
दिल्ली-110094

देवेन्द्र इन्द्रेश

# वी.आई.पी. कबूतर

वे जमाने लद गए जब खलील मियां फाख़्ता उड़ाया करते थे। उस जमाने में फाख़्ता उड़ने के लिए होती थी। अब फाख़्ता ही नहीं है तो उड़ाएं क्या। खलील मियां तो अब भी हैं पर फाख़्ता नहीं है। अब जमाना था तो खलील मियां ने बड़े फाख़्ते उड़ाए। और अब वे जिंदा हैं तो उन्हें कुछ न कुछ तो उड़ाना ही है। जिसने जिंदगी भर अपना और परायों का उड़ाया हो वह बिना उड़ाए कैसे रह सकता है। सो खलील मियां ने कबूतर उड़ाना शुरू कर दिया।

कबूतर एक अदद सीधा सच्चा पक्षी। जो हमेशा उड़ना चाहता है। उड़ता रहता है, दूसरों के इशारे पर आंखें बंद करके। खलील मियां का कबूतर उड़ाने का तरीका भी अजीबोगरीब था। वे पहले भोले भाले कबूतर को दाना डालते। धीरे-धीरे उनको अपने दड़वे में रखते। उड़ने के हुनर सिखाते। और जब कबूतर हुनर सीख कर टंच हो जाता तो अपना दड़बा खोल जिस दिशा में चाहते उस दिशा में उड़ा देते। कबूतर भी खलील मियां के सभी इशारों को अच्छी तरह से समझने लगे थे।

ख़लील मियां भी शातिर कबूतरबाज थे। इससे पहले अनेक बार बटेरों को आपस में लड़ा कर लहुलुहान करवा चुके थे। बटेर बिना यह जाने कि वे आपस में क्यों लड़ रही हैं, लड़ती रहती थीं। खलील मियां उनको लड़ा कर आनन्दानुभूति करते थे तथा दर्शकों को भी बटेरों को लड़ते हुए देखने का सुख प्रदान करते थे। अब बटेर भी नहीं रहीं या यूं कहें कि उन्होंने खलील मियां के इशारों पर लड़ना बंद कर दिया है। इसलिए खलील मियां कबूतरबाजी पर आन लगे। और अब कबूतरबाजी को बतौर धंधा अपना लिया है। उनके दड़वे में ऐसे-ऐसे नायाब कबूतर हैं जो उनके इशारे पर आसमान में भी सूराख करने की हिम्मत रखते हैं। ऐसी बात नहीं है कि खलील मियां की कबूतरबाजी से पहले कबूतर उड़ाए नहीं जाते थे। खूब उड़ाए जाते थे। लड़ाई के दिनों में तो कबूतर गुप्त संदेशों को इधर से उधर ले जाते थे।

कबूतर में पवन वेग की शक्ति है। ईश्वर ने उसे ऐसा वरदान दिया है कि वह सारे आकाश में जहां चाहे वहां स्वच्छंद घूम सकता है। कबूतर की इसी खूबी ने खलील मियां को फाख़्ता उड़ाने के बाद कबूतर उड़ाने को विवश कर दिया। संदेश कैसा भी हो कबूतर लाने और ले जाने में माहिर है।

कहते हैं यक्ष ने बादलों को दूत बना कर अपनी यक्षिणी के पास विरह संदेश भेजा था। बादलों से पहले यक्ष ने कबूतर से ही अपना संदेश ले जाने की बात कही थी कि कबूतर भैया मेरा विरह संदेश मेरी प्रियतमा के पास ले जाओ। लेकिन कबूतर महाराज अड़ गए। और कहा–तुम्हारा संदेश ले जाने पर मुझे क्या मिलेगा। क्या मुझे अलकापुरी में परमानेंट बसेरा करने दोगे। यक्ष इस बात से सहमत नहीं हुआ और कबूतर का कांट्रेक्ट कैंसिल हो गया। कबूतर को उड़ना तो था ही, सो खलील मियां के हत्थे चढ़ गए। तब से खलील मियां कबूतरों को विदेश की सैर करा रहे हैं। जब खलील मियां फाख्ता उड़ाया करते थे तो उस समय उनको फाख्ता उड़ाने में कोई विशेष मजा नहीं आता था, जितना अब कबूतर उड़ाने में आता है। इन दिनों खलील मियां का कबूतरबाजी का धंधा जोरों पर है। पहले उनके पास उड़ाने को केवल एक दो ही फाख़्ता थे, जो यदि उड़ जाते थे तो उनके वापस लौटने की कोई गारंटी नहीं होती थी। लेकिन अब ऐसे हुनरमंद दर्जनों कबूतर खलील मियां के दड़वे में पल रहे हैं, जिनको वे आए विदेशों में उड़ाते रहते हैं। कुछ कबूतर जोड़े से हैं कुछ अकेले। खलील मियां जोड़े से भी कबूतरों को विदेश के लिए उड़ाते हैं और कुछ अकेले। जो कबूतर जोड़े से विदेश की ओर उड़ते हैं उनके वापस आने की संभावना कम ही रहती है। फाख्ता उड़ाने की फीस खलील मियां नहीं लिया करते थे, केवल अपने शौक के लिए उड़ाते थे। पर कबूतरों के इस धंधे में उन्हें अच्छी कमाई हो जाती है। कबूतरों से खलील मियां अब अच्छी रकम ऐंठ लेते हैं। अब स्थिति यह है कि हर कोई कबूतर खलील मियां के हाथों उड़ने के लिए छटपटा रहा है।

पता नहीं कोई वी.आई.पी. कबूतर खलील मियां के कबूतरों के दड़वे में घुस गया। एक दिन जब खलील मियां अपने कबूतरों को दड़वे से निकाल कर परेड करा रहे थे, तब उनको आम कबूतरों को दड़वे से निकाल कर परेड करा रहे थे, तब उनको आम कबूतरों के बीच वी.आई.पी. कबूतर दिखायी दिया। उन्हें बड़ी हैरानी हुई कि ये वी.आई.पी. कबूतर मेरे आम कबूतरों में कैसे घुस गया। दड़वे में हाथ डाल कर उस वी. आई.पी. कबूतर को निकाला। खलील मियां के होश तब उड़ गए जब उस वी.आई.पी. कबूतर ने कहा–'मियां मैं भी तुम्हारे हाथों विदेश में उड़ना चाहता हूं। तुमने बहुत सारे कबूतरों को उड़ा कर विदेश पहुंचा दिया है। मैं भी दुनिया के सारे देशों में उड़ना चाहता हूं। मेरी इच्छा है कि मैं आकाश में सर्वत्र घूमता रहूं। मैं जिस दिशा में चाहूं उस दिशा में उड़ूं। कोई मुझे पकड़े नहीं। बस यही मेरी इच्छा है इसलिए मैं तुम्हें मुंह मांगी रकम देने को तैयार हूं।'

खलील मियां ने उस वी.आई.पी. कबूतर से कहा–'हे वी.आई.पी. कबूतर जी, तुम तो खुद ही वी.आई.पी. हो। वी.आई.पी. होने के कारण तुम्हारे पास तो खुद ही इतनी सामर्थ्य है कि कितने ही कबूतरों को बिना पासपोर्ट, वीजा के विदेश की सैर करा सकते हो, और विदेश में परमानेंट निवास का जुगाड़ भी भिड़ा सकते हो। तुम्हें तो वी.आई.पी. होने के कारण यह सुविधा मिली हुई है कि तुम

जहां चाहो, जिस दिशा में चाहो बिना रोक टोक के उड़ सकते हो। तुम्हें उड़ने से कौन रोक सकता है। फिर तुम मेरे हाथों क्यों उड़ना चाहते हो।

वी.आई.पी. कबूतर ने कहा–मियां जी, मेरा नाम लोटन कबूतर है। मैं पहले आसमान में इधर से उधर कारण तथा अकारण लोट लगाता रहता था। जमीन पर तो मेरे पैर ही नहीं पड़ते थे। इसलिए वी.आई.पी. समाज मुझे लोटन कबूतर कहता है। आजकल उड़ने उड़ाने में रोक लग गयी है। जो वी.आई.पी. कबूतर विदेश की ओर खुद उड़ते हैं तथा अपने चमचे कबूतरों को अपने साथ विदेश की सैर कराते हैं, उनकी धरपकड़ होने लगी है। मियां जी तुम्हारी कबूतर उड़ाऊ एजेंसी है। इसलिए तुम्हारी एजेंसी के मार्फत उड़ूंगा तो किसी को शक भी नहीं होगा तथा पकड़ा भी नहीं जाऊंगा। आजकल सभी कबूतर बन कर सैंत मैंत में उड़ने की जुगाड़ में लगे हुए हैं। असली कबूतर तो दड़वे में बंद रहते हैं और नकली कबूतर धोखे से विदेश की सैर करते हैं। ऐसे धोखेबाज कबूतरों की धरपकड़ होने लगी है। मैं भी कहीं पकड़ा न जाऊं, इसलिए मैं तुम्हारी एजेंसी से उड़ना चाहता हूं। सो मुझे अपने हाथों उड़ा दो। खलील मियां ने सोचा–आज ऊंचा कबूतर हाथ लगा है, आज तो अपनी पौ बारह है। इस गरज से उन्होंने जैसे ही वी.आई.पी. कबूतर को अपने हाथ से उड़ाना चाहा, दड़वे में बंद सारे कबूतर गुटर गूं-गुटर गूं करके बाहर निकल आए और खलील मियां को चारों ओर से घेर लिया। इस लफड़े को देख वी.आई.पी. कबूतर खलील मियां के हाथों से फुर्र उड़ गया। खलील मियां वी.आई.पी. कबूतर को आसमान में पश्चिम दिशा की ओर उड़ता हुआ निर्निमेष नेत्रों से देखते रहे और अपने हाथ मलते रहे।

विश्रान्तिका-61, सेक्टर-8, हिरण मगरी,
उदयपुर-313002 (राज.)

**राकेश 'चक्र'**

# वर्दीधारी

पटना की ओर से आनेवाली जनसेवा एक्सप्रेस भूसे की तरह खचाखच भरी थी। इस सड़ी गर्मी में लोग कैसे जीवित थे, ये तो ऊपरवाला ही जानता था, लेकिन नीचे वालों को तो बस इतना पता था कि सेंसेक्स बढ़ रहा है। यानी स्थिति भेड़-बकरियों के लदान से भी महाबदतर थी, क्योंकि उन्हें भी जब किसी ट्रक या मालगाड़ी में लदान करके भेजा जाता है, तब खड़े रहने का स्थान तो उन्हें मुहैया कराया ही जाता है, लेकिन यहां तो जिस्म से जिस्म ऐसे चिपक रहे थे कि एक-दूसरे की श्वासें, स्वेद और बू एक-दूसरे में समा रहे थे। डिब्बों के दरवाजों पर भी लोग लटके थे, तो छतों पर भी हवाखोरी हो रही थी।

बीड़ी-सिगरेट पीने की पाबंदी के बावजूद भी सब कुछ चल रहा था। ज़्यादातर यात्री, जिसमें बच्चे भी थे, प्यास के मारे हलकान हो रहे थे। मुरादाबाद रेलवे स्टेशन पर जैसे ही गाड़ी रुकी, कि रुकते ही लोग पानी आदि जरूरी चीजों को लेने के लिए धींगामुश्ती करते हुए किसी तरह उतरे।

हरिया और बुद्धा तो अपने फटहा बैग को लेकर प्लेटफार्म पर पूड़ी खाने आ गए, क्योंकि उन्हें दिल्ली जाने के लिए दूसरी गाड़ी जो पकड़नी थी। यह गाड़ी पंजाब की ओर जा रही थी।

पूड़ी खाने से पहले ही दोनों को दो वर्दीधारियों ने पकड़ लिया।

एक वर्दीधारी ने रौब दिखाते हुए पूछा, 'साले! कहां हैं दोनों के टिकिट, बिना टिकिट चलते हो।'

हरिया ने डरते-डरते जवाब दिया, 'साहब! टिकस बा। दोनों टिकिट हरिया ने दिखा दिए, जो कि पटना से दिल्ली तक के थे। मोटे वाले वर्दीधारी ने बुरी तरह हड़काते हुए कहा, 'साले! जाली टिकिट लेकर चलते हो, चलो हवालात में बंद करता हूं।'

इतना सुनते ही दोनों की भूख-प्यास हवा हो गई, वह बार-बार चिरौरी-बिनती करते हुए पैरों में पड़ते रहे और कहते रहे–साहिब! टिकस ही हैं. . .साहिब! टिकस सही हैं. . .उन दोनों को वे वर्दीधारी दूसरे प्लेटफार्म पर सुनसान जगह में ले गए। दोनों की जामातलाशी ली और जो नगदी मिली अपनी-अपनी जेबों में भर ली। फौस-फौस गालियां बकते हुए कहा, 'हरामखोरो! सही टिकिट लेकर चला करो। जाओ भागो यहां से. . .एक पूरब की ओर जाना. . .एक पश्चिम की ओर. . .।

90 बी, शिवपुरी, मुरादाबाद-244001

अतुल चतुर्वेदी

# चांद कवि और विज्ञान

चांद इंसान का पुराना ख्वाब है। यूं उसके और भी कई ख्वाब हैं। जिसमें 'नदिया किनारे एक बंगलो. . .' से रोटी कपड़े तक का जुगाड़ भी शामिल है। चांद को ले कर हमारे यहां कुछ भावुकता टाइप का माहौल अधिक रहा है। कवि चांद की उपमाएं देते नहीं थके हैं। कोई नायिका के चंद बदन होकर भी बाबा कहने से दुखी है तो कोई कवि अपने प्रेमी को चंद्रमा बताते हुए कह देता है– 'कहा कछु चंदहिं चकोरन की कमी हैं।' बिहारी की नायिका का तो मुख ही पूर्णमासी के चांद सा है जिसके कारण मोहल्ले वाले लगातार तिथियों के बारे में कन्फ्यूज रहते हैं और घड़ी-घड़ी कैलेंडर देखते हैं। चंद्रमा को लेकर मुंबइया फिल्मकारों ने भी कोई कसर नहीं छोड़ी है। कोई अपने महबूब की प्रशंसा में कह रहा है– 'चौदहवीं का चांद हो या आफताब हो।' तो दूसरा गीतकार लिख रहा है 'चांद जैसे मुखड़े पर बिंदिया सितारा. . .।' भला हो नील आर्मस्ट्रांग का कि उसने स्ट्रांगली कह दिया कि चांद को लेकर आप लोग गलतफहमी में न रहें वहां कोई ऐसा रोमांटिक वातावरण नहीं है। महज कुछ चट्टाने हैं। वहां हवा-पानी भी स्वयं का लेकर जाओ। यानि की खालिस शापिंग मॉल या मल्टीप्लेक्स जैसा व्यावसायिक माहौल।

परंतु कवि कहां मानने वाले थे। कवि तो अपने बाप और श्रोताओं तक की नहीं मानता है। वो तो पहले ही अपने यहां कह दिया गया है– 'लीक छाड़ि तीनों चलें सायर, सिंह, सपूत।' इसलिए कवि ने अब नयी खोज कर ली– 'चलो दिलदार चलो, चांद के पार चलो. . .।' वो चांद के पार जाने की बात कहने लगा। पता नहीं चांद के पार जा कर उसका नायिका के साथ क्या करने का इरादा था। कवियों का कुछ ठीक नहीं वो तो मंगल, शनि, सूरज सब के पार जा सकते हैं बशर्ते आने-जाने का किराया आयोजक दे रहा हो। आज जमाना बदल गया है। ये चांद सा मुखड़ा कह कर अपनी चांद पर रिस्क नहीं ले सकते।

आज हर चकोरिन एक दर्जन चांद जेब में डाल कर घूमती है। यह अलग बात है कि कुछ उसमें दूज के चांद हैं तो कुछ पूनम के चांद। तनाव, चिंता, ब्लड प्रेशर से आज मनुष्य के बाल नैतिकता की तरह झड़ रहे हैं। केवल कलमी निष्ठाएं बची हैं। कहीं-कहीं जरूर 'टेरेस फार्मिंग' दिखायी देती है। इसलिए चांदों की कहां कमी है जनाब! गंजापन दूर करने वाली कंपनियां अपना गंजापन दूर करने में कामयाब हो रही हैं। आधे विज्ञापन तो टी.वी. और पत्र-पत्रिकाओं में बालों पर ही आधारित हैं। केश झड़ने, काले करने, डैंड्रफ होने के कारण ही फुर्सत नहीं है। आदमी बाकी स्वास्थ्य पर तो तब ध्यान दे न जब दांत और बाल चमकाने से फुर्सत मिले। जब दांतों की खुशबू ही काम बना देती है तो आचरण की खुशबू की क्या जरूरत है?

जहां तक डैंड्रफ का प्रश्न है वो तो पीछा ही नहीं छोड़ता। ये तो वो घुसपैठिया है। जो हर सीमा पर उपलब्ध है। कार्रवाई करो तो सत्ता खिसकती है न करो तो बालों की चमक। सचमुच बड़े डैंड्रफी दिन हैं ये, विवशताओं भरे अपने ही सहयोगियों से बिछुड़ने के दारुण दिन। लेकिन क्या करें चांद को बचाने के लिए सब करना पड़ता है। तरह-तरह की टोपियां सिलवानी पड़ती हैं। अलग-अलग रंग की टोपियों जैसा माहौल, वैसी टोपी। यहां जो टोपी बदलने या टोपी दूसरों पर रखने में माहिर है उनकी चांद सुरक्षित है। टोपी जहां चांद की लाज रखती है वहीं चांद टोपी को वो मान देती है कि इसे आप सामने वाले को पहना कर स्वयं निश्चिंतता से कहीं भी खुजला सकते हैं। टोपी और चांद का रिश्ता है ही इतना अटूट। बिना टोपी के चांद ऐसे ही लगती है जैसे तिब्बत का पठार या टेनिस का कोर्ट। लेकिन अफसोस इस कोर्ट पर कोई सानिया मिर्जा दृष्टिपात नहीं करती।

जैसा कि आप सब जानते हैं अब हम भी चांद पर पहुंच गए हैं। शीघ्र ही हमारे कदम वहां होंगे। वैज्ञानिक वहां पर मानव बस्तियां बसाना चाह रहे हैं। बिल्डर खुश हैं चलो चांद पर महंगे दामों पर कालोनियां काटेंगे। टूरिस्ट कंपनियां हनीमून पैकेज में चांद यात्रा को जोड़ने पर विचार कर रही हैं। क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड तो सोच रहा है कि क्यों न चांद पर भी क्रिकेट को प्रमोट किया जाए। बालीवुड भी आउटडोर शूटिंग की सस्ती और सुरक्षित जगह की तलाश में चांद पर जाना चाहेगा। नेतागण सोच रहे हैं कि अपनी-अपनी पार्टी का कार्यालय क्यों न चांद पर भी डाल दिया जाए। कम से कम स्थानांतरण, टिकट वितरण जैसे गोपनीय कार्य तो बिना कपड़े फड़वाए हो सकेंगे। वहां कौन देखेगा। लेकिन यदि न्यूज चैनल वाले भी पहुंच गए तो सब बेड़ा गर्क। चांद के एक-एक स्पॉट पर घंटो टेलिकास्ट चलेगा। इतनी अफरा-तफरी और अफवाहें सुन चांद ने पृथ्वी को फोन लगाया। 'क्यों बहन, सुना है तुम्हारी संतानें मेरे घर में बसना चाहती हैं?' पृथ्वी हौले से मुस्करायी और बोली, 'हां, सुना तो मैंने भी कुछ ऐसा है।'

घबराहट में चांद के हाथ से मोबाइल सेट गिर गया। उस पूरी रात चांद चैन से नहीं सो पाया। उसके सपनों में दंगे, हड़ताल, आगजनी, दुर्घटनाओं के दृश्य आते रहे। उसकी नींद खुली तो उसने रोते हुए बच्चे को देखा। वो उसे हंसाने में व्यस्त हो गया। उसे बूढ़ी नानी का किस्सा सुनाने लगा, चरखा कातने लगा। बच्चा चुप था। चांद उदास। चांद तो आखिर चांद था, वो अपनी शीतलता बांटने का चरित्र कैसे छोड़ सकता था?

380, शास्त्री नगर, दादाबाड़ी, कोटा-324009

अशोक भाटिया

# विलास राम 'शामिल' के कारनामे

आइए, मैं आपको अपने शहर की एक चलती-फिरती दुर्घटना से मिलवाता हूं। वे वाहन भी हैं और दुर्घटना भी। वे किसी भी शहर में हो सकते हैं। इसलिए उनसे दूरी बनाकर रखिएगा, कहीं आपको भी घायलावस्था में न छोड़ जाएं।

छोटे शहर की इस बड़ी दुर्घटना का नाम है विलास राम 'शामिल'। 'शामिल' जी साहित्यकार हैं, साहित्य के साथ विलास करते हैं। 'राम' नाम वैसे तो शील और मर्यादित आचरण के लिए प्रसिद्ध है, परंतु विलास राम जी का मानना है कि उनके नाम में 'राम' का यह अर्थ दूसरों के लिए है। यानी दूसरे लोग मर्यादित आचरण करें, वे तो विलास ही करेंगे। उनका उपनाम 'शामिल' बड़ा सार्थक है। अपने नाम में उन्होंने दूसरों का अर्थ जो शामिल किया हुआ है। यह उपनाम उनकी इस उत्कट आकांक्षा का भी द्योतक है कि आसपास कहीं भी कविता, कहानी आदि पर गोष्ठी हो, कोई पत्रिका छपनी हो, अभिनंदन या पुरस्कार का निर्णय होना हो, तो उन्हें अवश्य शामिल किया जाए।

लेकिन धीरे-धीरे शहर के लेखकों को विलास राम 'शामिल' की महान् असाहित्यिक प्रवृत्तियों का पता चला, तो वे इनसे किनारा करते गए। इनके तो किनारे हैं नहीं, किसी भी दिशा में बहकर किसी की भी फसल चौपट करने को तैयार रहते हैं। आइए, थोड़ा विस्तार में चर्चा करें। 'शामिल' जी के मन में साहित्य दो प्रकार का होता है—फोक साहित्य और थोक साहित्य। फोक-साहित्य वह होता है, जिसे किसी दूसरे लेखक द्वारा फोक (कांटे) के साथ उठाकर खाया (चुराया) जाता है। दूसरे शब्दों में अन्य कवि-लेखकों के साहित्य को थोड़ा बदलकर, थोड़ी मिलावट करके अपने नाम से छपवाया गया साहित्य फोक-साहित्य होता है। दूसरा प्रकार है थोक साहित्य, यानी वह साहित्य जो थोक के भाव लिखा जाए, छपाया जाए। ऐसा साहित्य लिखाने वाले लेखक के मन में सुबह-शाम-दिन-रात लिखने की, छपने की, सम्मानित होने की खुजली होती रहती है। ऐसे लेखक का एक खुरंड एक पुस्तक में परिणत होने की क्षमता रखता है। दोनों प्रकार का साहित्य एक-दूसरे का पूरक होता है। विलास राम 'शामिल' जी का साहित्य उभय प्रवृत्ति का है यानी उसमें फोक और थोक का मणि-कांचन संयोग मिलता है—चुराऊ भी और तुक-भिड़ाऊ भी।

तो शहर के लेखक 'शामिल' जी के बारे में बहुत-कुछ जान गए हैं। ऊपर की दोनों महान् प्रवृत्तियों अर्थात् उपलब्धियों के कारण उन्होंने इस साहित्यकार को 'स-हत्याकार' के मौखिक खिताब से नवाज़ा है और थोक-साहित्य के कारण उन्हें 'साहित्य-आकार' का खिताब भी दिया है। ऊपर की दोनों प्रवृत्तियों का एक उदाहरण देखिए। अपनी रचनाओं ही नहीं, उनके शीर्षक भी वे दिवंगत रचनाकारों की रचनाओं के आधार पर रखते हैं। 'भीम पथिक' एक प्रसिद्ध खंडकाव्य है, सो विलास राम जी ने अपनी कविता-पुस्तक का नाम 'भीम-पथ' रख दिया। आप इसे चतुर-चपल चौर्य वृत्ति क्यों कहते हैं, यह तो परंपरा को आंखों पर बिठाने की महान् विशेषता है। पुस्तक का नाम परंपरा से लिया, तो भीतर क्या होगा—अनुमान लगाना कठिन नहीं है। हर बार ऐसी पुस्तक आने पर शहर के लेखक उंगली उठाते, हर बार 'शामिल' जी डटकर सामना करते। कभी कहते कि चोरी तो हमारे श्रीकृष्ण भी करते थे, उनके खिलाफ तो कभी थाने में एफ.आई.आर. तक दर्ज नहीं हुई थी। मैं तो उनसे भी दो कदम आगे हूं। वे तो सिर्फ़ तन से काले थे, मैं तन और मन—दोनों से काला हूं।

फोक और थोक के कलात्मक प्रयोग ने विलासराम 'शामिल' को फन्नेखां लेखक बना दिया। कई किताबें लिख मारीं, प्रकाशकों को दनादन पांडुलिपियां दागीं। प्रकाशकों को कहना पड़ा कि हम कबाड़ नहीं छापते। सो 'शामिल' जी अपने नाम को धन्य करते हुए प्रकाशकों में शामिल हो गए। बढ़िया कवर किताब की भीतरी दुर्गंध को तब तक छिपाए रहता है, जब तक उसके पन्ने न पलटे जाएं। 'शामिल' जी ने स्वयं समीक्षकों में भी शामिल होकर झूठे नामों से अपनी पुस्तकों की समीक्षाएं स्वयं लिखीं और इस प्रकार शहर के श्रेष्ठ स्वमुग्ध साहित्यकार बन गए। वे कहते हैं कि उनकी किताबें बाज़ार की मांग के अनुसार लिखी गई हैं। उनकी सोच है कि यदि हलवाई घोड़े की लीद को भी वर्क लगाकर बेचने लगें, तो लोग आंख मूंद कर उसे भी खा जाएंगे। इस प्रकार 'शामिल' जी स्वयं अपने साहित्य को 'लीदात्मक' मानते हैं।

धीरे-धीरे साहित्य-विलास करते हुए वे स्वयं को मठाधीशों की श्रेणी में रखने लगे हैं। उनके घर में दो तारें हैं। एक कपड़े टांगने वाली और दूसरी चिट्ठियां टांगने वाली। चिट्ठियों की भी किताब बनाएंगे। उनके पास दो एलबम हैं। एक शादी की और दूसरी लोकल अखबारों में छपे उनके नामों, फोटो और प्रशंसोक्तियों की। इस दूसरी एलबम के भी चार भाग पूर्ण हो चुके हैं और ड्राइंगरूम के सैंट्रल टेबल की शोभा बढ़ा (?) रहे हैं, जबकि शादी की एलबम स्टोर के अंधेरे में गुम है। इनके अतिरिक्त एक अति-विशिष्ट फ़ाइल है, जिसमें चार-चार पृष्ठ वाले चार लोकल अखबारों के विशेषांक 'विलास राम 'शामिल' विशेषांक' नाम से छपे थे, उनकी एक-एक प्रति सहेजकर रखी है। सब जानते हैं कि शुद्ध लोकल विद्वानों के विशेषांक ठेठ लोकल अखबारों

शेष पृष्ठ 87 पर. . .

अनुराग वाजपेयी

# यहां है सरकार

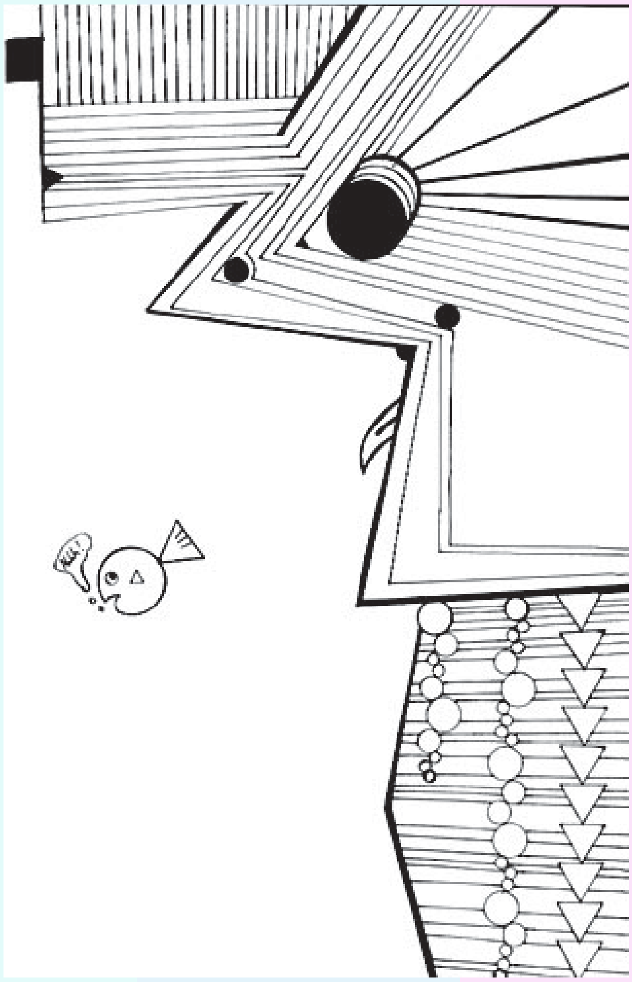

एक दिन एक विलयती गोरा हमारे शहर आया। रेलवे स्टेशन के बाहर आया और एक ऑटो रिक्शा वाले ने उसे घेर लिया। कहां चलेंगे साहब, आमेर, जंतर-मंतर, राजा के किले, रानी के बाग, हवामहल सर, इट इज ब्यूटीफुल, हिस्टोरिकल, फुल डे, ओनली फाइव हंड्रेड रूपीज सर। गोरे ने कहा- ये सब हमने खूब देख लिया। हम इस बार कुछ नया देखने को मांगता। सुना है तुम्हारे इधर कोई सरकार नाम का चीज है हमको दिखाओ। ऑटो वाले ने थोड़ी देर सोचा, फिर बोला- सर, ये सरकार पहले तो होती थी, इधर चार-पांच साल से देखने में नहीं आई, उसमें क्या रखा है सर, चलिए मैं आपको हवामहल दिखाऊं, करोड़ों खर्च कर उसे सुंदर बनाया है। गोरे ने डपटा-शट अप, कहा ना हम सरकार देखने इतनी दूर आए हैं, बोलो- दिखाओगे?

ऑटो वाले ने झल्ला कर कहा- सर, आपको किसने बता दिया, यहां सरकार-वरकार कुछ नहीं है। गोरा बोला- है कैसे नहीं, हमने इंटरनेट पर देखा है, वह है और चलती भी है, तुम झूठ बोल रहे हो। अब ऑटो वाले की समझ में थोड़ा माजरा आया, वह बोला- अरे सर, वो बस इंटरनेट में ही है और बाकी सरकार हर सड़क पर खड़े विज्ञापन बोर्डों में है बस उतनी ही है सर। गोरे ने कहा- हमने तो सुना था कि यहां सरकार हर तरफ दिखती है। ऑटो वाले ने पूछा- साहब, क्या आपके यहां सरकार दिखती है? गोरा बोला- हमारे यहां दिखती नहीं है, उसे महसूस किया जाता है। हमारे यहां पानी, बिजली, सड़क, स्कूल वगैरह अपने आप ठीक चलते हैं, इसी से पता चल जाता है कि सरकार ठीक चल रही है। ऑटो वाला बोला- साहब फिर तो सरकार हमारे यहां भी है। यहां भी वह महसूस की जाती है। गोरे ने कहा- कैसे? ऑटो वाला बोला- देखो साहब, चौराहे पर पुलिस वाला गाड़ी रोकता है, पचास रुपये लेता है। सब मानते हैं कि यह पैसा ऊपर तक यानी सरकार तक जाता है, इसी तरह सरकार और भी कई तरीकों से अपने होने का एहसास करवा देती है। सरकार के जो खास लोग होते हैं वे घूम-घूम कर सरकार की डुगडुगी पीटते हैं। गोरे ने कहा- अब तुम जल्दी करो, हमें सरकार दिखाओ, हम उसकी फोटो खींचेंगे।

ऑटो वाला गोरे को विधानसभा ले गया। वहां सन्नाटा पसरा हुआ था। गोरे ने पूछा- ये क्या है? ऑटो वाला बोला- ये विधानसभा है, सरकार यहीं से चलती है। गोरे ने पूछा- तो चल क्यों नहीं रही? ऑटो वाला बोला- अभी आर्फ सीजन है। ये साल में महीना भर ही चलती है, उस महीने में भी हो हल्ला और नारेबाजी ही होती है। गोरे ने विधानसभा के फोटो खींचे और कहा- श्मशान जैसी शांति है तुम्हारे यहां लोकतंत्र का बड़ा बुरा हाल है। ऑटो वाले से देश का यह अपमान बर्दाश्त नहीं हुआ, बोला- देखना है तो देखो, ये शमशान नहीं लोकतंत्र का मंदिर है। गोरे ने कहा- तुम बेवकूफ बना रहे हो, सुनसान इमारतें दिखा रहे हो मुझे सरकार देखनी है। अबकी ऑटो वाला उसे सचिवालय ले गया। यह एक बहुत बड़ी इमारत थी। बाबुओं से ठसाठस भरे कमरों से फाइलों की सुस्त गंधा आ रही थी। कई कुर्सियों पर बाबुओं के धड़ और मेजों पर सिर पड़े थे। गोरे ने कहा- ये क्या है? सरकार कहां है? ऑटो वाले ने कहा- यही सरकार है। यहां हर मेज पर धूल सनी फाइलों में जनता के कल्याण की कोई न कोई योजना बंधी पड़ी है। यहीं विकास के आंकड़े तैयार करने का कारखाना है और वह देखो जनसम्पर्क विभाग की

इमारत, उसी से रोज नेताओं के बयान विज्ञापनों के साथ अखबारों में छपने को भेजे जाते हैं। यही तो सरकार है।

गोरे ने अब लाल आंखों से ऑटो वाले को घूरा और कहा– मूर्ख मत बनाओ, मैं सात समंदर पार से ये इमारतें और बाबू देखने नहीं आया, मुझे सरकार दिखाओ। मैंने सुना है वह तुम्हारे इसी राज्य में है। ऑटो वाला बोला– आपने भगवान को देखा है? नहीं ना, माना जाता है कि वह मूर्तियों मंदिरों, गिरजाघरों में है उसी तरह सरकार इन इमारतों में है। गोरा नहीं माना, तब बहुत सोच विचार कर ऑटो वाले ने कहा– चलो एक जगह और कोशिश करते हैं। वह पर्यटक को सिविल लाइंस ले गया– जहां मंत्रियों की कोठियां थीं। इन्हें देखकर गोरा भौचक्का रह गया, बोलो– यहां कहां है सरकार? गरीब प्रदेश की सरकार आलीशान बंगलों में कैसे रह सकती है? अब ऑटो वाले ने हार मान ली, बोला– साहब, मेरा पीछा छोड़ो, मेरे पैसे भी मत दो। मेरी समझ में तो सरकार विधानसभा, सचिवालय और कोठियों में ही रहती है। आप न मानों तो एड्रेस दे दो जहां रहती हो वहां ले चलूं। गोरा लड़ने लगा– तुम हिन्दुस्तानी, हमेशा धोखा देते हो, तुम सोचते हो हम देख लेंगे तो तुम्हारी सरकार साथ ले जायेंगे। ऑटो वाले ने कहा– ले ही जाओ ना, हम तो इससे पहले ही ऊबे हुए हैं।

तभी वहां एक नई बड़ी कार आकर रूकी उसमें से एक सेठनुमा आदमी निकला और उसने ऑटोवाले को डांटा– क्यों टूरिस्ट को तंग करते हो, जो कहता है दिखाते क्यों नहीं? ऑटो वाले ने कहा– कहां दिखाऊं साहब? ये सरकार दिखाने की कहता है, मुझे क्या पता कहां है सरकार? मुझे तो आज तक दिखी नहीं। कार वाला हंसा। बोला– बस इतनी सकी बात, चलो मेरे साथ। गोरे ने पूछा– तुम कौन हो? उसने कहा– मैं इस राज्य का सबसे बड़ा प्रापर्टी डीलर हूं, शराब का ठेकेदार भी, मेरी जेब में झांककर देखो, वहीं सरकार रहती है। गोरे ने देखा– वाकई वहां कई मंत्री और विधायक रेंग रहे थे।

39, टाइप IV, CPWD निर्माण विहार-II
सेक्टर -2, विद्याधार नगर जयपुर

बच्चन पाठक 'सलिल'

## रोग और देवता

साहित्य परिषद् की रजत जयन्ती मनाई जा रही थी। मैं एक प्रसिद्ध व्यवसायी के यहां पहुंचा। वे एक ख्याति लब्ध समाजसेवी और साहित्य प्रेमी हैं। मैंनें उनसे समारोह के लिए आर्थिक सहायता का निवेदन किया।

वे बोले– 'मंदी का चक्र चल रहा है। कर्मचारियों का वेतन में कठिनाई हां रही है। पर आप आए हैं तो निराश नहीं करूंगा।' और उन्होंने एक सौ एक रुपए दिए।

इसी समय एक हवालदार आया। बिना किसी भूमिका के बोला– 'टी ओ पी में फगुआ होगा। खाना–पीना भी है। चंदा दीजिए।'

सेठ जी ने तीन सौ एक रुपए दिए। हवालदार ने कहा– 'इससे क्या होगा? खस्सी का दाम ही एक हजार हो गया है।' सेठ जी ने दो सौ रुपए और दे दिए।

हवालदार के जाने पर, इससे पहले कि मैं कुछ कहूं, सेठ जी बोले– 'पंडित जी, आप तो देवता हैं और हमारे देवता तो फूल–पत्ती से प्रसन्न हो जाते हैं। ये हवालदार तो दुष्ट–ग्रह है, रोग है, इसके लिए चढ़ावा तो खास ही चढ़ेगा। रोग से मुक्ति के लिए तो कुछ भी खर्च किया जाए कम है।'

– डी. रामदास भटठा बिष्टुपुर, जमशेदपुर

. . . पृष्ठ 85 का शेष

के ही छपते हैं। इन्हें 'शामिल' जी ने आगंतुकों के अवलोकनार्थ ड्राइंग रूम में विशेष स्थान पर रखा हुआ है। मेहमान पहले इन विशेषांकों को देखने की पीड़ा झेलें, उसके बाद उन्हें चाय पिलाई जाएगी।

इन मठाधीश की इन आदतों ने शहर में इन्हें अकेला कर दिया है। अपना भाव बढ़ता न देख इन्होंने 'लेखक दु:ख निवारण समिति' बना ली है। हालांकि गुरुनानक देव ने लिखा है कि 'नानक दुखिया सब संसार', लेकिन 'शामिल' साहब ने यह समिति केवल अपनी पीड़ा दूर करने के लिए बनाई है। समिति में चार वर्ष तक वे अकेले ही थे, लेकिन समिति के सरगना थे। अब दो सदस्य मिले हैं, जो उनके गांव से ही, रिश्तेदारी में पड़ते हैं, इसलिए बंधुआ सदस्य हैं।

'शामिल' जी को अब भी यही सबसे बड़ी आपत्ति है कि लोग उन्हें कुछ नहीं मानते। किसी दफ़्तर में जाऊं, तो लोग अपनी जगह खड़े होना या नमस्ते करना तो दूर, मुंह ही फेर लेते हैं। साहित्यकार का अपमान राष्ट्र अपमान है। इसलिए आजकल 'शामिल' जी राष्ट्र को अपमानित होने से बचा रहे हैं। इसका एक दिलचस्प उदाहरण है। एक दूर–दराज के कस्बे में एक साहित्य–सभा वालों को विलास राम 'शामिल' के बारे मालूम नहीं था। इन्हें कार्यक्रम में शामिल कर बैठे। शामिल जी वहां जाकर बरस पड़े–मुझसे इस कार्यक्रम की अध्यक्षता क्यों नहीं करवाई?' और नाराज़ होकर लौट आए। अगले ही दिन उस सभा के खिलाफ़ अदालत में मान–हानि का मुकदमा ठोंक दिया। मुकदमे में वकील ने दलील दी कि आज देश में यही अकेला ऐसा साहित्यकार है, जिसे कश्मीर से कन्याकुमारी तक हर व्यक्ति जानता है। अत: उनसे सिर्फ़ भागीदारी करवाना उनकी मानहानि करना है।' ... इस प्रकार विलास राम 'शामिल' आज की तारीख में मान–हानि के छह दावे ठोंके हुए हैं। कहीं अखबार में खबर न लगाने के खिलाफ़, कहीं उनकी पुस्तक को अनुदान या पुरस्कार न देने के खिलाफ़, कहीं श्रेष्ठ साहित्यकार न मानने के ख़िलाफ़, तो कहीं रेडियो पर न बुलाने के खिलाफ़ मुकदमे चल रहे हैं। इस प्रकार राष्ट्र को अपमान से बचाने के लिए वे करीब हर हफ़्ते अदालत में तारीख भुगतने का विलास कर रहे हैं।

लोगों ने अब उन्हें अदालती लेखक कहना शुरू कर दिया है।

1882, सै

काशीपुरी कुंदन

# हे दयालु दया का दरवाजा खुलवाइए

हुजूर, हम असुविधा भोगी निवेदन करते हैं कि हमें कुछ सुविधाएं तत्काल मुहैया कराई जाएं। यूं तो हम इस सुविधा संपन्न महान देश में असुविधा भोगने के आदी हो चुके हैं, फिर भी भारतीय होने के नाते निवेदन करना या मांगना हमारी परंपरा है। इसलिए हमारी मांगों पर गौर करने की महती कृपा करें।

बेहतर होगा कि संविधान में संशोधन करके भ्रष्टाचार को मूल अधिकारों में ही शामिल कर दिया जाए जिससे कि चारों ओर भ्रष्टाचार की फसल लहलहाती रहे और मुल्क हमेशा हरा भरा दिखाई देता रहे।

हम दहेज लें बहू को जिंदा जलाएं या आत्महत्या के लिए प्रेरित करें, सरकार हमारे कामों में कोई टांग न अड़ाए क्योंकि हम आजाद देश के नागरिक हैं और हमें हर कार्य आजादी से करने की छूट होनी चाहिए।

हे दयालु! दया का दरवाजा हमारे लिए भी खोलिए और हमें भी दलाली या ठेका देकर अनुग्रहीत करें, अपनी सहृदयता का परिचय दें अन्यथा हमारा यह जन्म व्यर्थ ही चला जाएगा। हम ऊपर वाले के दरबार में किस प्रकार मुंह दिखा सकेंगे।

महंगाई बढ़ाने वाले कारीगरों, सामानों को गायब करने वाले जादूगरों यानी हमारे व्यापारी बंधुओं को मिलावट, मुनाफाखोरी, जमाखोरी और कालाबाजारी जैसे पुश्तैनी धंधे करने का 'पावर' हमेशा के लिए दी जाए। यह आपकी दूरदर्शिता होगी कि बदले में बतौर संधि के समय-समय पर आप 'थैली' भेंट में लेते रहें या सिक्कों से तुलते रहें।

चाहे धरती फटे या आसमान मगर अपनी सफलता और सलामती के लिए आप असंतुष्टों को पद यानि सत्ता सुख का आनंद लेने दीजिए क्योंकि सत्ता पक्ष के होते हुए भी नेपथ्य में असली विपक्षी यही लोग हुआ करते हैं। इसलिए सचिवालय में भले ही कोई विभाग अथवा विभाग का अंश शेष नहीं रह गया हो, उनके रहने के लिए राजधानी में कोई बंगला खाली न बचा हो यह छोटी-छोटी बातें उनके स्वविवेक पर छोड़ दीजिए उनके लिए मंत्रीपद घोषित कीजिए। यदि मंत्रीपद संभव न हो तो किसी निगम, सहकारी संघ, ट्रस्ट आदि के अध्यक्ष पद पर उन्हें बैठा दें।

आतंकवादी प्रवृत्ति के सभी थानेदारों को 'वीर पुरस्कार' से सम्मानित करने की स्वस्थ परंपरा प्रारंभ की जाए तथा आत्मीयतापूर्वक बर्बरता बरतने, थाने में ही सद्भावना सहित सामूहिक बलात्कार संपन्न करने, गोपनीय बातों का भंडाफोड़ करने, चोरी डकैती आदि अनुकरणीय कार्य करने की पूरी छूट दी जाए। जिससे कि वे देशभक्त, जनसेवा और सुरक्षा के सच्चे पक्षधर सिद्ध हो सकें।

देश की एकता और अखंडता के लिए उचित हो कि आप जयचंद और मीरजाफर जैसे देशभक्तों को सत्ता की बागडोर सौंप दें ताकि वे हमारे आंगन में गुलाब के एवज में 'कैक्टस' रोपने में जरा भी कंजूसी नहीं बरतें और राष्ट्र चहुंमुखी विकास के पथ पर अग्रसर रहें।

जनता गले मिले या गला काटें, अंधकार बांटे अथवा उजाला, आप जनता जनार्दन की नहीं बस कुर्सी की फिक्र कीजिए वैसे भी किया इस देश की जनता बेवकूफ है अतः उसे उसके हाल पर ही मरने दीजिए। आपने कितना ध्यान दिया, भरसक प्रयत्न किया उसे ऊपर उठाने का. . .मगर क्या आई.आर. डी.पी., क्या जवाहर योजना. . .? जनता तो यह कसम खाकर पैदा हुई है कि गरीबी में ही जीएगी और गरीबी में ही मरेगी, चाहे कुछ भी हो जाए वह गरीबी की रेखा से एक इंच भी ऊपर नहीं उठेगी, बल्कि यह कहिए कि टस से मस न होगी। इसलिए परवर मेरी तो यह सलाह है कि इस मंहगाई को और अधिक बढ़ने दीजिए, जितना हो सके हमें जनता को लूटने दीजिए।

जो अभिनेत्री जितना अधिक अंग प्रदर्शन करती हो उसे सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री का खिताब देने की कृपा करें क्योंकि इन बेचारियों का इसमें कोई दोष नहीं होता। वे तो मात्र कलानेत्रियां हैं। आज-कल कहानियां ही ऐसी लिखी जाती हैं कि निर्माता निर्देशक रुपये बटोरने के चक्कर में उन बेचारियों के कपड़े उतार लेते हैं। लोग तो 'पागल' हैं जो अकारण ही चिल्लाते रहते हैं कि संस्कृति खुलेआम नीलाम हो रही है। यह जो अंगप्रदर्शन हो रहा है वह नारी की मर्यादा और सभ्यता के खिलाफ है। हमारा तो मानना है कि ये सब पुरातनपंथी बातें हैं, साहब सीधी सी बात है कि जिसके पास कुछ भी दिखाने लायक है, वह उसे दिखा दें तो इसमें हर्ज ही क्या है।

अब आप हमारे वकीलों को ही ले लीजिए उन्हें झूठ बोलने की कला में महारत हासिल होती है। ऐसे महारथियों को जनता की खुशहाली के लिए पूरी-पूरी छूट दीजिए कि वे अपनी कला के बल पर यानि झूठ बोलकर, न्याय को फांसी और कानून को जेल की हवा खिला सके। उन्हें झूठे, फरेबी, और बेईमान जैसे अलंकारों से अलंकृत न किा जाए। फिर देखिए न, इनसे बड़ा त्यागी और जनहितैषी मुल्क में और कोई नहीं हो सकता, ये जो कुछ भी करते हैं अपने मुवक्किल की खुशी के लिए करते हैं। मुवक्किल की खुशी, देश के प्रतिष्ठित नागरिकों की खुशी और जब देश के बड़े-बड़े नागरिक खुश होते हैं तो देश खुशहाल होता है। आप इसे अन्यथा न लें, हमारा तो यही कहना है कि जिस देश के वकील खुश हों वह देश तरक्की करता है।

आंदोलनकारी जागरूक भाईयों को अपनी जागरूकता का परिचय निर्विघ्नता पूर्वक देने का अवसर प्रदान कीजिए, चाहे

वे हड़ताल करें या नगर बंद, चाहे भारत बंद या विश्व बंद, संविधान की प्रतियां जलाएं या गरीबों की झोपड़-पट्टियां, बसें-मोटरें फूंके या हवाई जहाज, उन्हें करने दें। आखिर वे भी तो इसी देश के नागरिक हैं देश पर तो उनका भी तो अधिकार है, वे भी इस महान और स्वतंत्र देश के स्वतंत्र और स्वच्छंद वाशिंदे हैं।

कुछ सज्जन गांधी विचारधारा के पक्के समर्थक होने के नाते मुहल्ले से लेकर जंगलों तक की लकड़ियों की सफाई पर विश्वास करते हैं। उन्हें ट्रकों लकड़ियों की अवैध निकासी निष्ठापूर्वक करने की अनुमति देने की महती अनुकम्पा करें। सच्चे अर्थों में यही लोग पक्के दूरदर्शी हैं। दिनों-दिन देश की जनसंख्या इस कदर बढ़ रही है कि शमशान घाट में भी कालोनियां बन रही हैं। ऐसी विषम परिस्थिति में आगे चलकर जगह की घोर समस्या हो जायेगी और आपका वृक्षारोपण कार्यक्रम धरा का धरा रह जाएगा। इसलिए भी जंगलों की सफाई अनिवार्य हो जाती है ताकि पुराने वृक्षों की जगह नये वृक्ष लगाए जा सकें, नये पौधे रोपें जा सकें और जब वे बड़े हो जाएं तो उन्हें चोरी से काट कर चोरी-चोरी बाजार में बेच दिया जाए।

जनप्रतिनिधि तो जनता का हित न करके सदैव स्वहित करने में ईमानदारी पूर्वक जुटे रहते हैं उदाहरणार्थ देश की घोर आवासीय समस्या को देखते हुए शहर-दर-शहर कोठियों का निर्माण करना या फुर्सत के क्षणों में 'जनसंख्या' को गति देने में अपना अमूल्य योगदान देना। ऐसे पुरुषार्थियों को 'कर्मवीर' की उपाधि से सम्मानित किया जाए। क्योंकि इससे जनता की निरीह इच्छा को पूरा किया जा सकेगा। फिर यह तो सर्वविदित तथ्य है कि प्रजातंत्र में जनप्रतिनिधि का हित जनता का हित होता है। वे जो कुछ भी करते हैं। अत: आप उन्हें जनता का पूरा-पूरा हित करने की छूट दीजिए।

हमारी अंतिम अथवा आखिरी इच्छा यही है कि आप हमारी खुशी के लिए राष्ट्र के चहुंमुखी विकास के लिए अवसरवादिता, स्वार्थपरता और कोरे आदर्श के ढोल बजाएं, जिससे कि हमारे मुल्क का नाम संसार में रोशन हो सके।

**मातृछाया, मेला मै**


**'व्यंग्य यात्रा' के निम्नलिखित शुभचिंतकों से आप 'व्यंग्य यात्रा' अंकों के लिए संपर्क कर सकते हैं**

श्री अशोक आनंद
103/2-1 गुरु रोड, देहरादून
दूरभाष : 9410394466 (मोबाइल)

श्री रमेश सैनी
245, एफ.सी.आई.लाईन, त्रिमूर्ति नगर
दमोह नाका, जबलपुर-482002 (म.प्र.)
दूरभाष : 09425866402

श्री तरसेम गुजराल
46 हरबंस नगर, जालधंर (पंजाब)

श्री अरविंद विद्रोही
बिरसानगर रोड नं.-2 पूर्व, जोन-2
गुप्ता गैस गोदाम के पीछे
जमशेदपुर (बिहार)

रामबहादुर चौधरी चंदन
फुलकिया, बरियारपुर
मुंगेर-811211 (बिहार)

श्री अतुल चतुर्वेदी
380 शास्त्री नगर
दादाबाड़ी, कोटा (राजस्थान)
दूरभाष : 9414178745

प्रेम विज, 1284 सैक्टर 37 बी
चंडीगढ़ 7110036
दूरभाष : 2688139

परिदृश्य प्रकाशन
दादी संतुल लेन, धोबी तालाब
मरीन लाईन, मुंबई
दूरभाष : 20192689

श्री विदित कुन्द्रा
2 डी-802, एन जी सिटी फेज़-2
कांदिवली (पूर्व) मुंबई
दूरभाष : 9820059601

श्री अनंत श्रीमाली
4/64 'गीतांजली' समता नगर
कांदिवली (पूर्व) मुंबई
दूरभाष : 9819051310

पंजाब बुक सेंटर
एस सी ओ न 1126
सैक्टर 22 बी, चंडीगढ़

श्री शिवानंद सहयोगी
ए-233 गंगानगर, मवाना रोड, मेरठ
दूरभाष : 9412212255

व्यास रोजगार सेंटर
महेश नगर
जयपुर (राजस्थान)



आठवें नियम के अंतर्गत अपेक्षित त्रैमासिक 'व्यंग्य यात्रा' (पत्रिका) नामक समाचार पत्र से संबंधित स्वामित्व और अन्य बातों का ब्योरा-

**प्रपत्र-4**

पत्रिका का नाम : **व्यंग्य यात्रा**

**प्रकाशन का स्थान**
73 साक्षर अपार्टमेंट्स
ए-3 पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110063

प्रकाशन की अवधि: **त्रैमासिक**

**मुद्रक का नाम एवं पता**
प्रेम प्रकाश
73 साक्षर अपार्टमेंट्स
ए-3, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110063

**क्या भारत का नागरिक है** : हां

**प्रकाशक का नाम एवं पता**
प्रेम प्रकाश
73 साक्षर अपार्टमेंट्स
ए-3 पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110063

**क्या भारत का नागरिक है** : हां

**संपादक का नाम एवं पता**
प्रेम जनमेजय
73 साक्षर अपार्टमेंट्स
ए-3 पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110063

उन व्यक्तिओं के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पत्र के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।

**प्रेम प्रकाश**
73 साक्षर अपार्टमेंट्स
ए-3 पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110063

मैं प्रेम प्रकाश एतद् द्वारा घोषित करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

तारीख- 10 मार्च, 2007

**ह० प्रेम प्रकाश**
(प्रकाशक के हस्ताक्षर)

राज चड्ढा

# प्यार, बिना अड़बंगे के

बड़ी अदालत को फैसलो आय गयो है। मोड़ा-मोड़ी घर ते भाग जायें तो पुलिस बिनकी पिटाई नहीं लगाएगी, उन्हें कोला-कोला पिलायेगी, इज्जत से घर पहुंचायेगी और घर वालों को राजी करेगी कि उनके फेरे परवाये दें। हील-हुज्जत न करें, जाई में भलाई है। नईं तो मोड़ा-मोड़ी तो छूट जाएंगे, बिन के मइयो-बाप अंदर कर दये जायेंगे।

का बरखा जब कृषि सुखाने! इतेक देर कर दई फैसला देने में। हमाई तो कट गई। बुढ़ा गये बाको नाम लेत-लेत, पर ब्याह नहीं कर पाये। हम दोनों तो राजी थे पर इतेक काजी बीच में हते कि हिम्मत ही नाहीं परी शादी के लाने कहबे की। घर वालों के लात घूंसे तो कई बार खाये थे, बिन को कोई डर नहीं हतो। पर पुलिस के डंडन के डर के मारे इसक को सारो भूत पूरो चढ़बे ते पहले ही उतर गयो। जाने कहां-कहां नहीं मारेगो दरोगा। न दिखाते बनेगो न छुपाते। हमारो एक दोस्त भागो हतो घर ते अपनी प्रेमिका के संग। बाकी इतेक सुताई भई हती कि बाकि की बो जगै आज तक सूजी है। बाके मोड़ी-मोड़ा भी हिम्मत नईं कर पा रहे इसक करबे की। जे तो भलो भयो कि वो चंबल किनारे वालो हतो, सो सस्ते में छूट गयो। कहीं मेरठ या मुजफ़्फ़रनगर को होतो तो पंचायत लटका देत फांसी पे, के कुल्हाड़ी ते काट देत।

बिन दिनों स्कूल कॉलेज में जितेक किस्से प्रेम प्यार के नई चलत थे, बिनसे कई गुना अधिक आसिकों की ठुकाई पिटाई के चलत रहे। जिनकी अपनी हिम्मत इसक करबे की न हती, बे मजे ले ले के आसिकों की ठुकाई के किस्से सुनाते। बड़ी शांती मिलती बिनें जा से। जैसे जलती छाती पे काऊ ने मलहम लगा दऔ हो। - चले थे प्रेम करबे। थोबड़ो देखो हतो अपनों सीसे में। मोड़ी भी ऐसी वेसी होगी। बई ते फंस गई चंगुल में। नईं तो हम कौन बुरे हते। हमरो प्रस्ताव बाने काये ठुकरा दओ। हम तो जासती सुंदर और नेक चाल-चलन वाले हते। गोरी फंस गई लुंगन में। लुंगा लोग ठुकेंगे नईं तो का बिन की पूजा की जायेगी।

बिन दिनो प्रेम करन में इतेक अड़बंगे हते कि पूछो नईं। नैन-मटक्का तो हो जात, पर बैठ के दो घड़ी बात करन के लाने कोनों जगै ढूंढे नाहीं मिलत रही। इस्कूल बाको अलग, अपनों अलग। गली-मोहल्ला एक रहा, पर इतेक हिम्मत काऊ में न हती कि एक-दूजे से बातचीत कर सके। घर वारे देख लेत तो चमड़ी उधेड़ देत। सनीमा अकेले देखबे की इजाजत नाहीं हती, बाको संग ले जाइबे की कौन कहे। न बाग-बगीचे हते न मो पे कपड़ो लपेटबे को चलन। साइकिल के डंडे पे बिठाइबे को बिचार जब कभी आयो, बापू के डंडे को बिचार बा ते पैले आ गयो। समझो लुका-छिपी में ही उमर निकर गई और घरवारों ने एक दिना बाके हाथ पैरन में हलदी दई। समजो के प्यार की बस्ती बसबे से पैले ही उजर गई। गले लगाइवे की सोचत रहे, हाथ छूने की हिम्मत नाहीं परी। ता दिना से कसम खा ली, कबहूं टेम आयो जीवन में तो प्रेमियन के लाने और कछू कर सके न कर सकें, दो चार जोरी बाग-बगीचे जरूर बनावेंगे और प्रेमियन की रक्षा के काजे चौकीदार अलग से बिठायेंगे दरवज्जे पे। जे ई हमाये अधूरे प्रेम को हमाई सरद्धाजंली होवेगी। हम बिन करमजलों में नईं हैं जो अपन तो प्यार कर नाहीं पाये, दूजन को करत देख जिनकी छाती फटत है। कई बार सोचत रहे, ऊपर वाले ने हमें पचास बरस पैले क्यों पैदा कर दिया। जो आज करता तो मजे ही मजे होते।

हमारे घर के बगल की एक मोड़ी लग गई हती एक मोड़े के संग। मोड़ी को संतरे वाली खट्टी-मीठी गोली बौत अच्छी गलत रही। मोड़ा घर ते पैसे चुराता और गोलियां लाकर देता। बात बढ़त-बढ़त खट्टी इमली तक जा पहुंची। पर घर वालों ने बिनकी शादी नईं करवाई। उलटे राखी बंधवाय दई और मोड़ी एक काले-कलूटे बुढ्डे के संग ब्याई दई। मरते दम तक मोड़ी भूल न पाई अपने प्रेमी को। प्रेमी बावला बना आज भी बाके द्वारे धूनी रमाये बैठो है। दोउन के मइयो-बाप मूछन पे हाथ फेर कुल की मर्यादा की दुहाई देत नाहीं थकत और बिरादरी में नाक ऊंची करके अपनी बहादुरी के किस्से बखान करत हैं।

आज के टेम पे जब स्कूल जाती मोड़ी घर ते निकलत ही मुंह पे कस के कपड़ो लपेट लेत है और मोबाइल चालू करन में नेकऊ देर नईं लगावत है, तब ऐसे फैसले की जरूरत और जास्ती हती। जात-बिरादरी के बंधन और अमीर-गरीब के अंतर को नई पीढ़ी इतेक तेजी से ठोकर मार रई है कि अपन की तो तबीयत हरी हो रई है।

बो सीन देखबे के काजे हम सरीर के रोम-रोम को आंखें बनाये बैठे हैं जब दो प्रेम करबे वाले पंडित जी की जगै थानेदार साब को संग लेके घर आवेंगे और माता-पिता के चरन छूकर 'जोरी-जुरै' को आसीर्वाद मांगेंगे। दहेज लोभी बाप जी को मुंह खुले को खुलो रह जावेगो।

हमें लगत है के आने वाले दस-बीस सालों में हरयाना और पच्छमी यू.पी. की धांसू पंचायतें हाथ बांधे अदालतों में मुजरिम की सी नाईं सर झुकाये खड़ी मिलेंगी। गांव के छोरा-छोरी होंगे फरयादी। बोलेंगे-जज साब! इन पंचन ने हमाये मां-बाप के संग मिलकर हमाये प्रेम पे उंगली उठाई है। जे अदालत की तौहीन है। हमारी प्रार्थना है कि हमारी शादी अदालत के अंदर होना चइये और इनकी पंचायत जेल के अंदर। जज साब खुसी-खुसी कन्यादान करेंगे और मईयो-बाप जेल में चक्की पीसते भये मंगल-गीत गाबेंगे।

सी-12, विवेक विहार, ग्वालियर-474007

योगेन्द्र दबे

## सर जी आप. . .

सर जी! आप अहिंसा के पुजारी, करुणा के सागर, दीनदयाल। आपने चाकू खरीदने जैसा घृणित कार्य कैसे कर लिया? मैं जानता हूं आपने चाकू खरीदा नहीं होगा। क्योंकि चीजें खरीदना आपकी फितरत में नहीं। निश्चय ही चाकू किसी ने भेंट किया होगा या किसी से हथिया लिया होगा। हथियाया न होगा तो किसी से मांग लिया होगा, क्योंकि मांगना आपका जन्म सिद्ध अधिकार है। आपका वश चलता तो मांगना संविधान के मूलभूत अधिकारों में शामिल करवा लेते। आपने घोड़े की रास ढीली छोड़ रखी है, घोड़ा सरपट दौड़ा चला जा रहा है, पर देश अभी तक वहीं खड़ा कदम ताल कर रहा है. . .किसे परवाह देश चले या ना चले! अपना घोड़ा दौड़ना चाहिए। आपके धवल वस्त्रों के सम्मोहन में जनता ऐसी डूबी है कि आपके अलावा कुछ सोचती ही नहीं। धन्य हैं आप, और धन्य है हमारे जैसी नपुंसक जनता।

बचपन में फिसलपट्टी पर बैठने का शौक था, आज भी मन करता है. . .पर बैठता नहीं, लोग क्या कहेंगे– साला बूढ़ा फिसलपट्टी पर बैठा है. . .खैर, मैं विषय से फिसल गया. . .सर जी! चाकू खरीदना ही था तो ब्रांडेड रामपुरिया खरीदते. . .तीन इंची चाकू से कौन डरता है? लोग कहेंगे– 'साले! पिद्दी चाकू जेब में रख ले, वरना तेरी चाकू तेरी. . .सर जी! मैंने भी रामपुरिया चाकू फिल्मों में ही देखा है। अक्सर कोई बदमाश शरीफ को चाकू दिखा कर अपना काम निकलवा लेता है। चाकू खुलने के साथ 'घुसेड़ दूंगा' शब्द का इस्तेमाल करना निहायत जरूरी है। 'घुसेड़ दूंगा' शब्द में इतना पावर है, जितना दूसरे शब्दों में नहीं– जैसे–चाकू मार दूंगा, चाकू सीने के आरपार कर दूंगा। इन ढीले–ढाले शब्दों से बात नहीं बनती। 'घुसेड़ दूंगा' शब्द सिद्ध मंत्र की तरह है, जिसका असर होता ही होता है, चाहे तो बिना चाकू के बोल कर देख लो।

सर जी! आप मीडिया को नहीं जानते, आपके हाथ में चाकू देख कर या चाकू खरीदने की बात को लेकर बेवजह बवाल मचा देंगे। अपनी टी.आर.पी. बढ़ाने के चक्कर में आपसे ऐसे–ऐसे सवाल पूछेंगे कि आपको चक्कर आने लग जाएंगे।

– क्या आपको अपने सुरक्षाकर्मियों पर विश्वास नहीं?
– पिछले दिनों भाईलोगों ने आपको जान से मारने की धमकी दी थी, क्या चाकू से आप अपनी रक्षा कर पाओगे?
– राजनैतिक हलकों में चर्चा है कि आप नई पार्टी बनाने जा रहे हैं, क्या आपकी पार्टी का चुनाव चिह्न 'चाकू' होगा?
– आप अहिंसा के प्रबल समर्थक हैं। आपने बेटी का नाम भी अहिंसा रखा है . . .फिर चाकू का क्या काम?
– सुना है आप विदेश से इलेक्ट्रोनिक चाकू इंपोर्ट करने वाले हैं. . .क्या देशी चाकुओं पर से विश्वास उठ गया? आप ने हमेशा विदेशी चीजों का बहिष्कार किया फिर. . .?

सर जी! आप मीडिया की आंधी से कैसे बच पायेंगे? आपको मीडिया पर छा जाने का शौक है तो चाकू के कारण मत छाइये. . .वैसे भी आप पर कई आक्षेप लगे हुए हैं. . .कई घोटालों की जांच चल रही है। कई दुराचरण के मामले कोर्ट में लंबित हैं। व्यर्थ का पंगा लेने से आप को क्या हासिल होगा?

सर जी! चाकू अपने पास मत रखिए . . .मेरा कहा मान किसी को दान में दे दीजिए, या इसे कहीं छुपा कर रख दीजिए। परमाणु करार पर हस्ताक्षर हो चुके हैं और आप चाकू का फल थामे बैठे हैं। वैश्वीकरण के युग में जनता आपको पिछड़ा समझेगी . . .ए.के. 47 खरीदते या किसी से भेंट लेते तो कोई बात बनती. . .आप का नाम ऐसे उछलता कि विपक्ष छलनी हो जाता।

सर जी! चाकू मुझे दे दीजिए. . .मुझ जैसे अदने आदमी के पास चाकू शोभा देता है।

ब्रह्मपुरी, पीपलिया
जोधापुर–342001

पंकज भार्गव

## न रहेगा बांस

कार्यशाला में सरकारी विभाग के नामी डाक्टर उपस्थित थे। देश–विदेश में 'व्लर्ड फ्लू' बीमारी की जानकारी पर चर्चा एवं प्रस्तुतिकरण हो रहा था।

सरकार के स्वास्थ्य विभाग द्वारा उठाए जा रहे बचाव के तरीकों की खूब सराहना की जा रही थी। मीडिया वाले इस खबर पर चांदी का बरक लपेटने में लगे थे।

आम–जनता को शाकाहार की ओर ले जाने के सुझाव भी दिए जा रहे थे।

देशवासियों को संभावित बीमारी से बचाने के लिए सभी अपने कर्तव्यों के पालन में कोई कमी नही छोड़ना चाहते थे।

कार्यशाला के मध्यांतर में भोजनावकाश हुआ।

गणमान्य अतिथि, प्रतिभागी और पत्रकार भोजन में 'लैग पीस' उधेड़ने में लगे थे। त्याग और नौकरी का भक्तिभाव यहां भी झलक रहा था।

ऐसा प्रतीत हो रहा था कि ऐसी दो–चार कार्यशालाएं और आयोजित हो जाएं तो जरूर देश में मुर्गियों का अकाल पड़ जाएगा तो 'व्लर्ड फ्लू' कहां से आयेगा।

कण्डोली (निकट–अकेता होटल)
राजपुर रोड, देहरादून

प्रदीप नील

# लक्ष्मी सरस्वती दोउ खड़े

वैसे तो लक्ष्मी और सरस्वती के आपस में मिलने के कोई चांस नहीं क्योंकि दोनों के विभाग अलग हैं। दोनों के वाहन भी अलग हैं और टाइम टेबिल भी। लेकिन, फिर भी एक दिन दोनों का टकराव हो ही गया और वह भी शहर के एक बहुत बड़े शापिंग मॉल में।

इस मॉल में वही लोग आया करते जिन्हें पता नहीं होता था कि अनाप-शनाप पैसा कहां खर्च किया जाए। लक्ष्मी जी तो यहां रोज ही आया करती। सरस्वती बेचारी, जब से मॉल खुला था, देखने को तरस रही थी। इस बार एम.ए. के पर्चे जांचकर कुछ अतिरिक्त आमदनी हो गई थी अतः एक तारीख को वेतन मिला तो वह हिम्मत करके चली आई। अब भव्य मॉल पहली बार देखा, चौंधिया गई और बाहर निकल रही लक्ष्मी से टकरा गई। सरस्वती की पुस्तक और लक्ष्मी के हाथ से बही छिटककर नीचे जा गिरी।

पढ़े-लिखों को कोई सॉरी बोल दे तो वे उसे क्षमा कर देते हैं। इसी शब्द से वे खुद भी क्षमा मांगते हैं। अतः सरस्वती ने पूरे मन से कहा, 'सॉरी मैडम' और झुक कर अपनी पुस्तक उठाने लगी। लक्ष्मी को इस शब्द से कोई फ़र्क नहीं पड़ना था, नहीं पड़ा। जोर से चिल्लाई 'देखकर नहीं चला जाता? चल, मेरी भी पुस्तक उठाकर दे।'

सरस्वती ने इधर-उधर झांका परंतु कहीं भी उस मैडम की पुस्तक नहीं दिखी। लाल जिल्द वाली लंबी सी बही जरूर पड़ी थी जिसे सुसंस्कृत सरस्वती ने कभी पुस्तक नहीं माना था। सो हिकारत से कहा था 'इस बही को पुस्तक कहती हो? क्यों पुस्तक शब्द का ही अपमान करती हो?' लक्ष्मी से आज तक किसी ने इस तरह तू-तड़ाक से बात नहीं की थी सो गुस्सा आ गया। तर्ज़नी उठाते हुए कहा था 'पुस्तक ही नहीं, विश्व की सर्वोत्तम पुस्तक। समझी?'

सरस्वती को बहुत बुरा लगा। उन्होंने आज तक बही में अनपढ़ या कम पढ़े लिखे लोगों को लिखते-बांचते देखा था जबकि यह सर्वोत्तम बता रही है और वह भी पूरे विश्व की? अकड़कर बोली 'सर्वोत्तम की बात छोड़ो। कोई इसे पुस्तक भी कह दे तो मैं नौकरी से इस्तीफा दे दूंगी।'

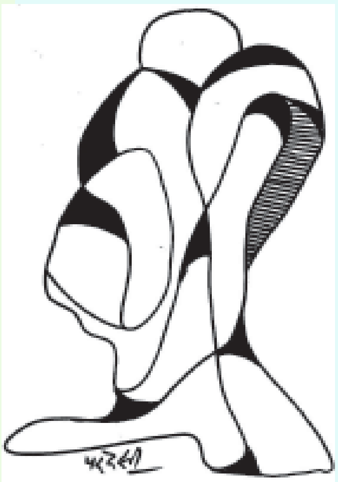

लक्ष्मी ने कहा 'नौकरी की बात जाने दो। दस-बीस करोड़ रुपए की शर्त लगाती हो तो बोलो वर्ना चुपचाप खिसक जाओ।'

सरस्वती आकाश से गिरी। बीस हजार की नौकरी, ऊपर की आमदनी एक पैसा भी नहीं। दस-बीस लाख का ही सपना नहीं आया कभी! और करोड़! लेकिन विद्वान अपने ज्ञान पर गर्व करते हैं, समाज इसे मूर्खता कहता है, उसी गर्व से सरस्वती ने बोल दिया 'लगी शर्त।'

हैरान रह गई लक्ष्मी। पैसा मेरे हाथ का तो मैल है, हाथ मैले करते रहो पैसा कमाते रहो। लेकिन यह किस दम पर अकड़ रही है? मूर्खता के बल पर ही न। एक बार तो दया आई कि चल छोड़ लेकिन दुःख इस बात का था कि उनको पुस्तक को वह पुस्तक ही नहीं मान रही थी। अतः शर्त लगानी ही पड़ी।

दोनों ने अपनी-अपनी पुस्तक मॉल के दरवाज़े के पास गिरा दीं। जो भी आता बही को उठाता, कोई-कोई तो इसे माथे से छुआता भी। सरस्वती की पुस्तक को अनदेखा करके या ठोकर लगाकर लोग आगे बढ़ते गए। लक्ष्मी विजयी भाव से देख सरस्वती को ठेंगा दिखा देती। तीन घंटे यही क्रम चला।

सरस्वती का मुंह उतर गया। बोली 'यहां सब के सब बेवकूफ़ आते हैं, फ़ैसला कराने बाहर चलते हैं। लक्ष्मी ने कंधे उचका दिए कि नो प्रॉब्लम।

शहर के हजारों दूकानदारों ने बही को प्रणाम किया, पुस्तक को अनदेखा किया। शहर आने वाले किसानों ने बही को पहचाना ही नहीं बल्कि डरकर इसे प्रणाम भी किया। पुस्तक की तरफ देखा ही नहीं। बड़े-बड़े उद्योगपति, पुल बनाने के ठेकेदारों ने भी यही किया। इन्कमटैक्स दफ़्तर, पुलिस, वकील, आम आदमी परीक्षा में शामिल हुए। उन्होंने बही को देखा और उनकी बांछें खिल गईं।

सरस्वती जी ने कहा 'नासपीटो, मेरी पुस्तक पढ़कर यहां तक पहुंचे इसी को नहीं पहचानते? मैं तुम्हें शाम दूंगी।' लोग हंसने लगें इस शाप शब्द से एक भी नहीं डरा। लक्ष्मी ने कहा 'अब आई अक्ल ठिकाने? शर्त खत्म करती हूं, चुपचाप चली जाओ।'

सरस्वती ने तुरुप का पत्ता फेंका 'पुस्तक का मामला है, विद्वानों की सम्मति ली जाए। आखिर वही तो बड़े लोग होते हैं।'

लक्ष्मी को बुरा लगा। इतनी बड़ी-बड़ी कोठी-कारों के स्वामियों को यह बड़ा ही नहीं मान रही। उन दो कौड़ी के लेखकों और मास्टरों को बड़ा बता रही है जिन्हें आम आदमी तो आदमी ही नहीं मानता। फिर भी

शेष पृष्ठ 94 पर. . .

प्रतिमा आर्य

# नन्हीं नन्हीं बुदियां रे सावन का मेरा झूलना

मेंहदी रंगे हाथ, कांच की चूड़ियों से सजी कलाई और रंग-बिरंगे परिधानों में सजी नन्हीं-नन्हीं बूंदों के बीच झूले की पींगे भरती नवयुवतियां। चारों ओर हंसी ठट्टा का बाजार जमा है। ससुराल से पीहर आई नव यौवनाओं के लिए गोपनीय बातों का पिटारा भी भरा पड़ा है। कान में फुस-फुसाना, फिर किसी का शर्म से सिर फेर लेना और दूसरों का हंसना। नन्हीं-नन्हीं बच्चियां भी हाथ में हाथ डाले गाना गाती हुई चक्कर काट रही हैं। झूला चाहे अमुवा की डाल पर हो या कदम्ब की या फिर निमुवा की, पींगे तो ऊंची-ऊंची भरी जाती हैं।

वर्षा ऋतु का झूला और इससे जुड़े तीन वृक्ष कदम्ब, आम और नीम, कितना भिन्न स्वभाव है तीनों का। एक और कमनीय सुगंधित, सुंदर पुष्प वाला कदम्ब, दूसरा रसीले फलों वाला सदाबहार वृक्ष आम, तीसरा कड़ुवा नीम और तो और सुगंध भी कड़वी, पर सावन आया नहीं कि मजबूत डालियों का चुनाव होना शुरू हो जाता है। आखिर घर-मुहल्ले की बेटियों का सवाल है। फिर साव का झूला, यह तो उनका अधिकार है। साव में पीहर और झूला इन दोनों कल्पना से जेठ की झुलसती गर्मी सहना भी सहज हो जाता है। पता नहीं यह झूला झूलने की प्रथा कब से शुरू हुई, परंतु इसका नाम लेते ही हिंडोले पर बैठी राधा और झूले की पींगे देते कृष्ण का चित्र आंखों के सम्मुख आ जाता है। बेगम अख्तर ने कितने लय सुर में अपने लरजते गले से गाते हुए कहा, झूला डाला कदम्ब की डारियां, झूले राधारानी हो। अब भला ये कदम्ब की डाल पर राजधानी का झूला झूलना वर्षा की नन्हीं-नन्हीं बूंदों का रूनझुन फुहार और वृक्ष है कदम्ब का, जो कि कहते हैं कि रूपरूस के देवता कामदेव के हाथ से पैदा हुआ।

कन्दर्पस्य कराग्रे तु कदम्बचारूदर्शनः।
तेन तस्य पर प्रीतिः कदम्बेन विवर्द्धते।।
– वामन पुराण

अब भला कल्पना कीजिए कि उसी कदम्ब की डाली पर राधारानी के लिए

झूला डाला गया तो फिर अनुराग की पींगे भी होंगी ही। इस पर फिर आनंद रस की रूनझुन वर्षा।

कंचन आमा कदंब डरे कहि कोई गई तिथ तीज तयारी
हा हूं गई पक्षाकार त्यों बलि औचक आइगो कुंज बिहारी
हे रि हिंडोरे चढ़ाई लियो किये कौतुक सो न कहयौ परै भारी
फुलवारी पियारी निकुंज की झूलन है नव झूलनवारी।

अतः कदम्ब के वृक्ष पर झूला पड़ा हो और न जाने किधर से चुपके-चुपके आकर श्याम बरजोरी हिंडोले पर चढ़ाये लेते हैं। बेचारी सुकुमारी राधारानी करे भी तो क्या? झूले की पींगों का आनंद लेने लगती है। श्याम को कदम्ब ही क्यों प्रिय है? नीम अथवा आम पर झूला क्यों नहीं डालते? उनकी डाल क्या कम सुदृढ़ है? पर शायद कंदुकनुमा गोल सुनहरे कदम्ब पुष्पों की सुगंध ने उन्हें मतवाला बना दिया और इस लट्टू जैसे पुष्पों पर वे स्वयं लट्टू हो गए। कवि गुरु ठाकुर ने भी कहा है– कदम्ब कुंजैर सुगंध मदिरा, अजस्त्र लूटि टिछे तुरंत झटिका। बेचारे कुंज बिहारी भी इसी सुगंध मदिरा का पान कर बैठे। वह केवल दूध छाछ पीने वाले माखन चोर रसिया थे। बलराम की तरह मदिरा प्रेमी नहीं। उन्हें मस्त बनाने के लिए कदम्ब को छूकर आती हुई सुगंधित पवन ही पर्याप्त थी। अपने प्रेम को इसी छाया में ले जाये और बैठा दिया। अब राधारानी झूल रही है। उनका ये झूलना युगों-युगों का झूलना है। सम्पूर्ण सृष्टि भी उसी पींगों के साथ झूला झूल रही है और सब और आनंद रस की निरंतर रुनझुम वर्षा हो रही है।

कदम्ब कहते ही एक विचित्र बात की ओर ध्यान जाता है कि यह वृक्ष कॉफी और कुनैन के परिवार वाला है। संस्कृत में 'नीप' कहा जाने वाले इस वृक्ष को वैज्ञानिक 'एंथोसेफालस इंडिका' अर्थात सिर जैसा भारतीय फूल कहते हैं, है न मजेदार बात? वनस्पति जगत में से विचित्र नाम देखने को

मिल जाते हैं। इब इसी के भाई बंधु हैं दो अन्य वृक्ष हल्दू व फल्दू। हल्दू वृक्ष की छाल से हल्दी जैसा पीला रंग निकलता है जो कपड़ा और चमड़े की रंगाई के काम आता है। उत्तरांचल प्रदेश के हल्द्वानी शहर में हल्दू वृक्षों की अधिकता के कारण ही उसे यह नाम मिला। इनके पुष्प भी कदम्ब जैसे परंतु आकार में बहुत छोटे होते हैं। कदम्ब का पुष्प भी कम विचित्र नहीं है। जिसे हम एक पुष्प समझते हैं वास्तव में वह कई नन्हें पुष्पों का समूह है जो गोलाकार आकृति में एक डंडी के चारों ओर खिले होते हैं इसकी नन्हीं-नन्हीं कलियां वाला इसका कंदूक एक हरे पिनकुशन जैसा लगता है इन्हीं हरी कलियों में से नारंगी पीले नन्हें-नन्हें पुष्प खिलते हैं जिनके नारंगी पुंकेसर बाहर की ओर निकल कर एक अत्यंत आकर्षक कमनीय रूप प्रदान कर देते हैं। प्रकृति ने परागण की सुविधा के लिए इन्हें बाहर की ओर रखा है परंतु यही इसे अत्यंत मनोहारी रूप प्रदान कर देता है।

सुगंध बिखेरते कंदुक समान थे पुष्प थे पुष्प पूरे वृक्ष को अनोखी आभा एवं सुगंध प्रदान करते हैं। लीला पुरुष के स्वागत में वर्षा का अनुपम उपहार है ये गोल-गोल सुनहरे फुंदनों से सजा सखी के लिए झूला डाल बैठे। झूले की पेंगों के साथ-साथ सुगंधित बयार। राधारानी झूला झूलने के लिए इसलिए तो मान गई। आम का झूला नहीं डाला। नहीं तो पींगे लेते समय मन आनंद रस में न डूबकर ऊपर लटकते रसीले आम में ही अटक जाता तो? फिर कहीं वे कृष्ण से आम की फरमाईश कर बैठती? कृष्ण कम चालाक नहीं थे। लट्टूनुमा सुनहरे सुगंधित आभा मंडित फूलों से लदे वृक्षों के वन में ही राधा को मुरली के गोपन संकेत द्वारा बुला लिया। सखियों के श्रृंगार लिए वृक्ष पर चढ़ पुष्प गिराना तो मनोनुकूल है झूला झूलना भी आनंद की बात है।

नंदन कानन कदम्ब तरुतर घिरे घिरे मुरली बजावत

समय संकेत निकेतन बइसल बेरिबेरी बोलि पठाव-विद्यापति

कदम्ब है, कृष्ण है, कालिन्दी है। तभी तो रसखान भी इसी कालिनदी के फूल पर स्थित कदम्ब की डाल का पक्षी बनना चाहते थे उस आनंद मंगल पुरुषलीला पुरुष की रास केलि के दृश्यों का नेत्रों द्वारा रसपान कर अपने जीवन को धन्य बनाना चाहते हैं। कालिदास के बिरही यक्ष की नायिका का भी प्रिय कदम्ब ही था परंतु उसे लिए कदम्ब श्रृंगार साधन था।

चूड़ा पाशे नव कुरवक, चारु कर्णे शिरींष

सीमंते च त्वदुपगमजं यत्र नींप वधूनाम्।।

तन्वगी ललनायें चूड़ापाश के कुरबक के नये कोमल पुष्प, कानों में मृदु शिरीष और घने काले केशों के बीच कदम्ब पुष्पों से सजी मांग, ऋतुसंहार में यही कदम्ब कर्णकुंडल बन शोभायमान हो रहा है। वृंदावन की रासलीला के मंचन के अवसर पर आज भी कदम्ब पुष्प द्वारा कृष्ण राधा का श्रृंगार किया जाता है। कदम्ब के कंदुकनुमा पुष्पों से पुष्प केलि का खेल खेला जाता है।

बात चल रही थी वर्षा ऋतु की, झूलों की और कदम्ब पर बढ़ती ऊंची-ऊंची पींगों की, झूलना झुलाओ आओ री सखी सूलाओ। नन्हीं-नन्हीं बूंदनिया, बरखा बहार। पर कहां के झूले. . .कैसे झूले? सावन आता है महानगरों में बंद सड़ती नालियों, टपकती छतों का संदेश लेकर। भला ऐसे में किसे याद आती है कदम्ब की? आये भी तो कैसे? इसका वृक्ष भला किसी ने देखा है? रहे आम और नीम, तो शहरों के विकास के नाम पर ये वृक्ष भी कुट कट गए और कुछ कटते जा रहे हैं। हां, कहीं दूर दराज के गांवों में वृक्षों के नीचे आज भी सावन में रंग बिरंगी ओढ़नी लंहगों का जमघट लगता है, हाथों पर मेंहदी रचती है और झूले की डोर पकड़े ऊंची पींगे भरती युवतियां गाती हैं- 'नन्हीं नन्हीं बुंदियां रे सावन का मेरा झूलना।' गीतों की मधुर स्वर लहरी पीगों के साथ-साथ ऊपर नीचे होती आती है और वृक्ष भी उन पींगों के साथ अतीत वर्तमान के झोंके लेता आनंद मग्न हो जाता है।

द्वारा डॉ. वेदज्ञ आर्य
'नवनीत' 40 सिविल लाइन्स
रुड़की, उत्तराचंल

. . . पृष्ठ 92 का शेष

कहा 'चलो यही सही। लेकिन सुनो, यह अंतिम परीक्षा है। शर्त लगाकर रोते नहीं हैं।'

एक बड़े हॉल में प्रोफेसरों-लेखकों का साहित्य पर विमर्श चल रहा था। सरस्वती बेफिक्र हुई कि सब अपने ही पुत्र है लेकिन उन्हें धक्का लगा जब सभी ने लक्ष्मी को प्रणाम किया। सरस्वती फफक उठी 'नालायको, कपूतो, सर्वोत्तम पुस्तक मेरी है या इसकी बही?'

लेखक अपनी पांडुलिपियां दिखाकर बताने लगे कि वे तो इनके सामने किसी अन्य पुस्तक को उत्तम ही नहीं मानते, सर्वोत्तम तो बहुत दूर।' तब प्रोफेसर यूनियन का अध्यक्ष आया और बोला 'मां, मैं सब की तरफ से बताना चाहूंगा कि आप की पुस्तक कभी सर्वोत्तम हुआ करती थी। इसे पढ़कर सम्मान मिलता था, नौकरी भी। आज हम में से पचास प्रतिशत ने लक्ष्मी माता की कृपा से डिग्री खरीदी है, नब्बे प्रतिशत ने बही में फिर अंगूठा लगाकर नौकरी पाई। बुरा मत मानना, आज की सर्वोत्तम पुस्तक तो यह बही ही है।'

लक्ष्मी सब जानती है कि सरस्वती की औकात् क्या है लेकिन शर्त तो शर्त ठहरी। बोली 'चल अब निकाल, दस करोड़।' सरस्वती लज्जि़त होकर बोली 'ऐसा नहीं हो सकता मैं रुपया तीस चालीस साल बाद दूं या किश्तों में चुकाती रहूं।'

लक्ष्मी सब जानती है कि सरस्वती की औकात् क्या है लेकिन शर्त तो शर्त ठहरी। बोली 'ऐसा नहीं हो सकता मैं रुपया तीस चालीस साल बाद दूं या किश्तों में चुकाती रहूं।'

लक्ष्मी मुस्कुराई 'अवश्य।' इसी का नाम लोन है। चल इस बही में लिख दे 'यही सर्वात्तम पुस्तक है।'

सरस्वती ने कहा 'अंगूठा लगा दूं, चलेगा?'

लक्ष्मी ने कहा 'अवश्य।' हर कोई बही देखकर सोचेगा कि यह किस अनपढ़ औरत का अंगूठा है? जिसे साईन करने ही नहीं आते वह पुस्तक क्या लिखेगी?'

सरस्वती खड़ी सोच रही है।

244/11, नजदीक जंभेश्वर स्कूल, जवाहर नगर,
हिसार-125001 (हरियाणा)

रामदरश मिश्र

# कविताएं

## कविता

आइए आइए,
आप भी आइए
एक महफिल
अदब की सजी है यहां
मंच पर कुछ मसीहे हैं बैठे हुए
गीत उनके ही उनके ही सुर में यहां
चल रहे, सुन रहे हैं वे ऐंठे हुए
आप भी कल के
अदबी सितारे हैं तो
गाइए, गाइए,
आप भी गाइए।

आप आए हैं
कस्बे से या गांव से
मन में दिल्ली का
सपना संजोए हुए
आप जैसे ही
कितने पधारे यहां
बिन मसीहों के फिरते हैं
खोये हुए
या गये वे,
मसीहों के जो हो गये
पाइए, पाइए,
आप भी पाइए।

देखिए देखिए
उठके वे चल दिये
कितने साये भी
लो साथ चलने लगे
मुस्करा करके देखा
उन्होंने इन्हें
इनकी आंखों में
सपने मचलने लगे
आप क्यों हैं खड़े
मौन की राह में
जाइए, जाइए,
आप भी जाइए।

## इधर-उधर

वह इधर से निकलता है
तो उधर जाता है
उधर से निकलता है
तो इधर आता है
यानी कि वह हमेशा
कुछ न कुछ
पत्रिकाओं में फैला होता है
हां, उसके हाथ में
बड़ा-सा थैला होता है।
जिसमें भरी होती हैं
ढेर सारी साहित्य सूचनाएं
और उनका रचनाकारों
और रचनाओं के नाम
उन्हीं को पसारता रहता
पत्रिकाओं के पन्नों पर अविराम
किसी ने मुझसे पूछा—
'भाई साहब, साहित्य में उस आदमी का
क्या हाल है।'
'भाई मुझे कुछ खास नहीं
मालूम
किंतु लोग कहते हैं
कि वह साहित्य का दलाल है।'
'मगर यों छाती फुलाये घूमता है
जैसे अदबी लोक में बहुत बड़ी हस्ती है
जिस किसी लेखक को
जहां चाहें बसा देगा
मानो साहित्य
उसके बाप की बसाई हुई बस्ती है।'
'हां भाई जब तक वह
यह सब करता रहेगा
उसके होने की
हलचल मची रहेगी
बाकी भगवान जानता है कि
उसके जाने के बाद
उसकी कौन-सी चीज बची रहेगी।'

आर-38, वाणी विहार
उत्तम नगर, नई दिल्ली-110059

शशि सहगल

# खेल

आओ प्रेम प्रेम खेलें
प्रेम क्या कोई खेल है
हां इससे अच्छा और कोई खेल नहीं
पंद्रह बीस डायलाग याद कर लो
पात्र, वक्त जरूरत के मुताबिक
भाषा आगे पीछे कर लो

पात्र
हां पात्र गर सभ्य सुसंस्कृत हुआ
तो चंद जुमले अंग्रेजी के
कुछ उद्धरण दर्शन शास्त्र के डालो
पात्र गर अपरिष्कृत
केवल देह हो तो?
कानी चपटी की भी भरकर तारीफ करो
भूल जाओ
मूल संवेदना, प्रतिबद्धता
ये सब साले शब्द हैं
यूं ही हर बार
प्रेम प्रेम खेलो।

एफ-101, राजौ
नई दिल्ली-110027

## नरेन्द्र मोहन

# कविता मॉल

कविता-मॉल
मालामाल है

तीन मंजिलों वाला यह मॉल
क्रमश: ऊपर उठता गया है-
आप सीधे दूसरी या
तीसरी मंजिल पर
छलांग नहीं लगा सकते
एक-एक कर मंजिल चढ़ें
यह नियम है

हां,
अगर मंत्रालय का परमिट
आप के पास है तो
आप किसी भी मंजिल में सीधे
बेरोकटोक दाखिल हो सकते हैं
और एक साथ कई ऊंचाइयां
नाप सकते हैं
पी सकते हैं इत्मीनान से कॉफी
टैरस पर बैठ

देख सकते हैं एक साथ
कई दृश्य-शृंखलाएं
मनोरम दृश्यों का पैनोरमा
आला दर्जे के नए-नए डिजाइन
नए-नए कट की कविताएं

खैर, छोड़िए
मंजिलों का गोरखधंधा

ध्यान दीजिए
यहां कवियों के अपने-अपने स्टाल हैं
जैसे पुस्तक मेले में
प्रकाशनों के स्टाल होते हैं
बड़े प्रकाशकों के बड़े और भव्य
छोटों के छोटे और हाशिये पर

मुलाहिज़ा फरमाइए-
इस कवि के दायें हाथ में
रससिद्धांत का लड्डू है
और दूसरे हाथ में मार्क्सवाद का
वह एक साथ
दोनों का मजा लूट रहा है

और उधर देखिए उस कवि को जो
कल आप के तलवे चाट रहा था
और आज आप को सरेआम
गालियां दे रहा है

उन कवि पर भी नज़र डालिए न
जो विचारधारा के किले के बुर्ज़ पर
चढ़ा हुआ है
साथ ही मंत्री के पांवों में गिरा हुआ है।

जरा देखिए उस कवि का हाल जो
बुश के इराक हमले की
भर्त्सना करता-करता
बुश की स्तुति में कशीदे पढ़ने लगा है
और बेवज़ह हंसने लगा है

मेरी सलाह है
कि आप जल्दबाजी में
यह नतीजा न निकालें
कि वह बिक चुका है
आप यह भी कह सकते हैं
कि वह
अपनी गलती सुधार रहा है
और
किसी नए प्रयोग के चक्कर में
कोई उत्तर आधुनिक कविता गढ़ रहा है

यकीनन,
मॉल में हर चीज़
बिकने के लिए है
हालांकि पेंटिंग की कीमत
चढ़ी हुई है
और कविता की गिरी हुई है

हाथ कंगन को आरसी क्या
अंधे को फारसी क्या
तुम खुद देख लो, यार
जिस के धड़े या शॉप में
ज़्यादा माल या कार
उस के धड़े या शॉप में शुमार
चुनिंदा कवि- कलाकार

डिप्रेशन में क्यों जाता है, यार
जगमगाता मॉल
है तो
मालामाल!

239-डी, एम.आई.जी. फ्लै
राजौ

अनामिका

## जिद

चिड़िया से मत पूछो–
चिड़िया क्यों चिड़िया है,
पेड़ नहीं।
मत पूछो नदियों से–
क्यों वे उमड़ती हैं।
पर्वत को दिक मत करो पूछकर
कि इतना भी क्या अटल रहना।
मत भेजो सम्मिलित आवेदन
महामहिम
बिच्छू–परिषद को कि श्रीमान।

सेवा में सविनय निवेदन है,
डंक जरा कम मारें,
सुध जरा कम लें हमारी
और अपनी राह जाएं।

मत करो
बेचारे कीकर से प्रार्थना
कि आंचल भर दे हमारा वो
रस से मताए हुए आमों से।
प्रार्थना सुन भी लेगा वो अगर,
सुनकर जरा कसम साएगा,
और उसके कसमसाते ही
एक और कांटा
बेचारे की छाल फोड़कर
बाहर आ जाएगा।

जो जहां है,
कैद है अपने होने में
जैसे कि तोड़े हुए फूल
प्लास्टिक मढ़े हुए दोने में।

जानते हैं
हम ये फिर भी
कितनी सदियां बीत जाती हैं
एक अदद आए तोड़ लेने में
जो जैसा है
उसको वैसा ग्रहण करके
चुपचाप हाथ जोड़ लेने में।

खुद क्या मैं कम ऐसी–वैसी हूं?
मेरा सत्यानाश हो,
मैं ही सीकर हूं,
चिड़िया, नदी और पर्वत
बिच्छू और मंजरी समेत
एक धरती हूं पूरी की पूरी
मैं ही हूं धरती भी जिद्दी धमक–
क्यों, कैसे, 'हां–न' से
पूरी हुई रस्सी।
और मुई रस्सी के बारे में
कौन नहीं जानता–
रस्सी जो जल भी गई तो
बलखाना नहीं छोड़ती।

डी–III–83, पश्चिमी किदवई नगर
नई दिल्ली–110023

पुष्पा राही

## ग़ज़ल

अब जरूरतों से ज्यादा है सुविधाएं,
आपाधापी कहती सबको अपनाएं।

जीवन है बाज़ार आजकल सजा–धजा
खुलकर घूमें–फिरें और ले खूब मज़ा
मन का बैग भरें चीज़ों से ऊपर तक
सावधान वे यहां वहां ना गिर जाएं।

चलना छोड़ें गाड़ी में बैठें जाकर
करें पांव क्यों मैले कारों को पाकर
बड़ी सड़कों की छाती को रौंदें
घर में क्या रक्खा सीधे होटल जाएं।

छप्पन भोग हज़ारों में अब बहल गए
नए तरह के नए–नए हां नए–नए
नहीं पेट का, कहना मानें जिह्वा का
जितनी भूख लगे उससे ज्यादा खाएं।

चिंता क्या बीमार अगर हो भी जाएं
बड़ी दवाइयां है जितनी चाहे खाएं
पांच सितारा अस्पताल है सेवा में
अंटी ढीली कर इलाज सब करवाएं।

कहें मशीनों से वे काम करें सारे
आसमान से लाएं तोड़–तोड़ तारे
लगी रहें दिन–रात न सोएं क्षणभर वे
आप कान पर बस मोबाइल चिपकाएं।

दुनिया का यह स्वर्ग सभी को मोह रहा
है कोई जो इसके रस में नहीं बहा
मूर्ख वही हैं जो अब इसको कहें बुरा
ऐसे नासमझों को जमकर समझाएं।

एफ 3/2, मॉडल टाउन
दिल्ली–110007

शिवनारायण

# बड़ा राइटर

अरसे बाद वह
एक पुरस्कार ग्रहण करने
दिल्ली से पटना पहुंचा
एक पंच सितारा होटल में ठहरा
और तमाम मित्र-रचनाकारों के नंबर
अपने मोबाइल पर दबाया।
शाम उसके कमरे में
अच्छी खासी महफिल जमी थी।
उसने सबको सख्त ताकीद की
बंद कमरे की बात
बाहर नहीं जानी चाहिए।
रंग-बिरंगे पेय के साथ
बातों की लीक
बेलीक होने लगी थी।

उसने अपने एक मित्र कवि से
बेलाग पूछा- 'अरुण भाई आजकल क्या
कर रहे हो?'
प्रश्न का प्रश्न के रूप में तत्क्षण जवाब
मिला-
'एक बड़ा राइटर क्या-क्या करता है?'
कुछ पल के मौन के बाद
उसने जवाब दिया, 'बड़ा राइटर सरकारी
संगोष्ठियों की शोभा बढ़ाता है,
अधिकारी लेखकों कीं
पुस्तकों का ब्लर्ब लिखता है,
प्रकाशकों की फरमाइश पर
पुस्तकों का लोकार्पण करता है,
लाल, भगवा, हरा
हर रंग के फीते काटता है
और संसार के सभी विषयों पर
अगड़म-बगड़म भाषण देता है।'

अपनी गर्दन सहमति में हिलाते हुए
कवि ने जवाब दिया-
'ठीक, बिल्कुल ठीक
लेकिन एक काम वह और करता है।'
अनुशासित लहजे में
उसने पूछा- 'क्या?'
कवि ने कुटिल मुस्कान
बिखेरते हुए कहा-
'इतने मासूम तो नहीं हो
कि तुम्हें किसी बात की खबर ही न हो।'
सचमुच वह मासूम नहीं था
लेकिन जाने क्यों उस क्षण
उसने अत्यंत मासूमियत से पूछा-
'अरुण भाई, मुझे
सच में कुछ नहीं मालूम।'

ठहाकों के बीच
कवि ने जवाब दिया,
'अरे भाई, बड़ा राइटर
कई-कई शहरो में
कई-कई प्रेमिकाएं भी पालता है
ताकि उसके लिखने का
सार्थक कारण शेष रहे।'
कवि के कह जाने पर
वह बेसाख्ता हंस पड़ा,
'तभी तुम कल
मुंबई जा रहे हो?'
उसने कहा, 'केवल मुंबई नहीं
पहले दिल्ली फिर मुंबई
वहां से चेन्नई
फिर भोपाल होता हुआ कोलकाता
और वहां से वापस पटना
पूरे एक सप्ताह का पैकेज टूर है
जबकि यह बड़ा राइटर उसमें से
लखनऊ और रायपुर को छोड़ रहा है।'

कवि की बात पर
वह सोच में पड़ गया
उसके अंदर कुछ दरकने सा लगा
पेट की बात माथे पर चढ़ने लगी
वह कहना चाहता था कुछ
लेकिन उसके मुंह से निकलने लगा
'तभी साले तुम
लिखते तो हो बाजार संस्कृति के खिलाफ
लेकिन इस्तेमाल उसके पक्ष में होते हो,
सामंती परम्परा और
अंधविश्वास के विरुद्ध भाषण देते हो
जबकि किसी ज्योतिष केन्द्र का
उद्घाटन करने में
गर्व महसूस करते हो
और कर्मकांड की घोर निंदा करते हुए भी
किसी ब्राह्मण के घर
श्राद्ध भोज में पहुंच जाते हो!
कहते कुछ करते कुछ हो!
मेरे प्रगतिशील मित्र,
तुम अपने एक चेहरे में आखिर
कितने-कितने चेहरे
पाले फिरते हो?'

उसने देखा-
उसकी बात पर
कवि मंद-मंद मुस्कुरा रहा है
और गिलास में बचे
रंगीन द्रव के अंतिम घूंट को
गले में उड़ेलते हुए
उसके उफनते क्रोध के
मजे ले रहा है।
वह कुछ कहता
कि कवि ने उसे चुप रहने का
संकेत करते हुए कहा-
'अब भोले बनने का नाटक बंद करो
तुम मुझसे कोई उन्नीस तो हो नहीं,
हम इतना न करते तो क्या
बड़ा राइटर बन सकते थे?
कविता की एक ही पुस्तक पर
साहित्य अकादमी का पुरस्कार
झटक सकते थे??'

तभी दरवाजे पर दस्तक हुई।
अब दोनों चुप थे।
भले मानुषों का
गिलास खाली हो चुका था।

305, अमन अपार्टमेंट, शांति निकेतन कॉलोनी
भूतनाथ रोड, पटना-800026

दिविक रमेश

# कविताएं

### चाहें तो जाँच लें

गोली उसी ने दागी थी
जिसने कल चाकू चलाया था
और परसों
जिसके पास कोरी ज़बान थी।

'गोली उसी ने दागी थी'
एक आदमी अपवाद की तरह चिल्लाया था
बार-बार चिल्लाया था
और बस वही चिल्लाया था।

जाँच हुई, पता चला
चाकू भी चला था
और चली थी गोली भी।

दागने वाला पर अज्ञात था
चलाने वाला भी अज्ञात था
लिहाज़ा फाइल बंद कर दी गई।

वह
एक साथ तीन कोट पहने
एक आदमी के पड़ोस में
रहता रहा।

पता चला है (वार्षिक भविष्यफल से)
कि आगे भी रहता रहेगा मज़े में।

एक आदमी जो चिल्ला सकता था
चुप हो जाएगा
और सम्मिलित हो जाएगा उसी गिरोह में
जहाँ संलग्न है हर कोई
अपना-अपना सुख बटोरने में
और कभी-कभार
अपने ही गिरोह के सदस्य पर
फर्ज़िया गुर्राने में।

### खोल दो : पुनश्च

'आँखों में सदियों का जमा दर्द
शरीर बुरी तरह सना सहमती कीचड़ से
भाई तुम कौन हो कहाँ से पधारे'

हम मंटो की कहानी 'खोल दो' हैं:
नाड़ा खुली सलवार से हिंदू. . .या शायद
मुसलमान. . .या
क्या फर्क पड़ता है अब कि हम हिंदू हैं
कि मुसलमान

यूँ हम गुजरात से हैं।
हम सोचते थे कि वतन वह होता है
जिसमें जन्मता है बंदा एक ही नूर का
कि जिसके लिए जीता और मरता है।

कहाँ जाना था
कि एक ज़मीन होती है हिंदू की
कि एक मुसलमान की होती है
एक ही पृथ्वी पर।

हम तो यह भी नहीं जानते थे
कि हिंदू जनेऊ होता है
कि हिंदू तिलक होता है
और मुसलमान इंसान से
कुछ अलग भी होता है।

सच तो यह है
कि यह भूख तक न हिंदू है, न मुसलमान
और कहाँ है यह पीड़ा भी
ये औज़ार यह मेहनत और यह पसीना भी।

कहाँ जान पाए हैं हम
कब लौट पाएँगे घर
कब लौट पाएँगे
जैसे लौटना चाहिए बंदों को घरों को।
हम मंटो की कहानी 'खोल दो' हैं।

**दिविक रमेश को द्विवागीश पुरस्कार : 2007-2008**

**हिन्दी के सुविख्यात एवं वरिष्ठ कवि, बाल-साहित्यकार तथा अनुवादक दिविक रमेश के लिए प्रतिष्ठित 'भारतीय अनुवाद परिषद', नई दिल्ली की ओर से वर्ष 2007-2008 के लिए राष्ट्रीय सम्मान एवं पुरस्कार- द्विवागीश पुरस्कार की घोषणा की गई है। परिषद द्वारा आयोजित एक भव्य समारोह के अंतर्गत 11000/- रुपए की राशि का चैक, शाल, प्रसस्ति-पत्र, सारस्वत प्रतिमा तथा अविस्मरणीय सम्मान प्रदान किया जाता है। समारोह का आयोजन सितंबर माह के प्रथम सप्ताह में संभावित है। 'व्यंग्य यात्रा' परिवार की बधाई। इधर 'किताबघर प्रकाशन' से उनका नया कविता संग्रह 'गेहूं घर आया है' प्रकाशित हुआ है। प्रस्तुत है इस संकलन से 'व्यंग्य यात्रा' के पाठकों के लिए कुछ कविताएं।**

### आग और पानी

मैंने कहा
          आग

आग
चिड़िया चोंच में दबाकर
पहुंच गयी
जंगल
जंगल में आग लगी थी।

मैंने कहा
          पानी
जाने कहां गुम हो गई
झुलसे पंखों वाली चिड़िया

जंगल में आग लगी है
जंगल जल रहा है

पानी
शहर के सबसे बड़े म्यूजियम में
          सड़ रहा है।

प्राचार्य, मोतीलाल नेहरू महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

सुदर्शन वसिष्ठ

# घर लौटता बाबू

**सुदर्शन वशिष्ठ के काव्य संकलन 'जो देख रहा हूं' को हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी द्वारा वर्ष 2007 के अकादमी पुरस्कार के लिए चुना गया है। सन् 2004 में प्रकाशित वसिष्ठ का यह काव्य संकलन अलग मुहावरे की कविताओं के कारण विशेष चर्चित रहा है। उल्लेखनीय है कथाकार सुदर्शन वसिष्ठ का इससे पूर्व वर्ष 1983 में जब हिमाचल अकादमी द्वारा प्रथम पुरस्कार दिए गये थे, 'आतंक' उपन्यास पुरस्कृत हुआ था। पुरस्कार में इक्कतीस हजार रुपये, स्मृति चिन्ह तथा अंगवस्त्र दिए जाएंगे। 'व्यंग्य यात्रा' बधाई के साथ-साथ अपने पाठकों के लिए इस संकलन से चुनी कुछ व्यंग्य कविताएं प्रस्तुत कर रही है। –संपादक**

**(एक)**

घर लौटता बाबू
आज फिर लाया है एक पैड सफेद कागज
दो अदद पेन
सब की नजर बचाकर
हालांकि बच्चे चिढ़ते हैं
पापा मत लाया करो ये घटिया पेन
जो लिखता नहीं
टीशू पेपर-सा सरकारी कागज
जिसमें स्याही छरती है।

सोचता है बाबू
सरकार से चुराये भी क्या
हर चीज कई बार लुट-लुटकर
पहुंचती है उस तक।

**(दो)**

सोचता है घर लौटता बाबू
कितना मासूम है नया अफसर
अभी जवान है नया नया आया है सर्विस में
भले घर का है,
इसलिये सोचता है भला
डरता है खरे खोटे से, ईश्वर से।

धीरे-धीरे पता चलेगी कुर्सी की ताकत
लगेगा इस के मुंह में खून
आज इसने एक बल्ब खाया है
कल खायेगा पंखे हीटर
फिर खा जायेगा कुर्सी मेज
खा जाएगा स्टेशनरी स्टोर
खा जायेगा सरिया सीमेंट
खा जायेगा कार स्कूटर
दाव लगा तो पूरी मोटर

सोचता है घर लौटता बाबू
यह जितना बड़ा अफसर बनता जायेगा
उतना ही छोटा आदमी होता जायेगा।

**(तीन)**

आज खुश है बाबू घर लौटते हुये
अभी अभी ओके होकर आया है सी.एम. से
जो उसने लिखा था अपनी कलम से
ऐसा अक्सर हुआ है कि उसका लिखा
दस दस्तखतों से गुजर
सी.एम. से ओके हुआ है
पर आज वह बहुत खुश है
उसने लिखा है:

बाबू बुरी शह है जनाब! बच के रहिये
एक वही है जो लिखता है नोटिंग
उसे सौ रुपये मासिक
नोटिंग भत्ता दीजिए
अनुमोदनार्थ प्रस्तुत!

वह जानता है
अंधों बहरों की नगरी है सचिवालय
सब अपढ़ और जाहिल हैं
एक बाबू ही हे जो लिखता है लंबी नोटिंग
एक बाबू लिखता है लैटर
दूसरा बाबू पढ़ता है
बाकी सब अंगूठामार है
चाहे पास किये हों सौ इंतहान
मिली हो घूमने वाली कुर्सी
हां या न करने की ताकत नहीं है इनमें।

**(चार)**

नाई के उस्तरे से
धारदार होती है बाबू की कलम
सचमुच तलवार होती है
बाबू की कलम
जब रुकती है बाबू की कलम
तो रुक जाती है सरकार
जब चलती है तो करती है वार
अफसर की पीड़ा है बाबू
कलम का कीड़ा है बाबू।

**(पांच)**

सचिवालय का पंडा है बाबू
विधि विधान से करवाता है
फाईलों का संस्कार।

गंगा की तरह है सचिवालय
जहां अनेकों फाइलें
जब स्नान और संस्कार के लिये जाती हैं
कुछ वापिस आती हैं परिज़्कृत होकर
पुण्य फल से
और कुछ
हड्डियों की तरह कभी वापिस नहीं आती
छोटी बड़ी मछलियां खा जाती हैं इन्हें।

**हिमाचल कला संस्कृति अकादमी**
**क्लिफ एंड एस्टेट शिमला-171001**

अविनाश वाचस्पति

# चिड़िया, कौआ और नेता

आज सुबह एक चिड़िया
खिड़की पर आकर बैठ गई
मैं नाश्ता कर रहा था
मुझे महसूस हुआ
चिड़िया भी भूखी होगी
पेट भरने के
जुगाड़ में निकली होगी
मुझे खाते देख रुकी होगी
उम्मीद होगी उसे मिलेगा
टुकड़ा रोटी का
मैंने उसको दिखलाते हुए
असीम प्रेम से रोटी तोड़कर
उसकी ओर उछाली
उसने कैच भी नहीं की
और डरकर उड़ गई
मुझे हो गया विश्वास
उसका ध्यान था मेरी ही ओर
इच्छा मेरी रह गई अधूरी
रोटी के उस कौर को
चिड़िया मेरे सामने
कुतर कुतर कर चबाती
अपनी भूख मिटाती
और मुझे मिलता सुकून।

वो जरूर खाती यदि डरकर
इतना न डर जाती
अपने में निडरता लाती चिड़िया
फिर नहीं लौटी
रोटी और मैं दोनों करते रहे इंतजार।

इंतजार रंग लाया
पर उसका रंग काला आया
काले रंग में एक कौआ आया
उसने रोटी को देख लिया था
डर तो कौए को भी लगता होगा
पर वो अधिक नहीं डरता
उसने चौकन्नी निगाहों से
सिर्फ एक पल इधर और
फिर उधर देखा मेरी आंखों से
मेरे मन में भी झांका
मैं उठकर वहां से
अलग हो गया
लगा कि कहीं कौआ भी
यूं ही न उड़ जाए
बिना रोटी का वो कौर लिए
मेरे हटते ही कौए ने
फुर्ती दिखलाई वो टुकड़ा नहीं
मेरी थाली से पूरी रोटी ही
अपने पंजों में दबाई
और यह जा वह जा
मुझे लगा कि कौआ नहीं
नेता आया था और
वोट मेरा झपटा मार कर ले उड़ा

मेरी लालसा था कि
उस रोटी को कौआ
वहीं बैठकर गर खाता
तो मुझे उतना नहीं
फिर भी आनंद आता

चिड़िया और कौए दोनों को
रोटी खाता देखने की मेरी इच्छा
अधूरी रह गई पर कौए की पूरी हो गई
इस तरह सभी चिड़िया और
खूब सारे कौए हैं हमारे चारों ओर
चिड़ियाएं कुछ नहीं पा पाती हैं
और कौए हथिया ले जाते हैं
चिड़ियाओं में अधिक
अपनत्व नजर आता है सबको
बनिस्वत कौओं के चीलों, बाजों, गिद्धों के

खरगोश, गिलहरी, गौरेया भी लगते हैं प्यारे
इंसान ही इंसान को क्यों नहीं करता प्यार ये।

साहित्यकार सदन
पहली मंजिल, 195 संत नगर
नई दिल्ली-110065

सुधा ओम ढींगरा

# इंद्र रहा ना इंद्र

स्वर्ग में मचा शोर
घुस आया एक चोर
इंद्र का इंद्रासन डोला-
भृगु को बुलाकर, बोला-
निकाल कुडली देख जरा
स्वर्ग का क्यों हाल बुरा?'
भृगु ने भृकुटि चढ़ाई
ऊंची-नीची भवें बढ़ाईं
बोले- अमेरिका जबसे स्वर्ग हुआ
तेरा बेड़ा तभी से गर्क हुआ।'
छोड़ स्वर्ग, इंद्र दौड़े अमेरिका
सुंदर सलोनी लम्बी-लम्बी गोरियां
लगी उन्हें- गन्ने की मीठी-मीठी पोरिया
जब स्वीमिंग पूल में छलांग लगाई
मेनका उर्वशी की याद भुलाई।
औरत, मर्द, और बच्चे
सब आज़ाद
बच्चे किसी के, पाले कोई
स्वर्ग ने कभी ऐसी आजादी ढोई

इंद्र सुरा में मस्त लगे सोचने
स्वर्ग से भी बड़ा है ये
क्यों न ले आऊं यहां उसे?

मदमस्त इंद्र एरावत-सा मस्त था
स्वर्ग से भी अधिक आनंद में व्यस्त था
तभी काले बादलों से घिर आए
कुछ काले
और सफेद बर्फ-सी कुछ गोरियो ने
भी कमाल कर डाले
बंदूक की नोक पर इंद्र ने
सारे हथियार डाले।
घर के बुद्धू जब पहुंचे स्वर्ग
न पहचाना पाया कोई,
था बुरा हाल
मजनूं भी देखकर हंसा कि
बिना इश्क के था इंद्र फटेहाल।

## राजकुमार सैनी

# कविता

नशे मे सभी को भूला,
वो बोदी रास का झूला;
फुआरे सा बहुत छलका,
गुबारे सा बहुत फूला।
कि उस चमचे से रूठा है,
कि इस कड़छी पे रीझा है;
टंगा है आज जिस शै पे,
वो खूंटी है न खूंटा है।

गाल पर मस्सा उगा है,
वो समझ बैठे हैं तिल।
एक मुरझाए कमल से–
कह रहे हैं– 'फिर से खिल'

तेरा तेरे अर्पण. . .
जाने किस-किस का–
मुझे करना है तर्पण?
गाय ने कर दिया बैल को समर्पण।
पारदर्शी शीशे पर– जमती गई धूल,
इतनी कि शीशा– हो गया दर्पण।

कैसी कैसी हैं विडम्बनाएं!
कि पागल कुत्ता काट खाएं,
तो करो उसी के लिए,
दुआएं- प्रार्थनाएं!

दूध से हुए दही, दही से लस्सी;
झुकने लगी कमर, सरकने लगा धनुष–
जिसकी ढीली हुई रस्सी;
जितने थे जवां मर्द,
धीरे-धीरे, सबके सब, हो गए ख़स्सी।

दिल-दिल-दिल-दिल! क्या करता है?
ओ दिलवर! दिलफेंक!!
तिलचट्टे के कितने दिल हैं?
तेरे पास बस एक।

122, दिन अपार्टमेंट्स
सेक्टर-4, प्लाट नंबर-7
द्वारका, नई दिल्ली-75

## डॉ. अनुज प्रभात

# वह भी एक प्राणी है

जो सह रहा है आक्रोश
पी रहा है पसीने की बदबू
दे रहा है भट्टी में आंच
बिना नाक पर हाथ धरे
टब में खौलते
चमड़े के दुर्गन्ध में भी
वह भी एक प्राणी है।

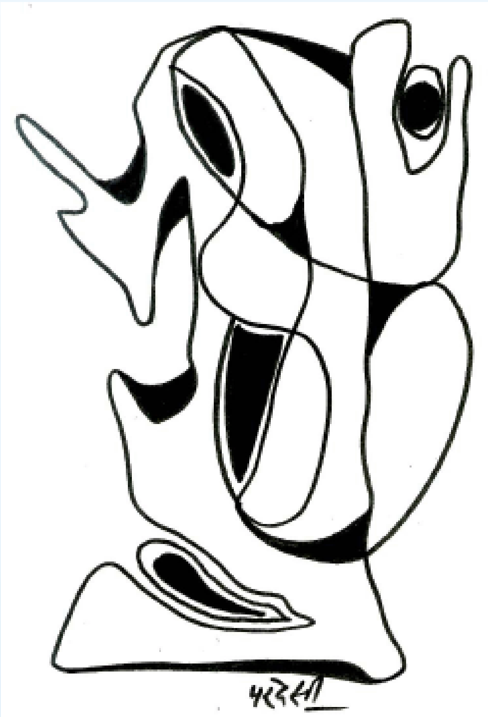


मसल रहा जो उर्वरक रसायन
बिना दस्ताने वाले हाथ से
भर रहा कीटनाशक दवा
छोटे-छोटे पैकेटों में
और ले रहा है–
विषैले धुएं का सांस
वह भी एक प्राणी है।

प्राणी है वह भी एक
जो तम्बाकू की ढेर पर बैठ
तम्बाकू की पुड़िया बना रहा
तम्बाकू खा रहा
खिला रहा
और संवैधानिक चेतावनी
'इन्जुरियरस फॉर हेल्थ' का लेवुल भी
जो उसी पुड़िया में
लगा रहा
वह भी एक प्राणी है।

अब क्या करे
वह प्राणी
जब से हुआ
'चाईल्ड लेवर'
एक मसला
उसे नौकरी से
हटा दिया गया है
वह तो एक निरक्षर है
उसकी सोच में स्कूल नहीं
पेट की आग है
क्या करेगा वह?
वह भी तो एक प्राणी है।
सोचिए तो– वह लगता है,
आम के पेड़ पर बबूल सा
जो अपने कांटें को
हर जगह फैलायेगा
और करेगा लहुलूहान
सबके पांव को
क्योंकि वह संस्कार,
हमने नहीं दिया
जो आम के पेड़ पर
आम ही बन फले।
हमने तो बांध दिया 'कलम'
बबूल बनने को उसे
और सामने खड़ा है जो आज
वह भी एक प्राणी है।

# यज्ञ शर्मा की कविताएं

## पेड़ 1

हां, वह पेड़ टेढ़ा है
बदसूरत है
कांटे भी हैं उस पर
और उसके नीचे छाया भी नहीं है
पर मेरे यार,
रेगिस्तान में पेड़ होना भी
मज़ाक नहीं है
सदियों से
एक जगह पर खड़े हुए
कैसे हैं लोग
अब तक पेड़ नहीं हुए

## पेड़ 2

देखा है
कभी पेड़ को मुस्कुराते
देखा है तुमने ?
देखा है
उसके दांत कैसे चमकते हैं
गालों में
कितने मोहक गड्ढे पड़ते हैं
देखा है ?
कैसे खनखनाता है
मंदिर की घंटियों की तरह
उदासी की धुंध काटता है
सदियों की धूप की तरह
देखा है
कभी पेड़ को मुस्कुराते
देखा है तुमने ?
नहीं देखा ?
तो एक काम करो, यार
यह कुल्हाड़ी
ज़रा नीचे रख दो
अपने दोंनों हाथों को
कांखों में दबा लो
अब ज़रा थोड़ा-सा
तुम भी तो मुस्कुराओ

## पेड़ 3

छाया दी
पत्ते दिये
फूल दिये
फल दिये
अब तो उन्हें साहित्य में
स्थान मिलना चाहिए
एकाधा नोबल पुरस्कार
पेड़ों को भी मिलना चाहिए

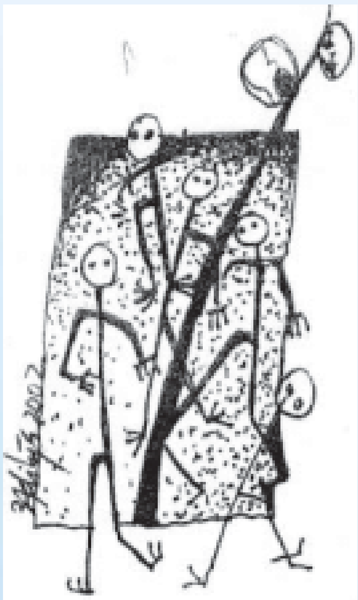

## पेड़ 4

कभी तुमने पेड़ को
अपने घर चाय पर बुलाया
खाना खिलाया
कभी घूमने गये उसके साथ
अपने कंक्रीट के जंगल से निकल कर
कभी गये उसके जंगल में
कभी अपने बच्चे
खड़े किये तुमने
उसके पौधों की बगल में
फिर भी तुम्हें शिकायत है कि
पेड़ तुम्हें देख कर
मुस्कुराता नहीं है

## पेड़ 5

हां, वह पेड़ टेढ़ा है
बदसूरत है
कांटे भी हैं उस पर
और उसके नीचे छाया भी नहीं है
पर मेरे यार,
रेगिस्तान में पेड़ होना भी
मज़ाक नहीं है

## पेड़ 6

उससे किसीने नहीं कहा
तुम पेड़ हो जाओ
वह पेड़ है
अपनी मर्ज़ी से पेड़ है
और यही बात
खटकती है लोंगों को

## पेड़ 7

जब जब पेड़
सौंदर्य प्रतियोगिता में
भाग लेता है
लड़कियां
हड़ताल कर देती हैं

बी-10, जमुना दर्शन, बांगड़ नगर
गोरेगांव (पश्चिम), मुंबई 400090।

अरविंद विद्रोही

# दो कविताएं

## भीख का कटोरा

मेरी कमीज
जगह-जगह से फट चुकी है,
और
मैं बैठकर,
उसे रफू कर रहा हूं
नई कमीज खरीदने की
शक्ति मुझमें नहीं है और
ऊपर से महंगाई ने कमर तोड़ दी है।
मेरी हालत देखकर
कुछ लोग खुश हैं, चलो
आर्थिक दबाव
कहीं से कम तो हो रहा है।
संतोष परमोधरम:
यह भारतीय संस्कृति का मूल मंत्र है
और यही मंत्र
हमें और लोकतंत्र को
बल प्रदान करता है।
तुम हंसना मत बाबू
यहां रफू-फार्मूला ही चलता है।
यह कोई साधारण फार्मूला नहीं है।
योगीराज नारद ने
इस की खोज की थी।
यह फार्मूला शासक वर्ग का
रक्षाकवच होता है
किसी भी समस्या को
यहां रफू कर दिया जाता है।
और पांच साल के लिए
गद्दी सुरक्षित हो जाती है
फार्मूला का ही कमाल है कि
अल्पमत की सरकार रातो-रात
बहुमत में तब्दील हो गई।
अब यहां भीख का कटोरा
आणविक भट्ठी में ढलेगा
और आप देखते रहिए,
धरती पर स्वर्ग उतरेगा
और हम होंगे स्वर्गवासी।

## विदेशी कुत्ता

एक विदेशी कुत्ता
सड़क के किनारे मरा पड़ा था।
लोगों की भीड़ लगी थी
और
चर्चा का बाज़ार गर्म था।
देशी कुत्तों की नस्ल में
सुधार कैसे हो,
उसके लिए
संसद में बहस हुई थी और
पक्ष-विपक्ष में एक समझौता हुआ
तब उस कुत्ते को
डालर में खरीदकर
मंगाया गया था
इतना जल्द
कुत्ता मर कैसे गया?

कुत्ता मरा क्या
विरोध पक्ष को
एक मुद्दा मिल गया
वह जुलूस प्रदर्शन करने लगा
जो सरकार
सरकारी कुत्ते की जान की
हिफाजत नहीं कर सकती
उस सरकार को
गद्दी पर बने रहने का
हक नहीं है।

विरोध पक्ष का
मुंह बंद करने के लिए
सरकार ने एक कमीशन बैठाया
कुत्ते की डेड बॉडी उठवाई
पोस्टमार्टम के लिए भिजवाया।

पोस्टमार्टम ने रिपोर्ट दी
कुत्ता हार्ट अटैक से मरा है
कुत्ता को किसी ने नहीं मारा है।

कमीशन ने रिपोर्ट दिया
देशी कुत्ते संसद में आपस में ही
लड़ते हैं,
झगड़ते हैं यह देख
विदेशी कुत्ते को सदमा लगा और
वह हार्ट अटैक का शिकार हो गया
कुत्ते को किसी ने
मारा नहीं है।

बीरसा नगर जोन नंबर-2, रोड नंबर-2
जमशेदपुर-831004

चांद 'शेरी'

# ग़ज़ल

आज का राझां हीर बेच गया,
हीरे जैसा ज़मीर बेच गया।

इक कबाड़ी को वो निरा जाहिल,
मीर - तुलसी - कबीर बेच गया।

सोने - चांदी के भाव व्यापारी,
दे के झांसा कथीर बेच गया।

इक कबीले की शान रखने को,
अपनी बेटी वज़ीर बेच गया।

बाप - दादा की उस हवेली को,
एक अय्याश अमीर बेच गया।

कह के 'शेरी' उसे चमत्कारी,
कोई पत्थर फ़क़ीर बेच गया।

के-30, आई.पी.आई.ए.
रोड नंबर-1, कोटा-5
राजस्थान

रवीन्द्र राजहंस

# कविता

**परसाई, शरद जोशी के बाद पद्मश्री से व्यंग्यकार रवींद्र राजहंस भी पिछले दिनों पद्मश्री से सम्मानित हुए, 'व्यंग्य यात्रा' की बधाई। सम्मानित होने पर उन्होंने कहा- यह शूद्र को सम्मानित करने जैसा है। यह उस विधा का सम्मान है जिसके बारे में हरिशंकर परसाई ने बहुत पहले कहा था कि साहित्य में व्यंग्य शूद्र होता है। हमने व्यंग्य को शूद्र से द्विज श्रेणी में ला खड़ा किया है। मौजूदा दौर में तो पत्र-पत्रिकाएं बगैर व्यंग्य के अधूरी मानी जाती हैं।' 'व्यंग्य यात्रा' के पाठकों के लिए प्रस्तुत है व्यंग्य के इस सिपाही का वक्तव्य एवं उनकी कुछ रचनाएं।**

**–संपादक**

मेरी व्यंग्य यात्रा जो सन् साठ से शुरू हुई उसके कितने पड़ाव हैं इसकी जानकारी आपको तब तब नहीं होगी जब तक आप मेरे तीन संकलनों से नहीं गुजरेंगे, प्रथम संग्रह अप्रियं ब्रूयात् (1965), नाखून बढ़े अक्षर (1978), फटे दूध-सा मन (1998)। इन तीनों काव्य-संकलनों की कविताओं का मूल स्वर व्यंग्य है। ऐसा होने पर भी ये कविताएं समकालीन व्यंग्य कविताओं के खांचे में फिट नहीं बैठती चूंकि इसका उद्देश्य मनोरंजनार्थ केवल हंसना-हंसाना नहीं रहा। ये चिकोटी काटने वाली हल्की-फुल्की रचनाएं नहीं, फूहड़ फब्तियां नहीं, छंदोबद्ध लतीफे नहीं बल्कि विडम्बनाओं, विसंगतियों और विद्रूपताओं की कारुणिक पड़ताल है क्योंकि मेरा विश्वास रहा है कि श्रेष्ठ और मारक व्यंग्य मार्मिक होता है। यही कारण है कि जब कोई 'व्यंग्य कवि' कहकर संबोधित करता है तो मुझे लगता है कि मेरे प्रति अन्याय कर रहा है। एक ओर मैं व्यंग्य कवियों के बीच कुजात लगता हूं और दूसरी ओर एक ओर तथाकथित मुख्यधारा के कवियों के बीच हास्य-व्यंग्य लिखने के चलते कुजात। अंग्रेजी साहित्य के अध्ययन-अध्यापन 50 वर्ष तक जुड़े रहने के चलते मेरा लेखकीय संस्कार हिंदी के व्यंग्य लेखकों से थोड़ा भिन्न रहा है। 17-18वीं सदी में अंग्रेजी कविता अपने पूरे उत्कर्ष पर रही। लार्ड बायरन और एलेक्जैण्डर पोप ने श्रेष्ठ व्यंग्य कविताएं लिखी। मैंने उनसे व्यंग्य का संस्कार लिया और अपने देश में सबसे अधिक कबीर से दो टूक बयानी की प्रेरणा-ग्रहण की। बाद में रघुवीर सहाय, भवानीप्रसाद मिश्र और धूमिल से संभवत: यही कारण रहा हो अपने समकालीन व्यंग्य कवियों के बीच अल्प-ख्यात रहने का। शुरू-शुरू में दिनकर सोनवलकर और माणिक वर्मा सगोत्र लगे थे। जिन लोगों ने मेरी व्यंग्य कविताओं को हल्की-फुल्की समझने की भूल की, उन्हें मैंने अपने प्रथम प्रकाशित काव्य-संग्रह 'अप्रियं ब्रूयात्' में ही आगाह किया था–

वक्त, बेवक्त गली औ बाजार में
तुम क्यों कहते हो कि भाई कविता सुनाओ
यह तो वही अंदाज़ है कहने का
भाई! जरा माचिस बढ़ाओ, बीड़ी सुलगाओ, खैनी लगाओ,

## अशोक:अशोक होटल में

बैशाखी पूनम का चांद
लगता है जैसे
अम्बपाली की बिंदिया
चकमक. . .चकमक
और दूर, बहुत दूर से
टूटा-सा स्वर, उखड़ा-सा स्वर
हवा की तरंगों पर
उठ-उठकर गिरने लगा
बुद्धम् शरणं गच्छामि
धम्मं शरणं गच्छामि
स्वाती की बूंद सम

धरती पर चूने लगा
तो बरसों से खड़ा
वैभव से मढ़ा
खड़ा था अशोक होटल
सिद्धियों के भेद को तन में समाये
कि सिद्धार्थ कोई आज आये
ठहर जाये
स्वतंत्र भारत का नया संघाराम
यात्रियों को देता नूतन आराम
खिड़की से छन छनकर आता प्रकाश
कहकहे, खिलखिलाहट, मदहोश हास
पिक
ठर्र,
शैम्पेन के बोतलों के खुलने का स्वर
जाज संगीत की लहरों पर
उठ-उठकर गिरने लगा,
तो, बहुत दिनों से
ऊपर आने वालों से
सुन रखा था अशोक ने
कि अब भी हिन्दुस्तान में
सरायें खुलती हैं

पंचशील के नारे भी लगते हैं
अतः वे उतर दिल्ली के पथ पर
आगे जब बढ़े,
थोड़ा ही हटकर
देखे अपने ही स्तम्भ
तो स्तम्भित से रह गये
आगे जब बढ़े
देखा जब शहर
तो सिक्कों पर देखी
अपनी ही मुहर
गदगद से हो गये
सामने में देखा
अशोक होटल
क्या? अशोक का होटल
उत्सुकतावश घुसे होटल के अंदर
सोचा, जरा मिल लें
भिक्षु-भिक्षुणियों से जाकर
क्योंकि,
अब भी भारत में मेरा काफी है असर
पर
'मेनू' में देखा सामिष आहार
नृत्यघर में देखा
आलिंगन, सिहरन, चिपकन
अशोक को शोक हुआ
धीरे बुदबुदाये
मन में लजाये
यह अशोक,
कोई दूसरा ही होगा।

**(सन् 1960 में प्रकाशित साप्ताहिक धर्मयुग से साभार)**

## अंतःकरण का ऑपरेशन

हाल ही में
मैंने अपना अंतःकरण निकलवा लिया
क्योंकि वह एक सर्जन के अनुसार
बिल्कुल फालतू था
अपेण्डिक्स की तरह,
इस दुष्ट अंतःकरण के चलते
मैं जी रहा था भारी कलेश में
धीरे-धीरे अजनबी होता जा रहा था
अपने ही देश में,
इस दुष्ट अंतःकरण के चलते
मुझे हर जगह
कुछ-न-कुछ खटकता था
अरे यथार्थ को निगलने में
हर बार,
गले में कुछ अटकता था
बुद्धि-विवेक की भूल-भुलैया में
किसी खोये हुए बच्चे की तरह
रोज-रोज भटकता था
मामूली-सा ऑपरेशन है
राष्ट्रहित में आप भी करवा लीजिए न
अपने देश में जितने भी समझदार लोग हैं

बिना किसी के सुझाये
इसे बंध्याकरण ऑपरेशन की तरह
स्वयं अपना रहे हैं,
यहां तक कि जिस नामी सर्जन ने
मेरा यह ऑपरेशन किया था
उसने भी मेरे ऑपरेशन के पूर्व
अपना अंतःकरण निकलवा लिया था
यदि इस ऑपरेशन की सद्बुद्धि
मुझे पहले आई होती
तो मेरे बच्चे
इतने दिनों तक कलपे नहीं होते
मेरी बीवी रोई नहीं होती,
और गांधीजी के देश में
मैंने अपनी प्रतिष्ठा खोई नहीं होती,
मामूली-सा ऑपरेशन है
आप भी अपना अंतःकरण
निकलवा लीजिये न!

## शतायु पिता

ओ मेरे शतायु पिता
बार-बार कोमा में जा-जाकर
सकुशल लौट आना
भला कोई अच्छी बात है
यह तो एक भले-पूरे परिवार के साथ
सरासर विश्वासघात है
आपको अच्छी तरह पता है
कि मेरी सारी छुट्टियां
खत्म हो चुली हैं
सोचा था
जो कुछ बचा-खुचा है अर्जित अवकाश
उसी में
अंत्येष्टि से लेकर श्राद्ध तक
सब कुछ एक साथ निपटाकर
लौट जाऊंगा अपने बॉस के पास
पर हमें क्या पता था
कि आप हमें इस तरह
करेंगे निराश
और हमारी प्रायोजित पितृ-भक्ति का
इस तरह करेंगे उपहास,
पिताश्री!
मरना है तो एक मुश्त मर जाइये
इस तरह किश्तों में मरकर
हमें ऑफिस में और न लजवाइये
जरा सोचिए
कैसे मैं भेजूंगा फिर से तार
'फादर सीरियस कम सून'
इस बार!

**एम आई जी/244, हनुमान नगर**
**पटना-800020**

# राम मेश्राम की तीन ग़ज़लें

वो लय ही लय में मारे डालती है,
कथक के रक्स की तत्कार[1] बढ़िया।

इसे जमघट कहें, पचमेल कह लें,
हमारी चल रही सरकार बढ़िया।

मैं गाहक हूं न सौदागर तो काहे
मुझे ललचा रहा बाज़ार बढ़िया।

बयां कर दे दड़ेग़म[2] वक़्त का सच,
कहां है एक भी अखबार बढ़िया।

बड़ी राहत मिली विश्वास-मत से
भले संसद हुई मिस्मार बढ़िया।

फ़कत उपदेश के फ़न के धुरंधर
हमारे देश के फ़नकार बढ़िया।

मैं नंगाई का दर्शन रच रहा हूं,
सजाकर तर्क के हथियार बढ़िया।

ये भारत है कि पालीथिन की जनत,
अमर कूड़े का हाहाकार बढ़िया।

एफ-115/29, शिवाजी नगर
भोपाल-462016

इतिहास के शहीद गुनहगार हो गए,
गद्दार कल के आज वफ़ादार हो गए।

आया नया निज़ाम नई दावतें लिए,
गंगा बही तो हम भी आर-पार हो गए।

खुशियां कबाड़ने नए शासन की, लोग-बाग,
चमचागिरी के आला इश्तहार हो गए।

बातों का सिर्फ करके जमा-ख़र्च अपने यार,
ऐसे उठे सड़क से कि सरकार हो गए।

अश्लीलता के जिस घड़ी मुल्ज़िम हुए हुसैन
आकार देवियों के शर्मसार हो गए।

कैसी विडम्बना है कि औरत के राज में,
औरत की आबरु के तार-तार हो गए।

खुदगर्ज़ ख़्वाहिशों में वतन अपना बेचकर,
आतंकियों के हम भी मददगार हो गए।

मज़हब के, क़ौम के, कभी ईश्वर के नाम पर,
वो आदमी के क़त्ल के हथियार हो गए।

वासना की लिप्सा ने इस क़दर झिंझोड़ा है,
सूफी दिल को गलियों का कुत्ता करके छोड़ा है।

मेरे सैक्स-लफड़ों का ऋतुसंहार होते ही,
मेरे मूर्तिभंजक ने पहिले मुझ को तोड़ा है।

खुदकुशी की कीमत पर खोलता है जन्नत जो
आदमी को मजहब ने रुह तक निचोड़ा है।

तर्क भी हमारे ही, नर्क भी हमारे ही
और मन कि दर्पण के खौफ़ से भगोड़ा है।

मल्टिनेशनल जिसको चाव से चबाते हैं,
अर्थशास्त्र भारत का ब्रैड का पकौड़ा है।

धन्य झंडाबरदारी, 'वाद' भक्त यारी की,
आदमी के दमखम का गधा है न घोड़ा है।

पाप ही तो अपने थे, पुण्य सब पराए थे,
आप की चदरिया को और किसने ओढ़ा है।

हमने स्याह दौलत के लोकहित सजाए और
लोकतंत्र के सिर पर ठीकरा ये फोड़ा है।

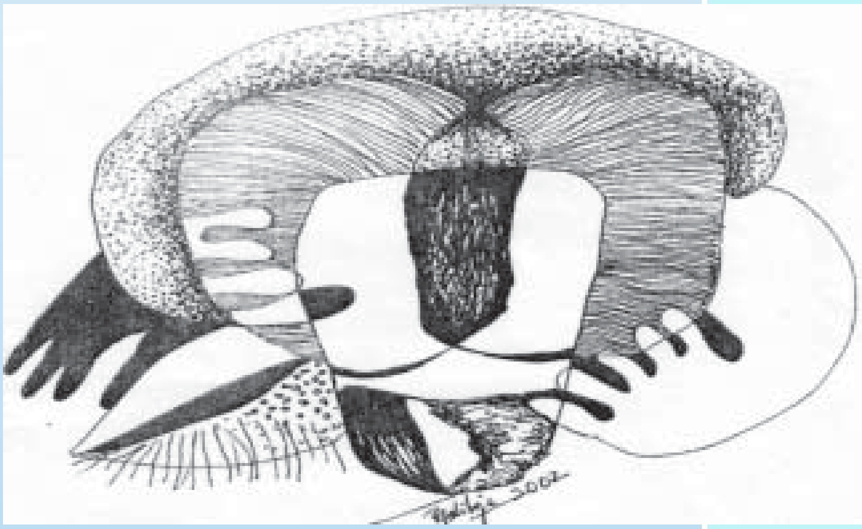

# रामबहादुर चौधरी 'चंदन' की ग़ज़लें

(१)

फ़स्ले बहार पास जो आती तो देखते,
हमसे खुशी भी हाथ मिलाती तो देखते।

गंगा विकास की यहां तस्वीर में बही,
सूखी धरा भी इसमें नहाती तो देखते।

क्या हो गया है लाज को आती है क्यों नहीं,
इस वक़्त को वो देख लजाती तो देखते।

इन्सानियत की मौत पे रोये हैं हम बहुत,
दुनिया उसे जो आज जिलाती दो देखते।

क्या चीज है ये लोरियां गाती थी मां कभी,
मम्मी भी आजकल की सुनाती तो देखते।

इस ज़िंदगी की ज़िंदगी समझे थे हम जिसे,
वो ज़िंदगी भी साथ निभाती तो देखते।

(२)

वक़्त की कैसी अनोखी आश्नाई है,
कुर्सियों ने झूठ से कर ली सगाई है।

पर्वतों के पास ही गहरी-सी खाई है,
मौज में कोई कहीं मुंहताज भाई है।

पाप धोती है यहां हर जात की गंगा,
डूबकर इसमें नहाई रहनुमाई है।

नाचती तहज़ीब नंगीं हर तरफ देखो,
आस्था को मुंह चिढ़ाती बेहयाई है।

पूछिए मत आपका कद क्यों हुआ छोटा,
देखिए ये आदमी की बोनसाई है।

देखना ये आसमानों के सफ़रवालों,
काग़ज़ी रथ में जुड़ा घोड़ा हवाई है।

चाहतों को ब्याहने की फिक्र में यारो,
ज़िंदगी सारी हमारी लड़खड़ाई है।

(३)

वक़्त की कैसी शरारत देखिए,
सामने रख दी क़यामत देखिए।

सिलसिला बदलाव का जो चल रहा,
मौसमी होती मुहब्बत देखिए।

कोसते थे कल तलक अंग्रेज को,
आ गई घर में विलायत देखिए।

अस्मिता बिकने लगी बाजार में,
तख़्त की होती तिजारत देखिए।

कुछ की मर्यादा का दामन छोड़कर,
बेवफ़ा होती सियासत देखिए।

घोषणाएं हो रहीं नगीं सभी,
डालती पर्दा निज़ामत देखिए।

झूठ हद के पास होती जा रही,
सत्य कब करता बग़ावत देखिए।

लूट, हत्या, रहज़नी के दौर में,
कौन रह पाता सलामत देखिए।

बेच दी जिसने भी अपनी आबरु,
मोल ले ली है शराफ़त देखिए।

टांग दी आंखें ही हमने द्वार पर,
कब तलक होती इनायत देखिए।

फुलकिया, बरियारपुर
मुंगेर-811211 (बिहार)

श्यामनंदन किशोर

# शर्म की बात है यह गगन के लिए

जुगनुओं की चमक चांदनी लग रही,
इस तरह से यहां फिर अंधेरा रहा।

विषधरों से जहां इस तरह भर गया,
व्यक्ति सबसे बड़ा दिख संपेरा रहा।

सूर्य के सारथी को लगी कंपकपी,
खून क्या दौड़ता अब रगों में नहीं।

शूल से फूल चुभने अधिक अब लगे,
आज भाटे बिना ज्वार के सब कहीं।

फैल स्याही गयी रात की इस तरह,
मुंह किरण से छुपाता सवेरा रहा।

कौन साथी तुम्हें जो नहीं छोड़ दे,
राह वीरान में, बीच मझधार में।

प्यार के भी गल में पड़ा ढोल है,
आस्था बिक रही बीच बाजार में।

कौन गिरवी नहीं जो पड़ेगा यहां,
रक्षकों का जहां दल लुटेरा रहा।

याचकों ने बदल रूप ऐसा लिया,
घूमते हाथ दाता पसारे हुए–

जो वजनदार थे, मिल गए धूल में,
जो कि हल्के, उड़े जा सितारे हुए।

चेहरे का बदल रंग उसका गया,
कल तलक जो स्वयं ही चितेरा रहा।

बदलियां तो घिरीं, मेघ बरसे नहीं–
शर्म की बात है यह गगन के लिए।

क्या ज़माना अजब देखने को मिला,
आज मुर्दे रहे लड़ कफन के लिए।

इस तरह से हुए आज हम एक हैं,
दर्द तेरा रहा, गीत मेरा रहा।

# अशोक अंजुम की तीन कविताएं

## खुल्लम खुल्ला

मंदिर लेकर पंडित आंए
मस्जि़द लेकर झगड़ें मुल्ला,
लोकतंत्र में डर काहे का
करो तमाशे खुल्लम-खुल्ला।

करो मिलावट, रिश्वत खाओ,
हथकण्डों से सब कुछ पाओ,
दो नंबर का जो कुछ आए-
कुछ हिस्सा ऊपर पहुंचाओ।
फिर कोई क्या कर सकता है-
हुई व्यवस्था ढिल्लम-ढुल्ला!
लोकतंत्र में डर काहे का. . .

जूते, घूंसे, लात झाड़ दो,
जिसका चाहो पेट फाड़ दो,
उसको नोचों, खोंसो इसको,
थप्पड़ जड़ दो चाहे जिसको।
शांति-सभा में भोंपू लेकर-
खूब मचाओ हल्ला-गुल्ला!
लोकतंत्र में डर काहे का. . .

पहले मन में खोट जुटाओ,
जैसे भी हो नोट जुटाओ,
राम-नाम की लूट मची है,
जितना चाहे लूटो, पाओ।
कुर्सी पाने लंगड़े दौड़ें-
झण्डा ऊंचा करता लुल्ला!
लोकतंत्र में डर काहे का. . .

गुड्डे में बम, गुड़िया में बम,
चूरन की है पुड़िया में बम,
ट्रेन में बम हैं, कार में बम हैं,
अब फूलों के हार में बम हैं।
सोच-समझकर इसको खाना-
बम न हो जो है रसगुल्ला!
लोकतंत्र में डर काहे का,
करे तमाशे खुल्लम-खुल्ला!!

## ताक धिना-धिन

ताक धिना-धिन, तक धिन-धिन
ताक धिना-धिन, तक धिन-धिन
लोकतंत्र के फुग्गे में
नेता चुभा रहे हैं पिन!
ताक धिना-धिन. . .

कितने प्यारे लगते थे,
सबसे न्यारे लगते थे,
निर्मल धारे लगते थे,
बड़े दुलारे लगते थे,
जबसे कुर्सी पर बैठे-
तब से उनसे आती धिन!
ताक धिना-धिन. . .

सब मौसेरे भाई हैं,
कुछ कुएं कुछ खाई हैं,
ये टोपी में, कुर्तों में-
एवरग्रीन कसाई हैं,
जनता कटनी है निश्चित
इसका बचना बड़ा कठिन!
ताक धिना-धिन. . .

हर इक दल में दल-दल है,
अब जन-गण-मन घायल है,
ये संसद है यारो, या-
कैक्टसों का जंगल है?
राजनीति दिखलायेगी-
अभी और हय क्या-क्या दिन?
ताक धिना-धिन. . .

हर एक अपनी जेब भरे,
देश की सेवा कौन करे,
बनकर सांड हर एक नेता-
लोकतंत्र का खेत चरे;
जिस पर भी विश्वास करो-
घपले करता वह गिन-गिन!
ताक धिना-धिन, तक धिन-धिन।

## जय स्वामी जी

स्वामी जी, जय स्वामी जी!
माथे तिलक गले में माला,
पीत वस्त्र तन पर है डाला,
कुछ वर्षों में बनकर उभरे- सबके अंतर्यामी जी!
स्वामी जी, जय स्वामी जी!

नेता और अभिनेता चेले,
युग में अटल प्रणेता चेले,
मुच्छड़, दड़ियल, गुण्डे चेले,
बड़े-बड़े मुस्टंडे चेले,
चेलों की लंबी कतार हैं,
साथ चेलियां बेशुमार हैं,
होल्डाल हैं, पम्फलेट हैं,
सचमुच गुरुजी आप ग्रेट हैं,
प्रवचन करवाने को तरसें-
चेले नामी-नामी जी!
स्वामी जी, जय स्वामी जी!

आप हंसे तो हंसे भक्तजन,
आप हिलें तो हिलें भक्तजन,
आप उठें तो उठें भक्तजन,
आप चलें तो चलें भक्तजन,
प्रवचन देते उछल-उछलकर
मटक-मटककर, मचल-मचलकर,
हंसत-गाते, अश्रु बहाते, नये-नये दृष्टांत सुनाते
आपकी 'ना' भक्तों की 'ना' है
'हां' पर भरते हामी जी!
स्वामी जी, जय स्वामी जी!

है कुबेर का पास ख़ज़ाना,
अंदर हां-हां, बाहर ना-ना,
लगते हैं दरबार अनूठे, आश्रम, बंगले, कार अनूठे,
पास आपके शब्दजाल हैं,
अभिनय के अद्‌भुत कमाल हैं,
सुख-सुविधाओं का मेला है,
वैभव की रेलमपेला है, है अरबों का माल-मसाला,
दुनिया करे गुलामी जी! स्वामी जी, जय स्वामी जी!

संपादक 'प्रयास', ट्रक गेट कासिमपुर (पावर हाउस)
अलीगढ़-202127

ओम नागर 'अश्क'

## मेरे गांव के स्कूल के बच्चे

मेरे गांव के स्कूल के बच्चे नहीं सीख पाते
पहली, दूसरी, तीसरी कक्षा तक भी
बारहखड़ी, दो का पहाड़ा
जीभ से स्लेट चाटकर
मिटाते रहते हैं दिनभर
'अ' से 'ज्ञ' के तमाम अक्षर।
मेरे गांव के स्कूल के बच्चे
अच्छी तरह से बता सकते हैं
बनियें की दुकान पर मिलने वाले
जर्दे के पाउच या सिगरेट के पैकेट
का मूल्य / खरीदने जाना हो पड़ता है
माड़साब की तलब के वास्ते।
बच्चे तो बच्चे होते हैं उन्हें नहीं पता होता कि
किस मुश्किल से पक पाता है घर में
रोटी-साग या क्यूं खरीदती है मां
कभी-कभी अनाज के बदले
अच्छे से करेले, आलू, गोभी, खरबूजा।
मगर कई बार डर जाते हैं।
माड़साब की आंखों में तैरती वहशत से।
मेरे गांव के स्कूल के बच्चे ले लेते हैं
कार्यदिवस होते हुए भी
बेबात, छुट्टियों का आंनद
ऐसे में जल्दी घर पहुंचे बच्चों से
नहीं पूछता कोई कि क्यों लौटा है वह
समय से पूर्व समझ जाते होंगे शायद सभी
अपनी आप कि आज फिर से
हाजिरी मार कर गायब है
चारों के चारों माड़साब।
मेरे गांव के स्कूल के बच्चे
नहीं भूलते स्कूल जाते समय
साथ ले जाना टाट से बना आसन
उसी पर बैठकर पढ़ना है उन्हें दिन हवा हुए।
जब पढ़ा करते थे कहीं
सुदामा और कृष्ण एक साथ
अब महलों के वारिस बैठे होंगे
किसी शहरी कान्वेंट की कक्षा में
तो सोचिये! फिर तीन मुट्ठी चावल पर राज
कौन द्वारकाधीश देगा?

857, केशवपुरम्-4, कोटा-9 (राजस्थान)

देवेन्द्र कुमार मिश्र

## सच को कौन पूछे

सच और गरीब
दोनों की हालत
एक जैसी है
एक युवा के लिए
जैसे बेरोजगारी
एक ढलती जवानी
वाली गरीब की
कुंआरी लड़की
वैसे ही सच की स्थिति
लोगों का दोगलापन
लोगों के दोहरे चरित्र
जिन्हें सिर्फ धन,
वैभव
सम्पन्नता चाहिए
वे नहीं देखते चरित्र, सत्य
भले ही उनकी लड़की दहेज
के लिए जिंदा जला दी जाये
लेकिन उन्हें कुबूल नहीं
गरीब, सच्चा, चरित्रवान, ईमानदार
उन्हें चाहिए
एक अदद बेईमान
सम्पन्नता,
नौकरीशुदा
चाहे वो जैसा भी हो
सच का क्या मोल?
दो कोड़ी का भी नहीं
और झूठ को सम्मान
सहित नवाजा जाता है।
ऐसे में सच को कौन पूछे।

देवेन्द्र कुमार मिश्र

## सच के पहलू

और एक दिन
सच की हत्या कर दी गई।
सारे झूठों ने मिलकर
श्रद्धांजलि दी।
अफसोस जताया।
राष्ट्रीय शोक व्यक्त किया गया।
सच के मरते ही
तमाम झूठे स्वच्छन्द हो गये
और समाज में अराजकता
फैलने लगी।
राष्ट्र के टुकड़े-टुकड़े होने लगे
फिर एक सच ने लिया जन्म
फिर एक सच पैदा हुआ
और सच की दहाड़ मात्र से
झूठ फड़फड़ाने लगा
फिर सारे झूठे इकट्ठे हुए
उन्होंने सच को गिरफ्तार किया
उस पर आरोप लगाये
झूठे गवाहों, सबूतों को
आधार बनाकर
सच को फांसी पर
लटका दिया गया।
झूठ ने फिर जश्न मनाया
झूठ ने फिर आतंक फैलाया
फिर कहीं सच पैदा होने का है।

जै

एस.ए.एफ कवार्टर्स
बाबू लाईन, परासिया रोड
छिन्दवाड़ा (म.प्र.) 480001

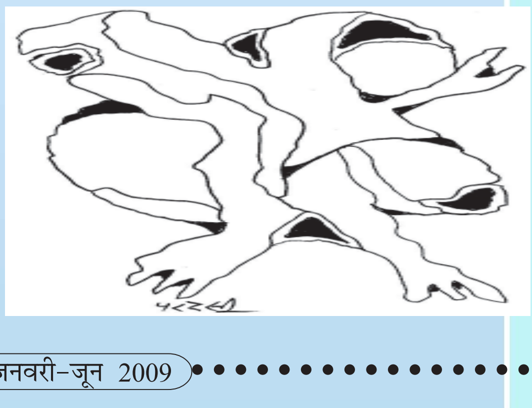

# शम्भु बादल की कविताएं

(१)

थोड़ी दिक्कत है
बहुत ब्लैकमेलिंग है
तरह-तरह के लोग
तरह-तरह से पटाना है

हमारे ये सांसद
लोक-प्रतिनिधि है।
इसीलिए लोगों से भिन्न हैं
जमीन से ऊपर हैं
स्ट्रेटजी के तहत
इन्हें हम
जनता के बीच का
जमीनी आदमी कहते हैं

ये हमारे बेहद प्यारे हैं
दूसरी पार्टी के बावजूद
मेरे डीनर पर आये हैं
विश्वास मत के नाविक
अच्छे शूटर हैं
सेल का अनुभव है
बड़े लोग जेल जाते ही हैं
जैसे- कृष्ण
गांधी।

(२)

पलटू बाबू की बात करते हो!
लोअर कोर्ट ने फांसी की सजा दी
हाई कोर्ट में बरकरार
सुप्रीम कोर्ट ने बेल दिया

ये राज्यवादी हैं
बड़े लीडर हैं
अभी हमारे पास हैं
केन्द्र में
मलाईदार मंत्री-पद मांगते हैं
बेटा डिप्टी सी.एम. चाहते हैं
इनसे 'डील' हो चुकी

हत्या
मारपीट
डकैती का मामला
बेचारे तब भी
वोट देने
जेल से आये हैं
करीम साहब

कैदी क्रिमिनल
हिन्दुत्ववादियों पर भी
चारे का जादू है
बातें चल रही हैं
छोटे दल भी
पट जायेंगे

सब तो ठीक है
पर इन अपनों को बनाये रखना!
मेढ़क तौलना है।

(३)

सत्ता हाथ में
देश-विदेश
जहां जिससे चाहूं
सौदा करूं
न करूं
समझौता करूं
रद्द करूं
मेरा मन
शासन जैसे चलाऊं

(४)

इधर थोड़ी चिंता बढ़ी है
आतंकवाद उग्रवाद के भयावह खूनी हाथ
विदेशी मदद से
देश का रक्त-रंजित करने में लगे हैं
चैन की सांस नहीं

मेरी भारी सुरक्षा को जनता अन्यथा न ले
मैं हूं तो देश है, देश सुरक्षित है

एक-एक आतंकी उग्रवादी पर
कड़ी नजर रखनी है
कड़ा कानून बनाना है
दोषी नहीं छुटेंगे
कठोर दण्ड पायेंगे
जनता की मदद से
कुचले जायेंगे।

वैसे ये समस्याएं भारत की नहीं
पूरी दुनिया की हैं
घबड़ायें नहीं कुछ समय लगेगा
विश्व-स्तर पर हल होंगी
मेरी बातें विभिन्न देशों से हो रही हैं।

देश को हाई एलर्ट कर दिया गया है
बोर्डर पर चौकसी बढ़ायी जा रही है
जनता कानून अपने हाथ में न ले
समझे इतन बड़े देश में
थोड़ा खून-खराबी होना
बड़ी बात नहीं
फिर भी सरकार सतर्क है
नेताओं के बॉडीगार्ड हैं
विशेषाधिकार हैं

जनता अपनी है
उस पर पूरा ध्यान है
भरोसा है
कट-मर कर जरूर बचेगी
शांति बनाये रखे
मैं स्वयं
सब देख रहा हूं।

सूरज-घर, जबरा रोड
कोर्रा, हजारीबाग-825301

निर्मिश ठाकुर

# व्यंग्य ट्रायोलेट

यह 'ट्रायोलेट' (Triolet) का व्यंग्य स्वरूप है। ट्रायोलेट फ्रैंच काव्य प्रकार है, जो तेहरवीं शताब्दी में अस्तित्व में आया था। यह चक्राकार काव्य प्रकार (Rondeau अर्थात Round Poem है।
ट्रायोलेट में–

(1) कुल आठ पंक्तियां होती हैं।

(2) प्रथम पंक्ति काव्य में चौथे और सातवें स्थान पर पुनरावर्तित होती है। इस प्रकार एक ही पंक्ति काव्य में तीन बार आने से 'ट्रायोलेट' नाम दिया गया हो, यह संभव है।

(3) ट्रायोलेट की द्वितीय पंक्ति आठवें स्थान पर भी आती है, अर्थात उसी से समापन होता है और चक्र आकार काव्य बनता है।

(4) इस में प्रास रचना 'ABaAabAB' प्रकार की होती है, जो विशिष्ट और ध्यानाकर्षक बनती है। आक्सफार्ड डिक्शनरी में ट्रायोलेट की प्रास रचना सरल शब्दों में दी गई है, इस प्रकार है– (1) cat (2) dog (3) bat (4) cat (5) fat (6) hog (7) cat (8) dog.

सत्रहवीं शताब्दी में अंग्रेजी साहित्य में प्रवेश पाने के बाद ट्रायोलेट के रंग, रूप और अंदाज़ बदल गए थे। इसी काल में ट्रायालेट, हास्य-व्यंग्य का माध्यम बने और 'व्यंग्य ट्रायोलेट' अस्तित्व में आए।

सद्भाग्य से गुजराती गंभीर और व्यंग्य साहित्य में 'ट्रायोलेट' को ले आने मुझे हासिल है और मेरे 30 से ज्यादा ट्रायोलेट विभिन्न साहित्यिक पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। मेरा ट्रायोलेट संग्रह (जोकि भारत का प्रथम माना जाना चाहिए) 'हुं निर्मिश8 ('मैं निर्मिश') शीघ्र प्रकाशित होने वाला है।

हिन्दी के मूर्धन्य आलोचक श्री नामवर सिंह जी ने फोन पर जानकारी दी थी कि हिन्दी में मौलिक ट्रायोलेट लिखे नहीं गए हैं। यहां मेरे कुछ हिन्दी 'व्यंग्य ट्रायोलेट' प्रस्तुत है, जो शायद हिन्दी साहित्य में प्रथम हो सकते हैं। आशा है यह नया प्रयोग पाठकों, रचनाकारों और आलोचकों को पसंद आए।

## भाई-भाई

एक दूजे को हक से पिटेंगे
हिन्दु-मुस्लिम तो भाई-भाई है!
साथ जीना पड़ा, तो जी लेंगे
एक-दूजे को हक से पिटेंगे
बीच में भाई बांग ही देंगे
आरती मैंने भी तो गाई है।
एक-दूजे का हक से पीटेंगे
हिन्दु-मुस्लिम तो भाई-भाई है

## कविवर का सम्मान

शाल ओढा ही दो कविवर को
माईक से जो करीब लगते हैं
खूब तड़पे हैं हिज्र में बरसों
शाल ओढा ही दो कविवर को
दिल से कब थे करीब, रहने दो!
शब्द बेचा किये थे सस्ते में
शाल ओढा ही दो कविवर को
माईक से जो करीब लगते हैं।

## चूड़ीवाले की प्रणयाभिव्यक्ति

पहन के कोई न मेरी होगी
चूड़ियों की दुकान मेरी है
है ये धंधा, मैं प्यार का रोगी!
पहन के कोई न मेरी होगी
कैसे पूछुं कि और क्या लोगी?
दिल की दुकान तो अंधेरी है!
पहन के कोई न मेरी होगी
चूड़ियों की दुकान मेरी है।

बी 9/31, ओ.एन.जी.सी. कालोनी, फेज-1
मगदल्ला, सूरत (गुजरात)

अक्षय जैन

# चालू कवि

चालू कवियों को
अपना पहचान पत्र साथ नहीं रखना पड़ता
शहर का बच्चा-बच्चा उन्हें जानता है।

अकादमी वालों के लिए
होते हैं चालू कवि
घर-जंवाई की तरह

सुलभ शौचालयों के
आसपास की दुकानों में
सुने जा सकते हैं
चालू कवियों के कैसेट

रस-मलाई खाने के बाद
सेठों की तौंदो पर खिलखिलाने लगते हैं
चालू कवियों के
अठखेलियां करते हुए चित्र

मैटरनिटी होम में बदल रहे हैं
टीवी चैनल
स्टूडियों के फर्श पर
लोट लगा रहे हैं चालू कवि

सभापति चालू कवियों के प्राण हैं
मुख्य अतिथि च्यवनप्राश है
विशेष वक्ता टाईमपास है

सूखे हुए फूल
किताबों में मिलेंगे
चालू कवियों का बखान करने वाले
हिंदी विभागों में मिलेंगे

चालू कवियों का
जब भी इतिहास लिखा जाएगा
यूं समझ लीजिये कि
इतिहास लिखने वाले का
कचूमर निकल जाएगा।

13, रशमन अपार्टमेंट
एस.एल. रोड, मुलुंड (पं), बंबई-400080

हरीश नवल

# एक और रंगनाथ की राग दरबारी यात्रा

'राग दरबारी' 1968 में प्रकाशित हुआ। दो वर्ष बाद साहित्य अकादमी का ठप्पा इस पर लगा, चिन्तकों का ध्यान इसकी ओर आकर्षित हुआ और यद्यपि कुछ वर्ष लगे पर श्रीलाल शुक्ल साहित्य की मुख्य धारा के राजपथ पर जा लगे। वे मुख्यधारा के जनपथ पर तो वर्षों से थे ही। 'सूनी घाटी का सूरज' लगभग सूना रहा था पर 'अंगद का पांव' व्यंग्यकार शुक्ल का पांव बन गया था जो भारी पड़ने लगा था। मेरा साबका उसी पांव से पड़ा था। अद्‌भुत रचनाशिल्प और सार्थक व्यंग्य का निदर्शन हुआ था। मुझे शुक्लजी का यह व्यंग्य संग्रह 1968-69 में उपलब्ध हुआ था, जब व्यंग्य के खड़े पानी के तालाब में मैं उसकी गहराई का अंदाजा लगाना शुरू कर चुका था–यह जाने बिना लिख रहा था कि सार्थक व्यंग्य होता क्या है, व्यंग्य और हास्य के फ़र्क को मैं महसूस तो कर रहा था पर गूढ़त्व की प्राप्ति नहीं हो पाई थी। (हुई तो आज तक भी नहीं है पर सत्य की खोज निरंतर जारी है) ऐसे में मिरांडा हाऊस की कहानी प्रतियोगिता में पुरस्कृत होने पर 'अंगद का पांव' प्राप्त होना, मेरी उपलब्धि ही थी। हरिशंकर परसाई मेरे पसंदीदा व्यंग्यकारों में थे, उनकी कथ्यात्मकता मुझे भाती थी, मैं उन्हें निरंतर पढ़ता रहा था। शरद जोशी की नई दुनिया मुझे नए संकेत देती थी और धर्मयुग के पृष्ठों पर रवींद्रनाथ त्यागी से मैं अक्सर मिल लेता था। श्रीलाल शुक्ल का लेखन तनिक भिन्न प्रतीत हुआ था, मैं रमने की प्रक्रिया सम्पन्न कर रहा था कि तभी 'राग दरबारी' की महत् चर्चा का माहौल भट्टी बनने लगा। लोकप्रियता का आलम यह था कि कतिपय विद्वान इस ग्रंथ को संगीत अकादमी की बजाय साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत किए जाने की बुनियादी बहस में शामिल हो रहे थे। पढ़ें या न पढ़ें पर आम पाठक विशेष पाठक निर्मित होने हेतु 'राग दरबारी' की प्रशंसा में लीन होने लगे थे। सन 1971 में मैं दिल्ली विश्वविद्यालय के शिवाजी कॉलेज में प्राध्यापक नियुक्त हुआ और पुस्तकालय की खरीद के लिए आई हिंदी पुस्तकों के बंडल में एक पुस्तक विक्रेता से मैंने हर तरह से भारी भरकम इस उपन्यास को खरीद लिया। उस दिन घर लौटते हुए मेरी जावा मोटरसाईकिल को कर्मपुरा से शाहदरा पहुंचने में मानों कई युग लग गए। मैं जल्द से जल्द राग दरबारी का वाचन कर मित्रों में अपने को जागरूक व चेतन पाठक सिद्ध करना चाहता था।

'राग दरबारी' ने मुझे झिंझोड़ दिया। मेरे रचनाकार के मन पर बरसों बाद वही असर हुआ, बल्कि अधिक तीखा असर हुआ जो बेढब बनारसी के उपन्यास 'लेफ्टिनेंट पिगसन की डायरी' पढ़ने पर हुआ था। दोनों उपन्यासों के मध्यकाल में कृशचंदर कृत 'एक गधे की आत्मकथा' ने भी मुझे शैलीगत प्रयोग सुझाए थे। 'राग दरबारी' तो राग दरबारी है जैसे कि 'ब्लैक इज़ ब्लैक' होता है बल्कि कई बार वर्षों के अंतराल से पढ़ने पर आज भी यही वाक्य मानों पिघलता है, आफ्टरऑल राग दरबारी इज़ राग दरबारी।

मैं कभी सोच ही नहीं सकता था कि 'सत्य' की तुलना कभी कोई मनीषी 'ट्रक' से भी कर सकता है। मैं सकते में पड़ गया था जब मैं पढ़ गया था 'जैसे कि सत्य के होते हैं, इस ट्रक के भी कई पहलू थे...' इब्तिदा ऐसी है तो अंजाम कैसा होगा, मैंने सोचा था और बार-बार हैरान, परेशान और मुग्ध हुआ था, बल्कि मैं भी रंगनाथ हो गया था। घरघरा कर चलते हुए ट्रक में सफर कर रहे शिरिमानजी रंगनाथ की तरह।

रंगनाथ उन दिनों घास खोद रहा था जिसे श्रीलालजी ने अंग्रेजी में रिसर्च बताया था। कया वाजिब इत्तिफ़ाक और साम्य था कि रंगनाथ ने भी पारसाल एम.ए. किया था और मैंने भी (1970) रंगनाथ ने रिसर्च शुरू की थी, और मैंने भी। मैं दिल्ली विश्वविद्यालय से एम.लिट. की रिसर्च डिग्री हेतु मोहन राकेश के नाटकों पर काम कर रहा था। बहुत दुबला पतला था, कुर्ता भी पहनता था और झोला कंधे से लटकाने के फैशन में सम्मिलित था, फ़र्क यह था कि पाजामा के स्थान पर फीकी नीली जींस होती थी...।

शिवपालगंज की यात्रा केवल रंगनाथ की ही नहीं थी, मेरी भी थी, मेरे जैसे हजारों हजार पाठकों की थी जो भ्रष्टाचार के गर्त में क्रमशः गिरते स्वतंत्र भारत के कर्णधारों को देख रहे थे। याद है मुझे डॉ. कन्हैयालाल नंदन ने कहा था, 'शिवपालगंज तुम्हारा कॉलेज है, तुम्हारा शहर है, हमारा हिंदुस्तान है. . .।

नवीन उपमान हम डॉ. नगेंद्र के विद्यार्थी कविता में खोजते थे, हमारे दूसरे श्रद्धेय महान अध्यापक डॉ. विजयेंद्र स्नातक ने हमें गद्य में भी उपमान-खोज कर लगाया था। गद्य मुझे अपने ज़्यादा क़रीब लगता था। मैंने और मेरे एक अभिन्न मित्र 'एक और रंगनाथ' कृष्णलाल ने 'राग दरबारी' में उपमानों की खोज कर उनके अपने-अपने अर्थ देने शुरू कर दिए थे। एक उपमान ग़ज़ब था, ग़ज़ब संभवतः इस व्यवस्था में ग़ज़ब ही रहेगा वह था शिक्षा-पद्धति पर। मैं और कृष्णलाल नए-नए प्राध्यापक थे–रिसर्च में अस्त-व्यस्त थे, उपमान कभी भूला नहीं–बेहद काम आया। उसका प्रयोग हमने गांधी अनुयायी की भांति किया–'वर्तमान शिक्षा-पद्धति रास्ते में पड़ी हुई कुतिया है, जिसे कोई भी लात मार सकता है।'

'.... शाम की हवा किसी गर्भवती की तरह अलसायी हुई सी चल रही थी।' हम श्रीलाल शुक्ल के 'कीन ऑब्ज़र्वेशन पर फिदा हो गए थे–किसी किसी शाम की हवा मुझे भी ऐसी लगने लगी थी।

ऐसी ही हमारी रोज़मर्रा की जिंदगी में कई वर्षों तक एक उत्तर हमें सारगर्भित सिद्ध करता रहा। मसलन दादा जी ने पूछा था, 'हरीश तेरा कमरा कितना बिखरा रहता है, तू

काम कैसे करता है? करता भी है कि नहीं?

मैं श्री लाल शुक्ल हो गया और उत्तर दिया, बहुत करता हूं पर 'इतना काम है कि सारा ठप्प पड़ा है।'

साम्यवाद, गांव-शहर का रिश्ता, जनता जनार्दन, नेतागिरी, सहकारिता, मैथेमेटिक्स, माला, हिंदुस्तानी नीयत, सिबंबालिक माड्रनाईज़ेशन, धर्म की लड़ाई, वास्तविक द्रव्य, डार्विन सिद्धांत, यूनियनबाजी, विरोधी से व्यवहार, सिनेमा का असर, वीर्य का महत्व, नशीले पदार्थ, गुप्त साहित्य, पीढ़ी-संघर्ष, विदेश-प्रभाव, खेती पर लेक्चर, विज्ञापनबाजी, अंग्रेजी का जादू, सरकारी अनुदान, प्यार की फिलासफी, गुटबंदी, वेदांत-समीक्षा, इंसानियत का अर्थ, गांधीगिरी का सच, गांव-चुनाव की राजनीति, पद की मर्यादा के असली मायने और और भी न जाने क्या क्या समाजशास्त्रीय सूत्र व व्याख्याएं श्रीलाल जी ने की हैं जिनका हिंदी साहित्य में कोई सानी नहीं है।

'राग दरबारी' एक ऐसे समाज की व्याख्या करता है जिसे केवल बेहद प्रैक्टिकल लोग ही चला सकते हैं। गद्दीनशीं सनीचर जैसे लोग ही होंगे। वैद्यजी की पॉलिटिक्स के आयाम आंखें खोलते हैं। शिवपालगंज का समाज सच में एक घटना प्रधान समाज है। घटनाएं एक के बाद एक उभरती चलती हैं। कहीं कोई निष्कर्ष नहीं है, कहीं अंत नहीं है। घटनाएं विकसित नहीं होती हैं यह उपन्यास की विशिष्टता है। कोई भी घटना जन्म लेते ही विनाश की ओर अग्रसरित होती है।

इस उपन्यास में विकास तो दिखाई देता है पर प्रगति नहीं दिखती। बौद्धिक समाज की शानदार स्कैनिंग 'राग दरबारी' में है। पात्रों की संरचना कमाल है। रंगनाथ के पास वैद्यजी थे, मेरे घर में मेरे दादा थे वे भी वैद्य थे। वे भी आयुर्वेदिक और यूनानी नुस्खे बताते थे पर वे काईयां नहीं थे–मैं उन्हें 'राग दरबारी' के अंश सुनाता था, कभी वे हसंते और कभी गंभीर हो जाते थे और कहते थे 'कभी इनसे मिलाना।'

मैं तो उनसे बहुत वर्षों तक मिला ही नहीं था। हां संपर्क साधन ज़रूर गंभीर बने थे। सन 1986 या 87 के आरंभ की बात है कि एक दिन विख्यात मीडियाकर्मी श्री मार्क टूली का फोन वाया श्रीमती प्रतिभा आर्य मुझे आया कि उनकी एक मित्र सुश्री गिलियन राइट मुझसे मिलना चाहती हैं। मैंने आश्चर्य में मिलने का मक़सद पूछा, पता चला कि गिलियन 'राग दरबारी' का अंग्रेजी में पेनगुईन बुक्स के लिए अनुवाद कर रही हैं उसी सिलसिले में मिलना था।

मैं रोमांचित था। इन बरसों में मेरे नाम के आगे भी व्यंग्यकार विशेषण जुड़ने लगा था, धर्मयुग सारिका, सा. हिंदुस्तान, कादंबिनी आदि में व्यंग्य रचनाएं छपने लगीं थीं। मैं और प्रेम जनमेजय व्यंग्य को एक स्वतंत्र विधा क़रार करने के युद्ध में जुटे थे। संभवतः इसी कारण गिलियन राइट को मुझसे मिलना था। मैं उनके समक्ष खुद को राइट ही सिद्ध करना चाहता था, रॉंग नहीं।

निश्चित दिन व समय पर गिलियन राइट मेरे घर आईं और मुझसे 'राग दरबारी' के अनुवाद के विषय में सहयोग और राय मांगी। उन्हें बहुत से ऐसे संदर्भों के सही रूपांतर चाहिए थे जो अंग्रेजी में नहीं होते। उन्होंने जो सूची दी उनमें के कुछ मुझे ध्यान हैं। 'शिकायती किताब के कथा-साहित्य में योगदान', 'बांछे खिल गईं, जहां कहीं भी जिस्म में होती हों', 'भूदानी-झोला', 'तुक का आदमी', 'वायु का सेवन और मल-मूत्र का विसर्जन वह भी लगे हाथ', 'लंगोटबंद', 'नंग-धड़ंग', 'आवाज़ की ऊंचाई से गालियों का महत्व', 'धकापेल से चलती चाचा की चक्की', 'दो पैसे की किफ़ायत पर मुंह मारना', 'टिप्पस से कुछ बनवाना', 'स्थानीय गुंडागिरी के किसी भी स्टैंडर्ड से होनहार', 'बकरी की लेंडी', 'मुर्गी बनकर प्रणाम करना', 'गंजगों के चोंचले', 'लारी-लप्पा', 'टें होना', 'अंड-वृद्धि', 'फुट्टफेरी', 'सुबुक-सुबुकवादी उपन्यास', 'कृपा की बल्ली लगाना', 'कोड़िल्ला छाप न्याय', 'मामला चुरैट होना', 'पुगद' आदि आदि।

मैं पता नहीं राइट रहा या रॉंग पर पेंगुईन का वह रूपांतर काफी बिका। श्रीमती प्रतिभा आर्य और मैं 'राग दरबारी' की अंतर्राष्ट्रीय ख्याति का एक आधार वह भी बना। अनुवाद के साथ रूप्पन बाबू, बड़ी पहलवान, दूरबीन सिंह, वैद्य जी, जोगनाथ, रामाधीन भीखमखेड़वी, लंगड़, बेला, पं. राधेलाल आदि पात्रों के नामों और चरित्र पर भी लंबी चर्चा हुई थी।

सन 1991 से लखनऊ में आयोजित होने वाली 'माध्यम' की गोष्ठियों में अनूप श्रीवास्तव के माध्यम से अक्सर मिलना होता रहा। हर बार उनसे कुछ सीखने को मिला। सन 1999 में उनके साथ इंग्लैंड जाने का सुअवसर प्राप्त हुआ। लंदन में आयोजित इस विश्व हिंदी सम्मेलन में वे दिल्ली एयरपोर्ट से डॉ. नामवर सिंह के साथ-साथ थे। लंदन प्रवास में उन्हें और निकट से देखा और समझा लंदन में प्रेम जनमेजय भी शामिल हुए थे–वे ट्रिनिडाड से आए थे जहां वे राजनयिक तथा प्रोफेसर के समवेत रूपों में भारत सरकार के अधिकारी थे। उन दिनों किन्हीं मेहरबानियों के कारण मेरी और प्रेम की जोड़ी टूट रही थी जिस पर आदरणीय श्रीलाल शुक्ल दुखी थे। उन्होंने हम दोनों को बोध दिया था। मुझे कहा था, 'प्रेम को कभी छोड़ना नहीं, बहुत प्यारा इंसान है। ऐसे दो समानधर्मियों की दोस्ती तुम्हारी विधा के लिए भी ज़रूरी है।'

मैंने तब उनका क़द और अधिक ऊंचा पाया था। मैं और प्रेम फिर एक हैं–ठीक पहले 'जैसे के' की तर्ज पर जिसकी चाह शुक्ल जी को थी। उनके व्यक्तित्व के अनेकानेक रूप और भी मैंने देखे हैं। उन्हें लखनऊ के सबसे बड़े अफसर के रूप में 'नगर प्रमुख' के रूप में कर्मठ देखा। उन्हें एक आदर्श पिता की भांति देखा। वे एक आदर्श पति रहे। आदरणीया भाभीजी के बाद वे कितने-कितने अकेले हो गए, उस वेदना को देखा। उनके संगीतकार पक्ष को देखा, उनके धार्मिक अनुष्ठानों को परखा। उनका मित्र रूप, अभिभावक रूप भी देखा। वे हर रूप में अप्रतिम हैं। एक परफेक्शिनिस्ट हैं वे। भाषा, शैली, प्रयोग, परंपरा के नववाहक हैं। उनके व्यंग्य सामाजिक सरोकारों से ओतप्रोत व्यंग्य हैं। वे सार्थक व्यंग्य को प्रश्रय और पल्लवित करने वाले बड़े रचनाकार हैं। 'गोदान' के बाद ग्राम चेतना पर लिखा गया 'राग दरबारी' सबसे उत्कृष्ट उपन्यास है जो प्रायः सभी भारतीय भाषाओं में रूपांतरित होकर यशस्वी हुआ है।

एक रिश्ता लगे हाथ उनके साथ का अपना और बता दूं। मसूरी के मेरे अभिन्न मित्र स्वर्गीय अशोक कुमार श्रीलाल शुक्ल

**शेष पृष्ठ-106 पर. . .**

डॉ॰ रमेशचंद्र खरे

# दमोह के दिनकर

वह 'नई कविता' या 'समकालीन कविता', जिसे विश्वंभर नाथ उपाध्याय ने 'आघात और विस्फोट की कविता' तथा 'आक्रमण और अनावरण की कविता' कहा दिनकर की युगचेतना और संवेदनशीलता में एकाकार होकर अपने समय की प्रवृत्तियों को समझकर बोलती है। तभी 'बच्चन' जी ने भी कहा था–'नई पीढ़ी के दिनकर सोनवलकर की कविता बड़े आत्मविश्वास और संयम के साथ आगे बढ़ती है। इनकी 'चहान, पंछी, माध्यम' को मैं नई कविता की श्रेष्ठ उपलब्धियों में रखना चाहूंगा।'

ऐसे कवि का जन्म दमोह के प्रतिष्ठित वकील पं. श्रीधर राव सोनवलकर के घर 24 मई 1932 को हुआ था। वे छह भाइयों–मधुकरराव, भास्करराव, प्रभाकर राव, दिनकर राव, सुधाकर राव और चंद्रकांत तथा चार बहिनों में चौथे थे। दर्शन शास्त्र और हिंदी साहित्य में एम.ए. कर उन्होंने स्थानीय राष्ट्रीय जैन उ.मा. विद्यालय तथा दमोह उपाधि महाविद्यालय में अपनी सेवाएं दीं, तथा खंडवा महाविद्यालय में नौकरी पाकर भी वे दमोह के मोह को छोड़ न पायें और वहां से फिर वापिस आ गये। पर अंततः उन्हें उससे मुक्त होना ही पड़ा। दमोह महाविद्यालय के शासकीय अधिग्रहण के साथ सन् 64 में वे रतलाम पदांकित हुए और छह वर्ष बाद जावरा स्थानांतरित, जहां वे अंतिम समय तक रहे। दमोह में जब भी वे आये निरभिमान मेरे घर पधारे। आत्मीय ऊष्मा के स्पर्श से ऊर्जस्वित था उनका साथ। इस बीच 1971 में निराला जयंती पर दिनकर सोनवलकर, सत्यमोहन वर्मा और विट्ठल भाई पटेल, तीन कवियों का समवेत काव्य संकलन, 'दीवारों के खिलाफ' भी यहां 'नवोदित' और 'रवींद्र भारती' के संयुक्त तत्वावधान में विमोचित हुआ था। उनकी 'अ से असभ्यता', और 'इकतारे पर अनहद राग', उ.प्र. हिंदी साहित्य समिति द्वारा पुरस्कृत कृतियां हैं। 'रक्त में जलते हुए अगनित सूर्य' उनकी मराठी दलित कविता की हिंदी में प्रथम प्रस्तुति है।

दिनकर जी का 'दर्शन' केवल प्राध्यापकीय ही नहीं रहा, वह उनकी कविता पर 'सामाजिक दर्शन' बनकर छाया रहा और उस 'सोशल फिलासफी' को व्याख्यायित करता रहा जो उनके अगले संग्रह 'शीशे और पत्थर का गणित' में मुखर है। प्रभाकर माचवे ने तभी पहचाना था दिनकर सोनवलकर में 'शार्प विट' है तथा तटस्थ दृष्टि से दुनिया की ओर देखने का दृष्टिकोण है। यहां 'डिटेचमेंट' दर्शन के गंभीर अध्ययन से ही आता है। 'शीशे और पत्थर का गणित' 1986 में प्रकाशित (द्वि. सं.) संकलन कलाकार प्रकाशक प्रह्लाद अग्रवाल की सुंदर हस्तलिपि एवं रेखाचित्रों से सज्जित है, जिसका समाज शास्त्रीय निरपेक्षमान, इसी शीर्षक की कविता में समाज की इकाई, दहाई, सैकड़ा के मूल्य को निर्धारित कर गणितीय अभिव्यक्ति देता है। ये 'पत्थर'–युवा पीढ़ी का दिग्भ्रमित आक्रोश, यह नासमझ बहादुरी, जायज भी हो सकती थी, अगर वो कालेज की खिड़कियों की बजाय उन पर भ्रष्टाचारी सुरंगों पर फेंके जाते, जो देश को खोखला कर रही हैं।' कवि उस वर्ग भेदी अर्थव्यवस्था के पीछे छुपे षड्यंत्र से बेखबर पीढ़ी को आगाह करता है–'उनके महल तो फैलाव के बने हैं और तुम्हारे हाथों में दिया गया पत्थर भी/उन्हीं राजनीतिक तहखानों से आया है/हाथ तुम्हारे हैं/पत्थर उनका है/ताकत तुम्हारी है/दिमाग उनका है।' वह उन शतरंज के प्यादों को चेताता है कि तुम्हारी डिग्रीधारी बेकारी में कोई मदद को आगे नहीं आएगा–न आपातकाल का तानाशाह/न दूसरी आजादी का मसीहा।' अंधा जोश हवा हो जाने और विवेक–ज्योति चमकने पर ही अहसास होगा कि काश तुम्हारे हाथों में पत्थर की जगह कलम होती/मगर तब तक बहुत देर हो चुकी होगी।' कविता किस तरह विध्वंस को सृजन की ओर मोड़ती है, यही इस संकलन की कविताओं का संदेश है जो अपनी सपाटबयानी में प्रभावी है। डॉ. रमेश कुंतल मेघ भी इसलिए मानते हैं–'शायद भवानी प्रसाद मिश्र के बाद, हिंदी में इतनी साफ और गहरी कविता को इतने स्वाभाविक ढंग से सोनवलकर ने ही प्रकाशित किया है। कवि ने इतनी सरल भाषा और इतने गंभीर विचारों का सहयोग इस सीमा तक किया है कि उसने अपनी मुहावरे दानी का चमत्कार भी दिखाया है।

इस 'शीशे–पत्थर' के साथ गणितीय काव्य यात्रा एक सरस विचार यात्रा है जिसका सिलसिला शुरू 'समर्पित शब्द ये' के समर्पण से होता है। जिसके शब्दों पर कोई खास लेबिल या रंग नहीं। ये विश्व भाषा है। ये अमित संभावना से भरी, असंतोष और आक्रोश से तमतमायी पीढ़ी के लिये है। उनका आग्रह है–'इन शब्दों को किसी परिभाषा में कैद मत करना/तुम्हारे भीतर भी इन्हीं के संदर्भ पनप रहे हैं।' इस 'कविता–भूमिका' के आगे, अब भूमि–का सा लगने लगा। उनकी तो चाहत है–'बस रोशनी देना ही है/लक्ष्य मेरा।' शब्द शक्ति कितनी मारक है कि 'राजा शब्द से डरता है–चारण–भाटों, 'यस सर'–प्रशंसकों और थैली शाहों की दीवारों से घिरकर भी यह आत्ममय 'किस्सा कुर्सी का' में भी बदस्तूर चल रहा है। हर मसीहा कुर्सी पाने को मचल रहा है। प्रजातंत्र के रथ का सारथी–स्वार्थी नेतृत्व, उसे किस गड्ढे में लिये जा रहा है? चिंता 'सत्ता की झीना–झपटी में/सभी हुए

ऐसे तन्मय/जिसकी ये अमानत है/उसी साधारण जन से ऐसा अपरिचय?' कवि की राजनीतिक परिदृश्य पर पकड़ इतनी स्पष्ट है कि परोक्ष कथन भी प्रत्यक्ष आ लगता है–'अचानक मंच से/अदृश्य हो गई एक कठपुतली' ... क्या करिश्मा है कि दिल्ली से प्रदेश की राजधानियों तक बेतार के तार बंधे हुए हैं। सूत्रधार मर्जी पर/कठपुतलियां नाच रही हैं/उनके रटाए हुए सूत्रों को श्रद्धा से बांच रही हैं।' –एकदलीय शासन के मुख्यमंत्री का जीवंत चित्र। 'वंशानुक्रम' भी सत्ता के 'राजतंत्री प्रजातंत्र' का ऐसा ही उद्घाटन है–'बेटे/कभी आइना देखा है? तेरे चेहरे में मेरा चेहरा समाया हुआ है।' तभी बकौल अनिल कुमार–'एक शब्द में दिनकर अमिधा के कवि हैं।' इसका अर्थ यह न लिया जाय कि उनकी कविता में व्यंजना की कला नहीं है। वे समझने योग्य तरीकों से इंगितों, व्यंग्यों, लक्ष्यार्थों की बानगी दे जाते हैं।'

चाहे तानाशाही आफतकाल का आपातकाल हो या कथित एकतंत्री प्रशासनिक सुकाल, उनकी कविता हमेशा अपनी जागरूक उपस्थिति दर्ज कराती रहती रही है–'देना तो पड़ेगा ही हजारों बेगुनाहों की मौत का हिसाब'–भोपाल गैस त्रासदी–'किसने उठाया ज़हर की तिजारत का फायदा? किसने पर्यावरण–क्रांति का उड़ाया मजाक? कौन है जो साजिश करके भी बना रहता है पाक और साफ?'–ये प्रश्न किसी दल के प्रतिबद्ध नहीं हैं, सामाजिक प्रतिबद्धता के हैं। छद्म क्रांति बोध के वे खिलाफ हैं। काफी हाउस की टेबिल क्रांति के वे विरोधी। हटा (दमोह) के एक कवि सममेलन में उन्होंने पढ़ा था–'जहां जहां अन्याय वहां मैं भुजा उठाता हूं।' अपने व्यंग्यों में वे कवि सम्मेलनों के लोकप्रिय कवि थे। उससे पलायन कर्ताओं की इलीट काव्य गोष्ठियों को भी उन्होंने नहीं बख्सा–'कविता तो विशिष्टों द्वारा विशिष्ट शैली में/विशिष्टों के लिए होती है'–के समर्थक 'चुने हुए सौ–पचास जन हैं–बड़े अफसर/सेक्रेटरीज/संचालक/उपनिदेशक उनके चमचे... वे उनके बिंब को 'थ्रू प्रापर चैनल' अपने में उतार रहे हैं/कुछ ले रहे हैं उबासियां/देख रहे हैं बॉस की तरफ/कि उनकी उपस्थिति नोट कर ली जाय/तो सार्थक हो जाए कविता।.... यही एक मात्र जगह है जहां तुम प्रासंगिक हो सकती हो/अच्छा किया जो तुम वापिस आ गयीं कविता/अफसरशाही के चमचा सज्जित केबिन में।' दिनकर आम आदमी के कवि थे। तभी उनकी ओर से गुहार लगाते थे और छद्म का अनावरण करते थे–'रचनाकार की विशिष्टता का लबादा ओढ़कर/देखना तमाशा क्रांति की असमय मृत्यु का/वक्त से गद्दारी है/के सब आगे आएं और उठा लें मशाज विद्रोह की/जिनमें जरा सी भी खुद्दारी है।' कवि विरासत में मिली कुदाली (कबीर और निराला से) के प्रति दायित्व बोध अनुभव करता है। इतना आस्थावान कवि हार कैसे मान सकता है? 'आम आदमी की फरियाद का कवि, उन्हीं के स्वर में अपना स्वर मिलाता है–'आप सब विशिष्ट जन/यानी मेरे माई–बाप/अब मुझ पर रहम करो/मेरे कंधों पर अपेन केरियर की बंदूकें चलाना कुछ कम करो।' .... 'ये कैसा मजाक है कि आम आदमी की तलाश में निकले हुए रचनाकारों की यात्रा की परिणति/सागरो मीना की किसी रंगीन महफिल में हरेती है।' इसलिये बगैर किस पंथ का नाम लिए उस झूठी सहानुभूति जताते अभिजात्य चेहरे पर से आम आदमी के मुखौटे को हटाते हुए साफ कहते हैं उसकी ओर से–'हमारे नाम की तिजारत/हमें और मंजूर नहीं/तुम पढ़े लिखे हो/खुद पर शरम करो/हम पर कुछ रहम करो।'

कवि 'क्रांति के भाष्यकार' में आगे फिर उन कथित बुद्धिजीवियों को नंगा करता है–'तुम बैठे शब्द के धनी (कृति में कृपण) लिखते रहो क्रांति पर भाष्य/तर्क सनी बोझिल भाषा में/जनता तो चुपचाप उठी और नाच रही है क्रांति करके/तुम वहीं बैठे रहना/काफी हाउस या गोष्ठी में/अकविता के जंगल या प्रतिबद्धता के बॉर में/क्रांति का दर्शन बघारते हुए/खींचना एक दूसरे की टांग/मार्क्स को खखारते हुए।' आज की क्रांति, अपसंस्कृति की तरह अपक्रांति है, यह 'चरण–चरण' कविता बताती है–'क्रांति को कैद करने के/उपलक्ष्य में बधाई देते हुए/राजा के कदमों में/सिजदा कर रहे हैं क्रांतिकारी चमचे।' वे तो कहते हैं–'आम आदमी की तलाश का प्रपंच/मैं क्यों खड़ा करूं/मैं उससे दूर ही कब रहा?' तभी तो उनकी भावना को पहचान कर नेमीचंद जैन कहते हैं–'सहजता की तलाश हैं सोनवलकर की कविताएं जो जन मन के सामान्य तल तक काव्य के लिए संवाद और संप्रेषण की क्वांरी भूमिकाएं बनाती हैं। इनमें न भाषा का बोझ है, न भावों की दुर्गमता।' इसी सहज तलाश में 'आम आदमी की आस्था' मुखर है, राजनीति के घिनौने व्यापार को बेनकाब करने, अपनी हस्ती को कामयाब करने। दिनकर युवा पीढ़ी को आवाज दे रहे हैं। 'कस्बे के बेकार नवजवान का बयान', इसकी बानगी है। उसे हमेशा गलत समझे जाने की शिकायत, उसकी तल्खी है। शिक्षा, समाज और राजनीति की असफल भूमिका है उसके निराश वर्तमान उत्तरदायी। वह क्या चाहता है?–'हमें सिर्फ काम ही नहीं/कल्चर भी दो/रोटी के साथ गीत और स्वर भी दो।' कवि मन, वचन और कर्म के भेद की शाश्वत 'ज्ञान दूर कुछ क्रिया भिन्न है इच्छा क्यों पूरी हो मन की/एक दूसरे से न मिल सकें, यह विडंबना है जीवन की।')–सही मानते हुए, एक भटके हुए साथी को बताने आत्म विश्लेषण करता है–'आज तो कलम की स्वाधीनता ही/दावं पर लगी है। हर दलित और पीड़ित की आंख/तुम्हारे शब्द और आचरण पर लगी हैं।'

इस विडंबना को वे कई रूपों में उजागर करते हैं। आज की साहित्यिक राजनीति को बेनकाब करते हुए वे बेमानी 'स्वतंत्रता पर बहस' में साफगोई से कहते हुए नहीं हिचकते–'साहित्य और संस्कृति के केंद्र में वे मनुष्य को नहीं/खुद को स्थापित करने की/जोड़तोड़ में व्यस्त थे।' आचरण और चरण चुंबन विरोधाभास देखिये–'जिन्हें चीखना चाहिए वे खामोश हैं/और जिन्हें चुप रहकर करना चाहिए सार्थक कर्म/वे लगातार बोले जा रहे हैं/और जिन्हें मांगनी थी/कैफियत इस तमाशे की/वे मुग्ध भाव से सिर हिलाए जा रहे हैं/जिन्हें गुस्से से उबल पड़ना था/वे मजे से राग दरबारी गा रहे हैं/और जिनसे थी इंकलाब की उम्मीद/वे चमचागिरी में पुरस्कार पा रहे हैं।'–कितनी तल्खी है!

क्या कीजे इस विद्रूपता का? यही विसंगति की पीड़ा, व्यंग्य को जन्म देती है। कवि इस संक्रमण काल में उदासीनता को 'तटस्थता की चादर ओढ़े हम सब' में अपराध मानता है–'एक भ्रष्ट नाटक के/साक्षी हैं हम सब (भले दर्शकों में बैठे हों)...हम प्रेक्षागृह से बहिर्गमन नहीं करते और ग्लानि में मंच पर जाकर मुखौटे नहीं नोंचते अभिनेताओं के/बल्कि कुर्सी पर पसरे 'वन्स मोर' की तालियां बजाते हैं/तभी तो ये बदस्तूर चल रहा है/'हमारा साक्षीपन/हमीं को छल रहा है।' रामधारी सिंह दिनकर ने भी तो लिखा था–'जो तटस्थ हैं समय लिखेगा उनका ही इतिहास।' 'अर्थहीनता' में ऐसे तटस्थ हैं बुद्धिजीवी/जैसे कोई मोर्चा नहीं बचा लड़ने को।'

'बस एक नये कर्मकांड' के प्रदर्शन की होड़ लगी है–'पोस्टर कविता के संदर्भ में'–'इंटलेक्चुअल श्रीमान/स्थापित करेंगे कविता के नये प्रतिमान... पहले पोस्टर-कविता की भाषा तो सीख लो बरखुरदार/अकविता के मुहावरे यहां नहीं चलेंगे/क्योंकि जब अमनुष्य नहीं/निखालिस आदमी है... विदेशी कवि की कविता पढ़कर/आज ये इलहाम हुआ आपको/कि देश तुम नहीं जनता है/उसी से इतिहास बनता है–देश का, साहित्य का, संस्कृति का।' स्थिति यह है कि एक मूर्तिभंजना के साथ ही दूसरे बुत के अर्चन-वंदन के जन्म ले रहे 'एक नये कर्मकांड' के साथ वह मानने को विवश है–'समूचा देश एक अंधा कुआ है/जिसमें भांग पड़ी है/पूरी व्यवस्था ही सड़ी है...मगर रोना तो इस बात का है/कि जिन तक पहुंचाना चाहता हूं/विद्रोह का यह अहसास/वे सब खड़े हैं क्लास के बाहर/चिल्लाते हुए–सर, आज तो जनरल तड़ी है।'

नयी पीढ़ी की इससे स्पष्ट छवि और क्या होगी? तभी श्रीकांत जोशी कहते हैं–'दिनकर सोनवलकर का काव्य अपने समय की चेतना का वाहक है। परिस्थितियों और व्यक्तियों को खुली आंखों से देख सकने की विशेष क्षमता ही नहीं, अपने निर्णयों और अनुभवों को विशेष साहस के साथ प्रकट करने का कौशल भी उन्हें प्राप्त है।' जैसे–'अब तोड़नी पड़ेंग मर्यादाएं/और इस खतरनाक षड्यंत्र को/करना पड़ेगा बेनकाब मांगना पड़ेगा तुम्हारी/कथनी और करनी के फर्क का पूरा हिसाब।' चाटुकारिता के पुरस्कार स्वरूप प्रदत्त 'उधार की बैसाखियों पर' तथा व्यंग्य पूर्ण अथांतर में 'क्या नहीं है हिंदुस्तान में' ऐसी रचनाएं हैं। दुष्यंत कुमार ने भी तो कहा था–'भूख है तो सब्र कर, रोटी नहीं तो क्या हुआ, आजकल दिल्ली में हैं जेरे बहस यह मुछआ।' और प्रतिबद्धता? 'अब वह सिर्फ सुविधाभोगी पिंजरे से प्रतिबद्ध है।' कवि की साहित्यिक 'रमी' का 'कलर सीक्वेंस' भी निराला है–'सत्ता का बादशाह, अफसरशाही मेम और चुनाव फंडी गुलाम।' इसी अनुभूतिक सामाजिक बोध के कारण मैं उन्हें जीवंत जीवन मूल्यों का कवि मानता हूं जहां व्यंग्य पीड़ा के साधारणीकरण से फूटकर सहज अभिव्यंजना बनता है। कवि राजनीति के वर्तमान स्वरूप क्या उस शब्द तक के अवमूल्यन से आहत है। अब (राम) राज्य की नीति तो रही नहीं–'दंड जतिन्ह कर, भेद जिमि नर्तक नृत्य समाज/जितहु मकिहि अस कहहि जग, रामचंद्र के राज।' अब तो 'दंड' मात्र पुलिस या दादाओं के हाथ में रह गया है और भेद–वर्ग भेद, जाति भेद और दल भेद में। जीतना भी अब दिल को नहीं, दल को है। ऐसे में 'एक बार फिर' में कवि वही चमचागिरी, रैलियां, थैलियां, सत्ता की दौड़, दांवपेंच, जोड़ तोड़, तस्करी, भ्रष्टाचार, मिलीभगत देखकर सोचने को बाध्य है–'फिर बदलने लगी है सत्ताधारी की भाषा/क्या फिर बदलनी पड़ेगी आजादी की परिभाषा?' डॉ. बालेंदु शेखर तिवारी ठीक ही कहते हैं–'उन्होंने अपने चारों ओर के वातावरण की तमाम विसंगतियों सी कविता का सीधा सरोकार स्थापित किया है। युग सत्य का दर्पण बनने के समानांतर हथियार बनने में समर्थ उनकी ऐसी ही कविताएं 'शीशे और पत्थर का गणित' में भी एकत्र हैं। दिनकर ने एक बार फिर स्थापित किया है कि सही व्यंग्यधर्मिता का रथ, कथ्य और शिल्प की बेलीक दिशाओं की ओर ही प्रस्थित होता है।

दिनकर की सार्थकता भले मशाल की तरह जलकर रास्ता नहीं दिखा सकने में न सही, अगरबत्ती की तरह महक कर परिवेश को सुवासित कर सकने में तो है ही। 1992 में शा. महाविद्यालय जावरा से सेवा निवृत्त प्राध्यापक, जावरा में ही बस गया, तथापि दमोह को भूला नहीं और एक बार किसी बात पर क्षुब्ध होकर उन्होंने 'दमोह संदेश' पत्र में 'मुर्दा शहर के नाम एकपाती अवश्य लिखी, जिसकी तीखी प्रतिक्रिया हुई थी ('प्रतिपल'-7 जुलाई 77)–'क्यों प्रवाह के प्रतिकूल तैरकर/तू हो गया बदनाम' का दमोह-दर्द उन्हें उन दिनों सालता रहा। जावरा में वे लंबी बीमारी के बाद 7 नवंबर 2000 को दिवंगत हुए। तदनंतर उनके बेटे प्रतीक ने उनकी कविताओं का एक संग्रह भी प्रकाशित कराया–'स्मृति के पल' आधुनिक पद्य में व्यंग्य को प्रवेश देने वाले वे प्रारंभिक कवियों में थे। संगीत और गायन में भी उन्हें महारत हासिल थी। बाबा आमटे की मराठी कविताओं का उन्होंने समर्थ अनुवाद किया था।

'आत्मीय संगीत' और –'त्रियामी' (म. प्र. साहित्य अकादमी से पुरस्कृत) काव्य संग्रह भी उनकी देन थे। डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन' ने उनकी पुण्यतिथि–'देव प्रबोधनी एकादशी' को 'महाकवि कालिदास के यक्ष से शाप मोचन की तिथि' के रूप में याद करते हुए कहा था–'साहित्य के महोदधि के ज्वार भाटों के बीच वे आज अकेले ही भावी खतरों की सूचना देने वाले प्रकाश स्तम्भ की भांति अकंपित भाव से खड़े दिखाई पड़ते हैं। ऐसे सहृदय और संवेदनशील सर्जक का जीवन के अंतिम अध्याय में आठ वर्षों तक चेतनाशून्य होकर प्रत्येक सांस का हिसाब चुकाते हुए, महाप्रयाण को हिंदी साहित्य की निदारूपा विडंबना ही कहा जा सकता है।'

नियति की क्रूरता से असमय ही विस्मृति के असाध्य रोग से 'दार्शनिक कवि से मूक दर्शक' बन गये पिता ने पुत्र के प्रति आकांक्षा व्यक्त की थी–'भले ही मेरे बेटे के जीवन में/पल पल पर युद्ध हो/मगर उसकी आत्मा में बुद्ध हो।' उन प्रतीक सोनवलकर ने अपना दायित्व निभाते हुए बहिन श्रीमती प्रतीक्षा पाठक के साथ 'दिनकर समग्र' के प्रकाशन की योजना बना डाली। उनके निधन के बाद स्फुट प्रकाशित रचनाओं

में से 66 कविताएं ही 'स्मृति के पल' नाम से प्रकाशित हुईं। उनके लेखनकाल की लगभग 530 कविताएं जो 26 डायरियों में संकलित हैं, उन्हें क्रमवार पांच भागों में प्रकाशित करने का संकल्प है। उसके प्रथम प्रयास में 'स्मृति के पल' (जो अंतिम भाग में छपना था, संग्रह की समग्रता के विचार से, प्रकाशक नीतेश जय को प्रथम अंक में प्रकाशित करने को बाध्य किया) की लगभग सभी रचनाओं के साथ, अब अप्राप्त 'दीवारों के खिलाफ' की सभी पुन: प्रकाशित रचनाएं हमें मिलीं। इस 'समग्र-1' में कुल 84 रचनाएं हैं।

आधुनिक हिंदी व्यंग्य काव्य के प्रारंभिक कवि, जिनका, श्रीकांत जोशी के शब्दों में–'व्यंग्य काव्य को सांस्कृतिक ऊंचाई देने में योगदान भुलाया नहीं जा सकता', ने जीवन के अंतिम चरण में भी अपनी कविताओं में विद्रूपों और विषमताओं के विरुद्ध तेवर बरकरार रखे। 'जनावतार कृष्ण' कविता, आपातकाल के बाद के चुनाव में 'तानाशाही के विनाश और प्रजातंत्र की स्थापना के रूपक का निर्वाह करती है–'जनावतार/तुम्हारी लीला सचमुच अपरंपार है। कारागार में जन्मे और मतपेटी को चक्र सुदर्शन की तरह प्रयोग कर आतताइयों की/अत्याचारी गर्दन उड़ा दीं. . .इतिहास को सार्थक मोड़ देते हुए। निन्यान्वे अपराध क्षमा किये तुमने/लेकिन सौवें अपराध पर/फूंक ही दिया। क्रांति का पांचजन्य।. . .गहरे अंधेरे तल से/तुम उठा लाये प्रजातंत्र की गेंद और तानाशाही नाग के सिर पर नर्तन करते हुए दिखाई दिये।. . .सरे दरबार चुप थे द्रोणाचार्य से बिके हुए रचनाकार/अपनी नमक हलाली/साबित करते हुए...।' गोया कि दिनकर का तेज अस्ताचलगामी होते हुए भी तमतमाया हुआ था। उनकी तो बस इतनी अभिलाषा थी–'जीवन में अर्थ मिले, न मिले/जीवन को अर्थ मिले।

दिनकर का रचनाशिल्प छंदमुक्त नहीं, मुक्तछंद की लयात्मकता में बंधा हुआ था। उसके पीछे उनकी शास्त्रीय संगीत साधना की। वे दुष्यंत कुमार की गजलों की संगीतमय प्रस्तुति देने वाले प्रथम गायक थे। वे रंगकर्म से भी संबद्ध थे। हिंदीतर (मराठी) हिंदी सेवियों में माधवराव सप्रे, मुक्तिबोध, प्रभाकर माचवे आदि के बाद दिनकर का स्थान सर्वोपरि है। दमोह का दिनकर अंतत: जावरा का ज्योति पुंज बन गया। जन्मभूमि की तरह अपनी कर्मभूमि को भी उन्होंने जितनी आत्मीयता दी, निवाड़ और मालवा ने भी उन्हें उसी शिद्दत से अपनाया। प्रमाण है उनके बाद, उनकी यश:स्मृति में वहां ग्राम बरगढ़, ब्लाक पिपलौदा में एक तालाब का निर्माण एवं ब्लाक जावरा के ग्राम पिपलौदी व लौहारी में स्कूल का नामकरण। शा. भगतसिंह महाविद्यालय जावरा का 'दिनकर सोनवलकर पुस्तकालय' भी उनके व्यक्तित्व और कृतित्व की निशानी है।

**एम.आई.जी.बी.-73**
**विवेकानंद नगर, दमोह (म.प्र.)**

## साहित्य अमृत युवा हिंदी व्यंग्य प्रतियोगिता पुरस्कार

**साहित्य अमृत द्वारा आयोजित 'युवा हिंदी व्यंग्य प्रतियोगिता' के निर्णायक मंडल-गोपाल चतुर्वेदी, शेरजंग गर्ग, प्रेम जनमेजय तथा पत्रिका के संपादक त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी एवं संयुक्त संपादक ब्रजेंद्र त्रिपाठी ने प्राप्त रचनाओं में से निम्नलिखित रचनाओं का पुरस्कार हेतु चयन किया।**

**प्रथम पुरस्कार**
(5100रु.) श्री अजय अनुरागी–
कोट में टंगा आदमी

**द्वितीय पुरस्कार**
(3100 रु.) श्री आशीष दशोत्तर–
'धक्का' ही शाश्वत सत्य

**तृतीय पुरस्कार**
(2110 रु.) ओम द्विवेदी–
वो आए थे

**प्रशंसा पुरस्कार**
(1100 रु. प्रत्येक को)

श्री घनश्याम कुमार देवाश–
कहते हैं मुझको हवा-हवाई

श्री मिथलेश कुमार राय–
काम की तलाश

. . .पृष्ठ-102 का शेष

जी की बेटी-दामाद के समधी थे। बारात में जब मैं अशोक जी के साथ सबसे आगे चलकर अपने स्वागतार्थ वधू पक्ष के यहां पहुंचे तो पाया कि वधू पक्ष से अभ्यर्थना के लिए सबसे आगे माला लिए वधू के नानाश्री श्रीलाल जी हैं। हम दोनों का भरत मिलाप सबसे पहले हुआ और उन शुक्ल जी ने मुझे कहा, 'आज से तो हम समधी भी हैं', जिन्होंने इस घटना के कुछ समय पूर्व मेरी बेटी की शादी का निमंत्रण पाकर पत्र लिखा था, '. . .मैं तो आपको अभी तक 'नयी पीढ़ी' में ही गिनने का आदी था, यह सुखद विस्मय कि विवाहिता कन्याओं के पिताओं के क्लब में (जिसमें तीस वर्ष पहले प्रविष्ट हुआ था) आप भी शामिल होने जा रहे हैं, मेरे लिए अत्यंत आकर्षक है. . .'

अत्यंत आकर्षक है मेरे लिए ऐसे विराट व्यक्तित्व और कृतित्व के धनी श्री श्रीलाल शुक्ल से आत्मीय और प्रेरक सामीप्य पाना।

वे आत्मिक और बौद्धिक दोनों धरातलों पर ऊंचे खड़े हैं। वे कीचड़ में कमल की भांति खिले हैं और खिलना सिखाते हैं। मेरे, प्रेम जनमेजय और भी न जाने कितने उनके निकट के उनकी बाद की पीढ़ी के पास उनके दिए मंत्र हैं तो सदैव दिशा देते हैं। जब जब किसी सनीचर की दुकान पर होने वाले गाली-गलौज नई ऊंचाई छूते हैं और मुझे जैसे रंगनाथ में रंगे मनुष्य को उकसाते हैं और उसे पलायन-संगीत की धुन में बांधते हैं तब-तब 'राग दरबारी' का राग मेरे विराग को श्रीलाल जी के शब्दों में यूं मथता है, 'तुम मंझोली हैसियत के मनुष्य' हो और कीचड़ में फंस गए हों तुम्हारे चारों ओर कीचड़ ही कीचड़ है। कीचड़ की चापलूसी मत करो। इस मुगालते में न रहो कि कीचड़ से कमल पैदा होता है। कीचड़ से कीचड़ ही पनपता है। वही फैलता है, वही उछलता है। कीचड़ से बचो. . .

और मैं और मेरा रंगनाथ प्राय: कीचड़ से बच निकलता है तो केवल श्रद्धेय श्रीलाल शुक्ल के 'राग दरबारी' की वजह से। आमीन।

**15 सी, हिंदू कॉलेज निवास**
**दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-110007**

डॉ. अजय अनुरागी

# राजस्थान का व्यंग्य लेखन

राजस्थान के परिप्रेक्ष्य में हिंदी गद्य व्यंग्य परंपरा बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध से मानी जाती है। हालांकि यह व्यंग्य लेखन विरल रूप में ही दिखायी पड़ता है फिर भी व्यंग्य अपनी उपस्थिति दर्ज करता है। उस समय व्यंग्य की पृथक से सत्ता न होकर गद्य की विधाओं के बीच मिश्रित रूप में लिखा जाता था। निबंधों के बीच में प्रसंगानुकूल आकर व्यंग्य अपना प्रभाव छोड़ा करता था।

आधुनिक काल के महत्वपूर्ण कहानीकार एवं निबंधकार चंद्रधर शर्मा गुलेरी को राजस्थान की हिंदी व्यंग्य परंपरा का प्रस्तोता मान सकते हैं। उनके अनेक निबंधों में काव्य का पल्लवन हुआ है। कछुआ धर्म, 'मोरसि मोहि कुठाऊ', 'उल्लू ध्वनि', 'बेसिर की हिंदी', आदि रचनाओं में व्यंग्य की परिणति हुई है। बेसिर की हिंदी में गुलेरी जी एक जगह लिखते हैं–'मेरा अकबर अभी कबर में ही है, दो चार साल होने पर बर आ सके तो बर है, नहीं मैं कबर में न सही नरक में जाऊंगा।' इस काल तक व्यंग्य, हास्य व्यंग्य के रूप में प्रचलित था।

गुलेरी जी के बाद सूर्यकरण पारीक के निबंधों में व्यंग्य की झलक दिखलायी पड़ती है। यह वह समय था जब व्यंग्य विधा का स्वतंत्र रूप से विकास नहीं हुआ था। अत: राजस्थान के स्तर पर भी व्यंग्य का स्वतंत्र आकार नहीं बन सका, राजस्थान में सन् 1960 के बाद व्यंग्य का वास्तविक उदय माना जा सकता है। इस कड़ी में मदन केवलिया, कन्हैया लाल शर्मा, मनोहर वर्मा, वासुदेव चतुर्वेदी, श्री नंदन चतुर्वेदी, श्री गोपाल आचार्य, यादवेंद्र शर्मा चंद्र, जयसिंह एस. राठौड़, प्रहलाद नारायण रायजादा, राजेंद्र मेहता, महेशचंद्र पुरोहित, रामनिवास शर्मा 'मयंक' आदि का नाम व्यंग्य लेखक के रूप में लिया जा सकता है।

सातवां दशक राजस्थान व्यंग्य लेखन का प्रारंभिक काल था जिसमें तीक्ष्णता कम थी तथा मिठास अधिक थी। आठवां दशक व्यंग्य लेखन की दृष्टि से विकास काल कह सकते हैं। यह उल्लेखनीय इस दृष्टि से भी है कि इस दशक के व्यंग्यकारों ने व्यंग्य लिखकर व्यंग्य विधा को समृद्ध किया तथा राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होकर अपनी पहचान भी बनायी। अशोक, शुक्ल, योगेशचंद्र शर्मा, भगवती लाल व्यास, पुरुषोत्तम आसोपा, यशवंत कोठारी, राजेंद्र मेहता आदि ने व्यंग्य को ठोस धरातल प्रदान किया।

शिविर द्वारा 1971 में प्रकाशित गद्य-संकलन 'सन्निवेश-4' में वासुदेव चतुर्वेदी का व्यंग्य 'हौं हांडी और चमचा जिंदाबाद' अच्छा व्यंग्य है। 1973 में प्रकाशित संकलन अस्तित्व की खोज में ओम अरोड़ा का व्यंग्य 'क्यू में खड़ा आदमी', जगदीश सुदामा का 'भेजा भक्षण' उल्लेखनीय हैं। एक अन्य संकलन 'जीवन यात्रा का कोलाज नंबर एक' में भगवती प्रसाद गौतम का 'कस्बे में शिक्षक दिवस', श्री नंदन चतुर्वेदी का 'प्रेत कवियों का नगर प्रवेश' प्रमुख व्यंग्य हैं। सन् 1979 में अशोक शुक्ल का व्यंग्य संग्रह, 'मेरा पैंतीसवां जन्म दिन' प्रकाशित हुआ। इसमें सामाजिक एवं राजनीतिक प्रसंगों पर व्यंग्य लिखे गये हैं। इस संग्रह के 'मारी न मानो सिपहिया से पूछो', 'धंधा कविता जमाने का' एवं 'कॉलेज सूत्र' चर्चित व्यंग्य है। इसे पहला प्रकाशित व्यंग्य संग्रह माना जा सकता है। राजस्थान के व्यंग्य इतिहास में नवां दशक महत्वपूर्ण रहा। इस दशक में अनेक गद्य लेखक व्यंग्य की ओर मुड़े तथा अपनी क्षमताओं का प्रदर्शन भी किया। इस दशक में अनेक व्यंग्यकारों के व्यंग्य संग्रह भी प्रकाशित हुए। साहित्यिक पृष्ठों पर पत्र-पत्रिकाओं में व्यंग्य भी छपने लगा। यह प्रकाशित व्यंग्य की जरूरत को प्रदर्शित करता है। राजस्थान के अनेक व्यंग्यकार हिंदी की महत्वपूर्ण पत्रिकाओं एवं पत्रों में प्रकाशित होने लगे। जिनमें से मदन केवलिया, अशोक शुक्ल, पूरन सरमा, यशवंत कोठारी, योगेश चंद्र शर्मा, मंजु गुप्ता, अरविंद तिवारी, भगवती लाल व्यास, मालीराम शर्मा, हरमन चौहान, देवेंद्र इंद्रेश आदि व्यंग्य के समर्पित हस्ताक्षर हैं। आगे चलकर इनमें से अधिकांश ने सिर्फ व्यंग्यकार के रूप में ही अपनी पहचान बनायी तथा व्यंग्यकार के रूप में ही स्थापित हुए।

सन् 1984 में राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा डॉ. मदन केवलिया के संपादन में राजस्थान के हास्य व्यंग्यकारों का संकलन प्रकाशित हुआ। जिसमें 33 व्यंग्यकारों के व्यंग्य संकलित हैं। बीसवीं शताब्दी के आखिरी दशक में अर्थात दसवें दशक में व्यंग्यकारों की नयी पीढ़ी नये तेवरों के साथ सामने आयी। इस पीढ़ी ने अपने लेखन की तीव्रता और तीक्ष्णता से राष्ट्रीय स्तर पर अपनी दमदार उपस्थिति दर्ज करायी। यह राजस्थान में हिंदी व्यंग्य की नयी संभावनाओं के मार्गदर्शक हैं जिसे हिंदी व्यंग्य की मुख्यधारा से जोड़ कर देखा जा सकता है। इनमें अजय अनुरागी, अतुल कनक, अतुल चतुर्वेदी, अनुराग वाजपेयी, बुलाकी शर्मा, बलवीर सिंह भटनागर, प्रभाशंकर उपाध्याय, ओंकारनाथ चतुर्वेदी, मनोज वार्ष्णेय, यशवंत व्यास, यश गोयल, राम विलास जांगिड़, लक्ष्मी नारायण नंदवाना, शरद उपाध्याय, पूरन सरमा, अरविंद तिवारी, यशवंत कोठारी, देवेंद्र इंद्रेश, सावित्री परमार, वाणी गुप्ता, उषा भार्गव, संपत सरल, हरदर्शन सहगल, कृष्णकुमार आशु, सुरजीत सिंह, अशोक राही, ईशमधु तलवार, गोविंद शर्मा, मंगत बादल, मनोहर प्रभाकर, देव कोठारी, आदर्श शर्मा आदि नयी एवं पुरानी पीढ़ी के व्यंग्यकार पूरी तन्मयता एवं गंभीरता से व्यंग्य कर्म में रत दिखायी देते हैं।

राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा 1996 में पूरन सरमा के संपादन में व्यंग्य संकलन 'रेत के रंग' प्रकाशित हुआ जिसमें 38 व्यंग्यकारों को सम्मिलित किया गया है। भूमिका में पूरन सरमा ने लिखा है कि राजस्थान के संदर्भ में देखें तो यहां का व्यंग्य साहित्य आज अत्यन्त समृद्ध है परन्तु जब उसकी नब्ज को सूक्ष्मता और गहराई से टटोलते हैं तो पाते हैं कि इस विधा को समर्पित व्यंग्यकार बहुत कम हैं। क्योंकि व्यंग्य को समर्पित व्यंग्यकारों की एक पूरी

बटालियन अनुशासन के साथ देखी जा सकती है। यह हिंदी व्यंग्य के लिए गौरव की बात है। प्रमुख रूप से अजय अनुरागी, अतुल कनक, अतुल चतुर्वेदी, अनुराग वाजपेयी, यशवंत व्यास, रामविलास जांगिड़, शरद उपाध्याय आदि नयी पीढ़ी के ऐसे व्यंग्यकार हैं जिन्होंने व्यंग्य को नये आयाम दिये हैं। पिछले व्यंग्य उपन्यास कामरेड गोडसे को बिड़ला फाउंडेशन का बिहारी पुरस्कार मिलना न केवल राजस्थान के व्यंग्यकारों के लिए गर्व की बात है बल्कि हिंदी व्यंग्य विधा के लिए भी गौरव का विषय है। इस उपन्यास से यशवंत व्यास ने हिंदी व्यंग्य के महत्व को भी रेखांकित कराया है। पत्र-पत्रिकाओं में व्यंग्य स्तम्भ का विचार करें तो राजस्थान पत्रिका में ओम शर्मा ने 'बात करामात' अनेक वर्षों तक लिखा। देव कोठारी ने जय राजस्थान में ठालेराम की डायरी लिखी, महानगर टाइम्स जयपुर से प्रकाशित पत्र में अजय अनुरागी ने साढ़े तीन वर्ष तक 'तरंग' शीर्षक से लेखन किया। राजस्थान पत्रिका में अशोक राही पिछले वर्षों से निरंतर 'बात करामात' लिख रहे हैं।

महिला व्यंग्यकारों का पृथक से विचार करें तो मंजु गुप्ता का 1982 में 'बेनकाब' व्यंग्य संग्रह प्रकाशित हुआ। सुमन मेहरोत्रा के 'सुरखाब के पर' एवं 'दंतकथा' नामक व्यंग्य संग्रह प्रकाशित हैं। सावित्री परमार, वाणी गुप्ता, उषा भार्गव एवं सरला अग्रवाल के व्यंग्य भी यत्र तत्र प्रकाशित है। सरला अग्रवाल का 'टांय-टांय फिस्स' संग्रह पठनीय है। वर्ष 2008 में दुर्गाप्रसाद अग्रवाल एवं यश गोयल के संपादन में राजस्थान के 36 व्यंग्यकारों का प्रतिनिधि हास्य व्यंग्य संकलन प्रकाशित हुआ है। इस संकलन से राजस्थान में लिखे जा रहे व्यंग्य की ऊष्मा को अनुभव किया जा सकता है। राजस्थान के व्यंग्य का संक्षिप्त विश्लेषण करें तो हम पाएंगे कि व्यंग्य विधा को समृद्ध करने में राजस्थान के व्यंग्यकारों को छोड़कर इक्कीसवीं सदी के व्यंग्य साहित्य का मूल्यांकन हो ही नहीं सकता है।

व्यंग्य में नये प्रयोग एवं नयी शैली के साथ रचनाकर्म में संलग्न व्यंग्यकारों में यशवंत व्यास का नाम लिया जा सकता है। 'जो सहमत है सुने' और 'चिंताघर' से लेकर 'कामरेड गोडसे' तक यशवंत व्यास हर बार नये तेवर के साथ प्रस्तुत हुए हैं। उनका व्यंग्य कौशल विलक्षण है। वे हर रचना के साथ नये रूप में दिखायी देते हैं। कभी-कभी उनकी व्यंग्य रचना उलझन और जटिलता से बुनी हुई प्रतीत होती है जो उनकी शैली की विशेषता कही जा सकती है।

सहज एवं सरल व्यंग्य की समरसता को बनाए रखने में पूरन सरमा का नाम उल्लेखनीय है। वे ऐसे सहृदय व्यंग्यकार हैं जो स्वभाव एवं चरित्र से शालीन कहे जा सकते हैं। उनकी शैली इस बात का प्रमाण है। उनका व्यंग्य कर्म शांत बहती धारा के समान है, जो वेग एवं प्रवाह में निरंतर बहती रहती है। जो कगारें नहीं काटती, जो बहाव के वेग में शोर नहीं करती। उसमें ज्वार भाटे सा भंवर नहीं है बल्कि इस धारा में लहरें तो उठती हैं लेकिन नियंत्रित एवं अनुशासित होकर आगे बढ़ती रहती हैं। पूरन सरमा का व्यंग्य लेखन ऊपर से शांत दिखने पर भी भीतर से उथल पुथल युक्त है। व्यंग्य की महाधारा जितनी चौड़ी है उससे कहीं अधिक गहरी है। एक थी बकरी और आत्म हत्या से पहले व्यंग्य संग्रह से लेकर दफ्तर में बसंत तक सोलह व्यंग्य संग्रह पूरन जी के प्रकाशित हो चुके हैं। पूरन सरमा राजस्थान के ऐसे व्यंग्यकार हैं जिन्होंने हिंदी व्यंग्य को समृद्ध किया है।

राजनीतिक भ्रष्टता से उत्पन्न सामाजिक विघटन की प्रक्रिया अरविंद तिवारी के व्यंग्यों में महसूस की जा सकती है। 'दीवार पर लोकतंत्र' से लेकर 'नल से निकला सांप' तक प्रकाशित व्यंग्य संग्रहों में अरविंद तिवारी ने बेहद सजग व्यंग्यकार की हैसियत से व्यंग्य क्षेत्र में अपना स्थान बनाया है। अरविंद तिवारी के दो व्यंग्य उपन्यास 'दीया तले अंधेरा', 'शेष अगले अंक में' प्रकाशित हो चुके हैं। इनमें शिक्षा एवं पत्रकारिता जगत के अनेक पहलुओं को उजागर करते हुए राजस्थान में व्यंग्य उपन्यासों के लेखन की आधार शिला रखी है।

देवेंद्र इंद्रेश ने सामाजिक विद्रूपताओं को व्यंग्य का निशाना बनाया है। 'निंदक नियरे राखिये' से लेकर 'मेरा श्रद्धांजलि समारोह' तक देवेंद्र जी व्यक्तित्व की कमजोरियों पर भी कटाक्ष करने से नहीं चूके हैं। नयी पीढ़ी के व्यंग्यकारों की बात करें तो अजय अनुरागी के पांच व्यंग्य संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। 'आदमी से सावधान', 'चरणम् शरणम् गच्छामि', 'साहित्य में पूंजी निवेश', 'चापलूसी का अनुशासन', 'दबाव की राजनीति' आदि। इस व्यंग्य प्रक्रिया से गुजरते हुए प्रतिबद्धता के साथ साथ जन सरोकारों से संबद्ध व्यंग्यकार की चिंता प्रकट हुई है।

व्यंग्यकार ने स्वार्थ में लिपटे हुए मन की अनेक पर्तों को उघाड़कर बेनकाब किया है। व्यक्ति एवं समाज की सूक्ष्म स्थितियों को व्यंग्य की कसौटी पर कसकर परखा है। इन व्यंग्यों की विशेष बात यह है कि मामूली से मामूली विषयों को भी व्यंग्य की परिधि में समेट लिया है। अजय अनुरागी के ये व्यंग्य आदमी को आदमी से सावधान रहने को प्रेरित करते हैं।

अनुराग वाजपेयी धर्म और राजनीति के ढोंग और पाखंड को तल्खी के साथ उजागर करते हैं। 'रेगिस्तान में बाढ़ उत्सव' से लेकर 'रैली में खोए जूते' तक अनुराग वाजपेयी की सजग दृष्टि राजनीति के भीतर का सच बाहर लाने का प्रयत्न करती है। अतुल चतुर्वेदी गणतंत्र में चेंपा तथा व्यंग्य संग्रह में दृष्टि की व्यापकता को सिद्ध करते हैं। अतुल चतुर्वेदी ने अपने व्यंग्यों में समाज में व्याप्त भ्रष्टता और लोलुपता को अपना निशाना बनाया है। अतुल कनक ने 'चलो चूना लगाएं' संग्रह के माध्यम से स्वार्थवृत्ति पर चोट की है तथा चेहरों के पीछे छिपे चेहरों को समाज के सम्मुख खड़ा किया है। शरद उपाध्याय 'लेखक के घर छापा' संग्रह के व्यंग्यों में नैतिक गुणों के ह्रास पर चिंतित होते हुए कटाक्ष करते हैं। वे अव्यवस्थाओं एवं असंगतियों पर अपनी असहमतियां व्यक्त करते चलते हैं।

अंत में कहा जा सकता है कि राजस्थान का व्यंग्य लेखन अपार संभावनाओं से भरा लेखन है। यह सार्थक एवं सामर्थ्यवान भी है। वर्तमान में व्यंग्य का परिदृश्य राजस्थान के व्यंग्यकारों के बिना अपूर्ण प्रतीत होता है। राजस्थान के व्यंग्यकारों ने व्यंग्य में स्थापित सामंती मान्यताओं को ध्वस्त किया है। उनके वर्चस्व को तोड़कर अग्रिम पंक्ति में अपना नाम लिखाया है। राजस्थान का व्यंग्य लेखन नये प्रतिमान गढ़ने में सफल होगा, ऐसा विश्वास है।

1, न्यू कॉलोनी, झोखाड़ा, जयपुर

कैलाश मंडलेकर

# जवाहर चौधरी का व्यंग्य बोध

(संदर्भ- थानेदार की कविता में चांद)

जवाहर चौधरी हमारे समय के महत्वपूर्ण व्यंग्यकार हैं। समकालीन व्यंग्य परिदृश्य में जिन चंद लोगों ने व्यंग्य को गंभीरता से लिया है तथा भाषा, शिल्प और कथ्य के नजरिये से अपने लेखन को जो निरंतर प्रखर और परिष्कृत करते हुए, नई फिजा का व्यंग्य रच रहे हैं उनमें डॉ. जवाहर चौधरी एक महत्वपूर्ण नाम है। परसाई, शरद जोशी, श्रीलाल शुक्ल और रवींद्रनाथ त्यागी का व्यंग्यबोध मूलतः आजादी के मोहभंग से व्यथित जनमानस की खोज, राजनैतिक विफलता, नौकरशाही तथा भ्रष्टाचार पर केंद्रित रहा। परसाई की पीढ़ी के व्यंग्यकारों ने जनजागरण और लोक शिक्षण के क्षेत्र में गहरा हस्तक्षेप किया। दैनिक अखबारों में व्यंग्य कालम के जरिये परसाई और शरद जोशी हिंदी कहानी के पाठकों को भी व्यंग्य की दिशा में मोड़ने में कामयाब हुए। हिंदी कहानी का परंपरागत पाठक व्यंग्य को चाव से पढ़ने लगा। व्यंग्य में कथारस भी होता है और रोचक तथा डिलाइटफुल गद्य की बहुरंगी छटा भी। व्यंग्य की लोकप्रियता के ये महत्वपूर्ण कारक हैं। यह अलहदा बात है कि इसी लोकप्रियता ने व्यंग्य को क्षति पहुंचाई। इधर अखबारों में जो लातादाद व्यंग्य आ रहा है उसमें न अपेक्षित गंभीरता है और न ही वह रसात्मकता जो व्यंग्य की आत्मा होती है। समकालीन व्यंग्य लेखन के समक्ष यह गंभीर चुनौती है कि वह थोक में लिखे जा रहे, सपाटबयानी से आक्रांत व्यंग्य को खारिज करते हुए नवीन अर्थवत्ता के साथ, उस भंगिमा का व्यंग्य रचे जो जनप्रिय भी हों और हमारे खंडित होते मूल्यों को जवाबदेही के साथ पुनर्स्थापित करने की दिशा में प्रतिबद्ध भी। उल्लेखनीय है कि जवाहर चौधरी इन चुनौतियों को न केवल स्वीकार करते हैं बल्कि अपने व्यंग्य कर्म में एक विट संपन्न गद्य को आविष्कृत करते हुए अनेक नये विषयों और स्थितियों पर व्यंग्य लेखन भी करते हैं।

थानेदार की कविता में चांद उनका नया व्यंग्य संग्रह है। इसके पूर्व उनकी 'सूखे का मंगलगान', 'नाक के बहाने', 'माननीय सभासदों' तथा 'प्रबुद्ध बकरियां' आदि संग्रह आ चुके हैं एवं पर्याप्त लोकप्रियता अर्जित कर चुके हैं। जवाहर के व्यंग्य मूलतः शहरी मध्यम वर्गीय समाज के दैनंदिन में होने वाली असंगतियों तथा शिक्षा, राजनीति, नौकरशाही और बाजारवाद तथा प्रतिस्पर्धा से उपजी कुंठाओं और विवशताओं पर केंद्रित हैं। उनका मानना है कि 'प्रतिस्पर्धा के खौफ ने जीवन की सारी सहजता को समाप्त कर दिया है। कैसी विडंबना है कि आज आधा जीवन जीने की तैयारी में खप रहा है और शेष जीते रहने की जुगाड़ में।' थानेदार की कविता में चांद नामक इस संग्रह की भूमिका में ही एक अन्य स्थान पर वर्तमान जीवन की विसंगतियों से आहत होते हुए वे लिखते हैं 'विसंगतियों को आधुनिक जरूरत मान लेना, मूल्यहीनता पर मुस्कुरा देना, जिन्हें देखा जाना जरूरी है उन्हें अनदेखा कर जाना और क्रूरताओं की उपेक्षा कर उनसे आनन्द का सृजन करना आज आर्ट ऑफ लिविंग है।'

उपरोक्त दो संक्षिप्त उद्धरण जवाहर चौधरी के व्यंग्यकार की उस परेशानी को रेखांकित करते हैं जिसके चलते वे अनेक अंतर्विरोधी स्थितियों के घमासान में व्यंग्य रचते हैं और रचने के दौरान लगातार जूझते हैं। यहां मसला यह है कि व्यंग्यकार किसी अलग ग्रह पर बैठ कर व्यंग्य नहीं लिख रहा है बल्कि वह भी जीवन की उस दौड़ में एक नागरिक की तरह शामिल है और व्यवस्थागत विवशता के कारण धकिया दिया गया है, लिहाजा उससे बचना भी संभव नहीं है। लेखक की गति अथवा दुर्गति यह है कि वह चेतना संपन्न भी है और जागरूक भी तथा उसमें स्थितियों से लड़ने की इच्छा शक्ति भी है। दरअसल जवाहर चौधरी का व्यंग्य लेखन इसी इच्छा शक्ति की परिणति है।

'थानेदार की कविता' में चांद नामक उक्त संग्रह में जवाहर चौधरी के व्यंग्य के विविध रंग हैं। 'साहित्य में मल्लिका' नामक लेख में वे उन पतनशील प्रवृत्तियों की तरफ इशारा करते हैं जहां साहित्य अपने परंपरागत मूल्यों को छोड़कर वस्तुवाद और देहवादी रंगीनियों की तरफ मुखातिब है तथा संस्कृति और कला को दरकिनार करते हुए संपादक, मल्लिकाओं के सौंदर्य को साहित्य की धरोहर बनाना चाहते हैं। कहानी को बाथरूम और बाथरूम को कहानी बनाने के देहवादी नजरिये ने आज हिंदी कहानी की उस परंपरा को आघात पहुंचाया है जो एक स्वस्थ और जीवंत समाज की चिंताओं में लिखी जाती थी। जवाहर इस फैंटसी के जरिये संकेतित करना चाहते हैं कि साहित्य में जब मल्लिकाओं का प्रवेश होगा तो देह का सत्य ही साकार होगा और कथित मल्लिकाएं भविष्य के साहित्य की ध्वजवाहक होंगी।

आचार संहिता वाले निबंध के केंद्र में एक राजनीतिक चरित्र है जहां नेता आचार संहिता का अर्थ समझना चाहता है और इस बात पर एतराज करता है कि आचार संहिता जैसी फालतू चीज से भियाजी को जूझना पड़ रहा है। भारतीय लोकतंत्र का यह शर्मनाक प्रसंग है कि यहां मंत्री होने के तुरंत बाद आदमी आचरण जैसी वस्तु को नगण्य मानते हुए उसे बरका कर आगे बढ़ना चाहता है और लोकतंत्र के रथ को अपनी उसी हेकड़ी से हांकना चाहता है जिसके बलबूते

पर उसने चुनाव की वैतरणी पार की है। इन दिनों राजनीति से आचार संहिता जैसी फालतू चीजें खारिज होती जा रही हैं तथा राजनीतिज्ञ अपने फायदे की आचरण संहिता गढ़ने में जुटे हैं। संग्रह में नौकरशाही और ट्रेड यूनियन की कार्यशैली पर तीखे कशाघात करती व्यंग्य रचना है 'आदर्श परंपरा का शव' इसमें उस मनोवृत्ति की तरफ संकेत है जहां शोक सभा के बहाने दफ्तर में छुट्टी की इच्छा से एकत्रित हुए कर्मचारी एक ऐसी मृत्यु का इंतजार कर रहे हैं जो दुर्भाग्य से हुई नहीं है और शोकसभा टल रही है। लिहाजा यूनियन की आदर्श परंपरा का निर्वाह नहीं हो रहा है। यह विडंबना है कि दफ्तरों की आदर्श परंपराएं फिल्मों के मेटनी शो में रिड्यूज हो रही हैं। यह भी गौरतलब है कि एकता बंधुत्व और जुल्म के खिलाफ संघर्ष का शंखनाद करने वाले कर्मचारी संगठन, अधिकारियों के ताउओं की शोकसभा करने में जुटे हैं। और दुखदायी पहलू यह है कि वे शोक और मृत्यु के प्रति भी ईमानदार नहीं हैं। यह इस दौर का कटु यथार्थ है कि अब दु:ख भी फैशनपरस्ती का शिकार है। जवाहर, इस व्यंग्य में मानवीय संबंधों में आई दरारों का स्पष्ट खुलासा करते हैं।

स्वतंत्रता तथा स्वतंत्रता के उपरांत पनपी राजनीतिक पतनशीलता एवं नौकरशाही की विकृतियों ने आम आदमी के भीतर एक विद्रोह को जन्म दिया है। 'अंग्रेज गये आजादी छोड़ गये' नामक व्यंग्य आम आदमी के इसी आक्रोश पर केंद्रित है। मलतू एक मजदूर है, अनपढ़ एवं साधनहीन है। लेकिन वह सफेदपोश नौकरशाही की कमजोरियों से वाकिफ है तथा अपने अधिकारों के प्रति सजग भी है। इसी सजगता के चलते वह अपने श्रम की पूरी कीमत वसूलता है और उसके आगे नौकरशाही परास्त हो जाती है। जवाहर चौधरी का उक्त व्यंग्य बहुत साफगोई से अफसरशाही की रीढ़हीनता का पर्दाफाश करता है।

'बूढ़ेनाग की अधूरी कविता' साहित्य में व्याप्त विसंगतियों पर केंद्रित है। 'हिंदी के पीएचडीयों से पता चलता है कि चांद को ताकने से कविता पैदा होती है तथा वह समझ गया कि साहित्यकार जो रचते हैं अपनी प्रेमिकाओं के लिए रचते हैं और पारिश्रमिक के छिलके बीबी के सामने पटकते जाते हैं' जैसे चुस्त और व्यंग्य पूर्ण जुमलों के मार्फत जवाहर, समकालीन साहित्य के उस विसंगत यथार्थ को सामने लाना चाहते हैं जहां अकर्मण्यता और ऊब को भरने के लिए कविता का सहारा लिया जाता है। साहित्य में वरिष्ठता यदि बूढ़े नाग की तरह फन फैलाने लगे तो वह साहित्य को क्षति भी पहुंचाती है तथा साहित्य के वातावरण को भी विषाक्त कर देती है। बूढ़े नाग की अधूरी कविता वस्तुत: उस प्रवृत्ति पर केंद्रित व्यंग्य रचना है जहां साहित्य जैसे संवेदनशील विषय को दरकिनार करते हुए व्यक्ति पदों और पुरस्कारों के लालच में पतनशीलता के गर्त में गिरता जाता है, और इन्हीं सांसारिक वस्तुओं में साहित्य का मोक्ष तलाश लेता है।

हमारे दौर के इलेक्ट्रानिक मीडिया की चिंताएं अब सूचनाएं देने तक ही सीमित नहीं रहीं बल्कि सूचना से आक्रांत करने और इस अनुष्ठान के बदौलत धंधा व्यापार करने की तरफ अग्रसर हैं। इलेक्ट्रानिक मीडिया इस विज्ञापन धर्मिता के कारण न केवल अपनी विश्वसनीयता खो रहा है बल्कि हमारे सामाजिक जीवन को भी एक अर्थ में विकृत एवं असंतुलित कर रहा है। जवाहर चौधरी के उपरोक्त संग्रह में संकलित व्यंग्य रचना 'गहराया रहस्य राम के वनवास का' मीडिया के इसी चरित्र को लेकर गढ़ी गई फैंट्सी है। रामचरित मानस के पात्र लक्ष्मण और सूर्पनखा के दिलचस्प संवादों से गतिशील इस संक्षिप्त कहानी में मीडिया के उस कृत्य की तरफ संकेत है जो राई का पहाड़ बनाता है तथा जहां सत्य एकदम हस्तकमलवत खुला हो वहां भी रहस्य के वितंडा को रचकर खरीद-फरोख्त की प्रवृत्तियों को बढ़ावा देता है।

आजादी के दौरान जनमानस में राष्ट्र के प्रति जो प्रेम और आदर हुआ करता था वह धीरे-धीरे क्षीण होता चला गया। इस सबके पीछे नि:संदेह राजनीतिक पतनशीलता एक बड़ा कारण है। वर्तमान दौर में राष्ट्रप्रेम के नाम पर जो ढकोसला हो रहा है वह किसी से छुपा नहीं है। जवाहर चौधरी कहते हैं-'जब कोई सामाजिक तौर पर एक्सपाइरी डेट हो जाता है तो देश प्रेमी होना उसकी नियति बन जाती है। 'देश प्रेमी का दर्द न जाने कोय' में निठल्लेपन और निष्क्रियता से उपजे शून्य को राष्ट्रप्रेम के नाम से भरने की


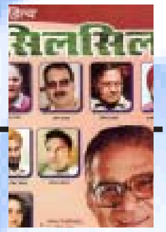

lkfgR; flyflyk

**अप्रैल-जून 2009 अंक**

रमेशकुंतल मेघ, रवींद्र कालिया, अनरेंद्र मोहन, सूरज पालीवाल, तरसेम गुजराल, सुभाष रस्तोगी, आदि की रचनाएं

**संपादक**
अजय शर्मा

**संपर्क**
24 मधुबन कॉलोनी राज नगर
बस्ती बावा खेल, जालंधर।


प्रवृत्ति पर तीखा व्यंग्य है। जबकि 'डिप्लोमा इन क्राइम मैनेजमेंट' में उस सामाजिक सच्चाई का खुलासा है जहां समाज और राजनीति के घालमेल से उपजे चरित्र अंतत: अपराध की दुनिया को आबाद करने की महत्वाकांक्षा को सुनियोजित ढंग से गतिशीलता देना चाहते हैं। इधर नगरीकरण, वस्तुवाद और यांत्रिकता से अपराधों की बारंबारता में जिस तेजी से इजाफा हुआ है वह सब बहुत भयावह है। इस रचना में सामाजिक मूल्यों के गिरते हुए ग्राफ के बहुत शाइस्तगी से उकेरा गया है।

संग्रह में स्कूल माफिया का ब्ल्यू प्रिंट, पोर्टेबल मंदिर, नेकीकर फोटो छपा, आदि रचनाएं भी महत्वपूर्ण हैं जो लेखक के व्यंग्य बोध तथा गहरी रचनात्मक संलग्नता के विरल उदारण हैं। कुल मिलाकर जवाहर चौधरी की इस व्यंग्य कृति का स्वागत किया जाना चाहिए, खासतौर से इस दौर में जबकि अच्छा और पठनीय व्यंग्य लगभग दुर्लभ होते जा रहा है।

**कृति- थानेदार की कविता में चांद**
**नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली**
**मूल्य-१२० रुपए**


**38, नाका जसवाड़ी रोड**
**खंडवा, म.प्र.**

## अध्यात्म का मार्केट

### शिव शर्मा

शिव शर्मा का नाम हिंदी व्यंग्य साहित्य का एक परिचित नाम है। अपनी मौलिक शैली एवं व्यंग्य के प्रति गंभीर तथा रचनात्मक दृष्टिकोण के कारण उनकी रचनाएं दिशायुक्त प्रहार करती हैं। वे गुदगुदाने मात्र के लिए रचनाओं का 'निर्माण' नहीं करते हैं। उनके व्यंग्य पिछले चार दशक से देश की प्रमुख पत्रिकाओं व पत्रों में प्रकाशित और प्रशंसित होते रहे हैं। विषय-चयन और प्रस्तुति के खिलंदड़ अंदाज के कारण शिव शर्मा की अपनी अलग ही पहचान है।

वह जन-जन के बीच से विषय-संधान करते हैं और सरल-सहज से लगने वाली स्थितियों के बीच भी व्यंग्य का ऐसा आविष्कार करते हैं कि पढ़ने वाला न सिर्फ हंसता रह जाता है, बल्कि सोचने पर मजबूर भी होता है।

कहीं व अध्यात्म के मार्केट की पोल खोलते हैं तो कहीं पूछते हैं कि कौन बनेगा करोड़पति समाजवादी? स्वातंत्र्योत्तर भारत में मूल्य परिवर्तन पर तो उनकी नजर है, तो साथ ही वह जानते हैं कि लक्ष्मी बिन सब सून रहता है।

वह भारतीय परंपरा से भी विषय उठाते हैं और वर्तमान से भी, लेकिन बदलते समय के तेवर खूब पकड़ते हैं। उनके व्यंग्य हंसाते भी हैं, गुदगुदाते भी हैं और कचोटते भी हैं।

उनकी भाषा और विषय की खोज अनोखी है। आप पढ़ना शुरू करेंगे तो फिर पढ़ते ही चले जाएंगे।

प्रस्तुत संकलन में उनकी पचास व्यंग्य रचनाएं संकलित हैं जिसमें हमारे विसंगतिपूर्ण समाज की विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त विसंगतियों को एक वैचारिक चिंतन के साथ अभिव्यक्त किया गया है।

**प्रकाशक : भारतीय पुस्तक परिषद्, नई दिल्ली।**
**पृष्ठ : 143**
**मूल्य : 200 रुपए**

## पूर्वांचल का हास्य व्यंग्य

### कृष्णकांत एकलव्य

हिंदी व्यंग्य साहित्य में सार्थक कर्म की अनेक संभावनाएं हैं। अभी भी अनेक ऐसे क्षेत्र हैं जिन पर काम किया जाना शेष है। व्यंग्य के इस अभावग्रस्त क्षेत्र को कृष्णकांत एकलव्य ने बखूबी पहचाना है और इस दिशा में सार्थक काम भी किया है। 'पूर्वांचल का हास्य व्यंग्य' सार्थक दिशा में किया गया ऐसा ही काम है। लेखक ने श्रमपूर्वक सामग्री जुटाई है।

डॉ. विवेकीराय सार्थक साहित्य के मर्मज्ञ हैं और उनके कहे गए शब्दों का मूल्य होता है। इस पुस्तक के बारे में उनका कहना है- 'पूर्वांचल का हास्य व्यंग्य' इस विधा की धरोहर है। पूर्वांचल में कबीर से लेकर 'चतुरी चाचा' तक हास्य-व्यंग्यकारों की एक लंबी फौज रही है, जिन्होंने पूर्वांचल के हास्य-व्यंग्य साहित्य को प्रचुर रूप से समृद्ध किया है, किंतु जहां तक मुझे जानकारी है, इन रचनाकारों के जीवनवृत्त और रचना संसार पर संकलित, कोई अधिकृत संकलन अभी तक प्रकाश में नहीं आया है। यह ग्रंथ प्रकाश में आ जाने के बाद पूर्वांचल व्यंग्य साहित्य पर अपेक्षित शोध-कार्य को एक नई दिशा मिलेगी।' कुछ ऐसा ही विश्वास डॉ. गोपाल चतुर्वेदी ने इस पुस्तक के बारे में व्यक्त किया है।

इस पुस्तक के तीन खंड हैं- जीवन वृत्त, रचना-प्रक्रिया एवं समीक्षा। जीवन वृत्त में 70 रचनाकारों के अकाराआदि क्रम से जीवन वृत्त हैं तथा रचना खंड में इन्हीं लेखकों की रचनाए हैं। समीक्षा खंड में बालेंदु शेखर तिवारी, धर्मशील चतुर्वेदी, संपदा पांडेय आदि के इस विषय पर आलोचनात्मक आलेख हैं। निश्चित ही यह एक उपयोगी शोध ग्रंथ है जो व्यंग्य के भिन्न पक्ष को सामने लाता है।

**प्रकाशक : मित्तल बुक ऐजेंसी, नई दिल्ली**
**पृष्ठ : 304**
**मूल्य : 400 रुपए**

## छत्तीस का आंकड़ा

### रेखा व्यास

रेखा व्यास बहुमुखी साहित्यिक प्रतिभा की धनी हैं। गीत, गजल, शोध आदि के अतिरिक्त मीडिया में उनके काम की प्रशंसा होती है। हिंदी व्यंग्य साहित्य में सार्थक व्यंग्य लिखने वाली महिला लेखिकाओं का अभाव है। रेखा व्यास की रचनाएं उस अभाव को भी तोड़ती हैं। वे व्यंग्य लेखन की फेशुनेबल अंधी दौड़ में फंसकर रचनाओं का उत्पादन करने में विश्वास नहीं करती हैं अपितु व्यंग्य लेखन को एक सार्थक कर्म मान उसकी रचनात्मक अभिव्यक्ति में विश्वास करती हैं। यही कारण है कि समसामयिक विसंगतियों पर प्रहार करते समय भी उनकी रचनाएं सामयिकता की क्षणभंगुर अभिव्यक्ति से बची हुई हैं।

सामान्यत: व्यंग्य को आधुनिक काल की देन माना जाता है परंतु रेखा व्यास मानती हैं कि भारतीय वाङ्मय में इसकी विस्तुत और पुरातन परंपरा है। इस संकलन के बारे में लेखिका का विचार है कि आज सर्वत्र छत्तीस का आंकड़ा हावी है। तन का मन से, मन का धन से, भीतर का बाहर से, प्रशासन का जनता से, पेसे का परोपकार से. . . कुल मिलाकर सर्वव्यापी छत्तीस के आंकड़े को नमन ही किया जा सकता है।

इस संकलन में उनकी अड़तीस व्यंग्य रचनाएं संकलित हैं जिनमे घरेलू व्यग्य से लेकर राजनीति तथा कूटनीति तक अपनी पहुंच और पकड़ बनाये हुए हैं। अतीत- व्यतीत भी इसमें बेहद प्रासंगिक एवं सामयिक हैं। ये सामयिक प्रसंग कही इस अर्थ में भी प्रभावित करते हैं कि लेखक ने हमारे मन की बात को हमारी ही तरह से कहा है।

**प्रकाशक : ज्ञान भारती, नई दिल्ली**
**पृष्ठ : 104**
**मूल्य : 150 रुपए**

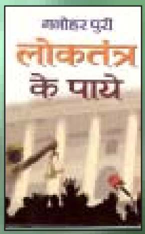


## लोकतंत्र के पाये
### मनोहर पुरी

मनोहर पुरी मूलतः पत्रकार हैं पर जब वे रचनात्मक साहित्य की रचना करते हैं तो उनका भिन्न रूप ही सामने आता है। हिंदी अंग्रेजी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में पत्रकारिता, संचार पर्यटन तथा पर्वतारोहण इत्यादि विषयों पर पुस्तकं प्रकाशित हो चुकी हैं। वर्षों से आकाशवाणी, अनेक प्रतिष्ठित भारतीय व विदेशी संचार माध्यमों एवं पत्रों के लिए लेख, कविताएं, कहानियां, व्यंग्य और संसद समीक्षा लिख रहे हैं।

'लोकतंत्र के पाये' इनका सद्य प्रकाशित व्यंग्य संकलन है। इससे पूर्व व्यंग्य के क्षेत्र में इनके तीन संकलन तथा दो व्यंग्य उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। व्यंग्य के बारे में मनोहर पुरी का कथन है- व्यंग्य केवल किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए ही लिखा जाता है। उस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए जब शब्द रूपी रसायन में तेजाब सरीखे ध्येय का सम्मिश्रण किया जाता है तो वह एक ऐसे हथियार का रूप ले लेता है जो सामाजिक विद्रूपता पर करारा प्रहार करता है।. . .हास्य-व्यग्य मनोरंजन की हलकी-फुलकी मनः स्थिति में भी जन्म ले सकता है। जरूरी नहीं कि किसी कुरीति पर चोट करना ही इसका उद्देश्य हो।'

इस संकलन में सामयिक राजनीति एवं सामाजिक विसंगतियों पर सार्थक व्यंग्यात्मक टिप्पणियां करने वाले पैंतीस व्यंग्य हैं। मनोहर पुरी अपने विषयों पर पत्रकार की सजग दृष्टि रखते हैं। और यह इसी दृष्टि का परिणाम है कि इस संकलन में विषयों की विविधता विद्यमान है। आशा है कि व्यंग्य को शिव तत्व मानने वाले मनोहर पुरी का यह संकलन मनोवांछित तत्व प्रदान करेगा।

**प्रकाशक : प्रतिभा प्रतिष्ठान, नई दिल्ली**
**पृष्ठ : 176**
**मूल्य : 200 रुपए**

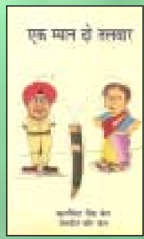


## एक म्यान दो तलवारें
### कुलविंदर सिंह कंग
### जसप्रीत कौर कंग

हम लोगों ने एक म्यान दो तलवारों को मुहावरे में ही पढ़ा है, बहुत ही कम होंगे जिन्होंने इसके दर्शन किए हों। पर अब इस दुर्लभ संयोग के दर्शन हो सकते हैं। एक म्यान दो तलवारें मात्र नए संकलन का नाम ही नहीं है अपितु पति-पत्नी के रूप में इस संकलन रूपी म्यान में दो तलवारें विराजमान हैं। हिंदी व्यंग्य साहित्य में वैसे तो अनेक अभाव हैं। एक अभाव है पति-पत्नी के रूप में व्यंग्य लेखकों की जोड़ी का। कथा साहित्य और कविता में ऐसी जोड़ियां पर्याप्त मात्रा में हैं परंतु व्यंग्य क्षेत्र में केवल एक ही जोड़ी है- कुलविंदर सिंह कंग और जसप्रीत कौर कंग की। ये ऐसी जोड़ी है जो अलग-अलग लिखने की अपेक्षा एक ही संकलन में एक साथ ही विद्यमान है। वैसे रचना एक हो और नाम दो हों तो. . .ये रचना किसकी है का द्वैत ही समाप्त हो जाए।

इस संकलन में कुलविंदर की छब्बीस रचनाएं हैं तथा जसप्रीत की दस रचनाएं हैं। इस संकलन ने शोधार्थियों के लिए एक ऐसी भूमि भी दे दी है जिस पर विराजमान होकर वे आराम से तुलनात्मक अध्ययन कर सकते हैं। इस संकलन में चाहे कंग दम्पति की रचनाएं अलग-अलग है पर हास्य-व्यंग्य पर उनकी टिप्पणी संयुक्त ही है। हास्य-व्यंग्य के बारे में उनका कहना है कि सीधी-सीधी बात आज के जमाने में न कोई मानता है और न ही सुनने को तैयार है, लेकिन कटाक्ष की चाशनी में भिगोकर गोली खिलाने से सामने वाले को ज्यादा कष्ट नहीं होता है। गुदगुदाने के साथ यह सुधार के लिए प्रेरित करता है।' अपने लक्ष्य के प्रति इस कोमल व्यवहार के लिए शुभकामनाएं।

**प्रकाशक : वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।**
**पृष्ठ : 100**
**मूल्य : 125 रुपए**

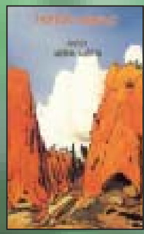

## निर्वाचित लघुकथाएं
### संपादनः अशोक भाटिया

लघुकथा का आंदोलन बरसों से अपने स्वतंत्र साहित्यिक व्यक्तित्व को स्थापित करने के लिए संघर्षशील है और अपने इस संघर्ष में वह काफी हद तक सफल भी हुआ है। इस संघर्ष में जो साहित्यकार अपने पूर्ण समर्पण के साथ जुटे हुए हैं उनमें अशोक भाटिया का नाम भी रेखांकित किया जाता है। अशोक भाटिया के पास स्वस्थ एवं प्रगतिशील सोच की दृष्टि है जिसक फलस्वरूप वे चीजों को उनकी गुणवत्ता के आधार पर देखते हैं। प्रस्तुत संकलन का संपारदन उन्होंने इसी वैचारिक दृष्टि के साथ किया है।

भारतेंदु से लेकर वर्तमान युग में सभी महत्वपूर्ण लघुकथाकार अपनी चुनी हुई लघुकथाओं के साथ सम्मिलित किए गए हैं। लघुकथाओं को अनुक्रम में- नींव के नायक, झूठी औरत, कोई अकेला नहीं एवं खुलता बंद घर उपशीर्षकों के अंतर्गत विभाजित किया गया है। इस संकलन के माध्यम से लघुकथा के इतिहास की भी झलक मिलती है और विश्वास होता है कि संपादक ने यूं ही संकलन नहीं निकाला है अपितु श्रमपूर्वक इसका संपादन किया है। भूमिका में अशोक भाटिया लिखते हैं- इस पुस्तक की लघुकथाएं आम पाठकों को ध्यान में रखकर चुनी गई हैं। हमारी कोशिश है कि यह आपको समाज की मुकम्मल तस्वीर दे सके, साथ ही खुले मन से सोचने और महसूस करने को भी प्रेरित कर सके। ये लघुकथाएं जरूरी बात कहें और खूबसूरती से कहें। इनमें लफ्फ़ाजी न हो, सीधे-सीधे ज़िंदगी की धड़कने सुनाई दें। इन लघुकथाओं को आप बार-बार पढ़ना चाहें, दूसरों को पढ़ाना- सुनाना चाहें।'

**प्रकाशक : साहित्य उफ म, नई दिल्ली।**
**पृष्ठ : 256**
**मूल्य : 45 रुपए**

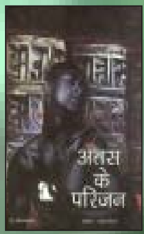


## अंतस के परिजन
### डॉ. भवान महाजन
### अनुवाद : अशोक बिंदल

अधिकांश अनुवाद साहित्यिक कृतियों में कथा सहित्य या कविता के ही होते हैं। परंतु मुंबई की साहित्यिक एवं सांस्कृतिक गतिविधिओं से अंतस तक जुड़े अशोक बिंदल ने एक अलग तरह का अनुवाद हिंदी पाठकों के लिए किया है।

डॉ. भवान महाजन डॉक्टरी पेशे से जुड़े मराठी भाषा के रचनाशील व्यक्तित्व का नाम है। उनका मानना है- डॉक्टरी व्यवसाय वैसे एक गरिमामय, विशेष और अनोखा संसार है, मानो एक बड़ी संगीत सभा हो।. . .यहां कि सभा का संगीत यदि जम जाए तो पैदा होने वाली तरंगें हर एक को आनंद देंगीं। किंतु हमेशा ये सभा जमती नहीं तब बेसुरा सुर का निर्माण होता है जो सबको अस्वस्थ कर देता है।' उन्होंने अपने अनुभवों के आधार पर 'मैत्र जीवचे' नामक कृति का सृजन किया और इस कृति का भावनाप्रधान तथा रचनात्मक अनुवाद अशोक बिंदल ने प्रस्तुत किया है।

इस पुस्तक के बारे में गुलजार की टिप्पणी है- ज़िंदगी यूं भी मिल जाती है। कभी दवा की गोलियों की तरह। कभी खोराक की मीज़ान लगी शीशी की तरह, कभी इंजैक्शन की सूरत, कैपसूल में बंद, या सीरिंज भरी हुई- और मुझ तक पहुंचाई एक ऐसे लेखक ने जो कम्पाउंडर की तरह डॉक्टर और मरीज़ के बीच जुड़ा हुआ है। कवि है, राइटर है, फंकार है- और एक बहुत हस्सास इंसान है जो दर्द को खुशबू की तरह सूंघ लेता है। ये अनुभव, तर्जुबे, डॉ. भवान महाजन के हैं, जिन्हें वे मराठी में लिख चुके थे। किताब में पड़ी सारी पुड़ियां अशोक बिंदल के हाथ लग गईं और उन्होंने हिंदी में अनुवाद कर के, तरजुमा कर के मेरे सामने रख दी।'

**प्रकाशक : दिव्य प्रकाशन, मुम्बई**
**पृष्ठ : 128**
**मूल्य : 195 रुपए**

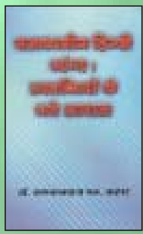

## समकालीन हिंदी व्यंग्य : उपलब्धियों के नये आयाम
### डॉ. भगवानदास कहार

हिन्दी साहित्य के रचना संसार में व्यंग्य एक सशक्त विद्या के रूप में प्रतिष्ठित हो चुका है। उसे आज तक इतने सशक्त हस्ताक्षर प्राप्त हो चुके हैं जिनके कारण आज इसके स्वतंत्र चिंतन, आलोचन तथा शोधपूर्ण परीक्षण की अपेक्षा की जा रही है। व्यंग्य का महत्व दूसरे ढंग से संस्कृत और मध्यकालीन हिंदी कविता में रहा है। वक्रोक्ति की श्रेष्ठ काव्य के रूप में गणना की गई है। एक अत्यंत सशक्त शब्दावली में प्रस्तुत काव्योक्ति उतनी प्रभावशाली नहीं बन पाती जितनी व्यंग्य का सहारा लेकर गहरी चोट की जा सकती है। वाणी का तीखापन, पैनी जीवन-दृष्टि, गागर में सागर भर देने वाली सामाजिकतापूर्ण किंतु सरस शैली आदि विशेषताएं साहित्यिक व्यंग्य को मनोज्ञ बना देती हैं।

इन निबंधों के लेखक डॉ. भगवानदास कहार ने हिंदी और गुजराती भाषाओं की कहानियों में हास्य और व्यंग्य पर एक वृहद शोधकार्य करके डी.लिट् की सर्वोच्च शोध-उपाधि प्राप्त की। इस क्षेत्र के वे एक अधिकारी विद्वान कहे जा सकते हैं। 'समकालीन हिंदी व्यंग्य : उपलब्धियों के नये आयाम' शीर्षक पुस्तक में संकलित निबंध किसी उपाधिपरक उद्देश्य से नहीं लिखे गये हैं। वस्तुतः यह लेखक के निरंतर चिंतन, विचारों का आंदोलन, अभिनव शोध-चेतना के क्षेत्र में भ्रमण करती इनकी बुद्धि, साहित्यिक दृष्टि तथा लेखक के सात्विक संकल्पपूर्ण सारस्वत साधना के सुपरिणाम हैं ये लेख। हिंदी व्यंग्य आलोचना के दरिद्र क्षेत्र में इस पुस्तक का स्वागत है।

**प्रकाशक : दर्पण प्रकाशन, नडियाद**
**पृष्ठ : 128**
**मूल्य : 150 रुपए**

## फंडा मैनेजमेंट का
### प्रेमपाल शर्मा

मूलतः कथाकार के रूप में चर्चित प्रेमपाल शर्मा के पाठकों को उनके पसंदीदा लेखक का एक अलग व्यक्तित्व दिखाई देगा। उनके तीन कहानी संग्रह चर्चित हो चुके हैं। वे व्यंग्य को अपने लेखकीय मिजाज का ही आधार-तत्व मानते हैं। इस संकलन में उनके तैंतीस व्यंग्य संकलित हैं।

प्रसिद्ध कथाकार संजीव का प्रेमपाल शर्मा के बारे में कथन है- हिंदी में हरिशंकर परसाई, शरद जोशी और श्रीलाल शुक्ल ने पिछली सदी में ही व्यंग्य को एक मजबूत आधार पर प्रतिष्ठित कर दिया था। परसाई जी की वैचारिक प्रतिबद्धता, शरद जोशी की विदग्ध व्यंजना और श्रीलाल शुक्ल की कथारस में डूबी वक्रोक्ति की मारक क्षमताएं जिस बिंदु बनता है; परवर्ती काल में प्रेमपाल शर्मा जैसा युवा व्यंग्यकारों का। उनके अनुभव का क्षेत्र मुख्यतः सरकारी दफ्तर के कदाचार, मध्यवर्गीय जीवन के पाखंड और साहित्यिक-सांस्कृतिक छद्म हैं।

प्रेमपाल की गहरी सामाजिक संपृक्ति ने व्यंग्य को सामाजिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक चेतना का माध्यम बनाने की पहल की है। एक सच्चा व्यंग्यकार महज हास्य तक ही खुद को सीमित नहीं रखता। आगे बढ़कर वह अंतर्विरोधों और ढकोसलों पर धारदार प्रहार करता है।

प्रेमपाल शर्मा के व्यंग्य चुभते भी हैं, गुदगुदाते भी हैं, आईना भी दिखाते हैं, आईने में आए बाल को भी. . . 'उत्तर भारत का आदमी' जैसे वेधक व्यंग्य में व्यंग्यकार की क्षमता देखते ही बनती है। इस प्रक्रिया में व्यंग्यकार न खुद को बख्शाता है, न खुदी को. . .प्रेमपाल शर्मा का व्यंग्य अक्सर निथरा, सुथरा और सहज आकर्षण से भरा होता है। प्रेमपाल का यही वैशिष्टिय उन्हें एक अलग पहचान देगा। यह संग्रह हमें अपनी ऐसी ही कुछ बानगियों से आश्वस्त करता है।

**प्रकाशक : सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली।**
**पृष्ठ : 144**
**मूल्य : 200 रुपए**

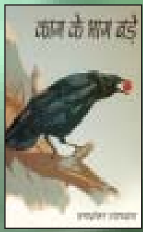


## काग के भाग बड़े
## प्रभाशंकर उपाध्याय

प्रभाशंकर उपाध्याय चर्चित व्यंग्य लेखक हैं। अब तक इनकी पांच सौ से अधिक रचनाएं विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। कादम्बिनी व्यंग्य प्रतियोगिता में पुरस्कृत हो चुके हैं। 'काग के भाग बड़े' इनकी अड़तीस व्यंग्य रचनाओं का संकलन है जिसमे सामयिक विसंगतियों पर प्रहार किए गए हैं।

प्रभाशंकर का मानना है- व्यंग्य को भले ही लेटिन के 'सेटुरा' से व्युत्पन्न बताया गया हो, किंतु भारत के प्राचीन साहित्य में व्यंग्य की बूझ रही है। ऋग्वेद में मंत्रवाची मुनियों को टर्राने वाले मेढकों की उपमा दी गई है। भविष्येत्तर पुराण तथा भर्तृहरिशतकत्रयं में खट्टी-मीठी गालियों के माध्यम से हास्य-व्यंग्य प्रसंग उत्पन्न किए हैं- 'गालिदानं हास्यं ललनानर्तनं स्फुटम्', 'ददतु ददतु गालिर्गालिगन्तो भवन्तो'। बाल्मीकी रामायण में मंथरा की षड्यंत्र बुद्धि की कायल होकर, कैकेयी उसकी अप्रस्तुत प्रशंसा करती है, 'तेरे कूबड़ पर उत्तम चंदन का लेप लगाकर उसे छिपा दूंगी, तब तू मेरे द्वारा प्रदत्त, सुंदर वस्त्र धारण कर देवांगना की भांति विचरण करना।' रामचरितमानस में भी 'तौ कौतुकिय आलस नाही।' (कौतुक प्रसंग) तथा राम कलेवा में हास्य-व्यंग्य वार्ताएं हैं। संस्कृत कवियों कालिदास, शूद्रक, भवभूति ने विदूषक के ज़रिए व्यंग्य-विनोद का कुशल संयोजन किया है, 'दामाद दसवां ग्रह है, जो सदा वक्र व क्रूर रहता है। जो सदा पूजा जाता है और सदा कन्या राशि पर स्थित है।'

लोक-जीवन में तमाशेबाज़ी, बातपोशी, रसकथाओं, गालीबाज़ों, भांडों और बहुरुपियों ने हास्य-व्यंग्य वृत्तांत वर्णित किए हैं। अतः दीगर यह कि विश्व में हास्य-व्यंग्य के पुरोधा हम ही हैं।'

**प्रकाशक : अमरसत्य प्रकाशन,नई दिल्ली।**
**पृष्ठ : 112**
**मूल्य : 145 रुपए**

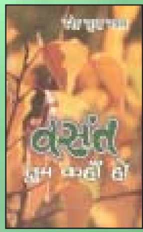


## वसंत तुम कहां हो
## स्नेह सुधा नवल

स्नेह सुधा नवल ऐसी कवियित्रियों में से हैं जो तुलसी की तरह स्वांतः सुखाय कविताएं रचने में ही अपना सुख मानती हैं। यही कारण है कि देर आए दुरुस्त आए कि शैली में उनका पहला काव्य संकलन प्रकाशित हुआ है। इन कविताओं का स्पैन बहुत लम्बा है। इनमें एक सहज संवेदना है। सुधा जी का कहना है- कविता मेरे लिए लिखने की नहीं पढ़ने और याद रखने के लिए थी। जो कविता अच्छी लगती, मैं बार-बार पढ़ती और मुझे याद हो जाती। मुझे पता ही नहीं चला कि कब कविता मेरी लेखनी से फूटने लगी।'

इस संग्रह की कविताएं को पढ़ते ने के बाद प्रख्यात साहित्यकार नरेंद्र मोहन का कहना है- मुझे लगा कि यह कवयित्री आज भी संस्कारों-स्मृतियों के द्वंद्व को संवेदना के एकाधिक धरातलों पर झेल रही है। ललक के बिना प्यार विहीन होते जाने का अनुभव वह जानती है। स्थितियों की एकरसता के बावजूद 'नया साहस' और कभी न थकने वाली एक नई 'मैं' का उसमें वास है। संस्कार और स्मृति के सह-संबंध व्यक्ति से, समाज से, राष्ट्र के संदर्भों तक फैले रहते हैं। स्मृतियों के बोझ-से विस्मृतियों की चादर के फट जाने का बोझ हृदयविदारक है।

मेरे विचार में इन कविताओं में बिना किसी पूर्वाग्रह के अंतर्प्रवेश करना चाहिए। संस्कार-सम्पन्न, संघर्षशील नारी के पक्ष से लिखी गयी ये कविताएं कई बार बूंद और सागर, नदी और सागर के परम्परागत प्रतीकों के भीतर से स्त्री-पुरुष के संबंधों का कथन करती हैं, कभी वह नए ज़माने में नारी अस्मिता के नए रूपों की टोह लेती हैं, तो कभी बुद्धि और भावना के द्वंद्व में फंसी नारी को उस 'खूश्बू' की तरह ले जाती हैं जिसे पुरुष ने अपने संग कभी नहीं बांटा।'

**प्रकाशक : अमृत प्रकाशन, शाहदरा**
**पृष्ठ : 80**
**मूल्य : 100 रुपए**

## सुबह तो होगी
## विभा देवसरे

विभा देवसरे पिछले पचास वर्ष से सभी प्रमुख पत्र पत्रिकाओं और इलैक्ट्रौनिक मीडिया के लिए चिंतनशील लेखन कर रही हैं। वे न केवल लेखन में सक्रिय हैं अपितु संगठनात्मक स्तर भी 'लेखिका संघ' की बीस वर्षों तक सक्रिय महासचिव रही हैं। महिलाओं से जुड़े मुद्दों पर वे नारेबाज के रूप में नहीं अपितु सक्रिय चिंतक के रूप में अपना योगदान दे रही हैं। 'सुबह तो होगी' स्त्री विमर्श से जुड़े हुए अहम् सवालों पर उनके वैचारिक योगदान का संकलित रूप है जिसमें उन्होंने बेबाकी से इस विषय पर अपने विचार अभिव्यक्त किए हैं।

विभा देवसरे का कहना है- समस्त विश्व का समाज जिस संक्रमण-काल से गुज़र रहा है, वहां स्त्री मानवता का आधा हिस्सा है और आज स्त्री की उपस्थिति को सकारात्मक रूप में लेना ही होगा। उसकी भूमिका के सवाल को डंके की चोट पर उठाना ही होगा, क्योंकि अब वह परंपरागत औरत नहीं है। यह निश्चय ही दुखद है, कि स्त्री में स्वयं कोई क्रांति चेतना नहीं है। इसे यूं भी कहा जा सकता है कि उसे यह जानने का अवसर ही नहीं मिला। पर यह भी सत्य है कि अपनी इस दयनीय दशा के लिए वह स्वयं जिम्मेदार है।' विभा देवसरे की सकारात्मक सोच का परिणाम है कि एक गहरा चिंतन सामने आता है।

विभा देवसरे ने नारी विमर्श से जुड़े अनेक मुद्दों- उद्यमशील महिलाओं, सशक्तिकरण, शिक्षा, पुरुषों के साथ भगीदारी, घरेलू हिंसा, राजनीति में भागीदारी, काम के अधिकार आदि विषयों पर अपने तर्कयुक्त एवं विश्लेषणात्मक विचार प्रस्तुत किए हैं। उनकी तार्किक शैली विषय को अत्यंत ही स्पष्ट रूप में अभिव्यक्त करती है।

**प्रकाशक : शै**
**पृष्ठ : 122**
**मूल्य : 150 रुपए**

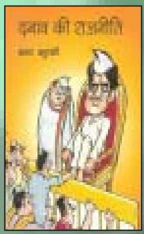

## दबाव की राजनीति
### अजय अनुरागी

'दबाव की राजनीति' अजय अनुरागी का पांचवां व्यंग्य संग्रह है, जिसमें उनकी व्यंग्य यात्रा ने विभिन्न पड़ावों से गुजरते हुए एक सार्थक मुकाम तय किया है।

इस संग्रह में अनैतिक दबावों के द्वारा नैतिक सिद्धांतों पर हावी होती राजनीति की सूक्ष्म स्थितियों-परिस्थितियों से छनकर व्यंग्य निकला है, इसलिए इसमें समाज एवं राजनीति के अंत:संबंधों तथा अंत:विरोधों को समझने की व्यंग्य-दृष्टि उजागर हुई है।

आज राजनीति समाज के हर क्षेत्र में अपना प्रभाव जमा रही है तथा हस्तक्षेप कर रही है। इससे अनेक विकृतियों का जन्म हो रहा है। यह संग्रह व्यक्ति और राजनीति के रिश्तों की बखिया बखूबी उधेड़ता है। यह कौन-सी राजनीति है जो अपने चतुर्दिक दबावों के द्वारा अपना वर्चस्व स्थापित करते हुए दूसरों की सार्थकता को निरर्थकता में तथा अपनी निरर्थकता को सार्थकता में बदल देती है? यह इस संग्रह से जाना जा सकता है।

ये व्यंग्य कलेवर में छोटे जरूर हैं किंतु पठनीयता में बड़े सिद्ध होते हैं। सटीक सम्प्रेषण शैली के कारण इन व्यंग्यों में उलझाव नहीं है अपितु इन्हें पढ़ना अपने दैनिक जीवन चक्र से गुजरना है। कथ्य एवं शिल्प के स्तर पर अमिट छाप छोड़ने वाली सामर्थ्य इस संग्रह के सभी व्यंग्यों में है।

**प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुर**
**मूल्य : 200/-**

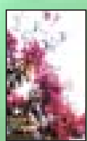

## हिंदी चेतना
**हिंदी प्रचारिणी सभा**

कैनेडा की त्रैमासिक पत्रिका
अप्रैल-2009 अंक
महाकवि आदेश, राकेश खंडेलवाल, प्रेम जनमेजय, महावीर वर्मा, रूपसिंह चंदेल, दिव्या माथुर, अभिनव शुक्ल की रचनाएं।

**प्रमुख संपादक- श्याम त्रिपाठी**
**सह संपादक- निर्मला आदेश, सुधा ओम ढींगरा**
**संपर्क**
6 Larksmere Court Markham Ontario L3R3RI
e-mail:hindichetna@yahoo.ca
website: www.vibhom.com

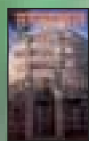

## गगनांचल
**अप्रैल-जून 2009 अंक**

कुंवर नारायण, श्यामसिंह शशि, संध्या गुप्ता, प्रेम जनमेजय, तेजेंद्र शर्मा, जकिया जुबैरी, अवध नारायण मुद्गल आदि की रचनाएं।
**संपादक : अजय कुमार गुप्ता**

**संपर्क-**
भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्
आजाद भवन
इंद्रप्रस्थ एस्टेट, दिल्ली

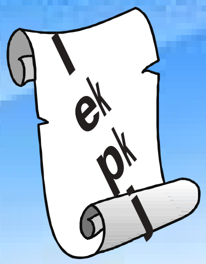

## प्रेम जनमेजय को व्यंग्यश्री-2009 सम्मान

'आधुनिक जीवन विसंगतियों से भरा हुआ है और बाजारवाद ने तो हमारे जीवन की स्वाभाविकता को नष्ट कर दिया है। व्यंग्यकार अपने समय का समीक्षक होता है इस कारण समाज में उसकी भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। व्यंग्यकार का कर्म मनोरंजन करना कतई नहीं है, उसका कर्म तो ऐसी रचना का सृजन करना है जो सोचने का बाध्य करे। प्रेम जनमेजय अपनी रचनाओं के माध्यम से व्यंग्य की इसी भूमिका का निर्वाह कर रहे हैं। उनकी रचनाओं में विनोद नहीं है अपितु विसंगतियों को लक्षित कर एक संवेदनशील रचनाकार की उभरी पीड़ा है।' यह उद्‌गार प्रख्यात आलोचिका डॉ. निर्मला जैन ने, प्रतिष्ठित व्यंग्यकार प्रेम जनमेजय को तेरहवें व्यंग्यश्री सम्मान से सम्मनित किए जाने पर, अपने अध्यक्षीय भाषण में अभिव्यक्त किए गए। व्यंग्य-विनोद के शीर्षस्थ रचनाकार पं. गोपालप्रसाद व्यास के संबंध में डॉ. जैन ने कहा कि व्यास जी ने उर्दू के गढ़ दिल्ली में हिंदी का अलख जमाया। गोपालप्रसाद व्यास के जन्मदिन पर प्रतिवर्ष आयोजित होने वाले इस व्यंग्य विनोद दिवस का इस बार का विशेष आकर्षण उनकी प्रिय पुत्री डॉ. रत्ना कौशिक के निर्देशन में निर्मित वेबसाईट के शुभारंभ का था। इस वेबसाईट के निर्माण की सभी वक्ताओं ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की।

प्रेम जनमेजय को व्यंग्यश्री सम्मान के तहत इक्कतीस हजार रुपए की राशि, प्रशस्ति-पत्र, प्रतीक चिह्न, रजत श्रीफल, पुष्पहार एवं शाल प्रदान किया गया। प्रेम जनमेजय ने सम्मान को ससम्मान ग्रहण करते हुए कहा- 'सम्मान चाहे तेरह हजार को हो, इक्कतीस का हो या एक लक्ष का, यदि लेखक का लक्ष्य पुरस्कार है तो यह एक ऐसा लाक्षागृह है जिसमें से उसे कोई कृष्ण भी नहीं निकाल सकता है। पिछले एक दशक में बढ़ते हुए उपभोक्तावाद एवं बाजारवाद ने हमारे जीवन को बुरी तरह प्रभावित किया है। बढ़ते हुए अंधेरे को समाप्त करने के स्थान पर उसके स्थानांतरण का नाटक करके हमें बहलाया जा रहा है। बहुत आवश्यकता है व्यवस्था के षड्यंत्रों को समझने की और उन पर व्यंग्यात्मक प्रहार करने की। आवश्यकता है व्यंग्य के पिटे पिटाए विषयों से अलग हटकर कुछ नया दिशायुक्त सोचने की।' इस अवसर पर श्रीलाल शुक्ल पर केंद्रित 'व्यंग्य यात्रा' के अंक का लोकार्पण भी किया गया।

कार्यक्रम का कुशल संचालन करते हुए प्रसिद्ध व्यंग्यकार डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी ने अपनी व्यंग्यात्मक उक्तियों एवं हिंदी व्यंग्य की स्थिति को स्पष्ट तो किया ही साथ में पं. गोपालप्रसाद व्यास की रचनाशीलता और प्रेम जनमेजय की विशिष्ट रचनात्मकता की चर्चा की। डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी ने सामयिक लेखन पर व्यंग्य करते हुए कहा कि आज का रचनाकार टखने तक के पानी में तैरने की प्रतियोगिता का खेल खेल रहा है। उन्होंने कहा कि प्रेम जनमेजय ने सतत व्यंग्य-लेखन तो किया ही है पर उससे बड़ा काम 'व्यंग्य यात्रा' का कुशल संपादन एवं प्रकाशन कर के किया है।

समारोह के आरंभ में हिंदी भवन के मंत्री प्रख्यात कवि डॉ. गोविंद व्यास ने अपने स्वागत भाषण में व्यंग्यश्री सम्मान की पारदर्शी प्रक्रिया की चर्चा करते हुए कहा कि हमारा प्रयत्न रहा है कि इस सम्मान की प्रतिष्ठा पर आंच न आए। उन्होंने गोपालप्रसाद व्यास के हास्य व्यंग्य साहित्य का अभूतपूर्व योगदान की चर्चा करते हुए कहा कि उनसे मिले संस्कारों का ही परिणाम है कि हिंदी भवन की प्रतिष्ठा दिनों दिन बढ़ रही है।

हिंदी भवन के अध्यक्ष त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी ने आशीर्वचन देते हुए व्यास जी के योगदान का स्मरण किया और प्रेम जनमेजय को उनके उत्कृष्ट व्यंग्य लेखन के लिए बधाई दी। उन्होंने पं. गोपालप्रसाद व्यास के विशिष्ट रचनात्मक योगदान को रेखांकित करते हुए कहा कि उन पर निर्मित वेबसाईट इस महान रचनाकार के अनेक आयाम उद्‌घाटित करेगी। इस अवसर पर खचाखच भरे हॉल में राजधानी के अनेक प्रतिष्ठित साहित्यकार उपस्थित थे।

**-प्रस्तुति : देव राजेन्द्र**

## हिंदी अकादमी दिल्ली का आयोजन 'इन दिनों'

हिंदी अकादमी दिल्ली की नयी योजना के अंतर्गत त्रिवेणी सभागार में 21 अप्रैल को आयोजित 'इन दिनों' नामक श्रृंखला की पहली कड़ी का शुभारंभ वरिष्ठ कथाकार राजेंद्र यादव के अंतरंग संवाद से हुआ। राजेंद्र यादव ने कहा- विचारधारा के आधार पर बनाया जाने वाला समाज नृशंसतापूर्ण है। विचार हमारे सोचने को निर्धारित और सीमित करता है। हमारे समय का एक बड़ा सवाल यह है कि क्या भविष्य का नक्शा बनाने और नया समाज गढ़ने में विचारधारा हमारी कोई मदद नहीं करती है। विचारधारा के अंत के बाद हमारे पास व्यक्तिगत अतीत और सामाजिक अतीत के दो रास्ते ही लौटने के लिए बचते हैं। दोनों ही ओर लौटना यथास्थितिवाद को मजबूत करता है। हमारे समाज को अतीत को पकड़ कर रखने और बार-बार उसमें प्रासंगिकता ढूंढने की बीमारी है।' उन्होंने नयी कहानी के पुराने दौर के संदर्भ में व्यक्तिवाद के दर्शन की चर्चा की। स्त्री और दलित विमर्श पर बोलते हुए श्री यादव ने कहा कि 'हंस' पत्रिका में जाने-अनजाने इस विषय को लेकर दलितों और स्त्रियों का प्रवेश हुआ। पढ़ना मुझे बहुत व्यर्थ लगने लगा है। अब जो रासता दिखाई देता है वह स्त्री और दलित संघर्ष का है।'

कार्यक्रम के दूसरे भाग में श्री यादव ने बातचीत के दौरान अर्चना वर्मा के एक सवाल के जवाब में कहा, 'मुझे इस पूरे वैचारिक दुश्चक्र में कोई रास्ता दिखाई नहीं देता।' पर, उन्होंने माना 'अवरोध कभी स्थाई नहीं होता। रास्ता तो होगा। वह शायद हमारी पीठ के पीछे से निकल रहा है।' राजेन्द्र यादव के साथ बातचीत में अजय नावरिया ने भी कई सवाल उठाए।

कार्यक्रम के आरंभ में अकादमी के सचिव डॉ. ज्योतिष जोशी के संपादन में निकली हिंदी अकादमी की त्रैमासिक पत्रिका 'इंद्रप्रस्थ भारती' के पहले अंक का लोकार्पण नामवर सिंह, राजेंद्र यादव, अशोक वाजपेयी और अर्चना वर्मा ने किया। कार्यक्रम का परिचय देते हुए डॉ. जोशी ने बताया कि इस तरह की श्रृंखला आरंभ करने के पीछे हमारा उद्देश्य है कि हम न साहित्यकारों को इस योजना में शामिल करें जिन्होंने एक लम्बे अरसे तक साहित्य और भाषा के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दिया है। इस आयोजन में बड़ी संख्या में लेखकों की उपस्थिति रही जिनमें नामवर सिंह, अशोक वाजपेयी, निर्मला जैन, मन्नू भंडारी, राजी सेठ, संजीव आदि उपस्थित थे।

**-प्रस्तुति : अजय कुमार शर्मा**

## मंजरी दुबे को शीला सिद्धांतकर स्मृति पुरस्कार

त्रिवेणी सभागार में राग विराग की ओर से शीला सिद्धांतकर स्मृति पुरस्कार कथाकार मृदुला गर्ग द्वारा मंजरी दुबे को दिया गया। कार्यक्रम की

अध्यक्षता प्रो. नित्यानंद तिवारी ने की। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में शीला सिद्धांतकर की कविता को अपूर्ण मानव मानने वाली पुरुष-सत्ता के विरुद्ध स्त्री-सत्ता कायम करने की पहल के रूप में चिंहित किया और स्त्री-विमर्श और दलित विमर्श को यथार्थवाद से आगे बताया। मंजरी दुबे की कविता को समूह दबाव की कोटि में रखा, जिसे स्पष्ट करने के लिए उन्होंने नागार्जुन और केदार की कविता को समूह दबाव की कविता के रूप में संकेतिक किया और अज्ञेय की कविता को विशिष्ट दबाव की कविता के रूप में रखा। मंजरी दुबे की कविता के संबंध में उन्होंने कहा कि उसमें जगह-जगह असरदार चमक मिलती जो यादों में टंकित हो जाती है। मंजरी की कविता गद्य में लिखी हुई लगती तो है लेकिन वह गद्य नहीं है। पवन करण ने कहा कि मंजरी की कविताओं को पढ़ने से मध्य प्रदेश की ऊबड़-खाबड़ सड़कें याद आ जाती हैं।

अनामिका ने कहा कि स्त्री-विमर्श के दायरे को व्यापक करके देखा जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि शीला सिद्धांतकर की कविता रेडिकल फेमिनिस्ट और उससे आगे की कविता है जिसमें नस्लभेद से लेकर दंगा, उत्पीड़न, इत्यादि देखा जा सकता है। शीला जी ने भाषा के पत्थर भी तोड़े हैं। मंजरी दुबे ने अपने वक्तव्य में बताया कि उनकी कविताएं किस सामाजिक परिवेश और विचार से उपजी हैं और आज कहां खड़ी हैं और कहां जाना है। आरंभिक वक्तव्य देते हुए शिवमंगल सिद्धांतकर ने कहा कि आज कलाओं में फ्यूजन का दौर नहीं है बल्कि साम्राज्यवाद का चरम जब धराशयी हो रहा है तो समाजवाद और पूंजीवाद के फ्यूजन के द्वारा संजीवनी हासिल का महामंदी से उबरने की कोशिश में है। मृदुला गर्ग ने कहा कि मुझे खुशी है कि एक कवि को पुरस्कार देने के लिए मुझ जैसे कथाकार को चुना गया। शीला जी की कविताओं में तैरती संवेदनाएं मन को छूती हैं। मंजरी दुबे के पद्य में गत्यात्मकता से ज्यादा गद्य का विचार अनुप्रेरित है। शीला सिद्धांतकर स्मृति की 152 चुनी हुई कविताओं की एक चयनिका 'परचम बनें महिलाएं' का लोकार्पण प्रो. नित्यानंद तिवारी और मृदुला गर्ग ने किया। राग विराग समिति के सचिव मदन कश्यप ने शीला सिद्धांतकर और मंजरी की कविताओं पर संक्षिप्त प्रकाश डाला। कार्यक्रम का संचालन करते हुए डॉ. आशा जोशी ने राग विराग संस्थान, शीला सिद्धांतकर और मंजरी दुबे की कविता और विचार-विमर्श पर नुकीली टिप्पणियां कीं।

कार्यक्रम की शुरुआत में शीला सिद्धांतकर के तीन अवधी गीतों पर आधरित 'कोरी चुनरिया' की कथक कोरियाग्राफी और एकल प्रस्तुति मंत्रमुग्ध दर्शकों के समक्ष पुनीता शर्मा ने की।

**-प्रस्तुति : पुनीता शर्मा**

## मधुबन व्यंग्यश्री सम्मान ज्ञान चतुर्वेदी को

कोटा नगर की साहित्यिक संस्था काव्य मधुबन के द्वारा दो दिवसीय अखिल भारतीय व्यंग्य शिविर का आयोजन रोटरी बिनानी सभागार में किया गया। इस वर्ष डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी, भोपाल को 'मधुबन व्यंग्यश्री सम्मान' से शाल, श्रीफल, प्रशस्ति पत्र, स्मृति चिह्न देकर सम्मानित किया गया। संस्था काव्य मधुबन के द्वारा आयोजित 'अखिल भारतीय व्यंग्य शिविर' उद्घाटन समारोह में संगोष्ठी के मुख्य अतिथि विष्णु नागर ने कहा कि जिस लेखक में व्यंग्य का पुट नहीं है वह लेखन ही नहीं है। युवा व्यंग्यकार अजय अनुरागी ने राजस्थान में व्यंग्य लेखन पर अपना पत्र पढ़ा। शिवराम स्वर्णकार और अतुल चतुर्वेदी ने पत्र पर अपने विचार रखे। अतुल चतुर्वेदी ने जहां राजस्थान के व्यंग्यकारों की नयी पीढ़ी को अत्यन्त ऊर्जावान बताया वहीं व्यंग्य स्तम्भ लेखन की ओर भी संकेत किया। विशिष्ट अतिथि देवेंद्र इंद्रेश ने कहा कि राजस्थान के व्यंग्य लेखन का मूल्यांकन ढंग से नहीं हुआ है। आज कदम-कदम पर आक्रोश, छटपटाहट व विद्रूपता है इसलिए व्यंग्य लेखन अधिक हो रहा है। उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता डॉ. नरेंद्र नाथ चतुर्वेदी ने की। भगवती प्रसाद गौतम ने आभार प्रदर्शन किया। उस अवसर पर संस्था द्वारा व्यंग्य संकलन 'व्यंग्योदय' का भी अतिथियों ने विमोचन किया।

द्वितीय सत्र में रात्रि में हास्य व्यंग्य कवि सम्मेलन भी आयोजित किया गया। जिसमें कवियों ने गंभीर चिंतन परक व्यंग्य प्रधान रचनाएं पढ़ीं और श्रोताओं को देर रात तक बांधे रखा। कवि सम्मेलन की अध्यक्षता प्रख्यात समाजसेवी जी. डी. पटेल ने की जबकि विशिष्ट अतिथि रघुराज सिंह हाड़ा थे। इस अवसर पर अरविंद सोरल, महेंद्र नेह, भगवती प्रसाद गौतम, हलीम आईना, आर.सी. शर्मा आरसी, शरद तैलंग, प्रेम शास्त्री, बृजेंद्र कौशिक आदि ने काव्य पाठ किया। कवि सम्मेलन का संचालन मुकुट मणिराज ने किया।

अगले दिन व्यंग्य शिविर के प्रथम सत्र में सत्र की अध्यक्षता कर रहे वरिष्ठ व्यंग्यकार एवं 'व्यंग्य यात्रा' पत्रिका के संपादक प्रेम जनमेजय ने कहा कि व्यंग्य में व्यक्ति को नहीं प्रवृत्ति को निशाना बनाना चाहिए। व्यंग्य की बुनियाद संवेदनशीलता है। वंचितों पर व्यंग्य नहीं करना चाहिए। सत्र के मुख्य अतिथि ज्ञान चतुर्वेदी ने कहा कि सामाजिक सरोकार शब्द भी आजकल ढकोसले की तरह इस्तेमाल होने लगा है। मोर मुकुट धारण करने का शौक है तो कृष्ण भी बनना पड़ेगा। सरोकार की बात की जाती है तो षडयंत्र की बू आती है। डॉ. गीता सक्सेना ने 'व्यंग्य के सामाजिक सरोकार' विषय पर पत्र वाचन किया। गीता सक्सेना ने अपने पत्र में कहा कि व्यंग्य मनोदशा की अभिव्यक्ति ही नहीं, सामाजिक प्रतिबद्धता भी है। व्यंग्य लेखन में नैतिकता का भी महत्वपूर्ण योगदान है। अंबिका दत्त का विचार था कि सामाजिक सरोकारों से परे कोई विधा नहीं हो सकती। सृजन को तो सदैव मानवता के हित में ही होना चाहिए। परिचर्चा में अजय अनुरागी, डॉ. ओंकारनाथ चतुर्वेदी ने भी भाग लिया। संस्था सचिव अशोक हावा ने अतिथियों का स्वागत भाषण प्रस्तुत किया। इस अवसर पर अजय अनुरागी के व्यंग्य संकलन 'दबाव की राजनीति' का विमोचन भी किया गया। सत्र का संचालन डॉ. उषा झा ने किया।

समापन सत्र में 'फुहार' कार्यक्रम में डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी को 'व्यंग्यश्री सम्मान' से सम्मानित किया गया। डॉ. प्रेम जनमेजय, अतुल चतुर्वेदी, ओंकारनाथ चतुर्वेदी, देवेंद्र इंद्रेश, विष्णु नागर ने उन्हें सम्मानित किया। रजब अली भारतीय प्रख्यात ग़ज़ल गायक ने कार्यक्रम की शुरुआत होली गायन एवं ग़ज़ल गायकी से की। समापन सत्र का संचालन अतुल चतुर्वेदी ने किया। धन्यवाद ज्ञापन सहसचिव शिवनंदन शर्मा ने किया।

**-प्रस्तुति : अतुल चतुर्वेदी**

## दुष्यंत संग्रहालय का तीन दिवसीय समारोह सम्पन्न

जिसने थोड़ा-बहुत भी लिखा है, वह दुष्यंत कुमार संग्रहालय देखने के बाद यही सोचेगा कि 'अब मर ही जाओ यार! जगह तो मिल ही जायेगी।' दुष्यंत कुमार स्मारक पांडुलिपि संग्रहालय की प्रशंसा करते हुए जब श्री अशोक चक्रधर ने ये उद्गार व्यक्त किये तो पूरा सभागार

ठहाकों से गूंज उठा। श्री चक्रधर अपने 'दुष्यंत अलंकरण' के उत्तर में बोल रहे थे। दुष्यंत के संदर्भ में उन्होंने कहा कि 'साये में धूप' को लोग गीता और रामायण की तरह अपने कलेजे से लगाकर रखते थे और उनके शेर आज भी जन-जन की जुबान हैं। श्री चक्रधर ने दुष्यंत और कमलेश्वर को याद करते हुए अपने संस्मरण सुनाये, वहीं अपने चिर-परिचित अंदाज में चुटीली रचनाओं से भी श्रोताओं को गुदगुदाया।

सुदीर्घ साहित्य साधना सम्मान से सम्मानित श्री आबिद सुरती ने भी दुष्यंत को याद करते हुए आज से 30 वर्ष पूर्व दुष्यंत से हुई मुलाकात का जिक्र करते हुए कहा कि दुष्यंत से मेरा परिचय 'सारिका' के माध्यम से हुआ और उनकी रचनाओं को पढ़ते हुए मुझे उनसे मिलने की तीव्र इच्छा हुई और मेरी यह इच्छा विठ्ठलभाई पटेल द्वारा आयोजित टेपा सम्मेलन के माध्यम से पूरी हुई। जब मैंने उन्हें कहा कि मैं आपकी रचनाओं का बड़ा फैन हूं तो उन्होंने तपाक से कहा और मैं आपके ढब्बूजी का। आंचलिक रचनाकार सम्मान से सम्मानित डॉ. प्रेमलता नीलम ने संग्रहालय के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की और सुमधुर गीत सुनाये।

समारोह की अध्यक्षता मध्यप्रदेश के पूर्व मुख्य सचिव श्री कृपाशंकर शर्मा ने की। उन्होंने अपने उद्‌बोधन में कहा कि संग्रहालय इस आयोजन के माध्यम से ऐसे रचनाकारों से हमें रूबरू करवाता है जिनसे मिलना और जिनको सुनना हमारे लिये गौरव की बात है।

21 मार्च को दुष्यंत संग्रहालय के तीन दिवसीय कार्यक्रम का शुभारंभ नगरीय प्रशासन एवं गैस राहत मंत्री श्री बाबूलाल गौर ने किया। इस अवसर पर अपने उद्‌बोधन में उन्होंने कहा कि 'तालों का शहर' के लिए प्रसिद्ध भोपाल अब 'संग्रहालयों का शहर' बनता जा रहा है। श्री तेजेंद्र शर्मा ने संग्रहालय की प्रशंसा करते हुए कहा कि विदेशों में आज भी अपनी बौद्धिक संपदा को सहेजने की परंपरा है, जिसका भारत में अभाव नजर आता है, लेकिन राजुरकर राज ने दुष्यंत संग्रहालय के जरिये ये काम हाथ में लिया है। इस आयोजन में स्वागत वक्तव्य श्री राजेंद्र जोशी ने दिया। कार्यक्रम का संचालन श्री राजुरकर राज ने किया।

इस त्रि-दिवसीय आयोजन में 22 मार्च को संग्रहालय परिसर में ही एक परिसंवाद का आयोजन किया गया जिसका विषय था 'भारतीय राजनीति : एक बौद्धिक विमर्श'। पूर्व सांसद चिंतक और कांग्रेस पार्टी का प्रतिनिधित्व करने वाले डॉ. रत्नाकर पांडे ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि राजनीति के साथ-साथ कूटनीति भी होना जरूरी है और इसका सबसे अच्छा उदाहरण राम हैं। आयोजन के अध्यक्ष श्री मदनमोहन जोशी ने अपने उद्‌बोधन में राजनीति के संदर्भ में अपने संस्मरण सुनाये और कहा कि समय और परिस्थिति बदलने के साथ-साथ हमारे राजनीतिज्ञों और राजनीति में काफी बदलाव आया है और आज लोग नेताओं के पीछे नहीं चल रहे बल्कि उनका पीछा कर रहे हैं।

## भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा नवलेखन पुरस्कार समारोह

**नई दिल्ली, हिंदी भवन के सभागार में भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा आयोजित समारोह में ज्ञानपीठ, 2008 के नवलेखन पुरस्कार मुख्यमंत्री शीला दीक्षित द्वारा प्रदान किए गए। कविता के लिए संयुक्त रूप से रविकांत की कृति 'डर', उमाकांत की कृति 'यात्रा' तथा कहानी के लिए विमल चंद्र पांडेय के कहानी संग्रह 'शहंशाह सो रहे हैं' को पुरस्कृत किया गया। इस अवसर पर इन पुरस्कृत कृतियों के साथ अन्य सात नवरचनाकार-पंकज सुबीर, हरे प्रकाश उपाध्याय, नीलोत्पल, निशांत, संतोष कुमार, मनोज कुमार पांडेय और वाजदा खान की पहली-पहली पुस्तकों का विमोचन किया गया।**

**कार्यक्रम की अध्यक्षता प्रख्यात कवि कुंवर नारायण ने की। कार्यक्रम में अशोक वाजपेयी, अजित कुमार, कैलाश वाजपेयी और ऋता शुक्ल विशेष रूप से सम्मिलित थे।**

**मुख्यमंत्री ने इस अवसर पर कहा कि सभ्यता-संस्कृति के विकास में साहित्य की निर्णायक भूमिका रही है। हर युग में साहित्यकारों ने अपने लेखन से समाज को दिशा दी है।**

## तेजेन्द्र शर्मा की कहानियां मण्टो की तरह हमें झकझोर देती हैं: कृष्णा सोबती

'तेजेन्द्र शर्मा की कहानियां से गुजरते हुए हम यह शिद्दत से महसूस करते हैं कि लेखक अपने वजूद का टेक्स्ट होता है। तेजेन्द्र के पात्र जिंदगी की मुश्किलों से गुजरते हैं और अपने लिए नया रास्ता तलाशते हैं। वह नया रास्ता जहां उम्मीद है। तेजेन्द्र की कहानियों के जरिए हिन्दी के मुख्यधारा के साहित्य को प्रवासी साहित्य से साझेपन का रिश्ता विकसित करना चाहिए। हम उनकी जटिलताएं, उनके नजरिए और उनके माहौल के हिसाब से समझें।' ये बातें मूर्धन्य उपन्यासकार एवं कथाकार कृष्णा सोबती ने आज चर्चित कथाकार तेजेन्द्र शर्मा के लेखन और जीवन पर केन्द्रित पुस्तक 'तेजेन्द्र शर्मा: वक्त के आइने में' के राजेन्द्र भवन सभागार में आयोजित लोकार्पण समारोह में कहीं।

कृष्णा सोबती ने तेजेन्द्र शर्मा की कहानियों के शिल्प विधान पर चर्चा करते हुए कहा कि उनकी कहानी 'टेलीफोन लाइन' का अंत हमें मण्टो की कहानियों की तरह झकझोर देता है। जहां एक और निर्मल वर्मा की कहानियां अंतर्यात्रा की कहानियां होती हैं जिनमें मोनोलॉग का इस्तेमाल होता है, वहीं तेजेन्द्र शर्मा बाहरी दुनिया की कहानियां लिखते हैं जिनमें चरित्र होते हैं और डॉयलॉग का खूबसूरत प्रयोग किया जाता है।

इस अवसर पर प्रख्यात आलोचक प्रो. नामवर सिंह ने कहा कि 'मुर्दाफ़रोश लोग हर जमात में होते हैं और पूंजीवाद में तो ऐसे शख्सों की इंतेहा है। वे मजहब बेच सकते हैं, रस्मो-रिवाज़ बेच सकते हैं। तेजेन्द्र शर्मा ने अपनी लाजवाब कहानी 'कब्र का मुनाफा' में वैश्विक परिदृश्य में पूंजीवाद की इस प्रवृत्ति को यादगार कलात्मक अभिव्यक्ति दी है।' उन्होंने इस आयोजन के आत्मीय रुझान की चर्चा करते हुए कहा– यह बेहद आत्मीयतापूर्ण आयोजन है जहां लोग अपने प्रिय कथाकार से मिलने दूर-दूर से आए हैं। यह समारोह प्यार मुहब्बत और खुलूस की मिसाल है।'

इस पुस्तक का संपादन सपरिचित कथाकार व रचना समय के संपादक हरि भटनागर और ब्रजनारायण शर्मा ने किया है।

इससे पूर्व नामवर सिंह, राजेन्द्र यादव और कृष्णा सोबती ने इस पुस्तक का लोकार्पण किया। राजेन्द्र यादव ने तेजेन्द्र शर्मा की कथावाचन शैली की सराहना करते हुए कहा कि तेजेन्द्र को आर्ट ऑफ नैरेशन की गहरी समझ है। तेजेन्द्र बखूबी समझते हैं कि स्थितियों को, व्यक्ति के अंतर्द्वंवों, संबंधों की जटिलताओं को कैसे कहानियों में रुपांतरित किया जाता है। प्रवासी लेखन के समूचे परिदृश्य में तेजेन्द्र की कहानियां परिपक्व दिमाग की कहानियां हैं।

हरि भटनागर ने पुस्तक में लिखी अपनी भूमिका का पाठ करते हुए बताया कि तेजेन्द्र आदमी की पीड़ा को रोकर और बिलखकर नहीं बल्कि हंस-हंसकर कहने के आदी हैं। उनकी कहानियां दो संस्कृतियों के संगम की कहानियां हैं।

वरिष्ठ कथाकार नूर जहीर ने पुस्तक में शामिल अमरीका की सुधा ओम ढींगरा का एक ख़त पढ़ते हुए कहा कि तेजेन्द्र शर्मा की कहानियों का असर एक प्रबुद्ध पाठक पर कैसा हो सकता है, इस खत से साफ पता चलता है।

इससे पूर्व बीज वक्तव्य देते हुए अजय नावरिया ने कहा कि यह पुस्तक अभिनंदन ग्रंथ नहीं है क्योंकि यहां अंधी प्रशंसा की जगह तार्किकता है। माहेविष्ट स्थिति की जगह मूल्यांकन है। अजय ने तेजेन्द्र शर्मा की कहानियों के बहाने हिन्दी कथा साहित्य पर चर्चा करते हुए कहा कि इन कहानियों के मूल्यांकन के लिए हमें नई आलोचना प्रविधि की दरकार है।'

कार्यक्रम का संचालन अजित राय ने किया। समारोह में राजेन्द्र प्रसाद अकादमी के निदेशक बिमल प्रसाद, मैथिली भोजपुरी अकादमी के उपाध्यक्ष अनिल मिश्र, असगर वज़ाहत, कन्हैया लाल नंदन, गंगा प्रसाद विमल, लीलाधर मण्डलोई, प्रेम जनमेजय, प्रताप सहगल, मुंबई से सूरज प्रकाश, सुधीर मिश्रा, राकेश तिवारी, रूप सिंह चंदेल, सुभाष नीरव, अविनाश वाचस्पति, अजन्ता शर्मा, अनिल जोशी, अल्का सिन्हा, मरिया नगेशी (हंगरी), चंचल जैन (यू.के.), रंगकर्मी अनूप लाथर (कुरुक्षेत्र), शंभु गुप्त (अलवर), विजय शर्मा (जमशेदपुर), तेजेन्द्र शर्मा के परिवार के सदस्यों सहित भारी संख्या में साहित्य-रसिक श्रोता मौजूद थे।

## किसान विमर्श: इतिहास और यथार्थ

किसानों की आत्महत्या वाले हमारे मौजूदा दौर में, इस संबंध में गहन विचार की जरूरत को देखते हुए 'किसान विमर्श : इतिहास और यथार्थ' विषय पर एक विचार-गोष्ठी का आयोजन 'विचारधारा मंच' एवं 'अनिरुद्ध यादगार ट्रस्ट' द्वारा 78- रामशरणम् कालोनी, जालंधर में किया गया। संचालन संयोजन किया कथाकार तरसेम गुजराल ने और अध्यक्षता की-कबीर चेयर के पूर्व चेयर मैन, गुरुनानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर के डॉ. सेवा सिंह ने प्रमुख वक्ता के रूप में 'देस पंजाब' के संपादक गुरबचन सिंह एवं विनोद शाही ने इसमें सहभागिता दर्ज की। सहयोगी बने अवतार जौडा व यकम।

आरंभ में तरसेम गुजराल ने हिंदी आलोचना और विमर्श की इस दुखती रग पर उंगली रखने की कोशिश की कि मौजूदा दौर में इतनी सारी पत्र-पत्रिकाओं और किताबों के प्रकाशित होने के बावजूद किसान और मजदूर जैसे हाशिये पर चले गये हैं। दलित-विमर्श, स्त्री-विमर्श अथवा युवा-विमर्श के नुमायां होने की वजह से हमारे

## उदय सहाय को पी.आर.सी.आई. सम्मान

**सूचना एवं लोक संपर्क के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए श्री उदय सहाय को पी आर सी आई सम्मान सम्मान से सम्मानित किया गया। यह सम्मान उन्हें गत दिनों बैंगलुरु के होटल ललित अशोक में एक भव्य समारोह में प्रदान किया गया। अंतर्राराष्ट्रीय स्तर पर सम्मानित इस सम्मान के लिए 'व्यंग्य यात्रा' परिवार की ओर से श्री उदय सहाय को बधाई। श्री सहाय 1998 बैच के आई पी एस हैं तथा पांच वर्ष तक प्रसार भारती में डिप्टी डायरेक्टर जनरल के पद पर कार्य का चुके हैं। अनेक सम्मानों से सम्मानित श्री सहाय वर्तमान में मीडिया से संबंधित जनरल और लेक्चर कार्यक्रमों जुड़े हैं। पेंटिग, कविताएं तथा कहानियों में इनकी गहरी रुचि है।**

सामाजिक जीवन और यथार्थ की ये बुनियादी कोटियां 'विमर्श' वाली गहराई को पाने से चूक रही हैं।

विनोद शाही को किसानी का एक विमर्श में बदलना, एक युगांतर और एक संकट जैसा लगा। वनवासी सभ्यता के दौर से बाहर आती मानव जाति किसानी वाली उत्पादन-पद्धति से जुड़ कर ही, अपने विकास को सजग रूप देती है। अगर किसान को 'भगवान' कहते हैं, या कोई और 'जय किसान' का नारा लगाता है, तो यह यथार्थ की पहचान से उखड़ी बात बन जाता है—कोरा आदर्शवाद।

अंत में डा. सेवा सिंह ने भारत की किसानी के समाजशास्त्र पर गहराई से विचार किया। उन्होंने 'मय्यादास को माड़ी', 'धरती धन न अपना' या 'मढ़ी का दीवा' जैसे इधर की किसानी के महान उपन्यासों का जिक्र किया, जिनमें किसान जीवन के अंतर्विरोध तो है, पर सत्ता से संघर्ष की स्थितियां नहीं।

**—प्रस्तुति : विनोद शाही**

## रचनाकार सम्मेलन 'युगधर्म हमारा' का भव्य आयोजन

सिंहभूम जिला हिंदी साहित्य सम्मेलन 'तुलसी भवन', जमशेदपुर, ने नगर रचनाकार सम्मेलन का सफल आयोजन किया। समारोह के मुख्य अतिथि प्रेम जनमेजय, अध्यक्ष सी. भास्कर राव एवं समन्वयक डॉ. बच्चन पाठक सलिल थे। इस अवसर पर मुख्य अतिथि प्रेम

जनमेजय ने समारोह का उद्घाटन करते हुए कहा कि जीवन में नैतिक मूल्यों की बहुत आवश्यकता है। इसके बिना बेहतर मानवीय समाज की कल्पना दुष्कर है। बेहतर मानवीय समाज का निर्माण साहित्यकार की प्राथमिकता है। मानव के संपूर्ण विकास में साहित्य की भूमिका अहम है। साहित्यकार समाज का सजग प्रहरी होता है। धर्म को केवल किसी संप्रदाय तक सीमित नहीं करना होगा, उसके व्यापक रूप को पहचानते हुए उसे सुकर्म से जोड़ना होगा। हमारा वर्तमान बहुत तेजी से बदल रहा है और इस बदलते वर्तमान में हमें मानव की बेहतरी के लिए अपनी भूमिका का निर्माण करना होगा। वर्तमान व्यवस्था हमें निरंतर व्यक्तिवाद की ओर धकेल रही है।' अध्यक्ष सी. भास्कर राव ने बताया कि उन्होंने दस साल तक 'दैनिक उदितवाणी' में व्यंग्य लिखा है। व्यंग्य हमारे आज के समय की आवश्यकता है।

उद्घाटन सत्र के बाद दो तकनीकी सत्र हुए जिसमें नगर के आठ साहित्यकारों ने अपने आलेखों का पाठ किया। आलेख पाठ करने वालों में थे- शैलेंद्र कुमार अस्थाना, त्रिपुरा झा, श्रीराम पांडेय भार्गव, दिनेश्वर प्रसाद सिंह दिनेश, सरोज कुमार सिंह 'मधुप', यमुना तिवारी, नर्मदेश्वर पांडेय और अरुणा भूषण। इस सत्र की अध्यक्षता डॉ. त्रिभुवन ओझा ने की। सम्पन्न सत्र में पांच प्रतिष्ठित साहित्यकारों को सम्मानित किया गया। सम्मानित होने वाले साहित्यकार थे- हिंदी-भोजपुरी के चर्चित व्यंग्यकार अरविंद विद्रोही, समाज सेवी एवं कवि हरिवल्लभ सिंह आरसी, गीतकार नंद कुमार सिंह उन्मन, रामनिवास तथा जयबहादुर सिंह। इस अवसर पर सम्मेलन के मानद महासचिव डॉ. नर्मदेश्वर पांडेय, ने आगत अतिथियों का स्वागत किया तथा विषय प्रवर्तन किया। मंच का संचालन डॉ. त्रिपुरा झा तथा धन्यवाद ज्ञापन सरोज कुमार मधुप ने किया।

## 'सहृदय' त्रैमासिक पत्रिका का लोकार्पण

'शिक्षा मात्र ज्ञानार्जन तक सीमित नहीं है। उससे चरित्र का विकास होना चाहिए। मनुष्य

पशु से कुछ अलग है, तो वह शिक्षा के कारण है। शिक्षक शिष्य के अंतर्निहित गुणों को जाग्रत करने में उल्लेखनीय भूमिका निभाता है। नव उन्नयन साहित्यिक संस्था वक्त की चुनौतियों का सामना करने में मील का पत्थर साबित होगी और सहृदय पत्रिका नई रचनाधर्मिता का नवीन स्वर बनेगी।' ये विचार भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश श्री आर.सी. लाहोटी ने दिल्ली विश्वविद्यालय के कला संकाय में नव उन्नयन साहित्यिक सोसाइटी (पंजी.) के उद्घाटन एवं 'सहृदय' त्रैमासिक पत्रिका के लोकार्पण समारोह के अवसर पर अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में व्यक्त किए।

विशिष्ट अतिथि चित्रा मुद्गल ने कहा कि विश्वविद्यालय नव निर्माण की आधारभूमि होता है और समाज में व्याप्त अंधेरों को भांप कर रचनात्मकता की ओर अग्रसर होना आज की आवश्यकता है। सामाजिक उन्नयन के लिए यह सोसाइटी अंधेरे कोनों की पहचान कर शिक्षकों सहित शोधार्थियों, छात्रों एवं सहृदय जनों का मार्गदर्शन करेगी।

संस्था के अध्यक्ष डॉ. पूरन चंद टंडन ने अतिथियों का स्वागत करते हुए यह बताया कि अब तक इस संस्थान से लगभग ढाई सौ आजीवन सदस्य जुड़ चुके हैं, जिसमें दिल्ली एवं दिल्ली के बाहर के विश्वविद्यालयों तथा कॉलेजों के प्राध्यापकों, शोधार्थियों के अलावा कई अनुवादक राजभाषा अधिकारी और पत्रकार शामिल हैं। इस तरह, बुद्धिजीवियों की एक बड़ी जमात एक बड़े लक्ष्य को लेकर इकट्ठा हुई है।

सचिव ममता सिंगला ने संस्था का विस्तार पूर्वक परिचय दिया एवं भविष्य के कार्यक्रमों की रूपरेखा रखी। उपाध्यक्ष डॉ

चंदन कुमार ने धन्यवाद ज्ञापन किया। समारोह में श्री दया प्रकाश सिन्हा, श्री राम शरण गौड़, प्रो. सुरेश गौतम, डॉ. दिनेश चंद्र दीक्षित, डॉ. राकेश कुमार शर्मा, डॉ. सत्यदेव चौधरी, डॉ. कमल किशोर गोयनका, प्रो. एम. पी. शर्मा, डॉ. के.डी. शर्मा, डॉ. मुकेश गर्ग, प्रो. के.एन. तिवारी, प्रो. हरिमोहन शर्मा, डॉ. सुधा सिंह, डॉ. नीलम सक्सेना, डॉ. बागेश्री चक्रधर, डूटा अध्यक्ष श्री आदित्य नारायण मिश्रा सहित लगभग 500 बुद्धिजीवियों ने शिरकत की।

## भारतीय लेखक शिविर एवं पं. विद्यानिवास मिश्र स्मृति संवाद

14-18 जनवरी, 2009 को पं. विद्यानिवास मिश्र के जन्मदिन के अवसर पर विद्याश्री न्यास एवं भाषा-संस्थान, उत्तर प्रदेश ने एक पांच दिवसीय लेखक शिविर एवं आचार्य विद्यानिवास मिश्र स्मृति संवाद का आयोजन किया। समारोह के उद्घाटन-सत्र की अध्यक्षता डॉ. गोपाल चतुर्वेदी ने की। मुख्य अतिथि थे कुलपति डॉ. अवधराम, अतिथियों का स्वागत डॉ. महेश्वर मिश्र ने किया। पंडितजी के प्रत्येक जन्मदिन पर दिया जानेवाला 'लोककवि सम्मान' इस वर्ष डॉ. श्रीकृष्ण तिवारी को दिया गया। सत्र का संचालन डॉ. अरुणेश नीरन ने किया। इसी दिन दूसरे सत्र में 'आचार्य विद्यानिवास मिश्र स्मृति संवाद' आयोजित किया गया। इसमें सत्र के अध्यक्ष श्री रामचंद्र खान, डॉ. शंकर लाल पुरोहित, श्रीमती रत्ना लाहिरी, चंद्रभूषणधर द्विवेदी, श्री नर्मदेश्वर उपाध्याय, डॉ. रामशंकर द्विवेदी आदि ने अपने संस्मरण सुनाए। संचालन डॉ. अरुणेश नीरन ने किया। दूसरे दिन के पहले सत्र का विषय था 'हिंदी निबंध परंपरा एवं पंडित विद्यानिवास मिश्र'। बीज वक्तव्य डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल ने दिया। सर्वश्री श्रीराम परिहार, जितेंद्र पाठक, प्रभाकर मिश्र, मुख्य अतिथि गिरिराज किशोर, गोपाल चतुर्वेदी ने पंडितजी के निबंधों को अपने शब्दों में रेखांकित किया। सत्र का संयोजन श्रीप्रकाश उदय ने किया। दूसरे सत्र 'साहित्य का प्रयोजन एवं लोक का स्वर' में बीज भाषण डॉ. बलराज पांडेय ने दिया। सर्वश्री प्रेम प्रकाश पांडेय, उदय प्रताप सिंह एवं काकोली गागोई, विद्याविंदु सिंह, उषा किरण खान ने अपने विचार रखे। संचालन डॉ. चितरंजन मिश्र ने किया। तीसरे सत्र में बीज भाषण दिया डॉ. वागीश शुक्ल ने। सर्वश्री अरुणिमा दिलजन, कृष्णदत्त पालीवाल ने अपने विचार रखे। संचालन डॉ. नीरजा माधव ने किया। 16 जनवरी को पहले सत्र का विषय था 'हृदय-संवाद और रसबोध'। बीज भाषण डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय ने दिया। सर्वश्री गिरिश्वर मिश्र, प्रभाकर मिश्र, अनंत मिश्र, राममूर्ति त्रिपाठी ने पंडितजी के व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला। संचालन डॉ. राजेंद्र प्रसाद पांडेय ने किया। दूसरा सत्र पंडितजी के महाकाव्य-विमर्श से संबंधित था। बीज भाषण डॉ. अनंत मिश्र ने दिया। सर्वश्री प्रेमशीला शुक्ल, वागीश शुक्ल, महेश्वर मिश्र, रामदेव शुक्ल ने बताया कि पंडितजी ने अपने महाकाव्य-विमर्श से पाश्चात्य विद्वानों के बौद्धिक षड्यंत्रों से अनवरत संघर्ष किया। संचालन डॉ. कमलेश दत्त त्रिपाठी ने किया। तीसरे सत्र में 'कालिदास एवं संस्कृत काव्य' का संयोजन डॉ. अनंत मिश्र ने किया। बीज भाषण डॉ. कमलेश दत्त त्रिपाठी ने दिया। सर्वश्री राजेंद्र प्रसाद पांडेय, रमेश चंद्र द्विवेदी, आद्याप्रसाद मिश्र, रेवा प्रसाद द्विवेदी, कुटुंब शास्त्री, शिवजी उपाध्याय ने अपने-अपने विचार रखे।

17 जनवरी के पहले सत्र का विषय था 'भारतीय परंपरा और आधुनिक दृष्टि'। बीज भाषण डॉ. रामदेव शुक्ल ने दिया। सर्वश्री वागीश शुक्ल, मुख्य अतिथि डॉ. मुरली मनोहर जोशी, प्रभाकर श्रोत्रिय, गिरिश्वर मिश्र, कमलेशदत्त त्रिपाठी ने सत्र संबोधित किया। संचालन डॉ. श्रीमती शशिकला पांडेय ने किया। दूसरे सत्र 'पत्रकारिता के आयाम' में बीज भाषण डॉ. कुमुद शर्मा ने दिया। सर्वश्री ब्रजेंद्र त्रिपाठी, अरुणेश नीरल, रघवेंद्र दूबे, अर्जुन तिवारी, अच्युतानंद मिश्र ने पंडितजी के संपादकियों से संबंधित टिप्पणियों पर प्रकाश डाला। तीसरे सत्र 'मध्यकालीन काव्यबोध' में बीज भाषण डॉ. सत्यदेव त्रिपाठी ने दिया। डॉ. चंद्रकला त्रिपाठी एवं डॉ. राम सुधार सिंह ने अपने विचार रखे। सत्र का संयोजन डॉ. विश्वनाथ प्रसाद ने किया।समारोह के अंतिम दिन के प्रथम सत्र की विचार-गोष्ठी का विषय 'हिंदी भाषा एवं आधुनिक परिदृश्य' था, जिसकी अध्यक्षता डॉ. युगेश्वर ने की तथा बीज भाषण भी दिया। डॉ. बलराज पांडेय के कुशल संयोजन में संचालित इस गोष्ठी को संबोधित किया डॉ. युगेश्वर ने। सुप्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक डॉ. दिलीप सिंह, डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी ने अपने विचार रखे। दूसरे सत्र की संगोष्ठी में 'भारतीय भाषा-चिंतन, पाणिनि एवं भाषाई सरोकार' पर वक्ताओं ने अपने विचार व्यक्त किए। अध्यक्षता डॉ. माणिक गोविंद चतुर्वेदी ने की तथा संचालन डॉ. ब्रजेंद्र त्रिपाठी ने किया। बीज भाषण डॉ. दिलीप सिंह ने दिया। गोष्ठी को सर्वश्री रामबख्श मिश्र, कृष्णचंद्र दूबे, आद्याप्रसाद मिश्र एवं रामयत्न शुक्ल ने भी संबोधित किया। तृतीय सत्र यानी समापन समारोह की अध्यक्षता डॉ. अच्युतानंद मिश्र ने की। मुख्य अतिथि डॉ. डी.पी. सिंह ने पंडितजी के बहुआयामी व्यक्तित्व के विविध पक्षों को याद किया। इस कार्यक्रम में वरिष्ठ निबंधकार डॉ. कृष्णबिहारी मिश्र को उनकी पुस्तक 'अराजक उल्लास' के लिए प्रथम विद्याश्री न्यास सम्मान से सम्मानित किया। उनकी अनुपस्थिति में यह सम्मान उनकी ओर से डॉ. बलराज पांडेय ने ग्रहण किया। धन्यवाद ज्ञापन डॉ. दयानिधि मिश्र ने किया। 'बगदाद से एक खत' का लोकार्पण

कवि एवं सिने मर्मज्ञ महेन्द्र मिश्र के ताजा कविता संग्रह 'बगदाद से एक खत' का लोकार्पण 6 मार्च 2009 को दिल्ली स्थित इंडिया इंटरनेशनल सेंटर में सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर मुख्य अतिथि कवि कुंवर नारायण और

विशिष्ट अतिथि के रूप में केदारनाथ सिंह उपस्थित रहे। अध्यक्षता डॉ. नामवर सिंह ने की। महेन्द्र मिश्र का यह दूसरा काव्य संग्रह है।

## मनुष्य को मनुष्य बनाती है पुस्तक– रमाकांत शर्मा

माडधरा साहित्य संस्कृति संस्थान, जोधपुर एवं नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया के संयुक्त तत्वावधान में पुस्तक लोकार्पण एवं 'समाज में पुस्तक का महत्व' विषयक संगोष्ठी का आयोजन 31 मार्च 2009 को 'मदन डागा साहित्य भवन', जोधपुर में किया गया।इस अवसर पर समारोह के मुख्य अतिथि श्री मुरलीधर वैष्णव, ने कहा– समाज में पुस्तकें अमृत्व के समान हैं। विश्व में ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए, जिससे प्रलय के बाद भी पुस्तकें सुरक्षित रहें। कार्यक्रम की अध्यक्षता कर रहे मदन मोहन परिहार ने पुस्तक को मां की संज्ञा देते हुए इसे संस्कारों से पूरित बताया। उन्होंने यह भी कहा कि पुस्तकों में समूचे जगत का ज्ञान उपलब्ध है।

विशिष्ट अतिथि डा. रमाकांत शर्मा ने अपने उद्बोधन में कहा कि विज्ञान के इस दौर में मनुष्य को पठन का विवेक होना चाहिए, इससे वह कई लाभदायक पहलुओं की ओर अग्रसर होता है। 'समाज में पुस्तक का महत्व' विषय पर जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग के अध्यक्ष डा. श्रवण कुमार मीणा ने कहा– पुस्तक हमें नैतिक रूप से आत्मनिर्भर तो करती है साथ ही दूसरों के प्रति सम्मान भी सिखाती है।

कार्यक्रम का संचालन माडधरा संस्थान के अध्यक्ष श्री सत्यदेव संवितेंद्र ने किया। कार्यक्रम की शुरुआत में डा. ललित किशोर मंडोरा ने ट्रस्ट के प्रकाशनों की व अन्य गतिविधियों का एक परिचय प्रस्तुत किया।

## कालजयी स्वर संपदा

नई दिल्ली। आकाशवाणी के सभागार में आकाशवाणी ध्वनि अभिलेखागार द्वारा आयोजित 'कालजयी स्वर संपदा' कार्यक्रम के अंतर्गत आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी द्वारा दिए गए 'भारतीय सांस्कृतिक परंपरा और रवींद्रनाथ टैगोर' विषय भाषण की रिकार्डिंग की प्रस्तुति की गई। कार्यक्रम में डॉ. नामवर सिंह ने विशिष्ट अतिथि पद से आचार्य जी पर अपना वक्तव्य दिया। इस अवसर पर आचार्य जी के सुपुत्र डॉ. मुकुंद द्विवेदी विशेष रूप से उपस्थित थे। कार्यक्रम का संचालन लक्ष्मीशंकर वाजपेयी ने किया।

## यज्ञ शर्मा के यहां एक रचनात्मक शाम

**बहुत ही कम समय में, एक अनौपचारिक बुलावे में बंधे मुम्बई के अनेक प्रतिष्ठित रचनाकार तथा दिल्ली से आए प्रेम जनमेजय, प्रतिष्ठित साहित्यकार यज्ञ शर्मा के यहां एकत्रित हुए। बिना तय किए रचना गोष्ठी का जो आनंद हो सकता है, उस हो सकने का सभी ने भरपूर आनंद उठाया। इस अनौपचारिक वातावरण में विश्वनाथ ने धर्मयुगीन दिनों में चर्चित चंदन और नंदन के तुक वाली पंक्तियां गुनगुनाई तो वाह! वाह! के साथ उन्हें दोबारा सुना गया। कन्हैयालाल नंदन का नाम आए और इन दिन चर्चित उनकी आत्मकथा 'कहना जरूरी था' को दो बाद पढ़ चुके प्रेम जनमेजय जिक्र न छेड़ें, हो नहीं सकता था। और जिस गोष्ठी में धर्मयुगीन दिनों के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर विश्वनाथ और मनमोहन सरल मौजूद हो उसमें आत्मकथा के धर्मयुगीय पृष्ठों का खुलना लाजमी था। अनखुले खुले पृष्ठों के अतिरिक्त रचनाकारों ने अपनी-अपनी रचनाओं के पृष्ठ भी खोले। मनमोहन सरल ने अपना व्यंग्य पढ़ा- 'किस्सा लोहे के आदमी का'। अक्षय जैन ने 'चालू कवि' और 'चवन्नी बचाकर रखें' का पाठ किया। देवेंद्रमणि अपनी कविता 'जनतंत्र में आम आदमी' का पाठ किया। हस्ती मल हस्ती ने अपनी ग़ज़लों का सस्वर पाठ कर वातावरण को एक लय प्रदान की। यज्ञ शर्मा ने अपनी व्यंग्य की लीक से हटकर, 'पेड़' पर केंद्रित कविताएं सुनाईं। मुम्बई जैसी जगह में, चालीस किलोमीटर का रास्ता अकेले तय कर के, इस कार्यक्रम के लिए विशेष रूप से पधारी सूर्यबाला ने न केवल अपनी व्यंग्य रचना 'पत्नी और पुरस्कार' का पाठ किया अपितु साहित्य जगत के अपने खट्टे-मीठे अनुभवों को भी बांटा। प्रेम जनमेजय ने अपनी व्यंग्य रचना 'हे देवतुल्य! तुम्हें प्रणाम' का पाठ किया। विश्वनाथ ने बड़े मन से अपनी ताजा कविताएं सुनाईं। उनकी एक कविता की इस पंक्ति को, 'बहुत कुछ छूटता है पीछे, जब कोई आगे बढ़ता है', प्रेम जनमेजय चलते-चलते भी गुनगुनाते पाए गए।**

## कमलेश भारतीय सम्मानित

'दैनिक ट्रिब्यून' के हिसार स्थित वरिष्ठ स्टाफ रिपोर्टर व रचनाकार कमलेश भारतीय को कैथल की साहित्य सभा द्वारा श्रेष्ठ साहित्यिक पत्रकारिता पुरस्कार प्रदान किया गया। हरियाणा साहित्य अकादमी के पूर्व निदेशक डॉ. चंद्र त्रिखा ने अपने पुत्र स्वर्गीय धीरज त्रिखा की स्मृति में यह सम्मान शुरू किया है, जिसे साहित्य सभा, कैथल के सहयोग से प्रतिवर्ष प्रदान किया जायेगा। कैथल के आर.के.एस.डी. कॉलेज में आयोजित समारोह में हरियाणा साहित्य अकादमी के अध्यक्ष देश निर्मोही, साहित्य सभा के अध्यक्ष व प्रसिद्ध नाटककार अमृतलाल मदान, गुलशन मदान, प्रद्युम्न भल्ला, राजेन्द्र सारथी, प्रतिभा, डा. राणा प्रताप गन्नौरी, विजय कुमार सिंघल व अन्य रचनाकार मौजूद थे। कमलेश भारतीय के लघुकथा संग्रह 'ऐसे थे तुम' के विमोचन हरियाणा के मुख्यमंत्री भूपेन्द्र सिंह हुड्डा ने किया।

## जयति जय हे मूर्खों की भवानी!

'आस्वाद' जब 24वां मूर्ख सम्मेलन मना रही थी तब होली-मिलन के अवसर पर अनेक हास्य व्यंग्यपूर्ण कार्यक्रम के अंत में इस वर्ष की मूर्खाधिपति श्रीमती अलका सिन्हा के सम्मान में संगीत और दर्शकों की करतल ध्वनि के बीच आरती की धुन गूंज रही थी– जयति जय हे मूर्खों की भवानी!

प्रत्येक वर्ष की भांति इस वर्ष भी 'आस्वाद' ने होली का रंगारंग कार्यक्रम पेश किया। उसमें बाल-युवा और वृद्ध साहित्यकारों ने सोत्साह भाग लिया। वयोवृद्ध साहित्यकार डॉ. रामदरश मिश्र विशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित थे। उन्होंने होली पर अपनी सुंदर काव्य रचना का पाठ किया।

कार्यक्रम का आरंभ संगीतज्ञ देवचंद चौधरी और ओंकारनाथ भारद्वाज द्वारा प्रस्तुत सरस्वती वंदना एवं होली के रसियागान से हुआ। डॉ.

रामदरश मिश्र ने उन्हें शॉल ओढ़ाकर बधाई दी।

मूर्खाध्यक्षा अलका सिन्हा का स्वागत माला, मुकुट, शॉल और लहंगा पहनाकर किया गया। वीणा श्रीवास्तव और सुमन कक्कड़ ने अलंकरण किया।

होली की मंगल कामना करते हुए जिन कवियों ने अपनी रचनाओं से श्रोताओं का मनोरंजन किया उनमें प्रमुख थे– मनोहर लाल रत्नम्, जितेन्द्र कुमार सिंह, बी.पी. श्रीवास्तव, डॉ. राहुल, विनोद बब्बर, वेद प्रकाश भारद्वाज, विनोद बंसल, डॉ. रमाकान्त शुक्ल, भाई भरत जी, मनोज भावुक, डी.के. श्रीवास्तव एवं अन्य। मंच का संचालन 'आस्वाद' के संचालक डॉ. रमाशंकर श्रीवास्तव ने किया।

**–प्रस्तुति : सौम्य श्रीवास्तव**

## हिंदी के वैश्विक परिवेश पर विचार गोष्ठी

'अक्षरम्' एवं 'साहित्य अमृत' के तत्वावधान में 'हिंदी के वैश्विक परिदृश्य पर एक विहंगम दृष्टि: एक संवाद' विषय पर एक विचार गोष्ठी की गई जिसमें डॉ. विनोद बाला अरुण, डॉ. रत्नाकर पांडेय, डी.के. पांडेय, परमानंद पांचाल, विश्वमोहन तिवारी, लक्ष्मीशंकर वाजपेयी, राहुल देव, नारायण कुमार, ब्रजेंद्र त्रिपाठी, प्रभाकर श्रोत्रिय, मधु गोस्वामी तथा सादिक ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन अनिल जोशी ने किया।

## 'सच बोले कौआ काटे' का लोकार्पण

उदयपुर, साहित्यिक संस्था युगधारा के तत्वावधान में संस्था एवं नगर के प्रख्यात व्यंग्यकार हरमन चौहान ने व्यंग्य संग्रह 'सच बोले कौआ काटे' का लोकार्पण समारोह मुख्य अतिथि डॉ. भगवतीलाल व्यास, विशिष्ट अतिथि डॉ. राजेंद्रमोहन भटनागर तथा डॉ. देव कोठारी की अध्यक्षता में थियोसोफिकल सोसायटी सभागार में सम्पन्न हुआ। डॉ. मनोहर श्रीमाली की सरस्वती वंदना के श्चात् डॉ. ज्योतिपुंज ने कार्यक्रम का संचालन करते हुए व्यंग्यकार हरमन चौहान के कृतित्व और व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला। पुरुषोत्तम 'पल्लव' द्वारा अतिथियों के स्वागत सम्मान के बाद पुस्तक का अतिथियों ने लोकार्पण किया। समारोह की अध्यक्षता कर रहे डॉ. देव कोठारी ने कहा– व्यंग्य लेखन एक चुनौती भरा कार्य है। श्री हरमन चौहान निरंतर लिखे वाले श्रेष्ठ व्यंग्यकार हैं जो बड़ी संजीदगी से लिख रहे हैं। धन्यवाद ज्ञापित किया संस्था उपाध्यक्ष नरोत्तम व्यास ने।

## वर्ष 2008 के 'देवीशंकर अवस्थी सम्मान की रिपोर्ट'

हिन्दी के जाने माने आलोचक देवीशंकर अवस्थी की स्मृति में उनके 5 अप्रैल को उनके जन्मदिन पर दिया जाने वाला 'देवीशंकर अवस्थी सम्मान' इस बार आलोचक श्री प्रणय कृष्ण को उनकी आलोचना-पुस्तक 'उत्तर औपनिवेशिकता के स्रोत और हिन्दी साहित्य' के लिए दिया गया है। साहित्य अकादमी, नई दिल्ली के रवीन्द्र भवन सभागार में आयोजित एक भव्य समारोह में वरिष्ठ साहित्यकार, सुश्री कृष्णा सोबती ने, श्री प्रणय कृष्ण को सम्मान स्वरूप स्मृति-चिन्ह, प्रशस्ति-पत्र और ग्यारह हजार रुपए की राशि भेंट में दी।

इस वर्ष 'देवीशंकर अवस्थी सम्मान' के लिए श्री प्रणय कृष्ण की पुस्तक का चयन सुश्री कृष्णा सोबती, सर्वश्री विश्वनाथ त्रिपाठी, चन्द्रकांत देवताले, अशोक वाजपेयी और मंगलेश डबराल जी ने किया है। इससे पूर्व यह सम्मान सर्वश्री मदन सोनी, पुरुषोत्तम अग्रवाल, विजय कुमार, सुरेश शर्मा, शम्भूनाथ, वीरेन्द्र यादव, अजय तिवारी, पंकज चतुर्वेदी, अरविन्द त्रिपाठी, कृष्ण मोहन, अनिल त्रिपाठी और ज्योतिष जोशी को मिल चुका है। इस सम्मान की स्थापना समिति की संयोजिका श्रीमती कमलेश अवस्थी ने सन् 1995 में की थी।

इस अवसर पर 'साहित्य का दिक्काल' विषय पर एक विचार-गोष्ठी का आयोजन किया गया था जिसमें अध्यक्ष के रूप में श्री अशोक वाजपेयी के अलावा, प्रो. जी.के. दास, विष्णु खरे और श्री प्रियम अंकित उपस्थित थे।

श्री संजीव ने कार्यक्रम के संचालन का प्रारंभ देवीशंकर अवस्थी की कथा आलोचना में भागीदारी को याद करते हुए गोष्ठी का प्रारंभ किया। उन्होंने कहा कि देवीशंकर ने हिन्दी साहित्य के देन के रूप में हिन्दी कहानी को पुन: परिभाषित किया, जिससे कहानी को वास्तव में नई पहचान मिली। उन्होंने कहा कि हमें उनकी पुस्तकें पढ़कर ही उनकी प्रतिभा का ज्ञान हुआ है। वे डॉ. नामवर सिंह और अशोक जी के समकालीन थे। उन्होंने कहा कि मैं उन्हें युवा आलोचक कहकर उनका दायरा सीमित नहीं करना चाहता।

इस अवसर पर श्री मंगलेश डबराल ने प्रणय कृष्ण को बधाई दी। उन्होंने कहा कि वे इस सम्मान को ग्रहण करने वाले योग्य व्यक्ति हैं। उन्होंने कहा कि यह बड़े हर्ष का विषय है कि उनकी पुस्तक 'उत्तर औपनिवेशिकता के स्रोत और हिन्दी साहित्य' को निर्णायक मंडल ने बिना किसी संकोच के सम्मान दिए जाने के योग्य पाया। श्री डबराल ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि अब आलोचना प्राय: समाप्त हो गई है और आलोचना का काम जन सम्पर्क में परिवर्तित हो चुका है। उन्होंने कहा कि वर्ष 2008 का 13वां देवीशंकर स्मृति सम्मान प्रदान करते हुए मैं अपने का भी गौरवांवित अनुभव कर रहा हूं।

तत्पश्चात अवस्थी जी के 80वें जन्मदिन पर, इस अवसर पर देवीशंकर अवस्थी के सम्मान में अवस्थी परिवार द्वारा संकलित पुस्तक 'आत्मीयता के विविध रंग' (देवीशंकर अवस्थी पर एकाग्र) का लोकार्पण श्री अजित कुमार द्वारा किया गया।

इस अवसर पर सुश्री कृष्णा सोबती ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि वे देख रही हैं कि प्रणय कृष्ण इस दशक के प्रखर आलोचक के रूप में उभर कर सामने आए हैं। इन्होंने अपनी पुस्तक में बहुत गहरे ढंग से आलोचना और समीक्षा प्रस्तुत की है। उन्होंने कहा कि इनकी आलोचात्मक कृति पढ़कर हमें भी बहुत कुछ सीख मिलती है। उन्होंने कहा कि प्रणय ने पुस्तक में अपनी मां को भी याद किया, यह बहुत बड़ी बात है।

गोष्ठी को आगे बढ़ाते हुए प्रणय कृष्ण ने भी अपने विचार व्यक्त किए। उन्होंने कहा कि देवीशंकर अवस्थी सम्मान प्राप्त करने में मेरे मित्रों एवं गुरुजनों का विशेष योगदान है तथा उन्होंने अपनी इस कृति के माध्यम से अपनी मां को भी याद किया। उन्होंने कहा कि इस पुस्तक के लिखे जाने में प्रो. सत्यप्रकाश मिश्र जो अब नहीं रहे, का विशेष योगदान भी है और वे उन्हें साधुवाद देते हैं। प्रणय कृष्ण ने इस पुस्तक के चयन में निर्णायक मंडल की भूरि-भूरि प्रशंसा की और उनका हार्दिक धन्यवाद किया। प्रणय कृष्ण ने कहा कि यह केवल मेरा सम्मान नहीं है बल्कि समस्त युवा आलोचक जो इस सद्कार्य में संलग्न है का सम्मान है वे यह सम्मान उन्हें अर्पित करते हैं। प्रणय कृष्ण ने 3 जनवरी, 1955 से 17 सितंबर, 1955 के दौरान देवीशंकर अवस्थी द्वारा अंकित डायरी के कुछ संस्मरणों को पढ़कर सुनाया।

उन्होंने कवि हबीब की कुछ पंक्तियां पढ़कर अपना वक्तव्य समाप्त किया।

तत्पश्चात साहित्य का दिक्काल विषय

# व्यंग्य यात्रा की बधाई

## ज्ञानरंजन को भारतीय भाषा परिषद् का सम्मान

वरिष्ठ कथाकार ज्ञानरंजन को 2008 का भारतीय भाषा परिषद् का अलंकरण सम्मान दिया गया। कोलकाता में आयोजित इस समारोह में ज्ञानरंजन के साथ तमिल कवि आर. वैरामत्थु, पंजाबी साहित्यकार डॉ. मोहिंदर सिंह गिल और उड़िया के कथाकार रामचंद्र बोहरा भी सम्मानित किए गए। सभी वरिष्ठ रचनाकारों को 51 हजार रुपए की राशि और समृति चिह्न प्रदान किए गए।

## नित्यानंद तिवारी को साहित्यभूषण सम्मान

उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान का इस बार का, एक लाख की राशि वाला साहित्यभूषण सम्मान प्रो. नित्यानंद तिवारी को दिया गया। वरिष्ठ आलोचक प्रो. नित्यानंद तिवारी का साहित्यिक योगदान से पूरा हिंदी जगत परिचित है।

## डॉ. गुरचरण सिंह को 'सौहार्द सम्मान'

उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा वरिष्ठ कथाकार आलोचक गुरचरण सिंह को उनके हिंदी साहित्य में विशेष योगदान के लिए 'सौहार्द सम्मान' से सम्मानित किया गया। इस सम्मान के अंतर्गत प्रशस्ति चिह्न और एक लाख रुपए की राशि प्रदान की गई। इस समय डॉ. गुरचरण सिंह पंजाबी-हिंदी शब्द कोश तथा समकालीन हिंदीकोश पर काम कर रहे हैं।

## डॉ. गोयनका सम्मानित

देवरिया, नागरी प्रचारिणी सभा ने अपने सभागार में आयोजित समारोह में डॉ. कमल किशोर गोयनका को उनके उत्कृष्ट साहित्यिक अवदान के लिए नागरी-रत्न सम्मान से सम्मानित किया। समारोह की अध्यक्षता डिस्ट्रिक्ट जज चंद्रभाल 'सुकुमार' श्रीवास्तव ने की। विशेष अतिथि थे डॉ. जयनाथ मणि त्रिपाठी तथा संयोजक थे सभा के मंत्री सुधाकर मणि त्रिपाठी।

## दामोदर दत्त दीक्षित पुरस्कृत

उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान ने प्रतिष्ठित व्यंग्यकार और कथाकार दामोदर दत्त दीक्षित को भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित उनके उपन्यास 'धुआं और चीखें' के लिए 'प्रेमचंद पुरस्कार' प्रदान किया। पुरस्कार के अंतर्गत बीस हजार रुपये, प्रशस्ति पत्र आदि भेंट किया गया।

## सूर्यबाला को 'वाग्मणि सम्मान'

पिछले दिनों राजस्थान लेखिका साहित्य संस्थान एवं राजस्थान विश्वविद्यालय के महिला अध्ययन केंद्र के संयुक्त तत्वावधान में प्रख्यात कथाकार एवं व्यंग्यकार श्रीमती सूर्यबाला को वाग्मणि सम्मान से विभूषित किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता नंद भारद्वाज ने की।

## राजेंद्र परदेसी को अकादमी अवार्ड

वरिष्ठ साहित्य एवं चित्रकार डॉ. राजेंद्र परदेसी को उनकी साहित्यिक उपलब्धियों के लिए पंजाब कला साहित्य अकादमी की ओर से सर्वोच्च सम्मान से सम्मानित किया गया।

## रमेश चंद्र खरे को कादम्बरी पुरस्कार

डॉ. रमेश चंद्र खरे को संस्कारधानी जबलपुर की प्रतिष्ठित साहित्यिक सांस्कृतिक संस्था कादम्बरी द्वारा स्व. पं. रामेंद्र तिवारी के जन्मदिवस पर मानस भवन में आयोजित अखिल भारतीय साहित्यकार एवं पत्रकार सम्मान के गरिमामय समारोह में उनकी साधना और महाकाव्य (विरागी अनुरागी) विधा में साहित्यिक अवदान के परिप्रेक्ष्य में 2100 रुपये के स्व. हरिहरशरण मिश्र 'श्रीहरि' स्मृति पुरस्कार से सम्मानित किया गया। समारोह की अध्यक्षता कर रहे आचार्य डॉ. कृष्णकांत चतुर्वेदी, विशिष्ट अतिथि डॉ. आर.एल. शिवहरे, संस्था अध्यक्ष डॉ. गार्गीशरण मिश्र 'मराल' एवं सचिव आचार्य भगवत दुबे ने उन्हें माल्यार्पण, शाल, अभिनंदन पत्र एवं सम्मान राशि से अलंकृत किया।

पर विस्तार से चर्चा आमंत्रित की गई। प्रथम वक्ता के रूप में प्रो. जी.के. दास को आमंत्रित किया गया।

## सियैटल में प्रतिध्वनि द्वारा 'एक था गधा' का मंचन

शरद जोशी से सुप्रसिद्ध व्यंग्य नाटक 'एक था गधा उर्फ अलादाद खां' का सुरुचिपूर्ण मंचन सिएटल की सांस्कृतिक संस्था प्रतिध्वनि द्वारा वाशिंगटन विश्वविद्यालय स्थित, जातीय सांस्कृतिक केन्द्र के सभागार में किया गया।

सीमित साधनों में होने वाले नाटकों में मंच सज्जा एवं पात्रों की वेशभूषा पर बहुत अधिक खर्च करना संभव नहीं होता है। इसके बावजूद सभी पात्रों की सज्जा विषयानुकूल थी। चाहे कोतवाल की वर्दी हो, चाहे नवाब की अचकन या पगड़ी या धोबी का पाजामा और छोटी बाजुओं का कुर्ता, सब नाटक के अनुरूप रहे। मंच सज्जा भी सरलता से परिपूर्ण रही। मंच के संयोजन में एक महत्वपूर्ण बात ये रही है कि कितनी स्वाभाविकता से एक दृश्य के दूसरे दृश्य में पदार्पण होता है। नाटक में इस बात का ध्यान रखा गया था कि दृश्य की समाप्ति पर दर्शकों को इसको सूचना दे दी जाए। नाटक में प्रयोग किए गए गीत बड़े प्रभावशाली बन पड़े थे। इनका संगीत कर्णप्रिय था, शब्द अर्थों को समेटे हुए थे एवं भाव पूरी तरह मन को स्पर्श करने वाले थे। कलाकारों ने इन गीतों को भली प्रकार से गाया तथा संगीतकारों ने इस हेतु जो परिश्रम किया, वह सफल हुआ।

अभिनय की दृष्टि से अनेक कलाकारों ने प्रभावित किया। 'एक था गधा उर्फ अलादाद खां' के इतने जीवंत प्रस्तुतिकरण का सबसे अधिक श्रेय सिएटल क्षेत्र में हिंदी नाटक रूपी गंगा के भगीरथ तथा इस नाटक के निर्देशक अगस्त्य कोहली को जाता है। नाटक का निर्देशन सटीक एवं संतुलित रहा, कुछ पात्रों को जो स्वतंत्रता प्रदान की गई थी उससे निर्देशक का अनुभव ही प्रदर्शित होता दिख रहा था। लंबे-लंबे संवादों के बावजूद नाटक कहीं बिखरता हुआ प्रतीत नहीं हुआ। दर्शक एक बार कुर्सी पर बैठे तो अंत तक मानो नाटक की दुनिया में ही खोये रहे।

## 15वें कथा यू.के. सम्मान की घोषणा

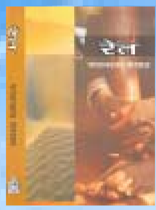

कथा (यू.के.) के मुख्य सचिव एवं प्रतिष्ठित कथाकार श्री तेजेन्द्र शर्मा ने लंदन से सूचित किया है कि वर्ष 2009 के लिए अंतर्राष्ट्रीय इंदु शर्मा कथा सम्मान के लिए राजकमल प्रकाशन से 2008 में प्रकाशित उपन्यासकार श्री भगवान दास मोरवाल के उपन्यास 'रेत' का चयन किया गया है। इस सम्मान के अंतर्गत दिल्ली- लंदन-दिल्ली का आने जाने का हवाई यात्रा का टिकट (एअर इंडिया द्वारा प्रायोजित) एअरपोर्ट टैक्स, इंग्लैण्ड के लिए वीसा शुल्क, एक शील्ड, शॉल, लंदन में एक सप्ताह तक रहने की सुविधा तथा लंदन के खास-खास दर्शनीय स्थलों का भ्रमण आदि शामिल होंगे। यह सम्मान श्री मोरवाल को लंदन के हाउस ऑफ कॉमन्स में 9 जुलाई 2009 की शाम को एक भव्य आयोजन में प्रदान किया जाएगा।

वर्ष 2009 के लिए 'पद्मानन्द साहित्य सम्मान' श्री मोहन राणा को उनके कविता संग्रह 'धूप के अंधेरे में' (2008- सूर्यास्त प्रकाशन, नई दिल्ली) के लिए दिया जा रहा है। मोहन राणा का जन्म 1964 में दिल्ली में हुआ। वे दिल्ली विश्वविद्यालय से मानविकी में स्नातक हैं। आजकल ब्रिटेन के बाथ शहर के निवासी हैं।

## चौधरी चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ में राष्ट्रीय संगोष्ठी

चौधरी चरण विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में 'समकालीन रचनाकार एवं रचनाएं (सन् 1980 के बाद के रचनाकाल पर केंद्रित)' विषयक दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया।

संगोष्ठी के विभिन्न सत्रों में प्रो. सुधीश पचौरी (दिल्ली विश्वविद्यालय) प्रो. बी.एन. राय (कुलपति अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा), जितेंद्र श्रीवास्तव (युवा आलोचक), अखिलेश (कथाकार एवं संपादक), प्रो. गंगाप्रसाद विमल, निर्मला जैन, प्रेम जनमेजय आदि ने समकालीन रचनाधर्मिता को विभिन्न दृष्टियों और आयामों से विश्लेषित किया।

प्रो. सुधीश पचौरी ने कहा कि समकालीन रचनाकर्म में त्वरित स्थिति और परिस्थितियों का प्रतिबिंब है। जो रचनाकार कालजीवी होता है, वह कालजयी भी होता है।

प्रथम सत्र की अध्यक्षता करते हुए प्रो. एस.के. काक ने आधुनिक हिंदी कविता में रस के गायब होने की चिंता जताई।

संचालन करते हुए हिंदी विभाग के अध्यक्ष डॉ. नवीनचंद्र लोहनी ने कहा कि साहित्य सांचों को बनाता नहीं, बल्कि तोड़ता है।

समकालीन कविता पर केंद्रित द्वितीय सत्र की अध्यक्षता वरिष्ठ पद्मश्री लीलाधर जगूड़ी ने की। समकालीन कविता पर बोलते हुए डॉ. जितेंद्र श्रीवास्तव ने कहा सन् 1990 के बाद की कविता को समझने के लिए नए औजारों और प्रविधियों की आवश्यकता है।

संगोष्ठी के तृतीय सत्र में अखिलेश, सुप्रसिद्ध व्यंग्यकार श्री प्रेम जनमेजय, श्री दामोदर दीक्षित आदि ने सहभागिता की। प्रो. गंगाप्रसाद विमल ने की। डॉ. प्रेम जनमेजय ने कहा कि व्यंग्य विधा पर दृश्य-श्रव्य माध्यमों के रिऐलिटी कार्यक्रमों का प्रभाव पड़ा है आज चुटकुले, लतीफे को ही व्यंग्य समझ लिया गया है किंतु यह एक गहरी विधा है। सुप्रसिद्ध व्यंग्यकार दामोदर दीक्षित ने कहा कि वर्तमान समाज में व्यंग्य ने अपना 'स्पेस' तलाश लिया है। प्रो. गंगाप्रसाद विमल ने कहा कि समयकाल जैसी कोई अवधारणा कम-से-कम साहित्य पर लागू नहीं हो सकती।

हिंदी आलोचना पर केंद्रित सत्र की अध्यक्षता करते हुए प्रो. निर्मला जैन ने कहा कि आलोचना बहुत हैं, आलोचक बहुत कम हैं। वास्तव में ईमानदार आलोचक सिर्फ एक पाठक होता है। उन्होंने विश्वविद्यालय शोधप्रबधों पर तीखे व्यंग्य करते हुए कहा कि इन शोधप्रबंधों का स्तर निरंतर गिरता जा रहा है। श्रोताओं के प्रश्नों का जवाब देते हुए उन्होंने बताया कि साहित्यकार का मार्क्सवादी अथवा गैरमार्क्सवादी होने से ज्यादा महत्वपूर्ण है कि वह गहन मानवीय संवेदनाओं से ओत-प्रोत हो।

# कार्टूनिस्ट एवं कवि निर्मेश ठाकुर द्वारा निर्मित हिन्दी के कुछ व्यंग्यकारों के कार्टून

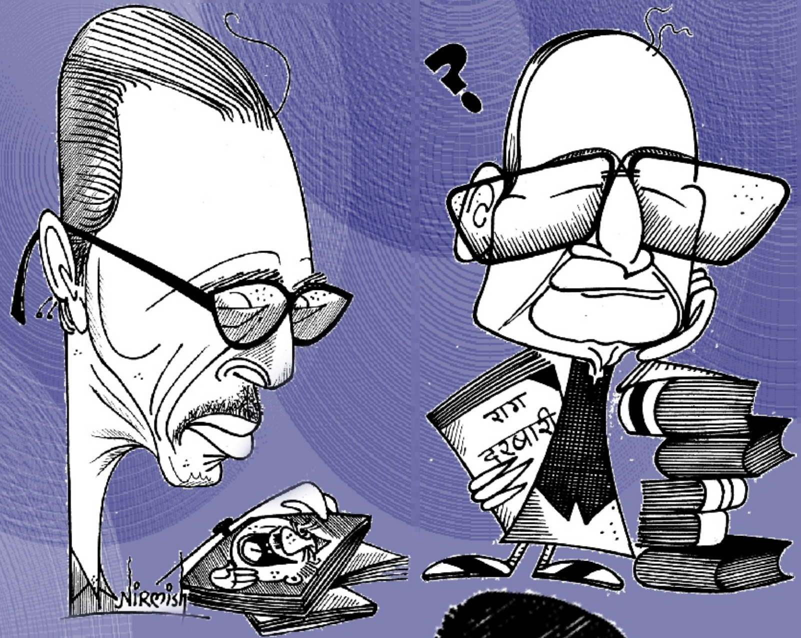

# सृजन स्मरण

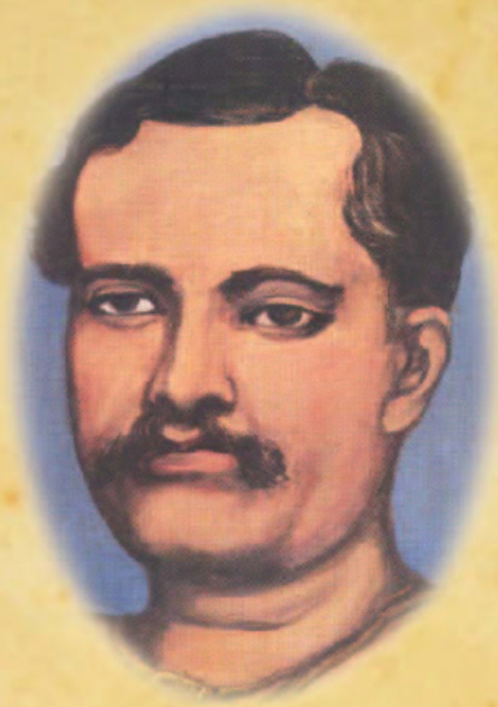

चन्द्रकांता पढ़ने के लिए
बहुत पुरुष नागरीय वर्णमाला सीखते हैं और
जिनको कभी हिन्दी सीखना ना था
उन लोगों ने भी इसके हिन्दी सीखी

**देवकीनंदन खत्री**
**(1861 - 1913)**

दिल्ली सरकार

**सूचना एवं प्रचार निदेशालय**

स्वत्वाधिकारी, मुद्रक एवं प्रकाशक डॉ॰ प्रेम प्रकाश की ओर से सचदेवा प्रिंट आर्ट्स प्राइवेट लिमिटेड, 44, राजस्थानी उद्योगनगर, जी॰टी॰ करनाल रोड, दिल्ली-110033 द्वारा मुद्रित एवं 73, साक्षर अपार्टमैंट्स, ए-3, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110063 से प्रकाशित